खण्ड 2, अंक 1, वर्ष 2014

आई.एस.एस.एन. : 2322–0708
ई.आई.एस.एस.एन. : 2350–0123

अनुसंधान

(विज्ञान शोध पत्रिका)







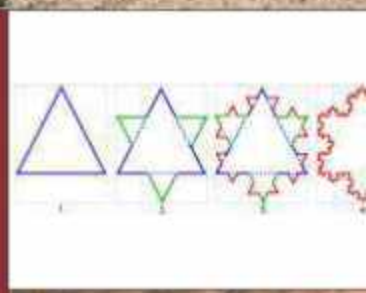


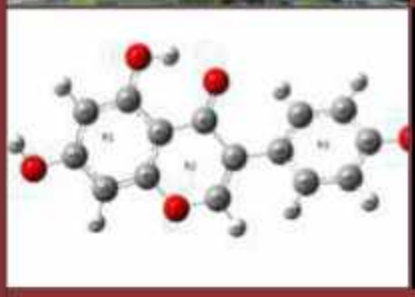


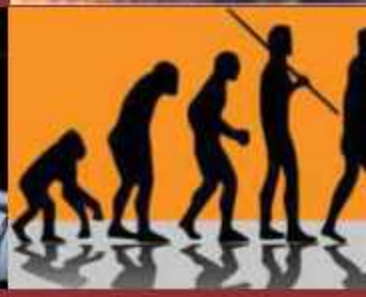

बी० एस० एन० वी० विज्ञान परिषद

बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय (के.के.वी.)

नैक प्रत्यायित "बी" संस्था

(लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ)

स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत

www.bsnvpgcollege.in/vp

आई.एस.एस.एन. : 2322–0708 अनुसंधान (विज्ञान शोध पत्रिका) खण्ड 2, अंक 1, वर्ष 2014

बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय (के0के0वी0)

(लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ)

स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ-226001, उ0 प्र0, भारत

(नैक प्रत्यायित "बी" संस्था)

बी0 एस0 एन0 वी0 विज्ञान परिषद

www.bsnvpgcollege.in/vp

संवैधानिक संरचना

मुख्य संरक्षक	श्री आर0 के0 शुक्ल, मंत्री / प्रबंधक
संरक्षक	प्राचार्य(पदेन)
अध्यक्ष	डॉ0 सुधीश चन्द्र, एसोसिएट प्रोफेसर, प्राणि विज्ञान विभाग
उपाध्यक्ष	डॉ0 संजय शुक्ल, एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भूगर्भ विज्ञान विभाग
उपाध्यक्ष	डॉ0 के0 के0 बाजपेई, एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, गणित विभाग
सचिव	डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव, एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग
संयुक्त सचिव	डॉ0 वीना पी0 स्वामी, असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राणि विज्ञान विभाग

संस्थापक मंडल

(बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्ना0 महा0, लखनऊ)

श्री बृजेन्द्र सिंह(जन्तु विज्ञान)
डॉ0 सुधीश चन्द्र(प्राणि विज्ञान)
डॉ0 जी0 सी0 मिश्र(अरब कल्चर)
डॉ0 संजीव शुक्ल(प्राणि विज्ञान)
डॉ0 संजय शुक्ल(भूगर्भ विज्ञान)
डॉ0 यू0 एस0 अवस्थी(वनस्पति विज्ञान)
डॉ0 के0 के0 बाजपेई(गणित)
श्री राम कुमार तिवारी(भौतिक विज्ञान)
डॉ0 ए0 पी0 वर्मा(वनस्पति विज्ञान)
डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव(गणित)
डॉ0 वीना पी0 स्वामी(प्राणि विज्ञान)
श्री राजेश राम(रसायन विज्ञान)

संपादक-मंडल

प्रधान संपादक

डॉ0 सुधीश चन्द्र, प्राचार्य
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
sudhish1953@gmail.com

संपादक

डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव
एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
dksflow@hotmail.com

सह-संपादक

डॉ0 संजीव शुक्ल
एसोसिएट प्रोफेसर, जन्तु विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
sanjiveshukla@gmail.com

डॉ0 संजय शुक्ल
एसोसिएट प्रोफेसर, भूगर्भ विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
drsanjaygeo@gmail.com

डॉ0 यू0 एस0 अवस्थी
असिस्टेंट प्रोफेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ

डॉ0 अर्चना राजन
एसोसिएट प्रोफेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग
राजकीय स्ना0 महा0, हरख, बाराबंकी-225121, उ0 प्र0
rajanarchana2512@gmail.com

डॉ0 ऋचा शुक्ला
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, प्राणि विज्ञान विभाग
नवयुग कन्या महाविद्यालय, लखनऊ
sanjiveshukla@gmail.com

डॉ0 सुधीर मेहरोत्रा
एसोसिएट प्रोफेसर, जैवरसायन विभाग
लखनऊ वि0 वि0, लखनऊ
sudhirankush@yahoo.com

डॉ0 ज्योति काला
एसोसिएट प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज लखनऊ-226001
jyotikala2010@gmail.com

श्री राम कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, भौतिक विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
rktshri@yahoo.co.in

डॉ0 वीना पी0 स्वामी
असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राणि विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ

श्री राजेश राम
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
rajesh_ram_2006@yahoo.co.in

डॉ0 अल्का मिश्रा
असिस्टेंट प्रोफेसर, गणित एवं खगोलशास्त्र विभाग
लखनऊ वि0 वि0, लखनऊ
misra_alka@lkouniv.ac.in

इं0 मनोज कुमार वार्ष्णेय
वरिष्ठ प्रवक्ता एवं अध्यक्ष, सिविल इंजीनियरिंग
डी0 एन0 पॉलीटेक्निक, परतापुर, मेरठ(उ0 प्र0)-250103
manojvarshaney17@rediffmail.com

डॉ0 मो0 अयूब अंसारी
एसोसिएट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
बिपिन बिहारी पी0जी0 कॉलेज, झांसी-284001, उ0प्र0
ayub67@rediffmail.com

डॉ0 अर्चना
एसोसिएट प्रोफेसर, शरीर रचना विभाग
किंग जॉर्ज मेडिकल विश्वविद्यालय, लखनऊ-226003, उ0प्र0
archana71gupta@yahoo.co.in

सलाहकार-मंडल

प्रमुख सलाहकार

श्री टी0 एन0 मिश्र

अध्यक्ष, बी0 एस0 एन0 वी0 इंस्टीट्यूट, लखनऊ

राष्ट्रीय सलाहकार मंडल

प्रो0 भूमित्र देव(लखनऊ)
प्रो0 आनंद कुमार श्रीवास्तव(लखनऊ)
प्रो0 एस0 के0 कुलश्रेष्ठ(चण्डीगढ़)
प्रो0 बी0 एस0 तिवारी(चण्डीगढ़)
प्रो0 सुनील दत्त(लखनऊ)
प्रो0 नंदजी कुमार(बोध गया)
प्रो0 पी0 के0 जैन(दिल्ली)
प्रो0 आर0 सी0 श्रीवास्तव(गोरखपुर)
प्रो0 ए0 के0 चोपड़ा(हरिद्वार)
प्रो0 ए0 के0 शर्मा(लखनऊ)
प्रो0 मधु त्रिपाठी(लखनऊ)
प्रो0 वाई0 के0 शर्मा(लखनऊ)
प्रो0 एस0 पी0 त्रिवेदी(लखनऊ)
प्रो0 पीयूष चन्द्रा(कानपुर)
प्रो0 आर0 एस0 टण्डन(सुल्तानपुर)
डॉ0 एस0 सी0 शुक्ल(लखनऊ)
डॉ0 बी0 के0 द्विवेदी(लखनऊ)
डॉ0 एस0 सी0 मिश्र(लखनऊ)
प्रो0 कृष्ण बिहारी पाण्डेय (सतना)
प्रो0 यतीश अग्रवाल(दिल्ली)
डॉ0 प्रदीप कुमार श्रीवास्तव(लखनऊ)
डॉ0 शंकर लाल(कानपुर)
प्रो0 नदीम हसनैन(लखनऊ)
प्रो0 प्रदीप कु0 प्रजापति(जामनगर)
प्रो0 कैलाश डी0 सिंह(लखनऊ)
डॉ0 कृष्ण दत्त(लखनऊ)
डॉ0 संतोश कुमार पाण्डेय(नोयडा)
डॉ0 योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव(भोपाल)

अंतर्राष्ट्रीय सलाहकार मंडल

प्रो0 एच0 एम0 श्रीवास्तव(कनाडा)
प्रो0 हेराल्ड रामकिशून(वेस्टइंडीज)
डॉ0 शह राज अली(ओमान)
डॉ0 तनवीर आलम(सउदी अरब)
डॉ0 मनमोहन देव शर्मा(यू0 एस0 ए0)
डॉ0 वृंदा अग्रवाल(यू0 एस0 ए0)
डॉ0 अनूप अग्रवाल(यू0 एस0 ए0)
प्रो0 संजय कुमार श्रीवास्तव(यू0 एस0 ए0)
प्रो0 प्रीति बाजपेई(यू0 ए0 ई0)
प्रो0 एम0 जी0 प्रसाद(यू0 एस0 ए0)
प्रो0 लवजॉय दास(यू0 एस0 ए0)

सम्पादकीय

मातृभाषा में चिंतन मौलिक विचारों एवं अनुसंधानों का सर्वोत्तम जनक है, यह बात शोध जगत के अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य पर स्वयंसिद्ध है। हिन्दी विश्व की सर्वाधिक जनसंख्या द्वारा बोली जाने वाली सशक्त भाषा है जिसमें विचारों एवं नये शब्दों को आत्मसात करने की अद्‌भुत क्षमता है। संस्कृत जैसी सुगठित, व्याकरण संपन्न एवं वैज्ञानिकता पूर्ण भाषा से जन्म लेने के कारण यह गुण हिन्दी में स्वयमेव समाहित हैं। शोध कार्यों का लाभ जनसामान्य तक पहुँच सके, इस विचार को मूर्त रूप देने के लिए **"अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)"** का प्रकाशन गत वर्ष प्रारम्भ किया गया था ताकि शोध कार्यों एवं वैज्ञानिक उपलब्धियों का सीधा लाभ सरलतम भाषा में छात्रों एवं जनसामान्य तक पहुँचाया जा सके। हिन्दी में विज्ञान लेखन को अभी तक दुरूह ही माना जाता रहा है, परन्तु सम्पादक मंडल शोधार्थियों एवं विद्वान अध्यापकों के प्रति आभार व्यक्त करता है जो कि निरन्तर पत्रिका परिवार में जुड़कर अपना योगदान कर रहे हैं।

किसी नये कार्य का सृजन चुनौती पूर्ण अवश्य होता है परन्तु उससे भी कठिन कार्य उसका विकास एवं परिष्करण कर जनोपयोगी बनाना है। अब आवश्यकता है इस **"शोध पत्रिका"** के गुणात्मक विकास की जो कि शोधार्थियों, शिक्षकों एवं समीक्षकों के बिना संभव नहीं है। वर्ष 2014 में निस्केयर(सी0एस0आई0आर0, नई दिल्ली) द्वारा **"अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)"** का ऑन लाइन प्रकाशन हेतु पंजीकरण करते हुए आई0एस0एन0एन0 संख्या प्रदान कर दिया गया है जिससे पत्रिका के ऑन लाइन प्रकाशन का मार्ग प्रशस्त हो गया है। सम्पादक मंडल के सदस्यों का प्रयास है कि पत्रिका **"प्रभाव गणना कारक(इम्पैक्ट फैक्टर)"** जगत में प्रवेश कर, अन्य स्थापित वैज्ञानिक शोध पत्रिकाओं की भांति अग्रिम पंक्ति में खड़ी हो सके व आपके अमूल्य शोधों एवं विचारों को अंतर्राष्ट्रीय फलक पर स्थापित कर सके। इसी मंगल कामना के साथ **"अनुसंधान(विज्ञान शोध पत्रिका)"** का खण्ड–2, अंक–1, वर्ष 2014, शोधार्थियों, विद्यार्थियों व विचारकों के हाथों में समर्पित किया जा रहा है।

डॉ0 सुधीश चन्द्र
प्रधान सम्पादक

स्थापना वर्ष: 2013

आई0एस0एस0एन0(प्रिंट): 2322–0708
आई0एस0एस0एन0(ऑनलाइन): 2350–0123

अनुसंधान

(विज्ञान शोध पत्रिका)

खण्ड 02, अंक 01 वर्ष: 2014

भाग/वर्ग	क्र0सं0	शीर्षक व लेखक	पृष्ठ
		Top Cover Page	
		संवैधानिक संरचना एवं संस्थापक मंडल(Top inner Cover Page)	
		सम्पादक मंडल	
		सलाहकार मंडल	
		सम्पादकीय लेख	
1 शोध पत्र			
	1.1	"दक्षिणी राजस्थान के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में बाघ से संबधित कुछ तथ्य" सतीश कुमार शर्मा	9–17
	1.2	"विकलांगता एवं गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त लोगों में समुत्थान शक्ति एवं जीवन सन्तुष्टि के मध्य संबंध का अध्ययन" सोनल अग्रवाल	18–24
	1.3	"अपराध अनुसंधान में सूक्ष्म जलीय वनस्पतियों मुख्यतः डायट्म्स का महत्व" प्रतिभा गुप्ता एवं मोहित कुमार तिवारी	25–30
	1.4	"संगीत–विज्ञान द्वारा आध्यात्मिक उत्थान" ज्योति काला	31–37
	1.5	"वचा–(*एकोरस कैलेमस*): वाणी और बुद्धि वर्धक" प्रमोद कुमार सिंह, अजय कुमार तिवारी, संजीव कुमार ओझा एवं श्रीकृष्ण तिवारी	38–47
	1.6	"जैव अनुमापन द्वारा रिहन्द जलाशय(गोविन्द बल्लभ पन्त सागर) की जल गुणवत्ता आंकलन" साधना चौरसिया एवं आनन्द देव गुप्ता	48–55
	1.7	"धातु आयनों की विषाक्तता: एक विस्तृत अध्ययन" विजय शंकर	56–60
	1.8	"एस्ट्रोजन हार्मोन: स्तन कैंसर का प्रमुख कारण–एक अध्ययन" प्रीति रावत, तृप्ति मिश्रा व महेश पाल	61–65
	1.9	"जीवन की गुणवत्ता–गणितीय नमूने द्वारा एक अध्ययन" श्रीमती कृष्णा यादव	66–70
	1.10	"भारत में प्राकृतिक संसाधनों के प्रबन्ध की समस्यायें एवं चुनौतियाँ: नाबार्ड के पहल का केस अध्ययन" प्रीति पन्त एवं राजीव श्रीवास्तव	71–77
	1.11	"मगध क्षेत्र में फैबेसियस पौधों में एल्केल्वॉइड्स का अध्ययन" नन्दजी कुमार एवं विकास कुमार प्रभात	78–81

1.12	"डाईइलेक्ट्रिक पदार्थ में अल्ट्रासोनिक क्षय" अरविन्द कुमार तिवारी	82–84
1.13	"रासायनिक प्रमात्रा गणनाओं की सहायता से जेनेस्टिन की आण्विक संरचना का इष्टमीकरण" राम कुमार तिवारी	85–91
1.14	"भूमि तल तक बने एक कमरे का मूल्यांकन–फैलावदार के साथ अर्ध फैलावदार नींव का एक आगणित अध्ययन" मनोज कुमार वार्ष्णेय, निवेश कुमार वार्ष्णेय एवं रोहित कुमार वार्ष्णेय	92–98
1.15	"अतिभार एवं मोटापे से ग्रस्त लडकियों/महिलाओं में स्वास्थ्य आचरण प्रोत्साहित करने में आत्मक्षमता की भूमिका का अध्ययन" सोनल अग्रवाल	99–108
1.16	"गैलिक एसिड में कार्बाक्सिलिक समूह का पुनर्दिक विन्यास एवं हाइड्रोजन बन्ध" सतीश चन्द्र मिश्र	109–113
1.17	"फेरस अमोनियम टंगस्टेट कृत्रिम झिल्ली की विद्युत चालकता का अध्ययन" मोहम्मद अयूब अन्सारी एवं अन्य	114–119

2 तकनीकी लेख व समीक्षा लेख

2.1	"पौधों, पर्यावरण और मनुष्यों पर अन्तःपादप सूक्ष्मजीवियों का प्रभाव–एक समीक्षा" शिप्रा शुक्ला, तृप्ति मिश्रा, प्रतीक दीक्षित व महेश पाल	120–124
2.2	"भारतीय वाङ्मय–वैज्ञानिक व तकनीकी श्रेष्ठता" उपेन्द्र नन्दन शुक्ल	125–129
2.3	"भारत में नागरिक केंद्रित ई–शासनः वर्तमान स्थिति और चुनौतियाँ" राकेश कुमार सिंह और रंजन सिंह	130–135
2.4	"मधुमेह प्रकार 1 का ट्राँसविशिष्टीकरण के द्वारा उपचार" सुधीर मेहरोत्रा एवं खुशवंत सिंह	136–141
2.5	"डायोफैन्टाइन समीकरण का हल–भास्कराचार्य द्वारा गणित में किये गये योगदान का तकनीकी विश्लेषण" रमा जैन	142–145
2.6	"विज्ञान प्रसार द्वारा निर्मित लोकप्रिय विज्ञान आधारित फिल्में और उनका वितरण" सचिन नरवडिया	146–149
2.7	"उत्तराखण्ड हिमालय में भूस्खलनः 2013 प्राकृतिक आपदा के विशेष सन्दर्भ में" आर0 ए0 सिंह एवं मुकेश कुमार	150–154
2.8	"जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव एवं समाधानः एक तकनीकी विवेचना" अपर्णा टण्डन	155–158
2.9	"शारीरिक शिक्षा और सामान्य शिक्षा में सम्बन्ध" रेनू मौर्या	159–163
2.10	"हरित रसायन" देवेन्द्र कुमार	164–166

2.11	"माइक्रोफाइनेन्सः आर्थिक अशक्त को सशक्त बनाने का एक प्रभावी उपकरण" मधु भाटिया	167–171
2.12	"प्रकृति का उपहार, वर्षा जल एवं उसका संग्रहण–एक तकनीकी विश्लेषण" रचना मिश्रा तथा अल्का निवेदन	172–175
2.13	"रक्तदान का महत्व–एक तकनीकी अवलोकन" अर्चना रानी	176–178

3 वैज्ञानिक लेख

3.1	"रक्त समूह–एक विवेचना" नवनीत कुमार गुप्ता	179–181
3.2	"कोलेस्टेरॉल कितना भयावह" एस0 सी0 शुक्ल	182–184
3.3	"देश में गणित शिक्षण और शोध की दशा एवं दिशा" महेन्द्र पाठक	185–187
3.4	"इलेक्ट्रानिक कचरा (ई–वेस्ट)" दीप्ति सिंह	188–191
3.5	"पर्यावरण प्रदूषण" महेन्द्र प्रताप सिंह	192–203
3.6	"फ्रैक्टल ज्यामितिः एक संक्षिप्त परिचय" मोहम्मद साजिद	204–205
3.7	"लिलियमः लाहुल घाटी का व्यवसायिक पुष्प" मस्त राम धीमान, राम सिंह सुमन, राज कुमार, **चन्द्र प्रकाश** एवं महेश गुलेरिया	206–209
3.8	"लखनऊ मेट्रो रेल परियोजना–एक भूविज्ञानी आंकलन" एस0 के0 कुलश्रेष्ठ एवं संजय शुक्ल	210–214
3.9	"आधुनिक युग में संख्याओं का अद्वितीय रूप तथा उनका महत्व" प्रीति बाजपेई	215–216
3.10	"पौष्टिक एवं संतुलित आहार और स्वास्थ्य" ए0 के0 चतुर्वेदी	217–218
3.11	"प्रकृति की अनमोल देन वृक्ष" उदय शंकर अवस्थी	219–220
3.12	"प्रोबायोटिक्स" सुधीर महरोत्रा एवं अल्पना माथुर	221–223
3.13	"प्रोजेरिया कारक लेमिन–ए–प्रोटीन" देवेन्द्र कुमार अवस्थी एवं सरिता चौहान	224–226
3.14	"रसायन और मानव जीवन" गोविन्द कृष्ण मिश्र	227–228
3.15	"स्वस्थ जीवन जीने में निद्रा का महत्व" अनुराधा विनायक	229–231

3.16	"वैश्विक तापनः वास्तविक संकट कम, मानसिक संकट अधिक" प्रेम चन्द्र श्रीवास्तव	232–233
3.17	"विज्ञान के लिए चुनौती बने सायबर अपराध" योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव	234–235
3.18	"आधुनिक मेडिकल उपकरण" कौशल कुमार बाजपेई एवं प्रेक्षा राजन	236
3.19	"आणविक अंकित बहुलक" रमेश कुमार प्रजापति[1] एवं मुहम्मद अयूब अन्सारी[2]	237–238
3.20	"16वीं सदी में हुए यूरोपीय वैज्ञानिक आविष्कार" नीलिमा गुप्ता	239–241
3.21	"पोषण और स्वास्थ्य के लिए फलों का महत्व" रश्मि गुप्ता	242–250
3.22	"हिन्दी में वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली के प्रयुक्ति का प्रश्न" अंजलि अस्थाना	251–254
3.23	सहस्त्राब्दी पुरस्कार समस्याएं(द मिलेनियम प्राइज प्रॉब्लेम्स) राजीव कुमार सिंह	255–257

4 **विविध**

4.1	"वैकल्पिक ऊर्जा का भविष्य, उसके विकास और उत्पादन प्रयास (एक दिवसीय राजभाषा परिसंवाद)–एक आख्या" नवीन प्रकाश सिंह "नवीन"	258–262
4.2	"रोल ऑफ मैथेमेटिक्स इन एडवांसमेंट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी" पर त्रि–दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी समीक्षक–निर्मल श्रीवास्तव	263–267
4.3	"नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान–वर्ष 2013" दिव्यांश श्रीवास्तव	268–270
4.4	"विज्ञान समाचार–नवीन जानकारी" दीपक कोहली	271–276
4.5	"भूस्खलन एवं पर्यावरण ह्रासः–एक समीक्षा" पुस्तक समीक्षक– मुकेश कुमार	277–278
4.6	"सदिश विश्लेषण एवं सदिश कलन" पुस्तक समीक्षक–श्रीमती कृष्णा यादव	279–279
4.7	इबोला विषाणु की मानव पर कुदृष्टि	280–281
4.8	मंगलयान मिशन–एक स्वर्णिम भारतीय वैज्ञानिक सफलता	282–283
4.9	"नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान–वर्ष 2014" दिव्यांश श्रीवास्तव	284–287
	विज्ञान परिषद नियमावली एवं आजीवन सदस्यता प्रारूप	288–289
	विज्ञापन(प्रकाशन केन्द्र, आलोक प्रकाशन)– Back Inner Cover	
	Photographs of Noble Laureates on Back Cover Page	

दक्षिणी राजस्थान के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में बाघ से संबधित कुछ तथ्य

सतीश कुमार शर्मा
सहायक वन संरक्षक, वन्यजीव अभयारण्य जयसमन्द
पोस्ट जयसमन्द, जिला–उदयपुर–313905, राजस्थान, भारत
sksharma56@gmail.com

सार

प्रस्तुत समय था जब दक्षिणी राजस्थान में बाघ दूर–दूर तक अच्छी संख्या में विद्यमान थे। लेकिन आजादी के बाद 1970 व 1980 के मध्य इस सुन्दर विडाल का इस क्षेत्र में विलुप्तीकरण हो गया। प्रस्तुत शोध पत्र में दक्षिण राजस्थान के संदर्भ में बाघ के अनेक अनछुए पहलुओं का प्रस्तुतीकरण किया गया है, जिनको अभिलेखों में अंकित किया जाना चाहिये।

बीज शब्द– दक्षिणी राजस्थान, बाघ।

Some aspects related to Tiger (*Panthera tigris*) in the histroical perspective of South Rajasthan

Satish Kumar Sharma
Assistant Conservator of Forests, Wildlife Sanctuary Jaisamand
Post- Jaisamand, District-Udaipur-313905, Rajasthan, India
sksharma56@gmail.com

Abstract

Wide line once tiger was extensively distributed in South Rajasthan. They were present in good numbers also. After independence, this decent cat became extinct from the area between 1970 and 1980. Many unknown aspects releted to tigers of South Rajasthan have been presented in this paper which are worth recording.

1. प्रस्तावना

राजस्थान में छोटी बिल्लियों में जंगली बिल्ली, बिटारी, रेगिस्तानी बिल्ली, मछुआ बिल्ली, शियागोश, चीता बिल्ली, तथा घरेलू बिल्ली एवं बडी बिल्लियों में बाघ, चीता, सिंह, तथा तेंदुआ, कुल 11 बिल्लियाँ ज्ञात रही हैं। इनमें चीता व सिंह राज्य से विलुप्त हो चुके हैं।

बिल्ल्यों में बाघ का स्थान बहुत महत्वपूर्ण रहा है। बाघ के भारत में आने से पहले सिंह(शेर) पश्चिम दिशा से हमारी धरती पर आया। उसके बाद पूर्व दिशा से बाघ का आगमन हुआ। राजस्थान में प्राचीन काल में शासक जातियाँ अपने नाम के आगे "सिंह" शब्द का प्रयोग नहीं करती थी, लेकिन सिंह के आगमन के बाद उसको शक्ति का प्रतीक मानकर अपने आप को शक्तिशाली बताने के लिये शासक स्वंय के नाम के आगे "*सिंह*" शब्द लगाने लगे। क्षत्रिय समुदाय में आज तक नामकरण का यह स्वरूप प्रचलित है। बाघ के आगमन के बाद उसने अपनी चंचलता, क्रोधीले स्वभाव व आक्रामकता का लाभ लेकर सिंह को खदेड़ना प्रारम्भ किया। सिंह दक्षिणी राजस्थान के सिरोही जिले में आबू में 1881 एवं अनादरा में 1872 तक विद्यमान था। इसके बाद सिंह राजस्थान से समाप्त हो गया तथा राज्य के सम्पूर्ण अरावली, विंध्याचल एवं मालवा पठार के वनों में बाघ का फैलाव हो गया। अरावली के पश्चिम में थार रेगिस्तान में बाघ का फैलाव नहीं हुआ।

बाघ दक्षिणी राजस्थान के शासकों का प्रिय प्राणी रहा है। शाही परिवार व मेहमान बाघ का शिकार मनोरंजन करने व वीरता प्रकट करने हेतु करते थे। तत्कालीन समय में बाघ व अन्य प्राणियों का शिकार "आखेट" कहलाता था। शासकों ने बाघों को संरक्षण दिया लेकिन आजादी के बाद दक्षिणी राजस्थान में बाघों का तेजी से विनाश हुआ। सघन वन विद्यमान होने के बावजूद बाघ यहाँ से समाप्त हो गये। राज्य की दो बाघ परियोजनायें क्रमशः अलवर जिले के सरिस्का एवं सवाई माधोपुर के रणथम्भौर में प्रचलन में हैं। दक्षिणी राजस्थान में बाघों के समाप्त हो जाने से यहाँ कोई बाघ परियोजना प्रारम्भ नहीं हो सकी।

भले ही दक्षिणी राजस्थान में आज बाघ नहीं बचे लेकिन बाघों के परिप्रेक्ष्य में यहाँ का अतीत वैभवशाली रहा है। ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में बाघों से जुडे अनेक पहलू हमें ज्ञात हैं (अलफ्रेड एवं अन्य 2006, अनाम 1933, बर्के 1928, चौधरी 2008, घोश 2007, कर्नल सिंह 2002, कोठारी एवं छपगर 2005, मीणा 2003, रिचर्डसन 1992, सहगल 1974, सिन्हा 1989, शर्मा 2007) लेकिन अनेक तथ्य असूचित एवं अप्रकाशित हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में उन अज्ञात पहलुओं को प्रकाश में लाने हेतु प्रयास किया गया है।

2. अध्ययन क्षेत्र एवं अध्ययन काल

बाघों से जुडे विविध पहलुओं का अध्ययन करने हेतु सारे राजस्थान के वनों का अवलोकन किया गया लेकिन दक्षिण राजस्थान के उदयपुर, राजसमन्द, चितौड़गढ, प्रतापगढ़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, सिरोही एंव भीलवाड़ा के वनों पर विशेष ध्यान दिया गया है। यह अध्ययन 1986 से 2012 तक किया गया।

3. अध्ययन विधि

बाघ से संबधित पहलुओं को जानने हेतु वनों में प्राचीन शासकों द्वारा बनाई शिकार औदियों (हन्टिंग टॉवर्स) को देखा गया। उनकी वास्तु विशेषताएं व भौगोलिक स्थिती के औचित्य को समझा गया। प्राचीन शासकों के समय "हाका" विधी से बाघ का शिकार करने के समय उपस्थित रहने वाले लोगों के परिवारों से बात की गई। तत्कालीन समय में शिकार में मदद लेने हेतु भीलों को राजघराने नौकरी देते थे। इन नौकरों को "नौकरिया" कहा जाता था (मीणा, 2003)। "नौकरियों" के परिवार अच्छी जानकारी के स्त्रोत होते हैं अतः उनसे भी सम्पर्क किया गया।

वनों में प्राचीन समय से ही उपलब्ध रहे जल स्त्रोतों का अध्ययन किया गया। प्राचीन शासकों के उत्तराधिकारियों से संपर्क कर विविध जानकारियाँ प्राप्त की गईं। तत्कालीन शासकों के महलों में लगी ट्राफियों व प्राचीन शाही दस्तावेजों का अध्ययन किया गया तथा सूचनाओं का विश्लेषण किया गया। खासकर विभिन्न जिलों की कार्य योजनाओं में उपलब्ध जानकारियाँ हाँसिल की गयी। राजघरानों में अपनी सेवायें दे चुके बुजुर्गों व शिकारियों से भी जानकारियां संग्रह की गयी ।

4. परिणाम एवं विवेचना

4.1. दक्षिणी राजस्थान में स्वतंत्रता से पहले बाघ की स्थिति

राजस्थान में बाघ को बोलचाल में वाघ, नार, नाहर, शेर, आदि नामों से जाना जाता है। दक्षिण राजस्थान में आजादी से पहले बाघों का बाहुल्य था। जगह–जगह बाघों के लिए वन सुरक्षित थे, जहाँ शाही परिवार शिकार आयोजन करते थे। आज उन वन क्षेत्रों में सज्जनगढ़, जयसमन्द, फुलवारी की नाल, कुम्भलगढ़, टॉडगढ़–रावली, सीतामाता, बस्सी, गैसरोड़गढ़ एवं आबू पर्वत कुल नौ अभयारण्य अस्तित्व में हैं। इन सबमें कभी बाघों का वितरण–विचरण था। विभिन्न वन क्षेत्रों के बीच आबादी व कृषि भूमि का फैलाव अपेक्षाकृत कम था तथा वनों में दूर–दूर तक निरन्तरता थी। सडकों का जाल सीमित था तथा उन पर वाहन आवागमन व मानवजनित व्यवधान भी तुलनात्मक रूप से कम था। फलतः एक जगह से दूसरी जगह बाघों का दुर्घटना रहित आवागमन होता रहता था। उदाहरण के लिये गुजरात के विजयनगर, पोलो वन, आँतरसुबा आश्रम, अम्बाजी आदि क्षेत्रों के वनों की राजस्थान के उदयपुर जिले के पानरवा, डैया, अम्बासा के वनों से निरन्तरता थी जो आज फुलवारी की नाल अभयारण्य के भाग हैं। ऐसी ही वनों की निरन्तरता गुजरात राज्य के साथ डूंगरपुर से बाँसवाडा जिलों तक एवं जालौर जिले के जसवन्तपुरा व सुन्दामाता वनों में थी। आज राजस्थान के पानरवा क्षेत्र के ये वन उत्तर दिशा में उदयपुर जिले के ही ओगणा, जूडा, देवला, खोखरिया की नाल से होते हुये वर्तमान कुंभलगढ़ अभयारण्य तक फैले थे। कुम्भलगढ़ अभयारण्य के वन वर्तमान टाड़गढ़–रावली के वनों से जुडे थे तथा यह निरन्तरता आगे अजमेर जिले की पहाडियों

पर विद्यमान वनों तक थी। दक्षिणी राजस्थान में बाघ ऊपर अंकित वर्तमान अभयारण्यों के अतिरिक्त दूर–दूर तक वितरण में थे। दक्षिणी राजस्थान के संतु जंगल, जामुनिया की नाल, चंदेसरा, कटार, बरवाडा, घोड़च, चीरवा घाटा, उदयसागर, बाघदड़ा, नाहर मगरा, बोरी कुँआ, सीसा मगरा, बेडावल, सलुम्बर, उभेश्वर, नाल मोखी, डोड़ावली, बांकी, कलेर वन खण्ड का चूनावेरी नामक स्थल, देबारी आदि क्षेत्रों के वनों में बाघों का निवास था। बाघों को भोजन के रूप में सांभर, चीतल, जंगली सुअर, नीलगाय आदि खाने को उपलब्ध रहते थे। इन क्षेत्रों के शिकार हेतु औदियां(शिखर टॉवर्स) जगह–जगह बनी हुई थीं। औदियां विश्राम करने, बाघ व दूसरे प्राणियों की स्थिति जानने हेतु वाच टावर के रूप में उपयोग करने, आखेट खेलने एवं शिकार गाहों के प्रबंधन हेतु बनायी जाती थी। इनको वनों में आग लगने के स्थलों को पहचानने हेतु भी उपयोग किया जाता था। शिकार औदियों का जगह–जगह होना अपने आप में पुष्ट प्रमाण है कि बाघ इन जंगलों में विद्यमान थे। कुछ औदियों का विवरण नीचे सारणी में प्रस्तुत है–

स.	स्थिति	औदियों की संख्या	विशेष विवरण
.	उदयपुर–नाथद्वारा मार्ग पर देलवाडा के पास सडक के पूर्व दिशा में (जिला उदयपुर)	1	पहाड़ी पर वन क्षेत्र के बीच स्थित
.	जयसमन्द अभयारण्य(जिला उदयपुर)	8	जयसमन्द की 8 औदियों में से तीन गमधार, सलादिया कोट (चित्र 1) एवं चाटपुर की जनाना बहुमंजिली औदियां है जो सघन वन में पहाड़ी पर विद्यमान हैं। जयसमन्द में डीगडा बाग महल भी बाघ व प्राणियों के आखेट के काम आता था।
.	मेनाल क्षेत्र, नाका मेनाल, रेंज मांडलगढ, (जिला भीलवाडा)	1	नया नगर वन खण्ड में डामटी शिकार औदी सघन वन क्षेत्र में स्थित है।
.	डेट रेलवे स्टेशन के पश्चिम दिशा में (जिला भीलवाडा)	1	दो पर्वत चोटियों के बीच सघन वन क्षेत्र में स्थित।
.	कालका माता पौधशाला क्षेत्र, वन मण्डल उदयपुर(जिला उदयपुर)	1	"नाहर औदी" नामक यह एक मंजिल की औदी आंशिक रूप से भूमिगत है। बाघ आखेट की प्राचीन चित्रकारी आन्तरिक दिवारों पर अभी भी विधमान है। संवत 1945 में महाराणा फतहसिंह ने इस औदी का जीर्णोद्धार कराया था।
.	सज्जनगढ़ अभयारण्य, उदयपुर	8	उदयपुर शहर की पश्चिमी सीमा पर सज्जनगढ़ वन खण्ड में मात्र 5.19 वर्ग किमी क्षेत्र में इतनी औदियों की संख्या उस समय के बाघों का घनत्व प्रकट करती हैं।
.	सीतामाता पौधशाला के सामने शाही परिवार का निजी वन, पिछोला झील के किनारे, उदयपुर	1	"खास औदी" नामक विशाल व खूबसूरत महलनुमा औदी लगभग समतल पहाडी क्षेत्र में धौक के सघन वन क्षेत्र में विधमान है।
.	कलेर वनखण्ड, उदयपुर(उत्तर) वन मण्डल(जिला उदयपुर)	5	"खीला मावडा औदी," "बदणिया मथारा औदी" काफी प्रसिद्ध हैं जो सघन वन में स्थित हैं।
.	बेदला(जिला उदयपुर)	3	बेदला गांव के उत्तर में पहाड़ी में सघन जंगल में भव्य औदियां हैं ।
).	मेजा बांध, जिला भीलवाडा	1	पहाडी पर सघन वन क्षेत्र में स्थित।
1.	बांकी वनखण्ड, उदयपुर	5	सघन वन क्षेत्र में स्थित 1 एक औदी बहुमंजिली एवं बहुत भव्य है जो पतारनुमा क्षेत्र में सघन वन के बीच स्थित है। अन्य औदियां भी सघन वन क्षेत्र में स्थित हैं ।
2.	बाघदड़ा, उदयपुर	3	"जनानी औदी" नाले के किनारे सघन वन में है। दो औदियां ऊंचे चबूतरेनुमा हैं।
3.	बड़ा मगरा वन खण्ड(मोटा मगरा), उदयपुर	1	सघन वन क्षेत्र में उदयसागर के स्लूईज गेट की तरफ स्थित है।
4.	हिंगलासिया वन खण्ड(जिला उदयपुर)	4	सघन वन क्षेत्र में स्थित है।
5.	सेगरिया वन खण्ड(जिला उदयपुर)	1	सघन वन क्षेत्र में स्थित है।
3.	नाहर मगरा वन खण्ड(जिला उदयपुर)	4	नहरों की उपस्थिति से अपना नामकरण पाने वाला यह वन क्षेत्र बाघों की उपस्थिति के लिये जाना जाता था।
7.	लोढ़िया वन खण्ड, रेंज सराड़ा (जिला उदयपुर)	1	छोटी पहाड़ी पर स्थित है ।
3.	बस्सी अभयारण्य, जिला–चित्तौड़गढ	1	आमझरिया औदी भव्य औदी है जो सघन वन में स्थित है।
3.	बल्ला बारी(नारा मगरा), डूंगरपूर	1	बाघ के शिकार एव प्रर्दशन हेतु विशेषज्ञता पूर्वक डिजाइन की हुई सुन्दर औदी गेप सागर से थोडी दूर धौक वन के बीच स्थित है।

दक्षिण राजस्थान में सघन वन खण्डों में औदियों का जाल तत्कालीन समय में बाघों व बाघ आवास में मिलने वाले दूसरे वन्यप्राणियों की अच्छी संख्या को प्रमाणित करता है। कभी–कभी औदियों की बजाय वनों में स्थित महलों को भी आखेट में प्रयोग किया जाता था। सज्जनगढ़ अभयारण्य में सज्जनगढ महल के दक्षिणी–पूर्वी किनारे के पास बकरा बांधने का एक मजबूत पत्थर खूंटे के रूप में गड़ा हुआ है जिसमें छेद है। यहाँ मोटे रस्से से बकरे को खूंटे से बेंट के रूप में बांधा जाता था तथा बाघ का आखेट किया जाता था। खूंटे में छेद से रस्से को बांधने से बकरे के रस्सा तोडकर या खिसकाकर भागने का अंदेशा नहीं रहता था। "बेंट" को स्थानीय भाषा में "खज" कहा जाता था (डॉ0 रजा तहसीन, निजी वार्तालाप, 2010)। इस क्षेत्र में बकरे एवं छोटे पाड़ों (भैंस का बच्चा) को खज के रूप में प्रयोग लिया जाता था।

तत्कालीन समय में शिकार किये बाघों के छाया चित्र, खालें, व ट्रॉफियाँ आज भी तत्कालीन शासकों व ठिकानेदारों के निवासों में सुसज्जित मिलते हैं। उदयपुर मेवाड शासकों का गढ़ रहा है। दुश्मनों के हमलों से बचने हेतु चितौड़गढ़ के बाद शासकों ने उदयपुर को अधिक सुरक्षित पाया। कालान्तर में यहाँ उदयपुर शहर बस गया। उदयपुर शहर के पास के वन क्षेत्रों में 20 किमी की परिधि में तीन दर्जन शिकार औदियां हैं। शहर में व आस–पास जन–धन की हानि रोकने हेतु बाघों व तेंदुओं का आखेट चलता रहता था।

4.2 बाघ शिकार के अनूठे दस्तावेज

रियासतकालीन समय में बाघ के शिकार संबधी आंकड़े रिकार्ड में रखे जाने का चलन था। शिकार किये जानवरों की लम्बाई अंकित की जाती थी। शिकारगाहों में कई जगह रजिस्टर तक संधारित किये जाते थे। टॉड़गढ़–रावली अभयारण्य में वर्तमान रावली रेंज कार्यालय के पास सुन्दर विश्राम गृह स्थित है। यह ब्रिटिश काल से ठहरने व आखेट में उपयोग होता रहा है। यहाँ ठहरने वाले लोग शिकार किये गये प्राणी का पूरा ब्यौरा अपने हाथ से अंग्रेजी में अंकित करते थे। टॉड़गढ़–रावली अभयारण्य के इस दस्तावेज में दर्ज कुछ बाघ शिकार के नमूने अवलोकनीय हैं–

क्र.सं.	दिनांक	आखेट किये बाघों की संख्या	विशेष विवरण
1.	24.5.1948	1	–
2.	15.1.1949	1	–
3.	27.1953	2	एक शॉट में दोनों को मारना अंकित है
4.	11.9.1954	1	टॉड़गढ़ ब्लाक में एक शॉट से मारना अंकित है। खूंटी लम्बाई 9 फुट 8 इन्च अंकित है।

ये विवरण दर्शाते हैं कि टॉड़गढ़–रावली क्षेत्र में आजादी के बाद भी बाघों की संख्या इतनी थी कि वहाँ आखेट किया जा सकता था जबकि आज वहाँ बाघ नहीं हैं। आज पूरा दक्षिण राजस्थान बाघ विहीन है लेकिन भूतकाल में यह क्षेत्र बाघों से आबाद रहा। दक्षिणी राजस्थान में बाघों के समाप्ति के दौर में उनके उपस्थित होने के कुछ और स्पष्ट प्रमाण निम्नलिखित हैं–

क्र.सं.	वर्ष	स्थान	विवरण	सूचना का आधार
1.	1930–1949	डूंगरपुर जिले के वन क्षेत्र	30 से ज्यादा बाघ तत्कालीन डूंगरपुर रियासत की भौगोलिक सीमा के वन क्षेत्र में थे।	श्री समर सिंह (निजी वार्तालाप, 2007)
2.	1933	पालीसोड़ा (रेंज बिछीवाड़ा)	वन क्षेत्र में शिकार किया गया।	उदयविलास पैलेस डूंगरपुर में ट्रॉफी विद्यमान
3.	1937, 1941	डूंगरपुर	राजधानी वन खण्ड में शिकार किया गया।	उदयविलास पैलेस डूंगरपुर में ट्रॉफी विद्यमान
4.	1938	डूंगरपुर	आमझरा वन खण्ड में शिकार किया गया।	उदयविलास पैलेस डूंगरपुर में ट्रॉफी विद्यमान
5.	1943–44	जोगनमाता क्षेत्र (फुलवारी अभयारण्य)	पानरवा ठिकाने के 21वें राणा श्री मोहब्बत सिंह द्वारा शिकार किया गया।	शर्मा, 2000, 22वें राणा मनोहर सिंह सोलंकी(निजी वार्तालाप, 2002–2007)
6.	1945	सीतामाता (वर्तमान में अभयारण्य है)	क्षेत्र में जब–तब आसानी से देखे जा सकते थे	श्री हर्षवर्धन (निजी वार्तालाप, 2012)

7.	1946	चूल रवैया(रेंज बिछीवाड़ा)	वन क्षेत्र में शिकार किया गया ।	उदयविलास पैलेस डूंगरपुर में ट्रॉफी विद्यमान
8.	1950	ओगणा–रामकुण्डा, पानरवा व ढेड़मारिया वन खण्ड	बाघ वन क्षेत्र में दिखाई देते थे।	राणा मनोहर सिंह सोलंकी (निजी वार्तालाप, 2002–2007)
9.	1952	ओगणा	मण्डल वन अधिकारी, उदयपुर ने ओगणा वन क्षेत्र में आदमखोर बाघ को मारने हेतु प्रसिद्ध शिकारी ए0 के0 तहसीन को पत्र लिखा।	मण्डल वन अधिकारी, उदयपुर का पत्र क्रमांक सी/1661 दिनांक 22.09.1952
10.	1953	पालीसोड़ा(डूंगरपुर)	बाघ का शिकार होने की जानकारी है।	सहगल, 1974
11.	1960	ढेडमारिया वन खण्ड (फुलवारी की नाल अभयारण्य)	एक बाघ का शिकार तत्कालीन उप क्षेत्रीय वन अधिकारी, श्री हीरापुरी गोस्वामी ने किया।	तत्कालीन जूडा ठिकाने के पुलिस अधिकारी श्री अब्दुल अजीज फौजदार द्वारा उपलब्ध कराया बाघ एवं शिकारियों का श्वेत–शाम फोटो(शर्मा, 2007)
12.	1962	मामेर	मामेर के पास के जंगल में एक बाघ रहता था जो कई बार ठिकाने के तालाब पर पानी पीने आता था।	राव हिम्मत सिंह सोलंकी (निजी वार्तालाप, 2002)
13.	1964	तख्ता जी का वेरा	राव सज्जन सिंह के पिता ने शिकार किया।	राव सज्जन सिंह धाणेराव (निजी वार्तालाप, 2002)
14.	1967	बांकी वन खण्ड	एक मादा बाघ का शिकार किया गया।	रजा तहसीन (निजी वार्तालाप, 2010)
15.	1972	कालादूक वन क्षेत्र (कुंभलगढ़ अभयारण्य)	आदम खोर हो जाने से श्री सज्जनसिंह धाणेराव द्वारा शिकार किया गया।	राव सज्जन सिंह धाणेराव, (निजी वार्तालाप, 2002)
16.	1973	देबारी	सडक पार करते देखा।	रजा तहसीन (निजी वार्तालाप, 2010)

उपरोक्त सारणी से स्पष्ट है आजादी के बाद तक दक्षिण राजस्थान में बाघ उपस्थित थे। 1970 तक क्षेत्र में बाघ की उपस्थिति के प्रमाण मौजूद हैं। बाघ का शिकार 1972 तक होने की सूचना है। तत्समय वन्यजीव संरक्षण अधिनियम 1972 आने के बाद ही शाही शिकार पर रोक लगी। उपरोक्त सूचना से स्पष्ट है कि दक्षिण राजस्थान में बाघ 1970 से 1980 के बीच विलुप्त हुआ।

4.3 बाघ से जूड़े भूमि चिन्ह

दक्षिणी राजस्थान में वनों का विस्तार बड़े भू–भाग पर रहा है। उसी अनुपात में बाघ भी दूर–दूर तक विद्यमान थे। बाघों के नाम पर अनेक जगहों का नामकरण भी हुआ। बाघ तो आज नहीं रहे लेकिन भूमि चिन्हों के बाघ से जुड़े नाम आज भी प्रचलित हैं। कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

क्र.सं.	स्थान	बाघ से नाम पाये स्थल का विवरण	नामकरण का कारण
1.	फुलवारी की नाल अभयारण्य	"वाघ रा भेंगरा"	इस पहाडों में पहले कई वाघ (बाघ) निवास करते थे अतः यह नाम पडा ।
2.	फुलवारी की नाल अभयारण्य	"वाघ रा पानी"	इस जल स्त्रोत पर वाघ (बाघ) पानी पीने आया करते थे अतः यह इसी नाम से प्रसिद्ध हो गया ।
3.	नाहर मगरा	"नाहर मगरा" (नाहर=बाघ , मगरा=पर्वत)	उदयपुर – मावली मार्ग पर स्थित इस पहाडी वन क्षेत्र में कभी नाहर (बाघ) रहा करते थे अतः पहाड़ का यह नाम प्रचलन में आया ।

बाघ के नाम पर जगहों के ये नाम यों ही नहीं पड़े। कभी बाघों की उपस्थिति उस स्थान पर होने के कारण ही ये नाम प्रचलन में आये जो आज भी यथावत चलन में हैं।

5. दक्षिणी राजस्थान में बाघ शिकार की प्रचलन में रही आखेट विधियाँ

दक्षिणी राजस्थान में अनेकों बाघ–आखेट विधियों का चलन था। कुछ विधियाँ निम्नलिखित हैं–

5.1 टोकरा विधि– डूंगरपुर महारावल लक्ष्मण सिंह अच्छे शिकारी तो थे ही, अच्छे वन्यप्राणी विशेषज्ञ भी थे। उन्होंने बाघ के शिकार के लिए अपना अलग तरीका इजाद किया। एक टोकरे में चार छेद कर टोकरे में बकरे को बिठा कर उसके चारों पैर नीचे लटका दिये जाते थे। बकरे की पीठ पर से एक रस्से को निकाल, टोकरे के किनारों से बांधा जाता था ताकि बकरा टोकरे से निकल कर भागे नहीं। इस टोकरे को हवा में चार रस्सों की मदद से वृक्ष पर इतना ऊँचा लटकाया जाता था कि बाघ उछल कर भी टोकरे को पकड़ नहीं पाए। शिकारी उचित दूरी पर रहकर बाघ का इंतजार करते तथा बाघ आकर जब बकरे को लपकने के प्रयास में हवा में उछलता, उसका शिकार किया जाता था।

5.2 **मचान विधि**– जूड़ा, मामेर व पानरवा ठिकाने के जंगलों में शिकार औदियां बनाने का चलन नहीं था। बाघों के पद चिन्हों के जानकार खोजी की सूचना पर बाघों के आवागमन क्षेत्र में पाड़ा बांध कर बेटिंग की जाती थी। शिकारी वृक्षों पर बनाये मचान या चारपाई के लटकते मचान पर बैठकर शिकार करते थे। इस तरह से शिकार शरद व ग्रीष्म के मौसम में किया जाता था। वर्षा में इन क्षेत्रों के वनों में नदी–नालों में पानी की अधिकता हो जाती थी तथा सामान्य आवागमन बुरी तरह बाधित हो जाता था। अतः वर्षा में बाघ आखेट नहीं होता था। शिकार हेतु सर्दी सबसे अच्छा समय माना जाता था। उस समय मक्खी–मच्छरों का प्रकोप भी कम हो जाता था जिससे मचान पर देर तक बैठने से कठिनाई नहीं होती थी। इस समय सर्दी की फर आ जाने से मारे गये प्राणियों के शरीर से गहरे रंग व धब्बों की खाल भी प्राप्त होती थी।

5.3 **टाटी विधि**– मचान व शिकार औदी की बजाय घास–पात की एक टाटी बना कर, उसे जमीन पर रख कर, उसके पीछे छिपते हुए बाघ शिकार का नया तरीका महारावल लक्ष्मण सिंह ने प्रारम्भ किया। इस विधि में सफलता हेतु बहुत अनुभव एवं कौशल की जरूरत होती है (कर्नल गुमान सिंह, 2002)।

5.4 **हाका विधि**– इस विधि में मचान या औदी में शिकारकर्ता बैठते तथा एक तरफ से हाका करते हुए कुछ लोगों की भीड बाघ को शिकारी की तरफ से गुजरने को बाध्य करती। हाका शान्त, हल्ला करते हुये या ढोल पीटते हुए किया जाता था। जैसे ही बाघ शिकारकर्ता के सामने से गुजरता, उस पर गोली दागी जाती थी। हाका विधि को सफल बनाने हेतु औदियों के बनाने के स्थल का चुनाव काफी सोच–समझकर किया जाता था। औदी ऐसी जगह बनायी जाती थी जहाँ कोई व्यवधान न हो, जहाँ से दूर तक का दृश्य साफ दिखता हो तथा जहाँ से बाघ को किसी एक दिशा में भगाना या मोड़ना सहज रहता हो। कुछ औदियां निगरानी एवं निर्देशन के काम आती थी जो अपेक्षाकृत ऊँचाई पर बनायी जाती थी तथा शिकारियों द्वारा काम में ली जाने वाली मुख्य औदी से वहाँ नेत्र–सम्पर्क सभंव रहता था।

6. बाघों का पुनः आबादीकरण

सम्भवतः दुनिया का पहला बाघ पुनः आबादीकरण राजस्थान की डूंगरपुर रियासत में हुआ। "छप्पणिया अकाल" की भीषण विभीषिका इसका कारण बनी । 1899–1900 ई0 में पड़ा अकाल "छप्पणिया अकाल" के नाम से प्रसिद्ध है। भयंकर अकाल के कारण जंगलों की हरियाली व उत्पादकता अत्यन्त घट गई। चारे की बहुत अधिक कमी हो गई। पीने के जल स्त्रोत सूख गये। फलतः बहुत बडी संख्या में पालतू एवं जंगली शाकाहारी प्राणी मर गये। शाकाहारी प्राणियों के नष्ट हो जाने से बहुसंख्य मांसाहारी जीव भी भूखे मर गये। डूंगरपुर रियासत अकाल के दौरान बाघ विहीन हो गई।

डूंगरपुर रियासत से उदयपुर रियासत की सीमा सटी हुई थी। उदयपुर की खैरवाड़ा, संलूम्बर एवं धरियावाद तहसील डूंगरपुर की उत्तरी सीमा बनाते हैं। छप्पणिया अकाल के महाविनाश के उपरान्त भी खैरवाड़ा के जंगलों में कुछ बाघ बच गये थे। अकाल का प्रकोप कम होने पर डूंगरपुर के तत्कालीन शासक महारावल लक्ष्मण सिंह ने बहुत वैज्ञानिक तरीके से खैरवाड़ा के कुछ बाघों को डूंगरपुर रियासत के जंगलों में प्रवेश कराने में सफलता प्राप्त की। इसके लिए डूंगरपुर की सीमा पर राजधानी, वैणका वन क्षेत्र में बकरे व पाड़े

बांधे गये। खैरवाड़ा क्षेत्र के बाघ इस सहज भोजन की तरफ आकर्षित होने लगे। धीरे–धीरे बकरों–पाड़ों को बांधने के स्थान सीमा के अंदर की तरफ धीरे–धीरे खिसकाने प्रारंभ किये गये। अंततः डूंगरपुर सीमा में काफी अंदर तक बाघों को खीचने में मदद मिली। अन्दर आये बाघों में अनेकों ने वहीं अपना प्रभुत्व क्षेत्र बना लिया और वे डूंगरपुर के जंगलों में स्थायी रूप से रहने लगे। बाघ विहीन जंगल में पुनः बाघ आबाद हो गये। इस तरह विश्व का प्रथम बाघ पुनः आबादीकरण कार्य सफल साबित हुआ (श्री समर सिंह, निजी वार्तालाप, 2007)।

डूंगरपुर रियासत में 1907 में वन विभाग स्थापित हुआ इससे वन एवं बाघ संरक्षण व प्रबंधन को गति मिली। 1915 में बाघ डूंगरपुर वन क्षेत्र में पुनः दिखने लगे। वस्तुतः संख्या 3–4 ही थी। कुछ बाघ महारावल द्वारा शिवपुरी के वनों से भी मंगवाकर डूंगरपुर रियासत के जंगलों में छोड़े गये (श्री समर सिंह, निजी वार्तालाप, 2007)।

1935–1949 के मध्य बाघों की संख्या 20–25 पहुंच गयी। बाघों द्वारा मवेशी मारे जाने पर पीड़ित लोगों को मुआवजा दिया जाता था इससे लोग बाघों को शत्रु के रूप में नहीं देखते थे। बाघ संरक्षण एवं प्रबंधन का यह अनुकरणीय उदाहरण है (श्री समर सिंह, निजी वार्तालाप, 2007)।

7. दुनिया की एकमात्र बाघ समाधि राजस्थान में

छप्पणिया अकाल के बाद डूंगरपुर के जंगलों में पुन बाघ आबाद करने हेतु महारावल ने शिवपुरी के जंगलों से भी कुछ बाघ लाकर डूंगरपुर के वनों में छोड़े। स्थानीय व बाहरी बाघों के मिलन से अन्तः प्रजनन की संभावना को कम करने का यह एक वैज्ञानिक प्रयास था। शिवपुरी से आये बाघों में एक बाघ का नाम महारावल द्वारा "बोखा" रखा गया था जो उनको काफी प्रिय था। बोखा नामक इस बाघ की मृत्यु 16.12.1934 को हुई। महारावल ने बोखा को उनके नवलखा फार्म पर नवलखा बावड़ी के किनारे दफन करवाया। बोखा की याद में उसकी समाधि बनायी गयी। समाधि पर लगे पत्थर पर हिन्दी में समाधिलेख (चित्र 2) के रूप में "बोखा" शब्द अंकित है तथा उसकी मृत्यु तिथि 16.12.1934 भी अंकित है। विश्व में सम्भवतः बाघ की यह एकमात्र समाधि है। दक्षिण राजस्थान में स्थित इस अजूबे की तरह ही उत्तरी राजस्थान में अलवर जिले में बाघ परियोजना सरिस्का की पूर्वी सीमा पर बालेटा गाँव के पास बाघ के साथ एक देवी रूप महिला के सती होने की किम्वदंती भी सुनने को मिलती है। आज उसे "नाहर सती" देवी के रूप में जाना व पूजा जाता है। वहाँ नाहर सती का मंदिर भी विद्यमान है। बाघ के प्रति सम्मान प्रकट करने के ये अनुपम उदाहरण राजस्थान में विद्यमान है।

8. "लोगो" में बाघ

राजस्थान के रजवाडों के "लोगो " में वन्यप्राणियों को काफी अपनाया गया है। दक्षिण राजस्थान में मेवाड़ क्षेत्र के झाडोल ठिकाने में दो तरफ बाघ, क्रॉस रूप में लगी दो तलवारें जो ढाल के पीछे प्रदर्शित हैं जो "लोगो" के रूप में अपनायी गयी हैं। ढाल को सूर्य के प्रतीक में प्रदर्शित किया है तथा उसके केन्द्र में मानव मुख आकृति अंकित है। "लोगो" में बाघ का अंकन उसके प्रति शासकों का लगाव प्रदर्शित करता है ।

9. कानून अपने–अपने

मेवाड, डूंगरपुर आदि दक्षिण राजस्थान की रियासतों के अपने–अपने वन एवं वन्यप्राणी कानून थे। डूंगरपुर रियासत का वन्यप्राणियों से संबधित "कानून हिफाजत जंगली जानवरान राज्य डूंगरपुर" 10 सितंबर 1933 को स्वीकृत हुआ एवं 1 नवम्बर 1933 से लागू हुआ। इस कानून में धारा 2(2) में 12 प्राणियों यथा बाघ, तेंदुआ, शियागोह, रीछ, साँभर, चीतल, नीलगाय, काला हिरण, चौसिंगा या बुटार, बन्दर, मोर, एवं सारस को मारने पर प्रतिबंध था। धारा 5 में जंगली कुत्ता, जरख, वरी या भेड़िया, सियाल, सूअर, मगर तथा छोटे प्राणी जैसे चिंकारा, खरगोश, तीतर, मछली आदि मारने की स्वीकृति थी। जंगली कुत्ते को मारने पर खाल मय सिर पेश करने पर 31/– रूपये पुरस्कार राज्य द्वारा दिये जाते थे। जान–माल का खतरा होने पर दरबार (शासक) द्वारा धारा 6(1) में निषिद्ध जानवरों को भी मारने की स्वीकृति/छूट दी जाती थी। यहाँ स्पष्ट है बाघ व अन्य प्राणियों के शिकार पर पाबन्दी थी। साँभर व चीतल के शिकार पर भी पाबंदी थी जिससे बाघ के भोजन की सुरक्षा संभव हो पाती थी तथा प्राकृतिक खाद्य श्रृँखलाएं सुरक्षित रहती थी। वन्यप्राणियों की जंगलों में संख्या बहुत थी अतः आखेट का चलन भी था। सुरक्षा उपाय कड़े थे। वनों को प्रबंधित करने हेतु भी पृथक से नियम बनाये गये। उदाहरणार्थ डूंगरपुर रियासत ने "कानून जंगल रियासत डूंगरपुर" 1941 में बनाया गया जिसमें दफा 3(यानी धारा 3) में निम्न 7 तरह के जंगल वर्गीकृत कर उनका प्रबन्धन किया गया।

क्र.सं.	जंगल	प्रबन्धन विधि
1.	रावत नं. 1	शिकारगाह के रूप में प्रबंधित किये जाते थे। ये बाघ के मुख्य आवास थे तथा इन जंगलों से वन उपज हटाना मना था।
2.	रावत नं. 2	इन जंगलों में वन उपज नियमानुसार निकास की जाती थी।
3.	महफूज जंगल	इन जंगलो को सुरक्षित करार किया गया यानि यह सुरक्षित वन क्षेत्र थे।
4.	देवस्थान रखत मालवण	धार्मिक स्थानों के आस–पास के वन क्षेत्र "रखत" के रूप में बचाये जाते थे। "रखत" से आशय है धार्मिक उदेश्य से रखे जाने वाले वन।
5.	बीड़	घास के उत्पादन, संग्रह व चराई हेतु विशेष क्षेत्र ।
6.	गाँवई जंगल	गावों के आस–पास पड़त रकबा जिससे गाँवों को विभिन्न वन उत्पाद मिलते थे ।
7.	ओहदेदार जंगल	ऐसे वन जिनका राज्य के किसी ओहदे(पद) पर आसीन कोई व्यक्ति स्वीकृति उपरान्त उपयोग कर सकता था।

उपरोक्त प्रबन्ध व्यवस्था से लोगों की आवश्यकताएं पूरी होती थी एवं वन्यजीव विशेषकर आवास भी सुरक्षित रहते थे। खासकर रावत न. 1 शिकारगाह के रूप में प्रबंधित होते थे जिनमें बाघ व अन्य प्राणियों को सुरक्षित एवं पारिस्थितिकीय दृष्टि से समृद्ध आवास उपलब्ध रखता था।

10. निष्कर्ष

दक्षिण राजस्थान में कभी सिंह की उपस्थिति थी। आबू, अनादरा, उदयपुर तक सिंह था (बर्के 1928, सिन्हा 1989)। आबू में 1881 एवं अनादरा में 1872 तक सिंह था (सिन्हा 1989; शर्मा 2007)। उन्नसवीं सदी के समाप्त होते–होते सिंह दक्षिण राजस्थान से समाप्त हो गये। वर्ष 1947 में आजाद होने एवं उसके बाद तीन दशक तक दक्षिण राजस्थान के जंगलों में बाघ की उपस्थिति थी। इसके बाद दक्षिण राजस्थान में बाघ 1970 से 1980 के मध्य समाप्त हुआ। मार्च 3, 1993 को डूंगरपुर वन मण्डल के सीमलवाड़ा रेंज के भरनी नाका के गराड़ा वन खण्ड में एक नर बाघ कहीं से भटक कर आ गया। आदिवासियों ने इस बाघ को मार डाला। वर्ष 1999 में माउन्ट आबू अभयारण्य में एक बाघ कहीं से आकर दिखने लगा (श्री महेन्द्र सक्सेना वनपाल, निजी वार्तालाप 1999)। इसी वर्ष 15 जुलाई, 2003 को दर्रा अभयारण्य में दर्रा की नाल में एक बाघ कहीं से आया जो रेल से टकरा कर मारा गया। अपनी सहज प्रवृत्ति से बाघों की अपने पुराने वितरण क्षेत्र में पहुंचने की ये घटनायें इंगित करती हैं कि प्राकृतिक आवासों को यदि समृद्ध रखा जाये एवं सुरक्षा प्रभावी रखी जाये तो पुनः आबादीकरण की संभावनाएं बनी रहती हैं।

धीरे–धीरे वनों का खण्डकरण बढ़ता चला गया। बाघ जिन प्राणियों पर भोजन के रूप में निर्भर करता था मनुष्यों ने उनका बड़े पैमाने पर शिकार कर बाघ के समक्ष भोजन की समस्या उत्पन्न की। अवैध शिकार हुए, बढ़ती जनसंख्या से वनों में मानवीय हस्तक्षेप अत्यधिक बढ़ गया। खेती विस्तार हेतु वन विनाश हुआ। सभी नकारात्मक कारकों का सामूहिक प्रभाव यह रहा कि दक्षिण राजस्थान से सिंह के बाद बाघ भी समाप्त हो गया। बाघ को दक्षिणी राजस्थान में पुनः आबाद करने हेतु वर्तमान में उपयुक्त परिस्थितियां नहीं हैं। उपयुक्त आवास तो उपलब्ध हैं लेकिन टूटी खाद्य श्रृंखलाओं के कारण उसके भोजन की कमी है। पहले शाकाहारी प्राणियों की संख्या को बढ़ा कर उचित स्तर पर लाया जाये फिर पुनः बाघ को आबाद करना संभव है। दक्षिण राजस्थान में कुम्भलगढ़ एवं दक्षिण–पूर्वी राजस्थान में दर्रा अभयारण्य इसके लिए सबसे उपयुक्त स्थान है। तत्कालीन समय की शिकार औदियों का संरक्षण कर उन्हें परिस्थतिकीय पर्यटन से भी जोड़ा जा सकता है तथा आग लगने के स्थानों का पता लगाने एवं वन्यप्राणी गणना स्थल के रूप में उनका उपयोग किया जा सकता है। इन औदियों का प्रमाणिक दस्तावेजीकरण भी समय की मांग है।

11. आभार

लेखक वन विभाग के अधिकारियों– कर्मचारियों, देशी रियासत के ठिकानेदारों, ओहदेदारों, आदिवासियों एवं उन सभी का आभारी है जिन्होंने प्रस्तुत अध्ययन में सहयोग किया।

सन्दर्भ

1. रामकृष्ण, जे0 आर0 बी0; एवं गोपाल, राजेश(2006) "फॉनल डायवर्सिटी ऑफ टाइगर रिजर्व इन इण्डिया", खण्ड 1।
2. अनाम(1933) "कानून हिफाजत जंगली जानवरान राज्य डूंगरपुर" (न. 379, स्वीकृति दिनाक 10 सितम्बर 1933)।
3. बर्के, एस0(1928) "द इण्डियन फील्ड शिकार बुक", ठाकर स्पिंक एण्ड कं0, कलकत्ता तथा शिमला।
4. चौधरी, बी0 आर0(2008) "वाइल्ड वर्डस ऑफ इण्डिया", लियोगी बुक्स, नई दिल्ली।
5. घोष, ए0(2007) "विरासत", वन विभाग, राजस्थान।
6. कर्नल सिंह, जी0(2002) "ए ट्रिब्यूट टू मेहरावल लक्ष्मण सिंहजी एज कंजर्वेशनिस्ट", चीतल, खण्ड 40, अंक 1–2, मु0पृ0 75–77।
7. कोठारी, ए0 एस0 एवं छपगर, बी0 एफ0(2005) "ट्रेजर्स ऑफ इण्डियन वाइल्ड लाइफ", बी0एन0एच0एस0 एण्ड ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
8. मीणा, जे0 सी0(2003) "भील जनजाति का सौंस्कृतिक एवं आर्थिक जीवन", हिमान्शु पब्लीकेशन, उदयपुर तथा दिल्ली।
9. रिचर्डसन, डी0(1992) "बिग कैट्स", व्हिटर बुक्स, लन्दन।
10. सहगल, के0 के0(1974) "राजस्थान डिस्ट्रिक्ट गेजेटियर", डूंगरपुर, मु0पृ0 1–408।
11. सिन्हा, एस0 के0(1989) "कलरफुल वाइल्डलाइफ ऑफ गुजरात", गुजरात फॉरेस्ट डिपार्टमेंट।
12. शर्मा, एस0 के0(2007) "स्टडी ऑफ बायोडायवर्सिटी एण्ड एथनोबायोलॉजी ऑफ फुलवारी वाइल्डलाइफ सैंक्चुरी, उदयपुर, राजस्थान", पी–एच0 डी0 थीसिस, मोहनलाल सुखड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर, राजस्थान।
13. शर्मा, एस0 के0(2010) "ए नोट ऑन डिस्ट्रीब्यूशन रेंज ऑफ हनुमान लंगूर सेम्नोपिथेकस एन्टेलस(ड्यूफ्रेज्न) एण्ड रहेसस मैकेक मकाका मुलट्टा (जिमरमान) इन राजस्थान", जे0बी0एन0एच0एस0, खण्ड 107, अंक 1, मु0पृ0 48–51।

नोट– डूंगरपुर व दक्षिण राजस्थान में लंगूर को बन्दर व वांदरा कहा जाता है। इस क्षेत्र में बन्दर प्राकृतिक रूप से विद्यमान नहीं है (शर्मा 2010)।



चित्र–1
जयसमन्द वन क्षेत्र में स्थित शिकार औदी



चित्र–2
"बोखा" बाघ की समाधि

विकलांगता एवं गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त लोगों में समुत्थान शक्ति एवं जीवन सन्तुष्टि के मध्य संबंध का अध्ययन

सोनल अग्रवाल
शोध छात्रा, यू0जी0सी0–जे0आर0एफ0
मनोविज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226007, उ0 प्र0, भारत
aka.rs1986@gmail.com

सार

प्रस्तुत शोध पत्र में शारीरिक विकलांगता एवं गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त लोगों में समुत्थान शक्ति एवं जीवन सन्तुष्टि के मध्य संबंध उजागर करने का प्रयास किया गया है, इस अध्ययन में यह परिकल्पना की गई है कि प्रतिकूलता की स्थिति में उच्च समुत्थान शक्ति वाले लोग अपने जीवन में अधिक सन्तुष्टि का अनुभव करते हैं। इस अध्ययन में शारीरिक विकलांगता एवं गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त 40 लोगों का प्रतिदर्श लिया गया है। इस अध्ययन में सम्मिलित सभी प्रतिभागियों की आयु 18 वर्ष से 50 वर्ष के मध्य है। समुत्थान शक्ति को नापने हेतु संक्षिप्त समुत्थान शक्ति स्केल तथा जीवन संतुष्टि के मापन हेतु एड डायनर द्वारा सृजित जीवन संतुष्टि स्केल का प्रयोग किया गया है। संक्षिप्त समुत्थान स्केल एवं जीवन संतुष्टि स्केल में समस्त प्रतिभागियों द्वारा प्राप्त किये गये अंकों के बीच सह–संबंध की गणना की गई है और यह सह–संबंध 0.86 आया। इस आधार पर यह पाया गया कि ऐसे प्रतिभागी जो प्रतिकूलता की स्थिति में उच्च स्तर की समुत्थान शक्ति का प्रदर्शन करते हैं, वह शारीरिक विकलांगता या गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त होने के बावजूद अपने जीवन में अधिक जीवन संतुष्टि को भी अनुभव करते हैं।

A study on the relationship between Resiliency and Life satisfaction among persons suffering from physical disability and chronic illness

Sonal Agrawal
Research scholar, UGC-J.R.F.
Department of Psychology, Lucknow University, Lucknow-226007, U.P., India
aka.rs1986@gmail.com

Abstract

In the present research paper, an attempt has been made to find out relationship between resilience and life satisfaction among persons suffering with physical disability and chronic diseases. It is hypothesized that such persons having high resilience also experienced greater satisfaction in their lives. For this purpose, a sample of 40 persons suffering from physical disability and chronic diseases was taken in age range of 18 to 50 years. "Satisfaction with life scale" developed by Ed Diner and "Brief Resiliency scale' were used for measuring the two variables under study. The data thus collected was subjected to statistical analysis- Correlation Coefficient developed by Pearson. The result reveals a positive correlation i.e. 0.86 between 'Resilience' and 'life satisfaction' indicating that such persons having high resilience also experience greater satisfaction in their lives.

1. प्रस्तावना

1970 के दशक में विकासात्मक वैज्ञानिकों का एक कोर ग्रुप गम्भीर चुनौतियों के बावजूद जीवन में सफल रहे, बच्चों का अध्ययन करने लगा और इन वैज्ञानिकों ने इन बच्चों को समुत्थानशील कहा और इन बच्चों की उपलब्धियों ने चिकित्सकों व शोधकर्ताओं का ध्यान आकर्षित किया। समुत्थान शक्ति की सबसे उचित परिभाषा वापस उछाल है। समुत्थान शक्ति के प्रदर्शन हेतु चयनित लोगों में दो कारकों का होना अनिवार्य है। पहला यह है कि उसके जीवन में विपरीत परिस्थितियां हैं जो कि शारीरिक विकलांगता, गम्भीर बीमारियों या अन्य कारणों के कारण हैं तथा दूसरा कारक यह कि उन गम्भीर परिस्थितियों के बावजूद भी वह व्यक्ति सामान्य या सामान्य से ऊपर व्यवहार प्रदर्शित कर रहा है या सफलता या उपलब्धियां अर्जित कर रहा है। अगर किसी व्यक्ति में यह दोनों कारक उपलब्ध हैं तो उसे समुत्थानशीलता श्रेणी में डाला जा सकता है। समुत्थानशीलता व्यक्ति की उस प्रवृत्ति को कहते हैं जिससे वह प्रतिकूलता या तनाव की स्थिति का बहादुरी से सामना करता है और इन विषम परिस्थितियों को हराते हुये उन पर विजय प्राप्त करता है तथा सामान्य श्रेणी के व्यक्ति द्वारा अर्जित उपलब्धियों के बराबर या उससे अधिक उपलब्धियां प्राप्त करता है। हम सभी सामान्य व्यक्ति हैं, परन्तु हम सबमें असीमित सम्भावनाएं एवं शक्तियां गुप्त रूप में छिपी हुई हैं। जीवन की विपरीत परिस्थितियों में इन छिपी हुई सम्भावनाओं एवं शक्तियों को पहचान कर, उनको उजागर तथा सकारात्मक व्यवहार कर हम विपरीत परिस्थितियों पर विजय प्राप्त कर सकते हैं एवं सामान्य जीवन जी सकते हैं। एक बार यदि व्यक्ति इस समुत्थान शक्ति के महत्व को समझ लेते हैं तो उनके जीवन में विपरीत परिस्थितियों से लड़ने की क्षमता जागृत हो जाती है और वह अवसाद, चिन्ता, भय, लाचारी की अवस्था पर आसानी से विजय प्राप्त कर लेता है। जीवन में विपरीत परिस्थितियों के आने पर व्यक्ति का कोई नियंत्रण नहीं है। यह विपरीत परिस्थितियां प्राकृतिक दुर्घटनाओं, प्राकृतिक आपदाओं, अपराध, बीमारी, अर्थव्यवस्थाओं में उतार–चढाव के कारण हो सकती हैं। इनके होने पर व्यक्ति का नियंत्रण नहीं है, परन्तु इन विपरीत परिस्थितियों का व्यक्ति कैसे सामना करे इसमें व्यक्ति पूर्ण रूप से स्वतंत्र है। यदि व्यक्ति जीवन या घटनाओं के सकारात्मक पहलुओं पर ध्यान केन्द्रित करें तो विपरीत परिस्थितियों को व्यक्ति हरा सकता है और जीवन में अपार सन्तुष्टि का अनुभव कर सकता है।

समुत्थान शक्ति की व्याख्या निम्नलिखित कारकों के माध्यम से हो सकती है–

1. उच्च जोखिम की परवाह किये बिना अच्छे परिणाम
2. तनाव की स्थिति में भी सतत क्षमता
3. अभिघात की स्थिति में मुक्त होना
4. विकास की चुनौतियों का प्रयोग करना जिससे भविष्य की कठिनाईयों को सहनीय बनाया जाय।

समुत्थान शक्ति को बढाने हेतु निम्नलिखित घटकों की पहचान की गई है–

1. प्रभावी एवं स्वस्थ तरीके से तनाव से निपटने की क्षमता
2. समस्याओं को हल करने की अच्छी शक्ति
3. मदद स्वीकार करना
4. यह विश्वास रखना कि भावनाओं पर नियंत्रण किया जा सकता है और उन पर विजय प्राप्त की जा सकती है।
5. सामाजिक समर्थन उपलब्ध होना एवं स्वीकार करना
6. एक परिवार या मित्रों के रूप में दूसरों से जुड़ने की शक्ति
7. प्रियजनों को आघात का आत्मप्रकटीकरण
8. आध्यात्मिकता
9. विषम परिस्थितियों के शिकार न बनकर एक विजयी के रूप में अवतरित होना
10. दूसरों की मदद
11. आघात में सकारात्मक अर्थ ढूंढना।

समुत्थान शक्ति का सृजन

अमेरिकन मनोवैज्ञानिक परिषद ने समुत्थान शक्ति के सृजन हेतु निम्न 10 तरीके बताए हैं–

1. पारिवारिक सम्बन्धों, मित्रों एवं अन्य लोगों से सम्बन्धों से घनिष्ठता एवं आत्मीयता
2. विपरीत परिस्थितियों को असहनीय न मानना
3. ऐसी परिस्थितियों को जो बदली नहीं जा सकती हैं, उन्हें स्वीकार करना
4. यथार्थवादी लक्ष्यों को निर्धारित कर उनको प्राप्त करने का प्रयास करना
5. विपरीत परिस्थितियों में निर्णायक कर्म करना
6. विपरीत परिस्थितियों में आत्मखोज करना
7. विपरीत परिस्थितियों को विस्तृत परिप्रेक्ष्य में देखना और जीवन में दीर्घकालीन दृष्टिकोण रखना
8. आत्मविश्वास को बढाना
9. आशावादी दृष्टिकोण रखना और शुभ घटनाओं की परिकल्पना करना तथा उनके घटित होने की आशा करना
10. मन एवं शरीर को मजबूत रखना, रोज व्यायाम करना और मन को तनाव मुक्त रखना और उन क्रियाकलापों में संलग्न रखना जिससे मन को शान्ति मिले।

उत्तरी कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय, अमेरिका के द्वारा किए गए अध्ययन से यह बात सिद्ध हुई है कि ऐसे लोग जो अपने जीवन में लगातार सकारात्मक भावनाओं का सृजन करते हैं, वह विपरीत परिस्थितियों में अधिक समुत्थान शक्ति का प्रदर्शन करते हैं। समुत्थान शक्ति की अवकल्पना में किसी भी देश या भौगोलिक क्षेत्र में प्रचलित अवधारणाओं एवं संस्कृति की उपेक्षा की गई है। समुत्थान शक्ति के मापन के लिये क्या लक्ष्य निर्धारित किए जाएं, यह देश एवं संबंधित क्षेत्र में प्रचलित संस्कृति के अनुरूप ही निर्धारित किया जा सकता है। प्रत्येक क्षेत्र की संस्कृति के अनुरूप ही यह निर्धारित किया जा सकता है कि सकारात्मक शैक्षिक परिणाम, परिवार में स्वस्थ समायोज एवं मनोवैज्ञानिक रूप से स्वस्थ रहना, इन तीनों घटकों में किसको कितनी प्राथमिकता देनी है।

समुत्थान शक्ति के साधन

मेरटन एवं रीड ने अपने सघन अध्ययन के उपरान्त यह पाया कि निम्नलिखित रक्षात्मक घटकों का समुत्थान शक्ति के विकास के लिये होना आवश्यक है–

क्र.सं.	विवरण	रक्षात्मक घटक
1	बच्चों में अन्तर्निहित	अच्छी मानसिक योग्यता, समस्या पर ध्यान केन्द्रित करना एवं समस्या को हल करना, जीवन को सहज रूप से स्वीकार करना, अपने बारे में सकारात्मक विचार रखना, जीवन उददेश्य एवं अर्थ खोजना, भावनाओं पर कुशल नियंत्रण, स्वस्थ हास्य व्यंग्य में संलग्न रहना, ऐसे व्यक्तित्व का निर्माण करना जो सबको अच्छा लगे और लोग संबंध बनाने के इच्छुक हों।
2	परिवार में अन्तर्निहित	परिवार के उन लोगों से जो सुरक्षा एवं सुविधाएं प्रदान करते हैं, उनसे मधुर संबंध होना, परिवार में समस्त सदस्यों के मध्य सकारात्मक संबंध एवं एक दूसरे को उनकी कमियों के साथ स्वीकार करना, घर का वातावरण पूर्ण रूप से व्यवस्थित, माता–पिता का बच्चे का सर्वांगीण विकास कराना तथा समस्त संसाधन उपलब्ध कराना।
3	समाज में अन्तर्निहित	समाजिक संस्थाओं से सकारात्मक संबंध, समाजिक नियमों का मन से पालन करना, समाजिक कुरीतियों को दूर करना, गरीब एवं कमजोर वर्ग की हर सम्भव सहायता करना।

जीवन सन्तुष्टि

जीवन सन्तुष्टि का अर्थ वर्तमान की मनोदशा न होकर, बल्कि पूरे जीवन का समग्रता से सकारात्मक मूल्यांकन करना है। जीवन सन्तुष्टि इस बात पर निर्भर करती है कि हम जीवन में आने वाली धनात्मक एवं विषम परिस्थितियों का आंकलन कैसे करते हैं। यह आंकलन ही इन परिस्थितियों से निपटने के रास्ते को खोजने में मार्गदर्शन प्रदान करता है। यदि हमारा आंकलन सकारात्मक है तो हम विपरीत परिस्थितियों में मानसिक सन्तुलन को बनाए रखेंगे तथा परिस्थिति अनुरूप उचित प्रयास कर लक्ष्यों को प्राप्त कर सकेंगे

और जीवन में अपार सन्तुष्टि का अनुभव कर सकेंगे। जीवन सन्तुष्टि ही हमारे जीवन की कुशलता एवं सफलता का मापक है। जीवन सन्तुष्टि को आर्थिक, शैक्षिक, भौतिक मानदण्डों में सफलता के आधार पर मापा जाता है। मुख्य रूप से दो भावनाएं हैं जो जीवन सन्तुष्टि के लिये अपरिहार्य हैं– जीवन में आशा रखना एवं आशावादी दृष्टिकोण रखना। आशावादी दृष्टिकोण ही सच्चे मन से प्रयास करवाता है और वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति कराता है।

'सेटिस्फेक्शन विद लाइफ स्केल'(एस0डब्ल्यू0एल0एस0) एकमात्र मापक है जिससे हमें जीवन में कितनी सन्तुष्टि है, इसकी गणना कर सकते हैं।

मार्टिन सेलीगमैन के अनुसार वही लोग ज्यादा प्रसन्न रहते हैं जो विपरीत परिस्थितियों में भी सकारात्मक सोच रखते हैं। जीवन सन्तुष्टि, व्यक्ति विशेष के निजी मूल्यों एवं प्राथमिकताओं पर निर्भर करते हैं। कुछ लोगों के लिये परिवार महत्वपूर्ण है, कुछ के लिए आर्थिक उन्नति महत्वपूर्ण है और कुछ के लिये उनका पेशा महत्वपूर्ण है। अतः जीवन सन्तुष्टि व्यक्ति विशेष की सोच एवं प्राथमिकताओं पर निर्भर करती है। विभिन्न अध्ययनों से यह तथ्य उजागर हुआ है कि वह लोग जो जीवन में सन्तुष्टि का अनुभव करते हैं, वह जीवन के समस्त क्षेत्रों में सफलता प्राप्त करते हैं। 'ब्राड एण्ड बिल्ड' थ्योरी के अनुसार वह लोग जो सकारात्मक अनुभव एवं भावना रखते हैं, वह जीवन में केवल सन्तुष्टि का ही अनुभव नहीं करते बल्कि वह सकारात्मकता के सहारे ऐसे मानसिक संसाधनों को विकसित कर लेते हैं जो विभिन्न विपरीत परिस्थितियों में उनसे निपटने के लिए उचित मनोयोग को जन्म देने में सहायक होते हैं। रिफ एवं कीज ने अपने माडल में यह प्रदर्शित किया है कि मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं भावनात्मक खुशहाली से सम्पूर्ण जीवन ही, जीवन सन्तुष्टि का आधार है। निम्नलिखित चार्ट में इसका पूर्ण विवरण है–

मनोवैज्ञानिक खुशहाली	समाजिक खुशहाली	भावनात्मक खुशहाली
1 आत्म स्वीकृति	1 सामाजिक स्वीकृति	1 सकारात्मक प्रभाव
2 आत्म विकास	2 सामाजिक यथार्थवाद	2 नकारात्मक प्रभाव
3 जीवन में उद्देश्य	3 सामाजिक सहयोग	3 जीवन सन्तुष्टि
4 दूसरों से सकारात्मक संबंध	4 सामाजिक सामन्जस्य एवं सम्बद्धता	4 प्रसन्नता
5 स्वायत्तता	5 सामाजिक एकीकरण	
6 पर्यावरणीय दक्षता		

कीज ने यह कहा है कि पूर्ण मानसिक स्वास्थ्य के लिए उपरोक्त तीनों घटकों–यथा मनोवैज्ञानिक, सामाजिक एवं भावनात्मक खुशहाली आवश्यक है।

2. सामग्री एवं विधि

क. उद्देश्य

इस शोध पत्र का उद्देश्य शारीरिक विकलांगता एवं गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त लोगों में समुत्थान शक्ति एवं जीवन सन्तुष्टि के मध्य सम्बन्ध का अध्ययन किया गया है।

ख. परिकल्पना

ऐसे लोग जिनमें समुत्थान शक्ति उच्चतर स्थिति में है वह उन लोगों की अपेक्षा जिनमें समुत्थान शक्ति निम्नस्तर की है, वह विपरीत परिस्थितियों में भी अधिक जीवन सन्तुष्टि का अनुभव करते हैं।

ग. चर

समुत्थान शक्ति, जीवन सन्तुष्टि।

घ. प्रयुक्त प्रतिदर्श

40 लोगों का प्रतिदर्श, जिनकी आयु 18 वर्ष से 50 वर्ष के मध्य है और सभी प्रतिभागी शारीरिक विकलांगता या गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त हैं।

(ङ) स्केल का विवरण

1. ब्रीफ रेजीलेन्सी स्केल

ब्रीफ रेजीलेन्सी स्केल की संरचना समुत्थान शक्ति के मापन हेतु की गई है। इसकी मनोभिति का परीक्षण 4 प्रतिदर्श पर किया गया है जिसमें दो बच्चों का प्रतिदर्श एवं ऐसा प्रतिदर्श, जो हृदय रोग एवं गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त है, शामिल है। यह स्केल विश्वसनीय एवं तर्कसंगत है और इससे समुत्थान शक्ति का मापन एक संख्या में किया जा सकता है। यह व्यक्तिगण, लक्षणों, सामाजिक सम्बन्धों, सामना करने की क्षमता एवं स्वास्थ्य से सकारात्मक रूप से सम्बद्ध है एवं बेचैनी, अवसाद, नकारात्मक प्रभाव से नकारात्मक रूप से सम्बद्ध है। ब्रीफ रेजीलेन्सी स्केल स्वास्थ्य से सम्बन्धित विपरीत परिस्थितियों में व्यक्ति की समुत्थान शक्ति का परीक्षण करने का विश्वस्त एवं तर्कसंगत मापक है।

2. एड डायनर जीवन सन्तुष्टि स्केल(एस0डब्लू0एल0एस0)

यदि सेटिस्फेक्शन विद लाइफ स्केल जीवन सन्तुष्टि के मापन हेतु एड डायनर द्वारा सृजित स्केल है। जीवन की खुशहाली में जीवन सन्तुष्टि का अभूतपूर्व योगदान है। जीवन सन्तुष्टि का मापन समग्रता में या क्षेत्र विशेष जैसे आर्थिक, शैक्षिक, मानसिक, पारिवारिक में किया जा सकता है। एस0डब्लू0एल0एस0 जीवन सन्तुष्टि का समग्रता में मापन करता है। इसमें 05 प्रश्नों का प्रतिभागी को उत्तर देना है जिसमें मात्र कुछ मिनट लगते हैं। दिए गए उत्तरों के अनुरूप प्रतिभागी के इस स्केल पर अंक निर्धारित किए जाते हैं।

(च) आँकड़े एकत्रीकरण एवं विश्लेशण की विधि

प्रतिदर्श के चयन के उपरान्त सभी 40 प्रतिभागियों को 'ब्रीफ रेजीलेन्सी स्केल' एवं 'सेटिस्फेक्शन विद लाइफ स्केल' में वर्णित प्रश्नों के आधार पर उनके द्वारा दिये गए उत्तरों को नोट किया गया। उत्तरों के आधार पर उपरोक्त दोनों स्केलों में प्रत्येक प्रतिभागी द्वारा अर्जित अंकों की गणना की गई, जो उस प्रतिभागी की समुत्थान शक्ति एवं जीवन सन्तुष्टि का मापन करती है। यह प्रक्रिया सभी 40 प्रतिभागियों में की गई और सभी के दोनों स्केलों में प्राप्त अंकों को नोट किया गया। दोनों स्केलों पर प्राप्त अंकों के मध्य सह–सम्बद्धता गुणांक की गणना की गई, जिससे समुत्थान शक्ति एवं जीवन सन्तुष्टि के मध्य सम्बन्ध स्थापित किया जा सके।

3 परिणाम एवं चर्चा

क. प्राप्ताकों का तालिकाओं में प्रदर्शन एवं 'सहसम्बद्धता गुणांक' की गणना

तालिका – 1

समुत्थान शक्ति एवं जीवन सन्तुष्टि के मध्य सह–सम्बद्धता गुणांक की गणना तालिका

26	7	49	31	8.5	72.25	59.5
22	3	9	29	6.5	42.25	19.5
20	1	1	26	3.5	12.25	3.5
20	1	1	24	1.5	2.25	1.5
20	1	1	33	10.5	110.25	10.5
16	-3	9	20	-2.5	6.25	7.5
14	-5	25	17	-5.5	30.25	27.5
14	-5	25	17	-5.5	30.25	27.5
15	-4	16	18	-4.5	20.25	18
16	-3	9	15	-7.5	56.25	22.5
15	-4	16	18	-4.5	20.25	18
13	-6	36	17	-5.5	30.25	33
16	-3	9	20	-2.5	6.25	7.5
14	-5	25	18	-4.5	20.25	22.5
14	-5	25	18	-4.5	20.25	22.5
16	-3	9	17	-5.5	30.25	16.5
13	-6	36	15	-7.5	56.25	45
13	-6	36	16	-6.5	42.25	39
13	-6	36	16	-6.5	42.25	39
13	-6	36	14	-8.5	72.25	51
13	-6	36	14	-8.5	72.25	51
13	-6	36	11	-11.5	132.25	69
13	-6	36	14	-8.5	72.25	51
13	-6	36	14	-8.5	72.25	51
13	-6	36	11	-11.5	132.25	69
औसत =760/40=19		$\sum (X^1)^2$ = 1260	औसत =900/40=22.5		$\sum (Y^1)^2$ =1946	$\sum X^1 Y^1$ =1353

सहसम्बद्धता गुणांक (r)

$= \sum X^1 Y^1 / \sqrt{\sum (X1)2 \times \sum (Y1)2}$

$= 1353/\sqrt{1260 \times 1353}$

$= 1353/\sqrt{2451960}$

$= 1353/1565.87$

$= 0.86$

ख. प्राप्त आंकडों के आधार पर अध्ययन की व्याख्या एवं निष्कर्ष

इस अध्ययन का उद्देश्य शारीरिक विकलांगता एवं गम्भीर बीमारियों से ग्रस्त लोगों में 'समुत्थान शक्ति' एवं 'जीवन सन्तुष्टि' के मध्य संबंध स्थापित करना था। इस अध्ययन में यह परिकल्पना की गई थी कि प्रतिकूलता की स्थिति में 'उच्च समुत्थान शक्ति' वाले लोग अपने जीवन में अधिक सन्तुष्टि का अनुभव करते हैं। इस अध्ययन में शारीरिक विकलांगता एवं गंभीर बीमारियों से ग्रस्त 40 लोगों का प्रतिदर्श लिया गया था, जिनकी समुत्थान शक्ति के मापन हेतु 'संक्षिप्त समुत्थान शक्ति स्केल' तथा 'जीवन सन्तुष्टि' के मापन हेतु एड डायनर द्वारा सृजित जीवन सन्तुष्टि स्केल का प्रयोग किया गया है। संक्षिप्त समुत्थान शक्ति स्केल एवं जीवन सन्तुष्टि स्केल में समस्त प्रतिभागियों द्वारा प्राप्त किये गये अंकों के बीच सह–संबंध की गणना की गई है और यह सह–संबंध 0.86 आया। इस आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया कि ऐसे प्रतिभागी जो प्रतिकूलता की स्थिति में उच्च स्तर की समुत्थान शक्ति का प्रदर्शन करते हैं, वह शारीरिक विकलांगता या गंभीर बीमारियों से ग्रस्त होने के बावजूद अपने जीवन में अधिक जीवन संतुष्टि का अनुभव करते हैं। प्रायः यह पाया जाता है कि शारीरिक विकलांगता या गंभीर बीमारियों से ग्रस्त लोगों को समाज बहुत ही हेय दृष्टि से देखता है और उन पर तरस खाता है। इससे पीड़ित व्यक्ति का आत्मविश्वास कम हो जाता है और उसके मन में यह बैठने लगता है कि हम जीवन में कोई कार्य नहीं कर सकते हैं। यह हीनता धीरे–धीरे उनके आत्मविकास को अवरूद्ध कर देती है और वह कुंठा एवं अवसाद की स्थिति में चले जाते हैं। इस कुंठा एवं अवसाद की स्थिति से उन्हें बाहर निकालने में समुत्थान शक्ति की भूमिका आती है। जीवन में सकारात्मक विचारों के माध्यम से तथा सकारात्मक लोगों के संरक्षण में रहकर इस समुत्थान शक्ति को विकसित किया जा सकता है तथा इस अवसाद एवं कुंठा की स्थिति से मुक्त हुआ जा सकता है और अपने प्रयत्नों द्वारा उन लक्ष्यों को अर्जित किया जा सकता है जो सामान्य व्यक्ति प्राप्त कर सकते हैं। ऐसे उदाहरण अन्य लोगों के लिये जो शारीरिक विकलांगता एवं गंभीर बीमारियों से ग्रस्त हैं, के लिये उत्प्रेरक का कार्य करेंगे और वह अपनी समुत्थान शक्ति को विकसित करके, जीवन में अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर एक सफल जीवन जी सकें। इस अध्ययन से इस बात की पुष्टि हुई है कि विपरीत परिस्थितियों के बावजूद भी 'उच्च समुत्थान शक्ति वाले लोग' ज्यादा जीवन संतुष्टि का अनुभव करते हैं। अतः आवश्यकता है तो समुत्थान शक्ति का विकास। जीवन में सकारात्मक विचारधारा के साथ वातावरण एवं परिवेश में सकारात्मकता की ज्योति जगाकर, विकलांगता एवं गंभीर बीमारियों से ग्रस्त लोग अपनी समुत्थान शक्ति का विकास कर जीवन में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त कर जीवन संतुष्टि का अनुभव कर सकते हैं।

ग. सीमाएं एवं भविष्य में शोध की संभावनाएं

उपरोक्त अध्ययन केवल 40 प्रतिभागियों के प्रतिदर्श पर किया गया है। प्रतिदर्श के विस्तार को बढाया जा सकता है, जिससे ज्यादा अर्थपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकें। साथ ही विकलांगता एवं गंभीर बीमारियों से ग्रस्त लोगों द्वारा अनुभव की जा रही विपरीत परिस्थितियों के परिक्षेत्र का विकास कर आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक कारणों से उत्पन्न परिस्थितियों को भी जोड़कर अध्ययन के निष्कर्ष का विस्तार किया जा सकता है।

4. **कृतज्ञता ज्ञापन**– मैं मनोविज्ञान विभाग लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ के समस्त सम्मानित अध्यापकों का हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने मानव व्यवहारों की सूक्ष्म परतों के विश्लेषण की क्षमता प्रदान की। यह शोधपत्र सभी अध्यापकों द्वारा प्रदत्त ज्ञान पर आधारित है।

संदर्भ

1. स्नाइडर, सी0 आर एवं लोपेज, एस0 जे0(2009) "हैण्डबुक ऑफ पाजिटिव साइकोलोजी", आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क।
2. कानवें ए0 एन0 एवं मैक डोनाघ, एस0 सी0(2006) "इमोशनल रेसीलेन्स इन अरली चाइल्डहुड : डेवलपमेंट एन्टी सिडीनेन्टस एण्ड रिलेशन टू बिहेविरियल प्रॉब्लम्स", एनाल्स ऑफ दि न्यूयार्क एकेडमी ऑफ साईन्सेज, खण्ड 1094, मु0पृ0 272 –277।
3. डायनर, ई0(2007) दि वेलबीन्ग आफ प्लेनेट अर्थ "पेपर प्रस्टेन्टेड एट दि ग्लोबल वेलबीइन्ग फोरम," वाशिंगटन डी0 सी0, यू0एस0ए0।
4. डायनर ई0; इमनस आर0 ए0; लारसन, आर0 जे0 एवं ग्राफिन एस0(1985) "दि सेटिस्फेक्शन विद लाईफ स्केल"- ए मेजर आफ लाइफ सेटिस्फेक्शन, जरनल आफ पर्सनाल्टी असेसमेंट, खण्ड 49, मु0 पृ0 1–5।

अपराध अनुसंधान में सूक्ष्म जलीय वनस्पतियों मुख्यतः डायट्म्स का महत्व

प्रतिभा गुप्ता[1] तथा मोहित कुमार तिवारी[2]
[1]परिस्थितिकी विभाग, भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण, पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारतीय वनस्पति उद्यान, सी0एन0एच0 भवन, हावड़ा–711103, प0 बं0, भारत
[2]जैव विज्ञान विभाग, लखनऊ क्रिश्चियन कॉलेज, लखनऊ–226018, उ0 प्र0, भारत
drpratibha2011@rediffmail.com; drmohit2010@gmail.com

lkj

विज्ञान की विभिन्न शाखायें जैसे जैव विज्ञान, जैव रसायनकी, जैव प्रौद्योगिकी, जैव अभियन्त्रिकी, कीट विज्ञान, पादप विज्ञान, विभिन्न जीवों एवं पादपों के समूह, पादप अंश, परागकण, बीज, कोशिका व जलीय वनस्पतियां अपराध अनुसंधान में सशक्त भूमिका निभाते हैं। इनके द्वारा हम यह ज्ञात कर सकते हैं कि मनुष्य की मृत्यु कब, कहाँ और कैसे हुयी। विशेष रूप से किसी मनुष्य के डूब कर मरने पर यह सुनिश्चित करने में कि मनुष्य की मृत्यु डूब कर हुयी या उसकी हत्या करके पानी में फेंका गया या किसी दुर्घटनावश पानी में गिरने पर डूब कर मृत्यु हुयी। सूक्ष्म शैवाल मुख्यतः डायट्म जो वर्ग बैसिलियरोफाइसी के सदस्य हैं। इस बात का ठोस प्रमाण देने में सक्षम है, जिससे डूबने का स्थान व सम्भावित समय का अनुमान लगाया जा सकता है। क्योंकि डायट्म की कोशिका भित्ति सिलिकॉन की बनी होती है जो आसानी से नष्ट नही होती है। ये डायट्म डूबते समय मनुष्य के शरीर में जल के साथ प्रवेश कर जाते हैं और रक्त के साथ पूरे शरीर के विभिन्न अंगों जैसे मस्तिष्क, यकृत, वृक्क पेशियां, अस्थि मज्जा आदि में पहुच जाते हैं। डूब कर मरे हुये शरीर में इन डायट्म के संख्या, प्रजाति, प्राप्ति स्थल आदि की विवेचना करके मनुष्य की मृत्यु का कारण, स्थान, व समय का काफी हद तक अनुमान लगाया जा सकता है। इस प्रकार डायट्म व सूक्ष्म वनस्पतियां अपराध अनुसंधान में सशक्त भूमिका निभाते हैं।

ch t 'kUn डायट्म्स, माइक्रोफ्लोरा, अपराध विवेचना, डूबकर मृत्यु।

Role of microscopic flora especially diatoms in crime investigation

Pratibha Gupta[1] and Mohit Kumar Tiwari[2]
[1]Ecology Section, Botanical Survey of India, MOEF, Government of India, CNH Building Botanic Garden, Howrah-711 103, W.B., India
[2]Department of Biological Sciences, Lucknow Christian College, Lucknow-226 018, U.P., India
drpratibha2011@rediffmail.com; drmohit2010@gmail.com

Abstract

Branches of science like Biological science, Bio-chemistry, Biotechnology, Genetic engineering, Entomology and different parts of plants such as seed, pollen grains, cells, microscopic aquatic flora, different groups of the plants provide a strong clue in crime investigation. In case of drowning to establish the difference between suicide, homicide and accident, the microscopic algae especially the diatoms, the member of the class Bacillariophyceae indicate perfect clue in establishing place and probable time of drowning. As diatoms are with hard covering is made of silicon which enters in the body along with water during drowning and are distributed along with blood to different organs of body like brain, liver, muscles, bone marrow, etc. The hard silicate covering of the diatoms does not destroy even after

decomposition of the dead body and helps in establishing the probable site and duration of the drowning. In this way, the diatoms and other micro flora play a vital role in crime investigation.

Key words: Diatoms, Microflora, Crime investigation, Drowning.

1. iLrkouk

अपराध अनुसंधान में विज्ञान की आधुनिक विद्याओं का महत्व बहुत है। आज विज्ञान की लगभग सभी शाखाओं का प्रयोग अपराध अनुसंधान में हो रहा है। आधुनिक अपराध अनुसंधान मुख्यतः भौतिक विज्ञान, रसायन विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान, जैव रसायनिकी, जैव तकनीक, जन्तु विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, मानव विज्ञान, मनोविज्ञान, सामाजिक विज्ञान इत्यादि पर निर्भर है। विज्ञान की विभिन्न शाखाओं की सहायता से अपराधों की विवेचना प्रक्रिया को विधि विज्ञान कहा गया है, अर्थात विधि विज्ञान अपराध अनुसंधान की वह शाखा है जिसमें भौतिक प्रमाणों के आधार पर अपराध स्थल एवं संबधित तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष पर पहुँचा जाता है। जिन अपराधों के स्पष्ट प्रमाण नहीं होते और अपराध एवं अपराधी के विषय के विषय में कुछ भी स्पष्ट न हो तो ऐसी स्थिति में अपराध अनुसंधान में विज्ञान की सहायता से एक ठोस परिणाम पर पहुँचा जा सकता है तथा हत्या, आत्महत्या या दुर्घटना को स्थापित एवं प्रमाणित कर सकते हैं। आज विधि विज्ञान में जीव विज्ञान का महत्व अत्यधिक बढ़ गया है। विशेष रूप से जैव रसायनिकी, जैव तकनीक, जीव अभियन्त्रिकी, कीट विज्ञान, वनस्पति विज्ञान इत्यादि की सहायता से बहुत से जटिल अपराधों की गुत्थी सुलझाई गई है।

to jlk;fudh& इसका प्रयोग विशेष रूप में विषाक्तता से संबधित अपराधों में किया जाता है।

to rduhdh o thu vfHk;fUr=dh& इसका प्रयोग आज कल बहुतायत से हो रहा है। इसमें जैव तकनीक विधियों की सहायता से घटना स्थल पर पाये गये जैविक प्रमाणों/सूत्रों के आर0एन0ए0, डी0एन0ए0, गुण सूत्रीय मिलान, आण्विक गठन की तुलना एवं पारस्परिक संबंध की सहायता से अपराध सूत्र ज्ञात कर सही अपराधी तक पहुँचा जाता है।

dhV foKku& अपराध अनुसंधान में कीट विज्ञान एक अत्यन्त महत्वपूर्ण साक्ष्य है विशेष रूप से मृत्यु के पश्चात समय अन्तराल ज्ञात करने में। सामान्यतः कहीं भी खुले स्थान पर पड़े मृत शरीर पर मृतोपभक्षी कीट पहुँच कर उसका भक्षण प्रारम्भ कर देते हैं और साथ ही साथ शरीर के खुले घावों एवं विभिन्न छिद्रों जैसे नाक, आंख व कान इत्यादि में अंड निक्षेपण भी करते हैं इन कीटों में पूर्ण कायान्तरण होने के कारण अंडों से डिम्भक एवं प्यूपा तथा अन्ततः वयस्क बनते ही ये डिम्भक भी बहुत तेजी से ज्यादा खाने वाले होते हैं और उसी मृत शरीर का भक्षण करके अन्ततः उसे एक सड़े हुए कंकाल युक्त मलबे में परिवर्तित कर देते हैं। अंडे से डिम्भक और उससे प्यूपा बनने का समय अन्तराल लगभग निश्चित होता है। अतः ये मृत भक्षी कीट किस अवस्था में है जान कर मृत शरीर की मृत्यु का अनुमानित समय ज्ञात किया जाता है।

ouLifr foKku& न्याय शास्त्र एवं विधि विज्ञान में अब पादप विज्ञान की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण हो गई है। पौधों का प्रत्येक अवयव जैसे पराग कण, मकरन्द, बीज, फल, पत्तियां काष्ठ तथा जीवाणु, शैवाल, कवक, ब्रायोफाइटा, टेरिडोफाइटा, इत्यादि की सहायता से अनेक जटिल अपराधों की विवेचना एवं विश्लेषण कर वास्तविक अपराधी का पता लगाने में पादप वैज्ञानिकों ने श्रम साध्य अध्ययनों द्वारा अकाट्य प्रमाण प्रस्तुत किये। अतः अपराधी को पकड़ने एवं अपराध स्थल की सही पहचान करने में पादप विज्ञान की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है। एक अपहरण एवं हत्या के अपराध में संदिग्ध अपराधी ने घटना स्थल पर कभी भी न जाने की बात कही परन्तु उसकी कार में रखे पायदान में जिस पौधे के बीज लगे थे वे केवल घटना स्थल पर ही पाये जाते थे। इन बीजों से सिद्ध हो गया कि अपराधी झूठ बोल रहा था। न्यायालय ने पादप वैज्ञानिक के निष्कर्ष को आधार मान कर अपराधी को दंडित किया। अपराध अनुसंधान में सूक्ष्म जलीय वनस्पतियां विशेष रूप से डायटम्स एक महत्वपूर्ण सूत्र एवं आधार माने जाते हैं। मुख्यतः जल में डूबने से हुई घटनाओं में अथवा जलाशयों, नदियों, झरनों अथवा समुद्र के समीप हुई घटनाओं में इनका महत्व इसलिए और भी बढ़ जाता है क्योंकि

1. डायटम्स सर्वव्यापी हैं एवं पृथ्वी पर लगभग सभी जलीय परितंत्री एवं कुछ वाह्य पादपीय व स्थलीय सूक्ष्मजीवों में पाये जाते है।

2. ये पूरे वर्ष सभी ऋतुओं में पाये जाते हैं। तापक्रम और ऋतु के प्रभाव से इनकी सांद्रता एवं जातियों की संख्या पर प्रभाव पड़ता है।

सूक्ष्म जलीय वनस्पतियों विशेष रूप से डायट्म्स का विधि विज्ञान में उपयोग निम्नवत् हैं –

1. जल में डूबने से हुई मृत्यु को प्रमाणित करने में।
2. अपराध स्थल की पहचान करने में।
3. मृत्यु उपरान्त समय अन्तराल का अनुमान करने में।

भारत में डूबने से हुई मृत्यु बहुत अधिक होती है। मुख्यतः स्त्रियां पारिवारिक कलह, आवेश अथवा तनाव में आस–पास की नदी, तालाब अथवा कुयें में कूद कर आत्महत्या कर लेती हैं। आज कल स्कूल जाने वाले बच्चों में परीक्षा, परीक्षा फल के तनाव के कारण अथवा युवक–युवतियों में आर्थिक, शैक्षिक एवं सामाजिक तनाव के कारण जल में कूद कर आत्महत्या करने की प्रवृत्ति बहुत बढ़ गई हैं। इन आत्महत्याओं में जल में डूबने से हुई मृत्यु की पुष्टि में शैवालों (डायट्म्स) का अत्याधिक महत्व है। हमारे देश में मुख्यतः उत्तर भारत में कुछ विशेष परिस्थितियों में शव को प्रवाहित कर देने की भी परम्परा है। इसके अतिरिक्त हत्या करके अपराध को छुपाने हेतु भी शव नदियों या जलाशयों में डाल दिये जाते हैं। कहीं भी जल में डूबा मृत शरीर कब कैसे और कहाँ से जल में पहुँचा यह निर्धारित करने और जानने के लिये अत्यन्त आवश्यक है, यह जाना जाय कि–

1. क्या डूबने से मृत्यु हुई ?
2. डूबना दुर्घटना है या आत्महत्या अथवा हत्या ?
3. मृत् शरीर कितने समय से जल में है ?

lkekU; fo'y"k.k& कोई भी जीवित व्यक्ति चाहे वह आत्महत्या के उद्देश्य से जल में कूदा हो या दुर्घटना वश जल में गिर गया हो या हत्या की नियत से उसे जल में गिराया गया हो, डूबते समय श्वांस अवरोध की प्रक्रिया स्वरूप संघर्ष करता है, झटके से हाथ पैर चलाता है। लम्बी–लम्बी सांसे खीचता है जिसके परिणाम स्वरूप उसके फेफड़ों एवं आमाशय में अत्यधिक जल भर जाता है। इस जल में प्लवक डायट्म्स तथा अन्य सूक्ष्म जलीय पौधे, रेत, मिट्टी इत्यादि भी होते हैं। अतः डूबने से हुई मृत्यु में मृतक के श्वसन तंत्र, आहार नाल में अधिक मात्रा में जल तथा उसके साथ शैवाल, रेत, मिट्टी इत्यादि भी होते हैं। अतः डूबने से हुई मृत्यु में मृतक के श्वसन तंत्र, आहार नाल में अधिक मात्रा में जल तथा उसके साथ शैवाल, रेत मिट्टी आदि भी पाये जायेंगे। परन्तु यदि मृत्यु के बाद शरीर जल में डाल दिया गया हो तो मृत शरीर में श्वांस अवरोध की प्रक्रिया संघर्ष न होने के कारण फेफड़ों व आमाशय में जल की मात्रा नगण्य होगी। अतः डूब कर हुई मृत्यु में शैवाल एक महत्वपूर्ण प्रमाण सिद्ध होते हैं। डूबते समय शरीर में प्रवेश किये जल के साथ–साथ शैवाल भी प्रवेश कर जाते हैं। इसमें से डायट्म अत्यन्त सूक्ष्म होने के कारण रक्त वाहिनियों से होकर शरीर के विभिन्न अंगों जैसे मस्तिष्क, यकृत, पेशियों एवं अस्थि मज्जा में पहुँच जाते हैं। इन डायट्म के चारों ओर सिलिका का कठोर आवरण होता है। परिणाम स्वरूप मृत शरीर के अधिक दिन डूबे रहने और विघटित हो जाने पर ये नष्ट नहीं होते। इसलिए अपराध अनुसंधान की एक महत्वपूर्ण कड़ी सिद्ध होते हैं। शरीर के विभिन्न अंगों में डायट्म की उपस्थिति डूब कर हुई मृत्यु का पुष्ट प्रमाण है। डायट्म की लगभग 15,000 जातियां हैं इनकी लगभग आधी जातियां समुद्री जल में पायी जाती हैं जबकि शेष स्वच्छ जल में मिलती है। यदि मृत शरीर जहाँ मिला वहाँ के जल में उपस्थित शैवाल तथा मृत शरीर के अन्दर पाये गये शैवालों की तुलना की जाये तो अपराध स्थल की पुष्टि हो सकती है। यदि कोई पानी में कूदा है या दुर्घटनावश पानी में गिर गया है तो उसके फेफड़ों व आमाशय में उपस्थित शैवाल डूबने से हुई मृत्यु की पुष्टि करेंगे। एक सामान्य स्वस्थ वयस्क मनुष्य को जल में उठा कर फेंकना आसान नही है जब तक उसे अचानक धक्का न दिया गया हो या उसे कोई नशीली वस्तु न दी गई हो। नशीले पदार्थ के प्राभाव में डूबने वाले व्यक्ति के फेफड़ों और आमाशय में जल की मात्रा अपेक्षाकृत कम होगी साथ ही साथ मिट्टी में रेत, मिट्टी एवं शैवाल भी बहुत कम होंगे क्योंकि नशे की हालत में व्यक्ति अधिक हाथ पैर नहीं चला पाएगा और संघर्ष अपेक्षाकृत बहुत कम होगा। यदि किसी व्यक्ति को मारने के बाद जल में फेका गया है तो उसके मृत शरीर में चोट या आक्रमण के चिन्ह हो सकते हैं पर डूबते समय संघर्ष न करने के कारण उसके फेंफड़ों व आमाशय एवं अन्य अंगों में जल अथवा शैवाल नही होंगे अतः जल में मिलने पर भी डूब कर मृत्यु होने के प्रमाण नही मिलेंगे। घटना स्थल अथवा अपराध स्थल का स्थान निर्दिष्ट करने में भी सूक्ष्म जलीय वनस्पतियों का अत्यन्त महत्व है यदि मृत शरीर के आमाशय एवं फेंफड़ों में भरे जल में वही सूक्ष्म वनस्पतियां है जो डूबे हुए मृत शरीर के चारो ओर के जल में है तो मृतक वही डूबा था जहाँ शरीर पाया गया परन्तु

कभी–कभी जल प्रवाह के साथ–साथ शरीर घटना स्थल से अधिक दूर बह कर चला जाता है तो मृत शरीर में उपस्थित शैवालों व आस–पास के जल में उपस्थित सूक्ष्म वनस्पतियां व शैवाल में समानता नहीं होती, उस जल प्रवाह में वे सूक्ष्म वनस्पतियां कहाँ मिलती हैं जो शरीर के अन्दर पायी गयी इसका पता लगा कर डूबने के सही स्थान का पता लगाया जा सकता है। एक अपराध में एक नदी के किनारे एक व्यक्ति पर जान लेवा हमला किया गया उस व्यक्ति ने अपने ऊपर हमला करने वाले व्यक्ति की पहचान बताई, संदिग्ध अपराधी ने पकड़े जाने पर उस स्थान पर कभी भी न जाने की बात कही परन्तु उसके जूतों की मिट्टी की पपड़ी में कई प्रकार के शैवाल पाये गए जिनमें से डायट्म यूनोसिया की तीन दुर्लभ जातियां भी थी जो केवल घटना स्थल पर पाई जाती थी इस बात को प्रमाण मान कर अपराधी को दंडित किया गया।

विधि विज्ञान में शैवालों का एक अन्य महत्वपूर्ण उपयोग मृत्योपरान्त डूबे रहने का समय अन्तराल(पी0एम0एस0आई0 पोस्ट मार्टम सबमरसन इनटरवल) का अनुमान लगाने में किया जाता है। सामान्यतः डूबते समय शरीर जल से अधिक भारी होता है। अतः मृत्योपरान्त शरीर जल में डूब जाता है। लगभग 18–24 घंटे(वातावरण एवं जल के तापक्रम के अनुसार) में मृत शरीर में जैव रासायनिक क्रियाओं एवं जीवाणु के द्वारा आन्तरिक विघटन से बनी गैसें शरीर में भर कर उसे हल्का कर देती है परिणाम स्वरूप शरीर तैरने लगता है। परन्तु मस्तिष्क वाला भाग सबसे ज्यादा भारी होने के कारण जल में डूबा रहता है। तैरते शरीर से गैसें छिद्रों या विघटन के कारण बनी दरारों से निकल जाती हैं और मृत शरीर/पानी में पुनः डूब जाता है फिर यदि उसे निकाला नहीं गया तो कालान्तर में विघटित होकर कंकाल युक्त मलबे में परिवर्तित हो जायेगा।

डूबे हुए मृत शरीर पर विघटन के साथ शैवालों के समुदाय पनपने लगते हैं और लगभग तीन सप्ताह में शैवाल समुदाय स्थायित्व प्राप्त कर लेते हैं। कुछ महत्वपूर्ण शैवाल जैसे डायट्म–नेवीकुला क्रिप्टोटिनेला आदि डूबे हुए मृत शरीर में लगभग 25 दिन में स्थायित्व प्राप्त कर लेते हैं। ऐन्किस्ट्रोडेसमस(हरित शैवाल) की जाति लगभग 30 दिनों के बाद भी नही वृद्धि करती है अतः इन्हें देरी से वृद्धि करने वाला शैवाल माना जाता है। ये शैवाल तापक्रम एवं ऋतु के अनुसार स्थायित्व ग्रहण करते हैं। इनके स्थायित्व काल की गणना कर डूबने के समय का (पी0एम0एस0आई0) अनुमान किया जा सकता है। इसके लिए मृत शरीरों को जल में डुबा कर शैवाल वृद्धि की दर अलग–अलग तापक्रमों एवं विभिन्न ऋतुओं में इनके स्थायित्व काल की गणना करके, इनके तुलनात्मक विवरण का प्रयोग अपराध अनसंधान एवं मृत्योपरान्त डूबे रहने का समय अन्तराल (पी0एम0एस0आई0) ज्ञात करने में किया जाता है। शैवाल वृद्धि के इन तुलनात्मक आकड़ों को प्राप्त करने के लिए मछली, चुहे, सुअर, कुत्ते, बिल्ली इत्यादि के शवों को जल में डुबा कर परीक्षण किये जाते हैं। जिसमें नितलस्थ के लिए (बेनथिक) शैवाल की वृद्धि दर एवं उनके मध्य पारस्परिक सानुदायिक अन्तर क्रिया एवं संबध के अध्ययन से भी पी0एम0एस0आई0 गणना में सहायता मिलती है। डूबे हुए मृत शरीर पर लगभग तीन सप्ताह में कवक की एक मोटी पर्त उत्पन्न हो जाती हैं जो सामान्य शैवाल वृद्धि की दर को भी प्रभावित करती है। इसके अतिरिक्त डूबे हुए मृत शरीर के चारों ओर जीवाणुओं के कारण एक पतला जैविक आवरण बन जाता है इस जैविक आवरण, कवक की पर्त एवं शैवाल वृद्धि के पारस्परिक संबंध एवं अन्तर क्रिया के सदर्भ में अभी भी एक विस्तृत प्रयोगात्मक एवं तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता है।

मृत शरीर के फेंफड़ों तथा आमाशय में भरे जल में उपस्थित शैवाल डूबने से हुई मृत्यु की पुष्टि करते हैं। परन्तु अभी तक जलाशय में उपस्थित शैवाल की जातियों एवं डूबे हुये शरीर में पाई गई शैवालों की जाति संख्या एवं सांद्रता के तुलनात्मक आंकड़े प्राप्त नहीं हैं जिनकी सहायता से समयान्तराल गणना को और सटीक बनाया जा सकता है। शैवाल वृद्धि की दर जल में उपस्थित मृत शरीर भक्षी जन्तुओं से भी प्रभावित होती है। ठहरे हुए जल की तुलना में बहते हुए जल में शैवाल वृद्धि की दर भिन्न होगी। शल्कीय क्राइसोफाट–मालोमोनास कोडाटा तालाब एवं झीलों के पानी में बहुतायत में पाये जाते हैं जबकि बहते हुए जल में यह नहीं मिलते। शरीर के खुले भागों व घावों पर जीवाणु जल्दी पनपेंगे। जबकि ढके अंगों पर शैवाल अधिक देर में पनपेंगे। जल प्रवाह की दिशा वाले शरीर के भागों पर शैवाल वृद्धि की दर प्रवाह की दिशा वाले भाग की तुलना में अधिक होगी। अतः शैवालों की विधि विज्ञान एवं अपराध अनुसंधान में महत्वपूर्ण भूमिका है। डूबने से हुई मृत्यु की पुष्टि दुर्घटना, हत्या, आत्महत्या में अंतर स्थापित करने, अपराध स्थल/दुर्घटना स्थल को चिन्हित करने एवं मृत्योपरान्त समय अन्तराल गणना में सहायता मिलती है।

fu"d"k

इस ज्ञान को आगे बढ़ाने के लिए डूबे हुए मृत शरीर एवं शैवालों के संबध में बहुत से प्रयोगात्मक अध्ययनों एवं तुलनात्मक आंकड़ों की आवश्यकता है। परन्तु इस बात में कोई संदेह नहीं है कि अपराध अनुसंधान एवं विधि विज्ञान में सूक्ष्म जलीय वनस्पतियों विशेष रूप से डायट्म्स की उपयोगिता न्याय शास्त्र के लिए एक सुदृढ़ प्रमाण एवं अपराध अनुसंधान को दिशा देने में एक महत्वपूर्ण सूत्र है।

QkVk lyV l dk fooj.k–

dN vU; Mk;VE l vkj vU; l{e 'koky

1. नेवीकुला, 2. यूनोसिया, 3. सिमबेला, 4. फ्रेजीलेरिया, 5. डायटोमा, 6. पिन्नूलेरिया, 7. साइक्लोटेला, 8. गामफोनीमा, 9. एमफोरा, 10. इपीथीमिया, 11. मिलोसायरा, 12. कोकोनीस, 13. गोनाउलेक्स, 14. पेरीडीनियम, 15. एमफीडीनियम, 16. निस्चिया, 17. माइक्रोसिस्टिस, 18. गायरोसिग्मा, 19. सिरेटियम, 20. सिनिड्रा, 21. मालोमोनास, 22. एनाक्रिस्टोडेसमस, 23. सिनेडेसमस, 24. कॉसमेरियम, 25. पेडिस्ट्रम।

lanHk

एडल्सन, एल0(1974) द पैथोलॉजी ऑफ होमीसाइड, थॉमस स्प्रिंगफील्ड, खण्ड 3।
डोरिस, जे0 एच0(1971) टेस्ट फॉर ड्राउनिंग इन मॉडल, द पैथोलॉजी एण्ड ट्रीटमेंट ऑफ ड्राउनिंग एण्ड नियर ड्राउनिंग, थॉमस स्प्रिंगफील्ड, खण्ड 3।
गुप्ता, पी0(2012) एल्गी ऑफ इण्डिया, ए चेकलिस्ट ऑफ साइनोप्रोकरयोटा(साइनोबैक्टीरिया), बौटेनिकल सर्वे ऑफ इण्डिया।
हिण्डे, एन0 आई0(1973) डायग्नोस्टिक वैल्यू, मेडि0 साइंस एण्ड लॉ ज0, खण्ड 23।
रिवर्स, जे0 एफ0 तथा अन्य(1970) ड्राउनिंग, ब्रिटेन मेडि0 ज0, खण्ड 157।
फ्रैंकलिन, सी0 ए0(संपा0)(1988) मोदीज टेक्स्ट बुक ऑफ मेडिकल जुरिस्प्रुडेंस एण्ड टॉक्सिकोलॉजी, एन0 एम0 त्रिपाठी प्रा0 लि0, मुंबई।
साफर एण्ड मैकमोहन(1958) ज0 अमेरि0 मेडि0 एसोसि0, खण्ड 166।
टिम्परमैन, जे0(1969) मेडिको लीगल प्रॉब्लेम्स इन डेथ्स बाई ड्राउनिंग, ज0 फॉरेन्सिक मेडि0, खण्ड 16।

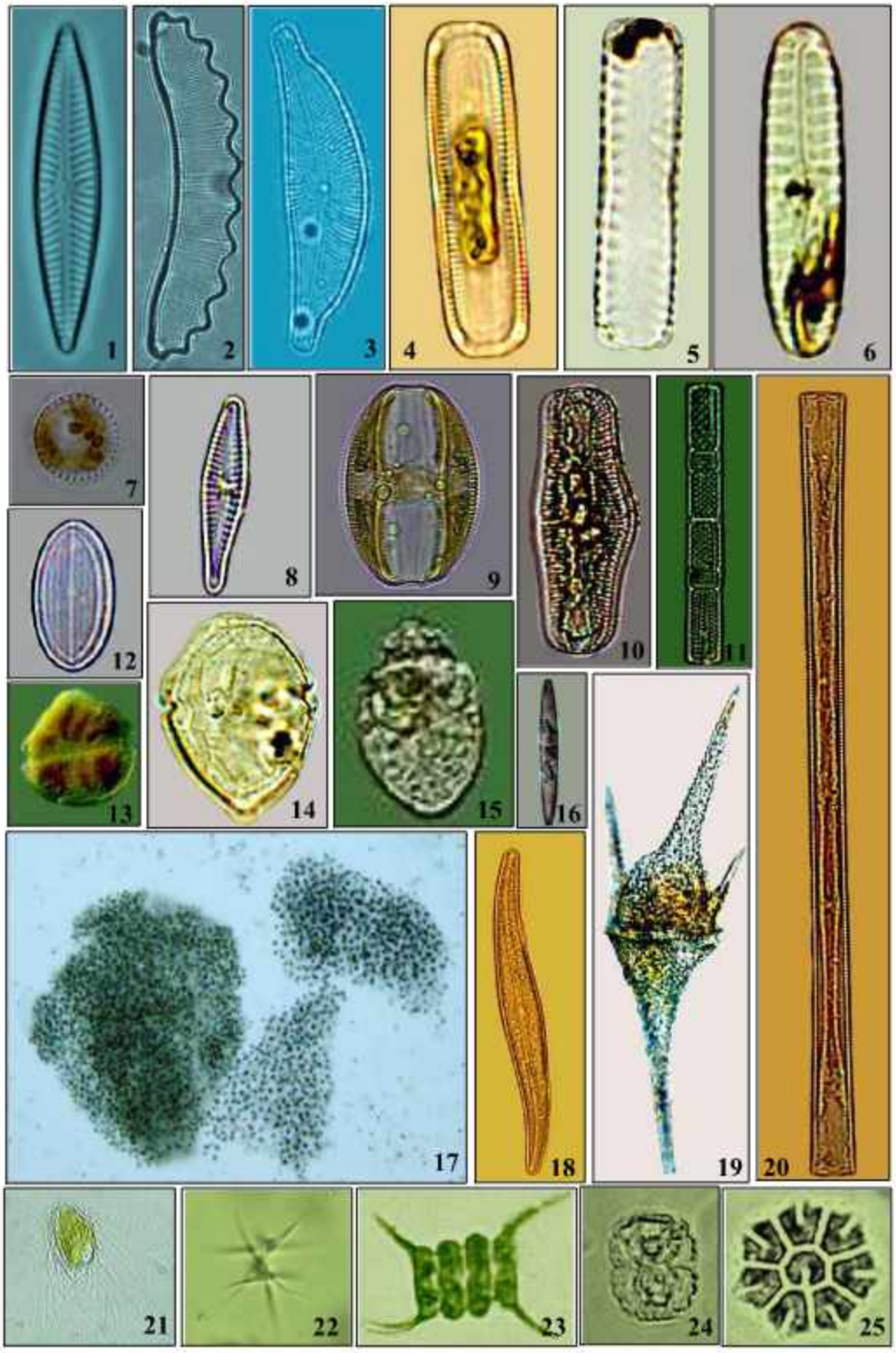
1
2
3
4
5
6
7
8
9
10
11
12
13
14
15
16
17
18
19
20
21
22
23
24
25

संगीत–विज्ञान द्वारा आध्यात्मिक उत्थान

ज्योति काला
एसोसिएट प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग
बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
jyotikala2010@gmail.com

सार

प्राचीन काल से संगीत–चिकित्सा द्वारा शारीरिक विकारों का उपचार किया जाता रहा है। वर्तमान विज्ञान व तकनीक के युग में संगीत–चिकित्सा द्वारा मानव शरीर के ऊर्जा केन्द्रों अर्थात् चक्रों के जागरण व शोधन पर संगीतज्ञों एवं वैज्ञानिकों द्वारा कई प्रयोग किये गये हैं। प्रस्तुत शोध पत्र में प्रभावोत्पादक संगीत के प्रयोग द्वारा चक्र–शोधन के आधार पर आध्यात्मिक विकास की संभावना पर प्रकाश डाला गया है।

बीज शब्द– चक्र शोधन, तंत्रिका संगीत चिकित्सा, बायनॉरल बीट्स, डी0एन0ए0 ऐक्टीवेशन, एस्ट्रल प्रोजेक्शन।

Spiritual Enlightenment through Science of Music

Jyoti Kala
Associate Professor, Department of English
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
jyotikala2010@gmail.com

Abstract

From ancient times body ailments have been treated with music therapy. In the present era of science and technology many experiments have been accomplished by the musicians and scientists to activate and cleanse the energy centers, chakras, of our physical body. In this research paper an attempt has been made to show the possibility of spiritual development on account of chakra-cleansing through the use of effective music.

Key words- Chakra-cleansing, Nervous Music Therapy(NMT), binaural beats, DNA Activation, astral projection.

1. प्रस्तावना

आधुनिक विज्ञान हमें यह जानकारी तो देता है कि मानव शरीर विभिन्न आंगिक तंत्रों का एक 'अद्भुत समन्वय' है, परन्तु इस आश्चर्यजनक संरचना को सुचारू रूप से बनाये रखने व संचालित करने वाली अतिविवेकशील अदृश्य, 'पराशक्ति' के विषय में नहीं बताता। 'पराभौतिकी' एवं 'परामनोविज्ञान' आदि विषय अवश्य उस 'रहस्यमयी शक्ति' की ओर संकेत करते हैं जो हमारे शारीरिक तंत्रों की अवर्णनीय सूक्ष्मतम् जटिल क्रियाओं की पृष्ठभूमि में निहित है। यद्यपि साधारण मानव बुद्धि उस 'अतिविवेकशील पराशक्ति' का वर्णन करने में सक्षम नहीं है, तथापि 'आत्मा' के नाम से हम उसका आभास अवश्य करते हैं। उपनिषद् में मानव ज्ञान की सीमा का उल्लेख निम्नवत् है–

यः सर्वेषु तिष्ठन् सर्वेभ्यो भूतेभ्योऽन्तरः,
यं सर्वाणि भूतानि न विदुः, यस्यां सर्वाणि भूतानि शरीरम्,
यः सर्वाणि भूतान्यन्तरो यमयति, एव त आत्मान्तर्याम्यमृतः।(बृहदारण्यकोपनिषद्, 3,7,17)

अर्थात् वह सर्वत्र विराजमान है, सभी के शरीर के भीतर उपस्थित है, वही आत्मा है, परन्तु हम उसका ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम नहीं हैं। इसी आत्म–तत्व का ज्ञान कराने वाली विधा को आध्यात्म कहते हैं। भारतीय ऋषि–मुनि योग, ध्यान व साधना द्वारा आध्यात्मिक अनुभव प्राप्त करते थे। आधुनिक विज्ञान व तकनीक के युग में वैज्ञानिक तकनीक द्वारा आध्यात्मिक क्षेत्र में भी लाभ उठाया जा सकता है। प्रस्तुत शोध पत्र में संगीत की तकनीक द्वारा आध्यात्मिक उत्थान की संभावनाओं पर वैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है।

2. परिकल्पना

प्रस्तुत शोध पत्र निम्न दो धारणाओं पर आधारित है–

1. समस्त व्यक्त एवं अव्यक्त, चर–अचर, सूक्ष्म–स्थूल, जड़ एवं चेतन जगत का आधार 'आदि ऊर्जा' का विभिन्न स्तरों पर अनुरूपण है।
2. मनुष्य शरीर की ऊर्जा के स्तर को अति उच्च कर अतीन्द्रिय आध्यात्मिक अनुभूति प्राप्त की जा सकती है।
3. शारीरिक क्रिया विज्ञान

प्राणशक्ति(प्राण धारा अथवा जीवन विद्युत; अणु से सूक्ष्म वह मेधावी ऊर्जा जो शरीर में जीवन को सक्रिय बनाती और कायम रखती है) मस्तिष्क से प्रवाहित होकर छः मुख्य केन्द्रों या चक्रों द्वारा स्नायु तंत्र में प्रवाहित होती है। वे केन्द्र हैं:

1.	आज्ञा चक्र(मेड्यूला सेंटर)	2.	विशुद्ध चक्र(सरवाइकल सेंटर)
3.	अनाहत चक्र(डोरशल सेंटर)	4.	मणिपुर चक्र(लम्बर सेंटर)
5.	स्वाधिष्ठान चक्र(सैक्रल सेंटर)	6.	मूलाधार चक्र(कॉक्सीजियल सेंटर)

"मस्तिष्क सर्वोच्च विद्युत घर है(सर्वोच्च केन्द्र)। सब केन्द्र एक दूसरे के साथ सम्बन्धित हैं और सर्वोच्च केन्द्र(मस्तिष्क कोषाणुओं) के प्रभाव के अन्तर्गत कार्यशील होते हैं। मस्तिष्क कोषाणु प्राणशक्ति या विद्युत को इन चक्रों के माध्यम से प्रवाहित करते हैं। फिर ये चक्र क्रमशः बिजली को विभिन्न अपवाही तथा अभिवाही स्नायुओं में प्रवाहित करते हैं। ये स्नायु क्रमशः चालक आवेगों और स्पर्श, दृष्टि आदि संवेदनाओं को वहन करते हैं।

मस्तिष्क से यह बिजली का प्रवाह जीव (इसके आन्तरिक तथा बाहरी अंगों) को जीवन प्रदान करता है तथा इसी विद्युतीय माध्यम से हमारे सभी संवेदी सूचनाओं को मस्तिष्क तक पहुँचाता है और विचार प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है। निद्रा में मस्तिष्क और संवेदी अंगों के बीच बिजली की चालकता आंशिक रूप से बन्द हो जाती है, जिससे शब्द, स्पर्श आदि साधारण संवेदनायें, मस्तिष्क तक नहीं पहुँचतीं। परन्तु क्योंकि यह रूकावट पूर्ण नहीं है, एक सशक्त बाहरी प्रोत्साहन द्वारा इस बिजली का प्रवाह फिर शुरू हो जाता है जिससे संवेग मस्तिष्क तक पहुँचता है और मनुष्य जाग उठता है। तथापि निद्रा में सदैव एक स्थायी बिजली का प्रवाह आन्तरिक अंगों (हृदय, फेफड़े तथा अन्य भागों) में होता रहता है जिससे वे धड़कते हैं तथा कार्यशील रहते हैं।"[1] विद्युत आवेग के रूप में क्रियाशील मेधावी ऊर्जा से सम्बन्धित चक्र केन्द्रों को जागृत कर आध्यात्मिक अनुभूति प्राप्त की जा सकती है।

4. ऐन्द्रिक एवं अतीन्द्रिय अनुभव

"हम जानते हैं कि बुद्धि केवल इन्द्रियों द्वारा उपलब्ध सामग्री पर ही काम कर सकती है। यह निश्चित है कि इन्द्रियाँ हमें केवल गुणों तथा विविधता की प्रेरणायें प्रदान करती हैं। इन्द्रियां केवल अनेकरूपता ही प्रदान नहीं करती अपितु बुद्धि स्वयं विविधता से सम्बन्ध रखती है और अनेकरूपता के क्षेत्र में रहती है। यद्यपि बुद्धि "विविधता में एकता" पर विचार कर सकती है परन्तु इससे एकाकार नहीं हो सकती। यह उसकी कमी है। प्रत्यक्ष बौद्धिक ज्ञान वास्तव में उस एकमात्र विश्वव्यापक तत्व के वास्तविक स्वरूप को प्रस्तुत नहीं कर सकता, जो विविध प्रकार की अभिव्यक्तियों का आधार है।"[2] हमारी पाँचों इन्द्रियों द्वारा अर्जित ज्ञान यथार्थ का लेशमात्र है।

उदाहरणार्थ मानव–दृष्टि की क्षमता इलेक्ट्रोमैगनेटिक स्पेक्ट्रम पर 405 से 790 टेरा हर्ट्ज के बीच है। भौतिक नेत्र के लिए बाकी प्रकाशोत्सर्जन का अस्तित्व नहीं है तथापि उसकी उपस्थिति रेडियो, टी0वी0, माइक्रोवेव, एक्स–रे स्कैनर आदि के माध्यम से अनुभूत होती है। इसी प्रकार मानव की श्रवण क्षमता 20 हर्ट्ज से 20,000 हर्ट्ज आवृत्ति की ध्वनि सुन पाने की है। इस सीमा से परे ध्वनि श्रवण की क्षमता नहीं है। तंत्र की भाषा में –

स्पर्शनं रसनं चैव घ्राणं चक्षुश्च श्रोतरम्।
पंचेन्द्रियमिदं तत्त्वं मनः साधन्यमिन्द्रियम्।।(ज्ञानसंकलिनी तंत्र : 28)

अर्थात् स्पर्श, रसना, घ्राण, चक्षु एवं कर्ण इन पांच इन्द्रियों के पंचतत्वों से परे मन रूपी इन्द्रिय है।

ऊर्ध्वमूलमधशाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्।। (गीता : 15/1)

"देखा जाता है कि वृक्षों की शाखाएं ऊपर होती हैं और मूल या जड़ नीचे। किन्तु उपरोक्त श्लोक में भगवान ने कहा है ऊपर मूल है और नीचे शाखा। इस प्रकार का उल्टा वृक्ष कहीं दीखता नहीं; किन्तु जब श्री कृष्ण ने कहा है तब निश्चय ही वृक्ष है जो योगियों द्वारा ही बोधगम्य है। आज्ञाचक्र के ऊपर जिसकी मूलवस्तु परमात्मा तत्व है और नीचे हाथ–पाँव आदि इन्द्रिय आदि का विशिष्ट कलेवर रूप शाखा आदि है, वही अश्वत्थ का प्रतीक है यही बात इस श्लोक में कही गयी है। अश्वत्थ अर्थात् अस्थायी जो आज है कल नहीं ऐसी देह ही अश्वत्थ का प्रतीक है। इस वृक्ष के मूल से अर्थात् आज्ञा चक्र से सहस्त्रार तक जहाँ स्थिर प्राणरूप ब्रह्म की अवस्थिति है वहाँ से चंचल प्राण आदि वायु सबकी कार्य शक्ति द्वारा नीचे स्थित शाखा के रूप में हाथ–पाँव इन्द्रिय आदि का कार्य फैला हुआ है। फिर नीचे से विभिन्न नाड़ियाँ अथवा ज्ञान–तन्तु ऊपर की ओर गये हैं। वेदत्रयी इस वृक्ष के पत्ते हैं। इस प्रकार इस देह रूपी अश्वत्थ वृक्ष के तत्व ज्ञान–रूप देह तत्व को जो जानते हैं उन्हें ही वेदवित् कहते हैं।"[3]

ब्रह्माण्डलक्षणं सर्वं देहमध्यव्यवस्थितम्।
साकाराश्च विनश्यन्ति, निराकारो न नश्यति।।(ज्ञानसंकलिनी तन्त्र : 29)

अर्थात् विश्व–ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी हैं, सब देह के भीतर है। साकार वस्तु नाशवान है, किन्तु निराकार का विनाश नहीं होता। हमारे योगी इस सर्वव्यापी अविनाशी निराकार शक्ति से साक्षात्कार आध्यात्मिक योग विद्या द्वारा करते थे। तकनीकी रूप से समृद्ध आधुनिक युग में विज्ञान ने अध्यात्यमिक क्षेत्र में भी हमारी सहायता की है तथा ध्वनि–विज्ञान के सुरूचिपूर्ण आयाम अर्थात् 'संगीत' द्वारा मानव शरीर की सीमाओं को पार कर अतीन्द्रिय अनुभव प्राप्त करने में सहायता की है।

5. अतीन्द्रिय श्रवण–अनुभव का वैज्ञानिक आधार

मानव मस्तिष्क की तरंगे 40 हर्ट्ज से कम आवृत्ति की होती हैं जिन्हें सुन पाने की तकनीक, 'बायनॉरल बीट्स', की खोज 1839 में हेनरिच विल्हेल्म डव ने की थी। इस विधि में यदि 'हैडफोन' के द्वारा एक कान में 300 हर्ट्ज एवं दूसरे में 310 हर्ट्ज आवृत्ति की ध्वनि प्रेषित की जाएं तो श्रोता को दोनों आवृत्तियों के अन्तर के बराबर अर्थात 10 हर्ट्ज आवृत्ति की 'बायनॉरल बीट्स' सुनाई देंगी जो मस्तिष्क को नितांत सूक्ष्म रूप से प्रभावित करेंगी।[4,5] निम्न तालिका–1 में विभिन्न मस्तिष्क तरंगों द्वारा उत्पन्न होने वाली अवस्थाओं का वर्णन है–

तालिका–1: मस्तिष्क तरंगें

आवृत्ति सीमा	नाम	सम्बन्ध
> 40 हर्ट्ज	गामा तरंगें	उच्च मानसिक क्रियाशीलता, अवबोधन, समस्या निवारण, भय और चेतनता
13–39 हर्ट्ज	बीटा तरंगें	सक्रिय अथवा उद्वेगपूर्ण चिन्तन, सक्रिय एकाग्रता, उत्तेजना, परोक्षज्ञान एवं संविभ्रम
7–13 हर्ट्ज	अल्फा तरंगें	जाग्रत अवस्था में विश्रांति, सोने से पूर्व एवं जागने के पश्चात का उनीदापन वाली अवस्था, रैपिड आई मूवमेन्ट स्लीप, स्वप्नावस्था
4–7 हर्ट्ज	थीटा तरंगें	गहरी ध्यानावस्था/विश्रांति, नान रैपिड आई मूवमेन्ट स्लीप
< 4 हर्ट्ज	डेल्टा तरंगें	गहरी स्वप्नरहित निन्द्रा, शरीर की चेतनता खोना।

(नोट–आवृत्ति सीमा हेतु सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत कोई मानक नहीं है।) **स्त्रोत–en.wikipedia.org/wiki/Binaural_beats**

6. बायनॉरल बीट्स का हारमोन स्त्राव पर प्रभाव

अनेक प्रयोगों द्वारा ज्ञात हुआ है कि विशेष आवृत्ति की बायनॉरल बीट्स को सुनने से विशिष्ट ग्रन्थियों को वांछित हारमोन का स्त्राव करने हेतु उद्दीप्त किया जा सकता है। अल्फा–थीटा मस्तिष्क तरंगों द्वारा 'बीटा–इन्डारफिन' के स्त्राव को प्रभावित पाया गया।[6] थीटा तरंगों का सम्बन्ध सीखने की क्षमता के साथ स्थापित किया गया है। 'शरीर से बाहर होने की अवस्था का एहसास', 'एस्ट्रल प्रोजेक्शन', 'टेलीपैथी' आदि के लिए भी थीटा तरंगों को जिम्मेदार माना गया है।[7] ऑस्टर ने लिंग भेद के आधार पर बायनॉरल बीट्स के अनुभव में विभेद किया है। ऑस्टर ने अपने प्रयोग में पाया कि स्त्रियों को मासिक धर्म के प्रारम्भ तथा 'ल्यूटीयल फेस' में समान बायनॉरल बीट्स की अलग–अलग तीव्रता सुनाई दीं। इसके आधार पर उन्होंने इन दोनों अवस्थाओं में एस्ट्रोजन हारमोन के स्तर को मापने की सम्भांवना भी व्यक्त की।[8] इस सन्दर्भ में तालिका–2 का अवलोकन उपयोगी होगा जिसमें सातों चक्रों से सम्बन्धित हारमोन–स्त्रावी ग्रन्थियों तथा उनसे होने वाले प्रभावों की जानकारी दी गयी है।

तालिका–2 : चक्रों के लक्षण व गुणधर्म

7. संगीत–चिकित्सा की उपयोगिता

तंत्रिका विज्ञान पर आधारित चिकित्सा को "तंत्रिका सम्बंधी संगीत चिकित्सा"(एन0एम0टी0) कहा जाता है। एन0एम0टी0 की परिभाषा है– एन0एम0टी0 संगीत की धारणा और रचना के तंत्रिका विज्ञान मॉडल, असंगीतमय मस्तिष्क और व्यवहारगत कार्यों के कार्यात्मक परिवर्तनों पर संगीत के प्रभाव पर आधारित है। दूसरे शब्दों में, एन0एम0टी0 इस बात का अध्ययन करता है कि संगीत के बिना दिमाग

कैसे होता है, संगीत के साथ दिमाग कैसे होता है, इनके अंतरों को मापता है, और इन अंतरों का प्रयोग संगीत द्वारा दिमाग में परिवर्तन लाने के लिए प्रयोग करता है जो कि अंततः गैर संगीतमय रोगी को प्रभावित करता है, जैसा कि अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त प्रोफेसर तथा शोधार्थी डा0 थॉट ने कहा है कि ''दिमाग जो संगीत में डूब जाता है उसे संगीत में संलग्न करके बदला जा सकता है।''[9] यूएसए में कार्यरत कर्नाटक संगीत के संगीतकार एवं शिक्षक शंकर रमानी के अनुसार हमारी समस्त मानसिक, भौतिक एवं भावानात्मक समस्याओं का सम्बन्ध ऊर्जा के विशिष्ट केन्द्रों अथवा चक्रों से होता है। जैसे, असुरक्षा, भय या घबराहट आदि कमजोर ह्रदय चक्र (अनाहत) के कारण होते हैं। समस्त विकार, साधारण से लेकर जटिल तक, वस्तुतः शारीरिक ऊर्जा के असन्तुलन के कारण होते हैं ..... समस्त विकारों को संगीत के माध्यम से दूर किया जा सकता है। इसी क्रम में वह सुझाव देते हैं कि ऊर्जा पर अधारित उपचार हेतु सर्वप्रथम संगीतज्ञ को उन केन्द्रों का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए जो 'भारी' हैं या जहाँ ऊर्जा का प्रवाह अवरूद्ध है। तत्पश्चात् विशिष्ट ऊर्जा केन्द्र से सम्बन्धित रागों या धुनों का प्रयोग करके 'अवरोध' को दूर किया जा सकता है। आवश्यकतानुसार संगीतज्ञ को धुन विशेष पर अधिक जोर देकर लम्बे समय तक उसका प्रयोग करके सम्बन्धित अवरूद्ध ऊर्जा केन्द्र अथवा चक्र को गुंजायमान करना चाहिए।[10] राबर्ट बर्टन ने अपनी 17वीं सदी की उत्कृष्ट कृति 'द एनाटॉमी ऑफ मेलैन्कोली' में लिखा है कि संगीत तथा नृत्य मानसिक रोगों के उपचार के लिए काफी महत्वपूर्ण हैं, विशेष रूप से विषाद रोग में इसे एक सार्थक उपचार माना जाता है। 'न्यूरोमोटर रिहेबिलिटेशन' संगीत एवं संगीत सम्बन्धित उपचारात्मक तकनीक द्वारा प्रभावकारी परिणाम प्राप्त हुए हैं, विशेषतः 'स्ट्रोक' एवं पार्किन्सन बीमारी में।[11]

8. संगीत का आध्यात्मिक पक्ष

संगीत–चिकित्सा का इतिहास बहुत प्राचीन हैं। तुर्की–फारसी मनोवैज्ञानिक तथा संगीत सैद्धांतिक अल–फराबी (872–950) ने, जिन्हें यूरोप में ''एल्फराबिस'' के नाम से जाना जाता है, अपने निबंध 'मीनिंग ऑफ द इंटलेक्ट' में संगीत चिकित्सा का वर्णन किया है जहाँ उन्होंने आत्मा पर संगीत के उपचारात्मक प्रभाव की चर्चा की है।[12] योगाचार्य श्री प्रशान्त एस0 आयन्गर व्याख्या करते हैं कि शरीर यांत्रिक युग्म है जिसके प्रत्येक अव्यव पर 'ध्वनि प्रदूषण' का विपरीत प्रभाव पड़ता है। बाहरी वातावरण के साथ ही आन्तरिक इच्छाओं, कामनाओं, कुंठाओं आदि का भी प्रत्येक अव्यव पर प्रभाव पड़ता है। इन्हीं ध्वनि प्रदूषण के दबाव के कारण हम अपने अंदर के 'नाद' को नहीं सुन पाते। इसीलिए योगशास्त्र 'नाड़ी–शुद्धि' के विचार को प्रतिपादित करता है। योग का अन्तिम पड़ाव तब तक प्राप्त नहीं होता जब तक हमारा इच्छाओं पर नियन्त्रण नहीं हो जाता और यह नियन्त्रण चित्त का 'लय' में 'विलीनीकरण' हो जाने पर होता है। चित्त का लय में प्रभावी विलीनीकरण का अर्थ है 'आन्तरिक नाद' का 'मौलिक नाद'(ओरिजिनरी एकॉर्डेन्स) से एकत्व होना। प्राणायाम का उद्देश्य इसी एकत्व के योग की प्राप्ति है। 'ओम' का आलाप उदर में संकुचन, 'ऊकार' ह्रदय एवं एच0–यू0–एम0 मस्तिष्क पर प्रभाव डालता है। संक्षेप में प्राणायाम करने के लिए संगीत का प्रयोग करना चाहिए।[13] ''ध्वनि फेफड़ों में, होंठ, जिह्वा एवं दांतों की स्थिति के अनुसार आकृति ग्रहण करती है जिससे भौतिक शरीर में स्पंदन उत्पन्न होते हैं जो ऊर्जा स्तरों को प्रभावित करते हैं।''[14] शंकर रमाणी के अनुसार ''राग अलापना या आलाप श्रोताओं को ध्यानावस्था अथवा विचारशून्य जागरूकता की स्थिति में ले जाने के लिए एक प्रभावी तकनीक है। शरीर की प्राकृतिक उपचारात्मक क्षमता का संवर्धन आध्यात्मोन्मुखी संगीत, विशेषतः चक्रों से सम्बन्धित धुन व राग, द्वारा किया जा सकता है। प्रत्येक ऊर्जा चक्र से सम्बन्धित मुख्य गुण को विकसित करना संगीत का आध्यात्मिक उद्देश्य प्राप्ति का सशक्त साधन है। ..... यह समझना महत्वपूर्ण है कि संगीत का वास्तविक उद्देश्य प्रबुद्ध करना है न कि उपचार करना।''[15] विशिष्ट संगीत मानव मस्तिष्क के नितान्त आधारभूत क्षेत्रों (लिम्बिक एवं पैरालिम्बिक संरचनायें जो भावनाओं के प्रसंसरण एवं सृजन से सम्बन्धित मानी जाती हैं) को जाग्रत करने एवं तारतम्य में लाने का निर्धारण करता है।[16] भावनाओं का चक्रों से सम्बन्ध के विषय में कनाडा की 'वाइब्रेशनल कन्सल्टेंट' मेरी के0 कहती हैं कि सम्पूर्ण ऊर्जा तंत्र में प्रभामंडल, चक्रों तथा 'मेरिडियन' का समन्वय है जिसमें सात मुख्य चक्र एवं 122 गौण चक्र एक दूसरे से सम्बन्धित हैं। प्रभामंण्डल में इन्द्रधनुष के सभी मुख्य रंग होते हैं जो व्यक्ति द्वारा अनुभूत भावनाओं के अनुसार परिवर्तित होते रहते है।[17] तालिका–2 से इस तथ्य की पुष्टि होती है। इसी क्रम में कैथ, सूक्ष्म शरीर एवं डीएनए एक्टिवेशन कन्सल्टेंट, का कथन भी उल्लेखनीय है जिसके अनुसार हमारे सूक्ष्म शरीर में विद्युत 'आयन' उपस्थित हैं तथा 20 चक्रों को जाग्रत कर सूक्ष्म शरीर को प्रकाश पुंज में परिवर्तित किया जा सकता है।[18] ध्वनि एवं प्रकाश ऊर्जा की अद्भुत संरचना मानव शरीर पर बायनॉरल बीट्स के अतीन्द्रिय प्रभाव की जानकारी सर्वप्रथम भौतिक विज्ञानी टॉमस वारेन कैम्बेल एवं विद्युत अभियंता डेनिस मेनरिच ने राबर्ट मनरो के दिशानिर्देश में प्राप्त की थी। उन्होंने 4 हर्ट्ज के दोलन के प्रभाव में 'शरीर से बाहर होने' की अवस्था का परीक्षण किया था।[19]

9. निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि भौतिक शरीर की ऊर्जा सात मुख्य चक्रों एवं नाड़ी–संस्थान में संचारित है। इन चक्रों का भावनाओं से सम्बंध है। प्रत्येक भावना विशेष हारमोन के स्त्राव पर निर्भर करती है। प्रभावी संगीत के प्रयोग द्वारा ग्रंथियों को वांछित हारमोन का स्त्राव करने का उत्प्रेरण दिया जा सकता है। विभिन्न आवृत्ति की मस्तिष्क तरंगें विविध भावनात्मक स्थिति की अनुभूति कराती हैं। जैसे–जैसे मूलाधार से सहस्त्रार चक्रों की अवरूद्ध ऊर्जा का प्रवाह निर्बाध होता जाता है भावनात्मक पक्ष उन्नत होता है तथा आध्यात्मिक विकास की पृष्ठभूमि तैयार होती है। चक्रों की ऊर्जा के प्रवाह को संगीत (बायनॉरल बीट्स के समान) के माध्यम से प्रभावित किया जा सकता है क्योंकि विशिष्ट धुन व राग चक्र–विशेष के गुणों से सम्बन्धित हैं (तालिका–3)। जितना अधिक चक्र शुद्ध व निर्बाध होंगे, आध्यात्मिक उत्थान उतना ही अधिक सम्भव होगा। "शान्त अनुभव से भी हम पाते हैं कि हम उस आनन्दचेतन अवस्था को, जो चरम सत्य और स्वयं आदर्श है, तब तक प्राप्त नहीं कर सकते, जब तक हम अपने को अशान्त, प्रत्यक्ष ज्ञानात्मक स्थिति से काफी ऊपर नहीं उठा लेते। जितना अधिक हम बाधक अनुभवों और आन्तरिक विचारों को पीछे छोड़ते हैं, उतना ही अधिक अतिमानसिक आनन्द–चेतना अथवा आनन्दमय ईश्वर के आविर्भूत होने की संभावना है।"[20]

तालिका–3 : चक्र सम्बन्धित संगीत स्वर

चक्र सं0	चक्र नाम	वर्ण	संगीत स्वर	तरंगदैर्घ्य(नैनोमीटर)	आवृत्ति(हर्ट्ज)
1	मूलाधार	लाल	C note /Oo	750–650	90.95–104.94
2	स्वाधिष्ठान	नारंगी	D note /Oh	640–590	106.58–115.61
3	मणिपुर	पीला	E note /Aw	580–550	117.61–124.02
4	अनाहत	हरा	F note /Ah	530–490	128.70–139.21
5	विशुद्ध	नीला	G note/ Eh	480–460	142.11–148.29
6	आज्ञा	इण्डिगो	A note /Ih	430–390	158.63–174.90
7	सहस्त्रार	बैंगनी	B note /Eee	380–280	179.51–243.61

सन्दर्भ

1. योगानन्द, श्री श्री परमहंस(2007) "धर्म विज्ञान", योगदा सत्संग सोसाइटी ऑफ इण्डिया, कोलकाता, पृ0–56, आईएसबीएन 81–89535–55–2।
2. तदैव, पृ0–66।
3. चट्टोपध्याय, अशोक कुमार(2005) "पुराण पुरूष योगीराज श्री यामाचरण लाहिड़ी", योगीराज पब्लिकेशन, कोलकाता, पृ0–211, आईएसबीएन 81–900381–5–10।
4. वहबेह, एच0; केलाब्रेजे, सी0 एवं ज्विकी, एच0(2007) "बायनाइल बीट टेक्नोलॉजी एन ह्यूमन्सः एक पायलट स्टडी टू एसेस साइकोलॉजिक एण्ड फिजियोलॉजिक इफेक्ट्स", जर्नल ऑफ आल्टरनेटिव एण्ड काम्पलीमेन्टरी मेडिसिन, खण्ड 13, अंक 1, मु0पृ0 25–32, पीएमआईडी 1730 9374।
5. वहबेह, एच0; केलाब्रेजे, सी0; ज्विकी, एच0 एवं एज्राइदल जे0(2007) "बायनॉरल बीट टेक्नालॉजी इन ह्यूमन्सः ए पायलट स्टडी टू एसेस न्यूरो साइकोलॉजिक, फिजियोलॉजिक एण्ड इलेक्ट्रोइनसेफेलोग्राफिक इफेक्ट्स", जर्नल ऑफ आल्टरनेटिव एण्ड काम्पलीमेन्टरी मेडिसिन, खण्ड 13, अंक 2, मु0पृ0 199–206, पीएमआईडी 17388762 en.wikipedia.org/wiki/Binaural_beats
6. पेनिस्टन, ई0 जी0, कल्कॉस्की, पी0 जे0(1989) "अल्फा–थीटा ब्रेनवेव ट्रेनिंग एण्ड बीटा–इण्डॉरफिन लेवल्स एन एल्कोहलिक्स", एल्कोहल0 क्लिन0 एक्स्प0 रि0, खण्ड 13, अंक 2, पीएमआईडी 2524976।
7. आगिल्वी आर0 डी0 व अन्य(1982) "ल्यूसिड ड्रीमिंग एण्ड अल्फा एक्टिविटीः ए प्रिलिमिनरी रिपोर्ट", पर्पिच्युअल एण्ड मोटर स्किल्स", खण्ड 55, अंक 3, पार्ट 1, मु0पृ0 795–808, पीएमआईडी 7162915।

स्पूर्मेकर वी0 आई0 एवं अन्य(2006) "ल्यूसिड ड्रीमिंग ट्रीटमेन्ट फॉर नाइटमेयर्सः ए पायलट स्टडी", साइकोथेरेपी एण्ड साइकोसोमेटिक्स, खण्ड 75, अंक 6, मु0पृ0 389–94, पी0एम0आई0डी0 1705334

8. ऑस्टर जी0(1973) "आडीटरी बीट्स इन द ब्रेन", साई0 एम0, खण्ड 229, अंक 4, मु0पृ0 94–102, पीएमआईडी 4727697।
9. थॉट, डेविस फेलर(2008) "संगीत चिकित्सा का एक परिचय–सिद्धांत और व्यवहार", तीसरा संस्करणः संगीत चिकित्सा उपचार प्रक्रिया सिल्वर स्प्रिंग, मेरीलैंड, पृ0 475।
10. www.shankarramani.com/music-for-healing.html
11. रेग्लियों ए0; फजियो पी0, इमाब्रियानी सी0 एवं ग्रेनियरी ई, "न्यूरोसाइन्टिफिक बेसिस एण्ड इफेक्टिवनेस ऑफ म्यूजिक एण्ड म्यूजिक थेरेपी इन न्यूरोमोटर रिहैबिलिटेशन", https://www.oapublishinglond.com/article/537
12. एम्बर हक(2004) "इस्लामी नजरिए से मनोविज्ञानः आरंभिक मुस्लिम विद्वानों का योगदान और समकालीन मुस्लिम मनोवैज्ञानिकों के लिए चुनौती", जर्नल आफ रिलीजन एण्ड हेल्थ, खण्ड 43, अंक 4, पृ0 357।
13. www.themotherdivine.com/07yoga-sadhana-and-sangeet-sadhana.shtml
14. www.esotericteachings.org/2012/02
15. www.shankarramani.com/meditative-music.html
16. https://www.oapublishinglondon.com/artcle/537
17. www.mkprojects.com/fa-cleansingandEnergizing.htm
18. www.awakening-healing.com/Healing/Light-body-sk.htm
19. कैम्पबेल, टॉमस(2003) "माई बिग टी0ओ0ई0 बुक", लाइटिंग स्ट्राइक बुक, पृ0 79।(http://www.my-big-toe.com)
20. "धर्म विज्ञान", पृ0–66।

वचा–(एकोरस कैलेमस): वाणी और बुद्धि वर्धक

प्रमोद कुमार सिंह[1], अजय कुमार तिवारी[2], संजीव कुमार ओझा[3] एवं श्रीकृष्ण तिवारी[4]
[1,2]परियोजना सहायक, [3]वरिष्ठ वैज्ञानिक एवं [4]वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक
सी0एस0आई0आर0–राष्ट्रीय वनस्पति अनुसन्धान संस्थान
राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drsanjeevojha@yahoo.co.in

सार

वचा एक अत्यंत महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है जिसका प्रयोग वैदिक एवं आधुनिक समय से चिकित्सा कार्य में होता आ रहा है। यह चिकित्सा के आद्यग्रन्थ आयुर्वेद में वर्णित एक अत्यंत महत्वपूर्ण चिकित्सोपयोगी औषधि है जिसका प्रयोग मेध्य, वातशामक, कास–श्वांस हर, मूत्रल, गर्भाशय संकोचक आदि होने के कारण पक्षाघात, संधिवात, आमवात, मूत्रकृच्छ्र, मानसिक दौर्बल्य, अपतंत्रक, कष्टप्रसव आदि रोगों में किया जाता है। इसमें पाए जाने वाले अल्फा एवं बीटा एसारोन प्रमुख कार्यकारी रासायनिक यौगिक हैं। आधुनिक शोधकर्ताओं ने भी वच की एंटी–ऑक्सिडेंट, एण्टी–कोलिनस्टरेज, डोपामिनर्जिक, एवं एण्टी–कैंसर आदि गुणों की पहचान के चलते इसे अत्यंत चिकित्सोपयोगी बताया है।

बीज शब्द– वचा, कृषि तथा आयुर्वेद।

Vacha-(Acorus calamus): speech and intellect enhancer

Pramod Kumar Singh[1], Ajay Kumar Tiwari[2], Sanjeev Kumar Ojha[3] and Shri KrishnaTewari[4]
[1,2]Project Assistant, [3]Senior Scientist and [4]Senior Principal Scientist
CSIR - National Botanical Research Institute
Rana Pratap Marg, Lucknow, 226001, U.P., India
drsanjeevojha@yahoo.co.in

Abstract

Acorus calamus is an important medicinal herb that is widely used in modern researches as was in ancient Vedic periods. The rhizomes are used in various Siddha , Unani and Ayurvedic medicines. In Ayurvedic system of medicine the powder of this drug is being used to produce therapeutic purposes as like in children (chanting) to improve / rectify the speech defect and improving the memory power is in vogue in most of the rural areas of India. It also shows excellent Ayurvedic properties called Gunas as like Medhya guna, Rasaysn karm, Jwarhar, Sothhar, Krimihar, Vatasamak, etc. Some of the Ayurvedic formulations with this drug are Vachadi taila, Ashwagandharishta Sarasvata churna, Sanjivani vati, Kumar rasayan, Vachabrahmi yog etc. Different parts of the plant showed the presence of large number of phenyl propanoids, sesquiterpenes and monoterpenes as well as xanthone glycosides, flavones, lignans, steroids and inorganic constituents. Alpha and Beta and -asarone are the primary constituent and mainly believed to be responsible for its wide therapeutic actions. It is also reported to possess insecticidal, larvicidal, anti-bacterial, anti-cancers, anti-ulcer, anti-convulsant, anti-epileptic and many more effects.

Key word: Acorus, Agriculture and Ayurveda

1. प्रस्तावना



चिकित्सा विज्ञान की प्राचीन एवं आधुनिक पद्धतियों में जड़ी–बूटियों का विशेष योगदान रहा है। अनेक वनस्पतियाँ ऐसे सार तत्वों का संश्लेषण करती हैं जो मनुष्य तथा अन्य प्राणियों के स्वास्थ्य के रखरखाव के लिए उपयोगी होती हैं। अधोलिखित लेख में औषधीय पौधा वचा के कृषि तथा औषधीय महत्व को बताया गया है। इसका वचा नाम वचन अर्थात बोलने की शक्ति का विकास करती है, वाणी साफ व अच्छी करती है। इसे विभिन्न नामों से जानते हैं जैसे संस्कृत में भूतनाशिनी, उग्रगन्धा, मत्स्यगंधा–मछली जैसी तीक्ष्ण गंध युक्त, षडग्रन्था– छः गाँठों वाली, गोलामी–गौ के समान रोग युक्त, आयुर्वेद में वचा, तमिल में वेशम्भू, हिन्दी में घोड़वच, घुड़ वच, हेमवती–हिमालय प्रदेश में होने के कारण, गुजराती में घोड़ा वच, यूनानी में अकुरन, अरबी में उदलबुज, मराठी में बेखंड तथा अँग्रेज़ी में स्वीट लैग कहते हैं।

वचोग्रगन्धा षड्ग्रन्था गोलोमी शतपर्विका।
क्षुद्रपत्री च मांगलया जटिलोग्रा च लोमशा।।
वचोग्रगन्धा कटुका तिक्तोष्णा वांतिवह्निकृत।
विबन्धाध्मानशूलघ्नी शकृन्मूत्रविशोथिनी।।
अपस्मारकफोन्मांदभूतजन्त्वनिलान्हरेतत्।। "भावप्रकाश निघण्टुः"



लैटिन में इसे एकोरस(कुल–एरेसी) कहते हैं। एकोरस ग्रीक भाषा के "एकोरोन" शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ कोरियन (आँख की पुतली) तथा कैलेमस भी ग्रीक भाषा के कैलामोस से लिया गया है जिसका अर्थ है रीड (ईख या नरकुल) है। औषधीय वचा को प्राचीन चिकित्सा ग्रन्थों में सम्माननीय स्थान प्राप्त हुआ है यूँ तो इसके सभी भागों का प्रयोग बाहरी व आंतरिक तौर पर अकेले एवं अन्य वनौषधियों के साथ अनेकों प्रकार की बीमारियों के ईलाज में होता है पर कई बार इसके कंदों का प्रयोग ही औषधि के रूप में होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में इसकी पत्तियों का प्रयोग टोकरी व चटाई बनाने के काम में भी किया जाता है। हिमाचल प्रदेश में इसे वरें के नाम से जाना जाता है। एक लोकगाथा के अनुसार जहाँ वणा, बसुट्टी, वरें पाई जाती है वहाँ पर आदमी की मृत्यु असम्भव है।

2. वनस्पतिक विवरण

यह बहुवर्षीय पौधा है, जो एक मीटर तक ऊँचे, सीधे, हरे रंग के व कोमल होते हैं। यह नदी, झील तालाबों के किनारे दलदली भूमियों में प्राकृतिक रूप से पाया जाता है।

राइजोम– इसका मूल स्तम्भ अंतःभूस्तारी अन्य पौधे की तरह सीधा नहीं रहता है बल्कि बहुत सी जटा के सदृश जड़ की शाखायें चारों तरफ फैली हुई होती है तथा इसकी मोटाई मध्यमा अंगुली (लगभग 2.5 सेमी. तक) के समान होती है प्रत्येक गाठों के चारों ओर सघन रोयें होते हैं तथा 5–6 संधि (पर्व) होती हैं यह पौधे का उपयोगी भाग है जिसको औषधि के रूप में प्रयोग किया जाता है।

जड़– इसमें पतली रोम सदृश लम्बी जड़ें पाई जाती हैं जो जमीन के नीचे सतह तक फैली हुई होती है।

पत्ती– इसकी पत्तियाँ सीधी तलवार की भाँति 60 सेमी तक लम्बी व 1.25–2.50 सेमी चौड़ी होती हैं तथा पत्तियों के बीच में एक मोटी प्राथमिक सिरा होती है जिससे अनेक द्वितीयक एवं तृतीयक सिरायें निकली रहती हैं।

पुष्प– इसके पुष्प मई–जून महीने में आते हैं जो लम्बे, आवृन्त, बेलनाकार, खुशबूदार तथा हरे–भूरे रंग के होते है। जो कि 5–10 सेमी. के स्पेडिक्स पुष्पक्रम में व्यवस्थित रहते हैं।

पुष्पमंजरी– यह 2–4 इंच लम्बी, 0.5–0.75 इंच व्यास वाली, किंचित वक्र और 6–30 इंच लम्बे पत्रकोशों से आवृत रहती है।

फल– इसके फल छोटे गोल मांसल बेरी होते हैं तथा इसमें कुछ बीज होते हैं यह जुलाई माह में लगते हैं।

भावप्रकाश निघण्टुः के अनुसार चार प्रकार की वचा का वर्णन है जो निम्नवत् है–

क्र.सं.	नाम	वानस्पतिक नाम	कुल	परिचय
1.	वचा (घोड़ वचा)	*एकोरस कैलेमस*	*एरेसी*	यह पुष्प भेद से तीन प्रकार के होते हैं–1. भवेत 2. रक्त 3. नील। उपरोक्त वर्णित वचा।
2.	बाल वचा (पारसीक वचा)	*आईरिस जर्मेनिका*	*इरीडेसी*	ईरान एवं कश्मीर में विशेषतया पायी जाती हैं, यह मुसलमानों के कब्र पर लगी मिलती है अतः इसे मजार पोश या मजार मुंड(कब्र का फूल) कहते हैं।
3.	द्वीपांतर वचा	*स्माइलेक्स चाइना*	*लिलिएसी*	भाव प्रकाश ने इसे फिरंगामय नाशिनी(फिरंग रोग को खत्म करने वाला) कहते हुए फिरंग उपचार में प्रयोज्य बताया।
4.	महाभरी वचा (कुलंजन)	*एल्पीनिया गैलेंगा*	*जिन्जीबरेसी*	यह विशेष रूप से जावा एवं सुमात्रा का मूल निवासी है। किंतु अब यह बंगाल के पूर्वी भाग एव दक्षिण भारत में विशेषतः पाया जाता है।

3. प्राप्ति स्थान/ भौगोलिक अध्ययन



वचा को एशिया खंड का मध्य भाग तथा पूर्वी यूरोप को उत्पत्ति स्थान माना जाता है। यह मणिपुर व नागालैण्ड की पहाड़ियों पर तथा कश्मीर की दलदली भूमियों में प्राकृतिक रूप से मिलता है। इसके अलावा हिमाचल प्रदेश में दलदली भूमियों, झीलों व नदियों के किनारे पाया जाता है। अत्यधिक औषधीय उपयोगी होने तथा असम्यक दोहन के कारण यह लुप्त प्राय प्रजातियों के रूप में सूची बद्ध है। इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजरवेशन ऑफ नेचर (आई0यू0सी0एन) के अनुसार गत वर्षो में प्राकृतिक रूप में पाये जाने वाले पौधों की संख्या में 20% की कमी आई है। अनुमानतः 77% वचा खेती द्वारा प्राप्त की जाती है एवं 23% जंगलों से एकत्र किया जाता है। भारत में कुल वचा का उत्पादन 5,725 क्विंटल प्रति वर्ष है। इसकी खेती कर्नाटक राज्य के कोराटगेरे तालुका नामक प्रायद्वीप पर नियमित एवं व्यावसायिक स्तर पर की जाती है।

जलवायु

यह भारत वर्ष में उपोष्ण कटिबन्धीय से शीतोष्ण कटिबन्धीय भागों में 1800–2600 मीटर की ऊँचाई तक प्राकृतिक रूप से पाया जाता है। इसके लिए 10–38 डिग्री से0 तापमान व 70–250 सेमी वार्षिक वर्षा की आवश्यकता होती है। यह खरीफ ऋतु की फसल है। ग्रीष्म तथा वर्षा के समय उचित नमी होने पर इसकी अच्छी बढ़वार तथा अधिक उपज प्राप्त होती है।

भूमि एवं उसकी तैयारी

वच प्राकृतिक रूप में दलदली स्थानों पर पाया जाता है। इसके लिए चिकनी दोमट एवं जलोढ़ मृदा सर्वोत्तम रहती है। 5.5–7.5 पी. एच. तक की मिट्टी में वच की खेती अच्छी प्रकार से की जा सकती है तथापि इसे 9.0–9.5 पी.एच. तक सफलतापूर्वक उगाया जा

सकता है। खेत की तैयारी के लिये अच्छी प्रकार से जुताई करके खरपतवार से रहित कर देना चाहिए फिर अच्छी प्रकार समतल कर लेना चाहिए।

बुवाई / रोपाई

फसल के समय प्रकन्द के परिपक्व भाग काट दिये जाते हैं पहले रोपण से प्राप्त प्रकन्दों को मिट्टी में संरक्षित रखा जाता है और उनमें नमी रखी जाती है। उद्धव के बाद प्रकन्दों को 4–5 सेमी, लम्बे टुकड़ों में काट लेना चाहिए इन टुकड़ों को पॉलीथीन के पैकेट में मिट्टी भर कर या खेत में 4–5 सेमी की गहराई में फरवरी–मार्च माह में 40 25 सेमी के अंतराल पर लगा देना चाहिए तथा बाद में पानी भर देना चाहिए। प्रकन्दों का रोपण इस तरह से करना चाहिए कि दूसरी पंक्ति पहली पंक्ति वाले पौधों के सामने ना आकर उनके बीच में आये। इसकी फसल में हमेशा नमी रहनी चाहिए। उपरोक्त अंतराल पर रोपाई करने के लिए एक हैक्टेयर खेत में लगभग एक लाख प्रकन्दों की आवश्यकता होती है।

खाद

वच के खेत में 15–20 टन गोबर या कम्पोस्ट की खाद को खेत की तैयारी के समय अच्छी तरह मिला देना चाहिए।

अंतःशस्य क्रियाएं



वच एक जल प्रिय फसल है और लगभग पूरे वृद्धि काल में इसमें पानी भरा रहता है जिसके कारण खरपतवार कम होते हैं। अतः इसमें निराई की आवश्यकता नहीं रहती। यदि खरपतवार अधिक हो जाए तो प्रारम्भिक 4–5 महीने में एक बार निराई अवश्य कर देनी चाहिए।

कीट एवं रोग नियंत्रण

सामान्यतः वचा में रोग व कीटों का प्रकोप होने की सम्भावना कम ही होती है। इसमें मुख्यतः पत्तों में धब्बे लगने वाली बीमारी लगती है जिसके नियंत्रण के लिए क्लोरपाइरीफास 20 मिली / 10 लीटर पानी के साथ छिड़काव करना चाहिए।

सिंचाई

रोपण के पश्चात, विशेषकर मई–जून के महीनें में नमी समाप्त होने के पहले ही सिंचाई कर देनी चाहिए। वच आर्द्र व दलदली भूमियों में पाया जाता है अतः इसमें सिंचाई की विशेष आवश्यकता नहीं होती है यदि बारिश न हो तो 7–8 दिनों के अंतराल पर सिंचाई कर देना चाहिए। मई–जून के महीने में नमी समाप्त होने के पहले ही कर देनी चाहिए।

प्रकन्दों की खुदाई

वच की फसल लगभग 10–11 महीनों में तैयार हो जाती है। इसकी खुदाई जनवरी–फरवरी के महीने में करते हैं जब इसकी पत्तियाँ पीली होकर जमीन पर लेट जाती हैं। यही प्रकन्दों की खुदाई का उपयुक्त समय है तथा ऊसर या बंजर भूमियों में इसे दूसरे वर्ष खोदना लाभकारी होता है। खुदाई के पश्चात प्रकन्दों को अच्छी प्रकार छाया में सुखा लेना चाहिए।



उपज

वच की अच्छी फसल से लगभग 250–300 कुंतल प्रति हैक्टेयर तक प्रकन्दों (राइजोम) की पैदावार हो जाती है। ताज़ी अवस्था में इसमें 70–80% तक नमी पाई जाती है। इसको अच्छी तरह सूखने के पश्चात ही भण्डारित करना चाहिए।

4. रासायनिक संगठन

वच के प्रकन्दर में 1.5–3.5% तक वाष्पशील तेल पाया जाता है जिसमें प्रधानतः एसारिल ऐल्डिहाइड होता है। इसके अतिरिक्त 4% कैलेमेन, 5% कैलेमेनोल, 1% केलामेनोन होता है। इसमें दो क्रियाशील तत्वों एल्फा–एसारोन व बीट–एसारोन का निरूपण किया गया है। एकोरिन नामक ग्लाइकोसाइड तिक्त सत्व एवं केलामीन नामक भस्म तत्व, 25: तक रेजिन एवं टैनिन, म्यूसिलेज, युजिनोल, पाइनीन, मोनोटर्पीन हाइड्रोकार्बन, सेक्यूस्टरीन कीटोन, कैम्फीन, स्टार्च तथा कैल्सियम आक्जैलिक आदि पाये जाते हैं।

नवीनतम शोधों के द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि तेल की संरचना और बीटा–एसारोन की मात्रा गुणसूत्रों पर निर्भर करती है। जो निम्न तालिका द्वारा प्रदर्शित किया गया है–

क्र.सं.	गुणसूत्रों की संख्या	बीटा–एसारोन की प्रतिशत मात्रा
1.	द्विगुणित (2n) = 24	<1%
2.	त्रिगुणित (3n) = 36	8-19%
3.	चतुर्गुणित (4n) = 48	10-96%

रासायनिक संरचना– बीटा–एसारोन

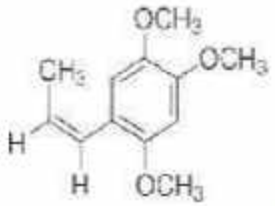

आयुर्वेद के अनुसार

1. रस– कटु, तिक्त 2. गुण– लघु, तीक्ष्ण 3. वीर्य–उष्ण 4. विपाक–कटु
5. प्रभाव–मेध्य



प्रयोज्यांग : मूल एवं भूमिगत कांड(तना)

प्रयोज्य मात्रा: 125–500 मिग्रा.

वचा के कर्मों का आयुर्वेदिक एवं आधुनिक परिप्रेक्ष्य में तुलनात्मक विवरण–

वचा का शोधन– अशुद्ध वचा के शोधन के लिये भैशज्य रत्नावली(24/44) नामक आयुर्वेदिक ग्रंथ में निम्न विधि का वर्णन किया गया है–

अशुद्ध वचा→गो मूत्र तथा गोरखमुंडी में पकावें→अवशेष को पंचपल्लव* के क्वाथ में स्वेदन करें→स्वेदित वचा को सुखा कर गन्धोदक से प्रक्षालित कर सुखा लें→मिट्टी की हाण्डी में गन्धोदक** भरकर उसके ऊपर पेंदे में छिद्रित दूसरी हाण्डी में वचा को भरकर एक घंटे तक स्वेदित कर लें→तत्पश्चात् वचा को 1 घंटे तक गो मूत्र में रख दें→फिर सहजन की छाल के क्वाथ से धोकर तथा गन्धोदक से धो लें→फिर मरुआ और मल्लिका के पुष्पों के ढेर के मध्य रखकर सुवासित करें→शुद्ध वचा→शुद्ध वचा को सुखाकर कूट कर चूर्ण बना कर राल, कुन्दरु तथा नखी आदि गन्ध द्रव्यों के धूप से धूपित कर कांच के पात्र में रख लें।

पंच पल्लव*– आम, जामुन, कैथ, बीजपुर नींबू एवं विल्व इन पाँचों वृक्षों के पत्तों को पंच पल्लव कहते हैं।

गन्धोदक**– तेजपत्र, पत्रक, खश, मोथा, बला(प्रत्येक 2 ग्रा0) व कुष्ठ(1 ग्रा0) को जल(33 ग्रा0) में अर्धांश शेष रहने तक उबाल कर गन्धोदक का निर्माण किया जाता है।

क्र.सं.	आयुर्वेदिक गुण एवं सन्दर्भ	आधुनिक गुण	सन्दर्भ
1	बलवर्धक(सु0स0)	एंटी–ऑक्सिडेंट	गोविन्द राजन एवं सहयोगी
2	(अ) बुद्धिवर्धक (सु0स0) (ब) मेध्य (ध0नि0)	एण्टी–कोलिनेस्टेरेज	विजयापदी एवं सहयोगी–2013
		डोप्मिनेर्गिक	वेंगदेश प्रभू एवं सहयोगी–2009
		एनएमडीए एंटागोनिष्ट	लिमोन एवं सहयोगी–2009
		बी एमायलोयड प्रतिकारक	जेंग एवं सहयोगी–2010
		न्युरोप्रोटेक्सन	मुथुरमन एवं सिंह–2012
		नूट्रापिक	देशमुख, पी0 बी0 एवं सहयोगी–1982
3	वातशामक (ध0नि0)	एण्टी–इचिंग	अग्रवाल, ए0 के0–1997 एवं राजगोपालन वी0–1995
		एण्टी–एंग्जायटी	कुलकर्णी, पी0 एच0 1995 एवं खरे ए0 के0–1982
4	अपस्मार (मिर्गी) हर (भा0प्र0, चक्रपाणि)	एण्टी–कंवल्सेंट	बैडम, एल0–1995
		एण्टी–सिजोफ्रेनिया	सिंह, आर0 पी0 एवं सहयोगी–1991
		एण्टी–एपिलेप्टिक	हजारे, आर0 एवं सहयोगी–2007
5	शोथहर एवं शूलहर (भा0प्र0 एवं ध0नि0)	एण्टी–इंफ्लामेटरी	सिद्दीकी, एम0 टी0 ए0 एवं आसिफ, एम0–1991
		एण्टी–अल्सर	किलर के0 एवं सहयोगी–1985
6	कृमिनाशक (ध0नि0)	इंसेक्टीसाइडल	शिमिजु, एम0 एवं सहयोगी–1993
		एण्टी–माइक्रोबियल	वास्सी, आई0 जी0 एवं पटेल एच0 सी0–1987
		एण्टी–वाइरल	मार्मोन, पी0 एवं सिंह, आर0 एच0–1994
7	वेदनास्थापक (ध0नि0)	ट्रैंकुलाइजर	शर्मा0 आर0 एवं सहयोगी–1993
		एण्टी–स्पैस्मोडिक	डोमबेक, सी0; लिबर्टी,एल 1989 एवं विजया, के0 एवं अनंथान, एस0–1994
8	भवास, कासहर (भा0प्र0)	एण्टी–अस्थमेटिक	चंद्रशेखर, एच0 आई0–1982
9	आमवात(भा0प्र0)	एण्टी–रूमेटाइटिस	शर्मा, आर0 एवं सहयोगी–1983
10	हृदयोत्तेजक (भा0प्र0)	एण्टी–एंजाइनल	रफातुल्ला एस0 एवं सहयोगी–1984
11	मेदोहर (भा0प्र0)	हाइपोलिपिडिमिक	रेशमा एस0 एवं सहयोगी–2002
12	क्षुधावर्धक, कफोत्सारक, सन्निपातज्वर, नाशक, मूत्रजनक, मूत्रशोधकएवं गर्भाशयसंकोचक (भा0प्र0)		
13	वामक एवं कंण्ठ्य (ध0नि0)		
14	मुखरोगनाशक(हारीत)		
15		एण्टी–कैंसर	पारिख एवं सहयोगी–1984

5. आयुर्वेदिक उपयोग

1. यह सुगंधित, तिक्त तथा कटु रस युक्त, उष्ण वीर्य, वामक, विबन्ध, अध्यमान, शूलनासक, मल व मूत्र का शोध करने वाली, मूत्रजनक, मिर्गी, कफ, उन्माद, कृमि तथा वायु को नष्ट करने वाली होती है।

2. यह वातानुलोमक, क्षुधावर्धक कफोत्सारक, वातशामक, शोथहर, पित्तवर्धक, संज्ञास्थापक, वेदनास्थापक, मेध्य शूलप्रशामक, हृदयोत्तेजक, भवास, कासहर के रूप में उपयोग किया जाता है।

3. इसे उदर शूल अग्निमाध, अतिसार, ज्वर, खांसी, गर्भाशसंकोचक, सन्निपात ज्वर में विशेष उपयोगी, दमा व अपस्मार(मिर्गी) के उपचार में प्रयुक्त किया जाता है।

4. सन्धिवात, आमवात, पक्षाघात आदि में इसका लेप किया जाता है। कर्णनाद तथा कणशूल में इसका स्वरस कानों में देते हैं।

5. स्त्रियों के कष्ट प्रसव में केशर एवं पिप्पली मूल के साथ प्रयोग करते हैं।

6. वचा का औषधीय महत्व

1. वचा एक महत्वपूर्ण औषधीय पौधा है आधुनिक चिकित्सा में इसका प्रयोग शताब्दियों पहले से किया जा रहा है यूनानी चिकित्सा के अनुसार यह मस्तिष्क शोधक, नाड़ी मण्डल, शक्तिवर्धक तथा आमाशय को शक्ति देने वाला यकृत विकार, नेत्र तथा दंत रोगों में अत्यधिक लाभप्रद है।

2. बच्चे जो जन्म के बाद जल्दी नहीं बोलते या तुतलाते हैं उनमें वाक् शक्ति को बढ़ाने हेतु इसका प्रयोग करते हैं तथा बालकों के दांत निकलते समय बुखार व दुर्बलता आदि को नष्ट करता है।

3. यह ह्रदय की गति को मंद करता है व रक्त भार को कम करता है।

4. बुद्धि को बढ़ाने हेतु कुमार रसायन में इसका प्रयोग किया जाता है।

5. इसका लेप मस्तक पर करने से सिर में होने वाले दर्द में लाभ होता है तथा इसका लेप नाक पर लगाने से जुकाम, सर्दी व इनफ्लुएंजा में लाभ होता है।

6. भावप्रकाश निघण्टु: के अनुसार वच के सेवन से मेधा शक्ति बढ़ती है इसके लिए वच को मधु या दूध के साथ अधिक दिन तक सेवन करना चाहिए। ब्राह्मी, शंखपुष्पी तथा वच तीनों को समान मात्रा में लेकर इसके चूर्ण को ब्राह्मी के रस के साथ देना चाहिए अथवा सारस्वत चूर्ण को आधा से एक मासा मधु एवं घृत के साथ कुछ दिन लेने से उन्माद, स्मरण शक्ति का ह्रास एवं वाणी की जड़ता आदि दूर होकर बुद्धि का विकास होता है।

7. वच में रहने वाले टैनिन के कारण इसका प्रयोग जीर्ण, अतिसार एवं संग्रहणी आदि में किया जाता है, इसके सेवन से आध्मान एवं शूल दूर होता है तथा पाचन सुधार कर भूख बढ़ती है।

8. आँख की धुन्ध में वच के स्वरस का अंजन करने में धुन्ध समाप्त हो जाती है तथा इसका प्रयोग शोक व चिंता में लाभप्रद होता है।

9. वच में मस्तिष्क तथा तंत्रिका तंत्र को दुबारा पैदा करने की शक्ति पाई जाती है।

10. वच के पाउडर को दूध के साथ मथ कर लेने से स्मरण व श्रवण शक्ति तथा आयु की वृद्धि होती है।

11. वच एक आश्चर्यजनक टानिक का काम करता है क्योंकि इसमें भूख को उत्तेजित करने की शक्ति पाई जाती है।

12. स्वर भेद में इसका टुकड़ा मुँह में रख कर चूसते हैं तथा वच का टुकड़ा रात–दिन मुख में रख कर छोड़ना चाहिए इससे मुख व्रण नट हो जाता है तथा गले की सूजन व खांसी में भी लाभदायक होता है।

13. इसका प्रयोग मक्खी–दीमक आदि कीड़ों को नष्ट करने में प्रयोग किया जाता है तथा प्राचीन काल में लोग इसके सूखे कंदों को कपड़ों के साथ रखते थे जिससे कीड़ों से बचाव होता है।

14. वच की पत्तियाँ जलाने के बाद निकलने वाला वाष्पशील तेल पूरे वातावरण में फैल जाता है जिससे विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म जीवों का नाश हो जाता है।

15. द्रव्यगुण विज्ञान के अनुसार श्वांस रोग में 1–2 ग्राम वच का चूर्ण, 5–10 ग्राम सेंधा नमक और 400 मिली. पानी मिलाकर पीने से वमन होता है और श्वांस का वेग कम हो जाता है।

16. वचा के कल्क से एक सौ बार सिद्ध किये घी का एक द्रोण मात्रा को खाने से पाँच सौ वर्ष की आयु होती है तथा गलगण्ड, अपची, शलीपद, स्वर भेद नष्ट हो जाते हैं। (सुश्रुत संहिता/चिकित्सास्थानम्, 28/8)

17. वच चूर्ण, सुवर्ण भस्म और विल्व चूर्ण इनको घी के साथ लेने से मेधा, आयुश्य, आरोग्य पुष्टि और सौभाग्य बढ़ता है। (सुश्रुत संहिता/चिकित्सास्थानम्, 28/17)

7. वच के विभिन्न औषधीय उत्पाद(योग)

1.	वचाब्राह्मी योग	2.	वचादि चूर्ण
3.	सारस्वत चूर्ण	4.	मेध्य रसायन

5.	वचादि घृत	6.	अवगन्धारिष्ट
7.	संजीवनी बूटी	8.	कुमार रसायन
9.	वचादि तैल		

वचादि चूर्ण– वच का बारीक चूर्ण बनाकर दूध के साथ सेवन करने से जुकाम से उत्पन्न हुए गले या कण्ठ की क्षति में लाभ प्रद है।

वचादि घृत– बालवच, गुरूचि, कचूर, हरड़, शंखपुष्पी, सोंठ तथा अपामार्ग इन द्रव्यों का कल्क बनाकर तैयार किया गया वचादि घृत का सेवन करने से वाक शक्ति, मेधा, स्मृति तथा अग्निवर्धन करता है। (अष्टांगहृदय–उत्तर स्थान 1/46)

सारस्वत चूर्ण– वचा, कचूर, हल्दी, दारू, हल्दी, देवदारू, सोंठ, अजमोदा, शंखपुष्पी व मिर्च का चूर्ण बना कर ब्राह्मी स्वरस की भावना देकर छाया में सुखा कर रख लें।

मात्रा एवं अनुपान– 2–4 मासा सुबह शाम घृत वाहद के साथ

वचादि तैल– वच, कचूर, हल्दी, दारू हल्दी, देवदारू, सोंठ, हरड़, अतीस, नागरमोथा व इन्द्र जौ प्रत्येक का क्वाथ बना कर इसमें तेल व चकवड पंचाग स्वरस मिलाकर तैल को सिद्ध कर लेते हैं। तैल सिद्ध होने पर सीसे के सिन्दूर को मिलाते हैं। (शा.–मध्य खण्ड–9/115–117)

उपयोग–इस तैल में दारुण गण्डमाला भी ठीक हो जाती है।

8. सावधानियाँ

वच के ज्यादा सेवन से उल्टी आने लगती हैं। सम्भवतः एसारोन नामक तत्व इसका कारण है। इस कारण ही इसके उत्पाद व तैल 1968 में अमरीका (यूएसएफडीए) द्वारा प्रतिबंधित कर दिये गये। आयुर्वेद में इसका प्रयोग शोधन के पश्चात् बताया गया है जिसका उल्लेख उपरोक्त वर्णित है। बाजार में वच के काट कर सुखाये गये छोटे–छोटे टुकड़े मिलते हैं जिसमें प्रायः खत्मी (एल्थिया ऑफीसिनेलिस एवं वाटर फ्लैग) (आईरिस स्यूडोकोरस) को ज्यादा व्यापारिक लाभ के लिए अपमिश्रण के तौल पर मिलाकर बेचा जाता है तथा भारत में कई स्थानों पर इसके स्थान पर प्रायः कुलंजन (एल्पीनिया गैलेंगा) की जड़ भी बेची जाती है। इसीलिए जहाँ वच की आवश्यकता हो वहाँ घोड़ वच के नाम से ही औषधि खरीदनी चाहिए।

9. निष्कर्ष

वचा चिकित्सा के आद्यग्रन्थ आयुर्वेद में वर्णित एक अत्यंत चिकित्सोपयोगी औषधि है जिसका प्रयोग मेध्य, वातशामक, कास–श्वासहर, मूत्रल, गर्भाशय संकोचक आदि होने के कारण पक्षाघात, संधिवात, आमवात, मूत्रकृच्छ्र, मानसिक दौर्वल्य, अपतंत्रक, कष्टप्रसव आदि रोगों में किया जाता है। इसमें पाए जाने वाले अल्फा एवं बीटा एसारोन प्रमुख कार्यकारी रासायनिक यौगिक हैं। आधुनिक शोधकर्ताओं ने भी वच की एंटी–ऑक्सिडेंट, एण्टी–कोलिनेस्टेरेज, डोप्मिनेर्गिक, एनएमडीए एंटागोनिस्ट, न्युरोप्रोटेक्शन, एण्टी–एंग्जायटी, एण्टी–कंवल्सेंट, एंटी–एपिलेप्टिक, एण्टी–माइक्रोबियल, हाइपोलिपिडिमिक एवं एण्टी–कैंसर आदि गुणों की पहचान कर इसे अत्यंत चिकित्सोपयोगी बताया है। अतः उपरोक्त वर्णित तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि वच का प्रयोग औषधि के रूप में प्राचीन भारतीय चिकित्सा पद्धतियों (आयुर्वेद, यूनानी एवं सिद्धा) तथा आधुनिक चिकित्सा पद्धति में वृहत् रूप में हो रहा है। यह मात्र स्वास्थ्य रक्षक औषधि ही नहीं अपितु इसकी सफल व्यावसायिक खेती से हमारे देश में बेकार पड़ी भूमि का सदुपयोग हो सकता है और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसकी खेती से हमारे अन्न उत्पादन पर कोई कुप्रभाव नहीं पड़ेगा क्योंकि इसकी खेती बेकार पड़ी दलदली भूमि पर की जाती है तथा उत्पादित केन्दों के विक्रय एवं निर्यात से हमें आर्थिक लाभ के साथ–साथ विदेशी मुद्रा भी प्राप्त होगी। शिक्षित

बेरोजगार युवक अनेक वित्त पोषित योजनाओं के अंतर्गत इसके औषधि उत्पादन की लघु इकाइयां भी स्थापित कर सकते हैं जो कि बेरोजगारी की समस्या में सहायक होगी। इस प्रकार की औषधीय फसलों की व्यावसायिक खेती से हमारे देश के ग्रामीण समाज की आर्थिक उन्नति के साथ इससे निर्मित औषधियों से एक ओर हमारा स्वास्थ्य सुरक्षित होगा तथा दूसरी ओर स्वच्छ, संतुलित पर्यावरण जिसकी हमें अत्यन्त आवश्यकता है, इसके भी अलावा हमारे आस–पास बेकार पड़ी भूमि का पूर्ण सदुपयोग के साथ वच को विलुप्त होने से बचाया जा सकता है।

10. **आभार**

यह अध्ययन साइंस फॉर इक्विटी, इम्पॉवरमेंट एण्ड डेवलपमेंट(एसईईडी) प्रभाग, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार द्वारा प्रायोजित परियोजना वृद्धावस्था जन्य स्मृति ह्रास के पारम्परिक उपचारों का पुनर्जीवनः आयुर्वेद में वर्णित प्राचीन भारतीय बौद्धिक ज्ञान का प्रलेखन एवं प्रसारण के अन्तर्गत किया गया है। इस परियोजना के अध्ययन एवं सम्पादन में निदेशक, सीएसआईआर– राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ का अभूतपूर्व योगदान प्राप्त हुआ है जिसके लिए हम उनके आभारी हैं।

सन्दर्भ

1. सहायक, गंगा एवं चुनेकर, कृष्ण चन्द्र(2002) "भाव प्रकाश निघण्टु", चौखम्भा भारती अकादमी, वाराणसी, भारत।
2. शर्मा, प्रियव्रत(आचार्य)(1992) "द्रव्यगुण"(द्वितीय भाग), चौखम्भा भारती अकादमी, वाराणसी, भारत।
3. घाडेकर, भास्कर गोविन्दजी एव पं. श्री लाल चन्द्र जी वैद्य(1975) "सुश्रुत संहिता", मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली।
4. श्रीवास्तव, शैलजा(1998) "शारंगधर संहिता", चौखम्भा ओरियंटालिया, वाराणसी, भारत।
5. शास्त्री, राजेश्वर दत्त(1993) "भैषज्य रत्नावली", चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, भारत।
6. त्रिपाठी, ब्रह्मानन्द(1999) "अष्टागहृदय", चौखम्भा संस्कृत प्रतिष्ठान दिल्ली, भारत।
7. शर्मा, रवीन्द्र(2002) "औषधीय एवं सुगंध पौधों की कृषि तकनीक", दया पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
8. राम, सुशील (1983) "वनौषधि–निर्देशिका", जीवन शिक्षा मुद्रणालय (प्रा.) लिमिटेड, वाराणसी।
9. पुष्पांगदन, पी0(2005) "एंटीऑक्सिडेंट ऐप्रोच टू डिसीज मैनेजमेंट एण्ड द रोल आफ रसायन हर्ब आफ आयुर्वेद", जर्न0 ऑफ इथनोफार्मो0, खण्ड 99, अंक 2, मु0प 0 165–178।
10. कुमार, राकेश; शर्मा, सौरभ; शर्मा स्वाति; सूद, स्वाति एवं सिंह, बिक्रम(2013) "वचा ने रचा महत्वपूर्ण उपयोगों का इतिहास", विज्ञान प्रगति, मई–2013, अंक–5, मु0पृ0 13–17।
11. पण्डित, विजय; अन्नबैथिना पी0; शिवा नागा वी0; श्रीकांत, बी0; मंजूनाथ, वी0.; बोगवरपु, पी0; मोहम्मद, ए0 के0; प्रसाद, के0 आर0 और कुमराप्पन, सी0 टी0(2013) "इन विट्रो एंटीकोलिनेर्जिक और एंटी हिस्टैमिनिक एक्टिविटिज आफ एकोरस कैलेमस" लिन0 लीव्स इक्सट्रैक्ट ए0जे0टी0सी0ए0एम0, खण्ड–10, अंक–1, मु0पृ0 95–101।
12. वेंगादेश, प्रबू, जॉर्ज, के0; कुमार टी0 विनोथ; नैंसी, आर0 जे0; कलैवानी, एम0 एवं विजयापंडित, पी0(2009) "न्यूरोमोडूलोटरी इफेक्ट ऑफ एकोरस कैलमस लीव्स इक्सट्रैक्ट ऑन डोपामिनरजिक सिस्टम इन माइस", ज0 फार्मा0 टेक0, खण्ड 1, अंक 4, मु0पृ0 1255–1259।
13. एसपिनोसा, बी0; जेंटो, ई0 एवं गुवारा, जे0(2009) "न्यूरोप्रोटेक्टिव इफेक्ट ऑफ़ अल्फा–एसोरोन ऑन स्पेसियल मेमोरी एंड नाइट्रिक ऑक्साइड लेवल इन रैट इन्जेक्टेड विथ अमायलोइड", ए0 न्यूरोसाइंस लेटर्स, खण्ड 453, अंक–2, 3, मु0पृ0 98–103।
14. जेंग, वाई0; ली, सी0; लुई, जे0; झाऊ, एल0; डोंग, एम0; ली, एक्स0 एवं नीऊ, वाई0(2010) "बीटा–एसरोन इम्प्रूव्स कोगनिटिव फंक्शन बाइ स्रपेस इन न्यूरोनल एपोपटोसिस इन दी बीटा–अमायलोइड हिप्पोकैम्पस इंजेक्शन", रैट0 बायो0 फार्मा0 बुल0, खण्ड 33, अंक 5, मु0पृ0 836–843।

15. मुथूरमन, ए0 एवं सिंह, एन0(2012) "न्यूरोप्रोटेक्टिव इफेक्ट ऑफ सैपोनिन रिच एक्सट्रेक्ट ऑफ एकोरस कैलमस इन रैट मॉडल ऑफ क्रोनिक कान्सट्रकसन इनजरी आफ सियाटिक नर्व इंड्यूज्ड न्यूरोपैथिक", पेन0 जे0 इथनोफर्मेको0, खण्ड 142, अंक–3, मु0पृ0 723–731।

16. राजगोपालन, वी0(1995) "सेमीनार ऑन रिसर्च इन आयुर्वेद एंड सिद्धा", 20–22 मार्च, पृ0 34।

17. डेट, बी0 बी0 एवं कुलकर्णी, पी0 एच0(1995) "आयुर्वेदा रिसर्च पेपर–2", मु0पृ0 15–24।

18. खरे, ए0के0 एवं शर्मा एम0 के0(1982) ज0 साइंस, रिस0 प्लांट्स एण्ड मेडिसीन्स, खण्ड 3, अंक 4, मु0पृ0 100–103।

19. मैमगैन, पी0 एवं सिंह, आर0 एच0(1994) ज0 ऑफ रिसर्च, इन आयुर्वेदा एण्ड सिद्धा, खण्ड 15, अंक 1–2, मु0 पृ0 35–51।

20. किलर, के0, ओडेंथल, के0 पी0 एवं लेंग पेस्कोलो(1985) ई0 प्लांटा मेडिका0, अंक–1, मु0पृ0 6–9।

21. इम्बेक, सी0 एवं लिबर्टी एल0(1989) "एको0 कैलेमस", लारेंस रिव्यू ऑफ नेचूरल प्रोडक्टस, अंक 7, मु0पृ0 1–2।

22. विजय, के0 एवं अनंथन, एस0(1994) बायोमेडिसीन, खण्ड 14, अंक 1, मु0पृ0 21–23।

23. सिदिदकी, एम0 टी0 ए0 एवं आशिफ, एम0(1991) कांफ्रेंस ऑफ फार्मोकोलॉजी एण्ड सिम्पोजियम आन हर्बल ड्रग्स, पृ0 23।

24. पारिख, एम0 डी0; प्रधान, पी0 वी0; शाह, एल0 पी0 एवं बगाडिया, वी0 एन0(1984) ज0 रिस0 आयुर0 सिद्धा0, खण्ड 5, अंक 1–9, मु0पृ0 12–17।

25. देशमुख, पी0 बी0; चवन, एस0 आर0 और रेनापुरकार, डी0एम0(1982) पेस्टीसाइड, खण्ड 16, अंक 12, मु0पृ0 7–12।

26. सिंह, आर0 पी0(1991) इंडियन परफ्युम, खण्ड 35, अंक 1, मु0पृ0 35–37।

27. शिमिजु, एम0 एवं शोयाकुगाकु, जैसी(1993) रिसर्च ज0 फार्मा0 एण्ड टेक0 2(2) एकोरस कैलेमस इन : केमिस्ट्री एण्ड बायोलॉजी, खण्ड 47, अंक 1, मु0पृ0 1–4।

28. शर्मा, आर0 ए0 एवं तिवारी, पी0 वी0(1993) जर्नल ऑफ रिसर्च एण्ड एजुकेशन इन इंडियन मेडिसीन, खण्ड 12, अंक 1, मु0पृ0 15–26।

29. शर्मा, आर0; कुमार, ए0 एवं तिवारी, पी0 वी0(1993) जर्नल ऑफ रिसर्च ऐण्ड एजुकेशन इन इंडियन मेडिसीन, खण्ड 12, अंक 1, मु0पृ0 15–26।

जैव अनुमापन द्वारा रिहन्द जलाशय (गोविन्द बल्लभ पन्त सागर) की जल गुणवत्ता आंकलन

साधना चौरसिया[1] एवं आनन्द देव गुप्ता[2]
[1]विभागाध्यक्ष, ऊर्जा एवं पर्यावरण विभाग, महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट सतना–485331, म0 प्र0, भारत
[2]शोध छात्र, ऊर्जा एवं पर्यावरण विभाग, महात्मा गाँधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट सतना–485331, म0 प्र0, भारत
sadhanamgcgv@gmail.com; anand.gupta40@gmail.com

सार

देश की अर्थव्यवस्था में गोविन्द बल्लभ पन्त सागर जलाशय का महत्वपूर्ण स्थान है। सिंगरौली क्षेत्र में स्थापित सभी उद्योगों का यह प्रमुख जल स्त्रोत है तथा स्थानीय जनता भी इस पर निर्भर है। अतः पन्त सागर जलाशय की गुणवत्ता क्षेत्रीय एवं स्थानीय जनता के लिए महत्वपूर्ण हो जाती है। वर्तमान तंत्र में जल गुणवत्ता या प्रदूषण की जांच बिना प्रयोगशाला के नहीं हो सकती तथा कई बार जांच के आंकडे स्थानीय जनता तथा उपभोक्ताओं को प्राप्त नहीं हो पाते हैं इसलिए जैव अनुमापन की सरल विधि से जल गुणवत्ता का आंकलन करने का प्रयास किया गया है। इसमें जलगुणवत्ता की स्थिति का निर्धारण विभिन्न जैव प्रजातियों की उपस्थिति एवं प्रचुरता के आधार पर किया जाता है। जैव अनुमापन में दृष्टिगम्य अकशेरूकी प्राणियों का प्रयोग किया गया है। बी0एस0ए0 गणक या संयुक्त गुणवत्ता गणक एक अच्छा अर्थपूर्ण और संवेदनशील इंगितक लगता है, जो स्थान एवं मौसम और प्रदूषण का स्पष्ट संकेत देता है। रिहन्द नदी में बी0एस0ए0 गणक गोविन्द बल्लभ पन्त सागर में प्रवेश के पूर्व आठ से अधिक था जो रिहन्द जलाशय में विभिन्न प्रदूषकों के मिलने के फलस्वरूप 2.78 हो गया तथा जलाशय स्थित अधिकांश नमूना स्थलों पर बी0एस0ए0 गणक 4.50 से कम था जो चिन्ता का विषय है।

बीज शब्दः गोविन्द बल्लभ पन्त सागर, जल गुणवत्ता, जैव अनुमापन, बी0एस0ए0 गणक।

Water quality assessment of Rihand Reservoir(GBPS) through bio-monitoring

Sadhana Chaurasia[1] and Anand Dev Gupta[2]
[1]Head, Department of Energy and Environment, M.G.C.G.V. Chitrakoot, Satna-485 331, M.P., India
[2]Research Scholar, Department of Energy & Environment, M.G.C.G.V. Chitrakoot, Satna-485 331
sadhanamgcgv@gmail.com; anand.gupta40@gmail.com

Abstract

Govind Ballabh Pant Sagar has an important place in country's economy. It is the major source of water for all the industries established in Singrauli area and the local population. Therefore the water quality of GBPS reservoir is important for the regional and the local people. At present quality or testing of water is not possible without well equipped laboratory and many times these laboratories data do not reach the local people therefore simple method of bio-monitoring is used to determine the water quality of GBPS reservoir. In this method water quality is determined by the presence of various biotic species and their dominance. Benthic micro invertebrates are used for bio-monitoring in this study. BSA index and cumulative water quality index seems to be a good meaningful and sensitive indicator which gives the location of climate and pollution indication clearly. The BSA index of Rihand River was 8 before entry into GBPS reservoir but after mixing with reservoir it became 2.78 due to load of various pollutants. Maximum sampling stations on GBPS reservoir were having BSA index less than 4.5 which is a matter of concern.

Key words: Govind Ballabh Pant Sagar, water quality, bio-monitoring, BSA index.

1. प्रस्तावना

सिंगरौली क्षेत्र 24°30° उत्तर अक्षांश तथा 82°15° पूर्व एवं 83°15° पूर्व देशान्तर के मध्य स्थित है। सोनभद्र जिले के रेनूकूट नामक शहर में 91.44 मीटर ऊँचा बांध 1962 में बना जिसका नाम रिहन्द सागर बांध हैं। इसका जल ग्रहण क्षेत्र 13.33 वर्ग कि. मी. है। इसका लगभग 80% भाग उत्तर प्रदेश एवं शेष 20% भाग मध्य प्रदेश में हैं। रिहन्द सागर जलाशय के चारों ओर राष्ट्रीय ताप विद्युत निगम के सिंगरौली सुपर ताप विद्युत ग्रह शक्ति नगर(उ0प्र0), विन्ध्याचल सुपर ताप विद्युत ग्रह, विन्ध्य नगर– बीजापुर (उ0प्र0), उ0प्र0 राज्य विद्युत ग्रह अनपरा (उ0प्र0), ओबरा ताप विद्युत ग्रह(उ0प्र0), रिहन्द जल विद्युत केन्द्र, पिपरी तथा ओबरा जल विद्युत केन्द्र, ओबरा तथा बिड़ला समूह का रेणुसागर ताप विद्युत ग्रह स्थित है। इन ताप विद्युत घरों से 9100 मेगावाट विद्युत का उत्पादन किया जा रहा हैं जिससे 63.936 मिट्रिक टन राख प्रतिदिन निकलती है जो इस क्षेत्र में प्रदूषण का प्रमुख कारण है। इसके अतिरिक्त कनोरिया केमिकल्स से कास्टिक मरकरी, क्लोरीन युक्त अवजल रिहन्द जलाशय में छोड़ा जाता है। देश की अर्थव्यवस्था में गोविन्द बल्लभ पन्त जलाशय का स्थान महत्वपूर्ण है। यह सिंगरौली क्षेत्र में स्थापित सभी उद्योगों तथा पेयजल का भी प्रमुख स्त्रोत है। इस प्रकार से पंत सागर जलाशय की जल गुणवत्ता क्षेत्रीय एवं अन्य संबंधित जनता के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

2. प्रयोग विधि

इस शोध पत्र में तलछटीय दृष्टिगम्य अकेशेरुकी प्राणियों (बेंथिक मैक्रो इंवर्टिब्रेट्स) की सहायता से जल गुणवत्ता आंकलन का प्रयास किया गया हैं। साथ ही बी0एस0ए0 गणक की उपयोगिता का भी अध्ययन किया गया है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड़ के ड्राट मैनुअल के अनुसार होपर की सहायता से तलछट को निकाल कर 6.5 मि.मि. आकार की छलनी में तथा उनसे जीवों को चिमटी की सहायता से अलग किया गया पत्थरों पर चिपके प्राणियों को भी एकत्र किया गया। प्रत्येक नमूना स्थल में यह प्रक्रिया 10–10 बार दोहराई गई। पाये गये प्राणियों की बायोमॉनीटरिंग ड्राट मैनुअल बाय सी0पी0सी0बी0 की सहायता से कुलों के अनुसार गणना की गई। प्राप्त परिणाम तालिका–3 एवं 4 में दिए गए हैं। बी0एम0डब्ल्यू0पी0 के द्वारा सभी नमूना स्थलों की जलगुणवत्ता "बी" अथवा "सी" पाई गई जो कि वनवासी सेवा आश्रम जल गुणवत्ता गणक(बी0एस0ए0 इंडेक्स) से अच्छी तरह मिल पाती है।(तालिका–4) इसके अनुसार नमूना स्थल बी–3, बी–6, बी–8, बी–9 बहुत ही ज्यादा प्रदूषित हैं क्योंकि इनके आसपास खदानों का अवजल तथा राख के ढ़ेर हैं। नमूना स्थल बी–15 में जलगुणवत्ता में कुछ सुधार हुआ है।

$$\text{संवेदनशीलता गणक} = \frac{\sum (\text{प्राणी संख्या संवेदनशीलता+.....})i}{\text{कुल प्राणियों की संख्या (नमूना स्थल में)}}$$

$$\text{जैव संवेदनशीलता गणक} = \frac{\sum (\text{एक कुल में इकाइयों की संख्या } X \text{ उस कुल का संवेदनशीलता मान})\ i}{\text{कुल इकाइयों की संख्या (सभी कुलों का योग)}}$$

शैनन विनर विविधता गणक $H = \sum pi \log_2 pi$ के आधार पर जैव विविधता गणक निकालते हैं।

बी0 एस0 ए0 जल गुणवत्ता गणक – जैव संवेदनशीलता गणक तथा विविधता गणक के औसत के आधार पर निकालतें हैं ।

$$\text{बी0 एस0 ए0 जल गुणवत्ता गणक} = \frac{(\text{संवेदनशीलता गणक} + \text{विविधता गणक})}{2}$$

बी0 एस0 ए0 गुणवत्ता के आधार पर जल गुणवत्ता की निम्न श्रेणी सुझाई गई हैं।

तालिका – 1

जल गुणवत्ता जैव विविधता गणक

श्रेणी	जैव विविधता	विविधता गणक
अतिउत्तम	> 0.5	10
उत्तम	3.0–3.5	8
मध्यम	2.5–3.0	6
सहनीय	2.0–2.5	4
अवांछनीय	< 2.0	2

तालिका – 2

जल गुणवत्ता एवं बी0 एस0 ए0 जल गुणवत्ता गणक

जल गुणवत्ता श्रेणी	बी0 एस0 ए0 जल गुणवत्ता गणक
अति उत्तम	8.0 या अधिक
उत्तम	6.0–8.0
सामान्य	4.0–6.0
अवांछनीय	4.0 से कम

बी0एस0ए0 गणक एक अच्छा अर्थपूर्ण और संवेदनशील इंगितक लगता है। जो प्रदूषण का स्पष्ट संकेत देता है। बी0एस0ए0 गणक जी0बी0पी0एस0 में प्रवेश के पूर्व 8.0 से अधिक था जो जलाशय में विभिन्न प्रदूषकों के मिलने के फलस्वरुप 2.78 तक पहुँच गया। जलाशय स्थित अधिकांश नमूना स्थलों पर अधिकांश समय बी0एस0ए0 गणक 4.5 से कम था। जो कि चिन्ता का विषय है। राखगर्तों, कोयला खदानों तथा उद्योगों के बहिस्त्रावों के कारण रिहन्द जलाशय की गुणवत्ता प्रभावित है। जलाशय की गुणवत्ता के महत्व को समझते हुए, प्रदूषकों के समुचित प्रबंधन तथा उद्योगों के प्रसार को रोकने की अविलम्ब आवश्यकता है।

तालिका – 3
तलछटीय अकशेरुकों द्वारा रिहन्द जलाशय का जैव अनुमापन

क्र.सं.	स्टेशन कोड	विवरण	बी0 एम0 डब्लू0 पी0 एवं विविधता गणक के आधार पर जलगुणवत्ता														
			जनवरी			फरवरी			मार्च			अप्रैल			मई		
			बी.एम. डब्लू. पी.	विविधता गणक	जल गुणवत्ता श्रेणी	बी.एम. डब्लू. पी.	विविधता गणक	जल गुणवत्ता श्रेणी	बी.एम. डब्लू. पी.	विविधता गणक	जल गुणवत्ता श्रेणी	बी.एम. डब्लू. पी.	विविधता गणक	जल गुणवत्ता श्रेणी	बी.एम. डब्लू. पी.	विविधता गणक	जल गुणवत्ता श्रेणी
01	बी.एस.–1	रिहन्द नदी राऊसोडा 15 कि.मी. रिहन्द जलाशय से ऊपर	6.50	0.80	B	6.00	0.74	B	5.17	0.80	C	5.36	0.57	C	4.60	0.72	C
02	बी.–2	रिहन्द नदी औरमंगी पर रिहन्द जलाशय में मिलने से पहले	5.80	0.64	C	5.40	0.88	C	5.20	0.79	C	4.29	0.73	C	-	-	-
03	बी.–3	मायर कछार रिहन्द जलाशय पर मिलने पर	6.00	0.45	C	5.50	0.51	C	4.91	0.79	C	4.90	0.62	C	5.45	0.68	C
04	बी.एस.–5	रिहन्द जलाशय बलिया ड्रेम से नीचे	5.40	0.58	C	5.40	0.53	C	5.25	0.62	C	5.88	0.75	C	5.20	0.75	C
05	बी.–6	रिहन्द जलाशय कोहरोल पर	5.10	0.72	C	4.90	0.61	C	5.54	0.69	C	5.08	0.74	C	5.08	0.59	C
06	बी.–7	बी.पी.एस. बैना कोल माइन ड्रेनिज मिलने से नीचे	5.00	0.75	C	4.60	0.52	C	5.00	0.58	C	5.78	0.63	C	4.92	0.80	C
07	बी.–8	रिहन्द जलाशय रेनू सागर पर	4.70	0.63	C	4.80	0.71	C	5.30	0.70	C	5.92	0.70	C	5.64	0.78	C
08	बी–9	रिहन्द जलाशय पिपरी सोनवानी	4.80	0.56	C	5.40	0.66	C	5.45	0.73	C	5.27	0.81	C	5.00	0.79	C
09	बी.–10	रिहन्द जलाशय सिरसाटी पर	5.20	0.75	C	5.70	0.67	C	5.27	0.77	C	5.50	0.79	C	5.09	0.84	C
10	बी.–11	रिहन्द जलाशय खमारिया पर	4.70	0.51	C	5.80	0.63	C	4.75	0.64	C	5.29	0.78	C	5.20	0.67	C
11	बी.एस.–13	रिहन्द जलाशय डांगिया ड्रेम से नीचे	5.20	0.61	C	5.10	0.71	C	5.10	0.87	C	5.00	0.82	C	5.31	0.81	C
12	बी.एस.–12	ओवरा नहर कुमहिया	5.20	0.61	C	5.50	0.62	C	5.60	0.82	C	5.23	0.78	C	5.27	0.78	C
13	बी.एस.–16	रिहन्द नदी सोन में मिलने से पहले															

तालिका– 4
बी0 एस0 ए0 जल गुणवत्ता गणक द्वारा रिहन्द जलाशय का जैव अनुमापन

क्र.सं.	स्टेशन कोड	विवरण	बी0एम0डब्ल्यू0पी0 एवं विविधता गणक के आधार पर जलगुणवत्ता									औसत	विवरण
			जनवरी	फरवरी	मार्च	अप्रैल	मई	जून	अक्टूबर	नवम्बर	दिसम्बर		
01	बी.एस.–1	रिहन्द नदी राकसंदा 15 कि.मी. रिहन्द जलाशय से ऊपर	7.42	7.15	7.57	6.34	5.93	5.12	6.52	6.15	7.54	6.64	उत्तम गुणवत्ता
02	बी.–2	रिहन्द नदी ओरगरी पर रिहन्द जलाशय में मिलने से पहले	5.58	5.82	7.25	6.69	-	-	5.80	6.50	6.32	6.28	
03	बी.–3	माथर कछार रिहन्द जलाशय पर मिलने पर	3.25	6.99	5.46	5.35	6.71	5.61	5.68	5.65	5.32	5.56	
04	बी.एस.–5	रिहन्द जलाशय बलिया ड्रेम से नीचे	5.35	5.80	6.49	7.23	6.63	5.34	6.45	4.98	5.84	6.01	
05	बी.–6	रिहन्द जलाशय कोहरोल पर	5.74	3.88	3.14	5.42	5.33	5.02	5.54	5.35	5.54	4.89	
06	बी.–7	बी.पी.एस. बिना कोल माइन ड्रेनिज मिलने से नीचे	5.37	3.43	5.17	6.22	5.95	4.31	5.87	4.19	5.36	5.10	खनन एवं राख जलाशय से प्रभावित
07	बी.–8	रिहन्द जलाशय रेनू सागर पर	5.57	5.48	5.16	5.54	6.33	4.35	5.36	4.32	5.42	5.28	
08	बी–9	रिहन्द जलाशय पिपरी सोनवानी	5.79	3.65	5.71	5.74	6.01	4.46	5.66	5.47	6.75	5.47	
09	बी.–10	रिहन्द जलाशय सिरसोटी पर	5.56	4.61	5.19	3.28	5.59	3.82	5.90	4.42	5.58	4.88	अत्याधिक प्रदूषित
10	बी.–11	रिहन्द जलाशय खमारिया पर	5.56	2.70	3.22	4.49	5.72	3.60	5.65	4.42	5.44	4.53	
11	बी.एस.–13	रिहन्द जलाशय ओगिया ड्रेम से नीचे	5.55	5.64	7.40	5.39	5.56	3.64	5.71	6.25	6.60	5.75	पुर्नलाभ भाग
12	बी.एस.–12	ओबरा नहर कुसहिया	5.81	5.37	5.83	6.71	6.71	5.47	5.64	6.86	6.79	6.13	
13	बी.एस.–16	रिहन्द नदी सोन में मिलने से पहले	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	तलछटीय प्रजातियां शून्य के जन्माव के कारण नही पाई गई।

तालिका –5 परिशिष्ट–1

तलछटीय दृष्टिगम्य अकशेरूकी प्राणियों के संवेदनशीलता मानों की केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा प्रायोजित बी0एम0डब्ल्यू0पी0 स्कोर से तुलना

अ–जल प्रदूषण के प्रति संवेदनशील

क्र.सं.	कुल का नाम	संवेदनशीलता मान	के0प्र0नि0वो0के0 अनुसार
1	गिरिनिडी	10	5
2	इफेमेरिडी	10	10
3	इफेमेरेलिडी	10	10
4	कोरिक्सिडी	10	5
5	लेप्टोसेरिडी	10	10
6	रीयकोफिलिडी	10	7
7	नेरिडी	10	6
8	केनिडी	8	5
9	गेरिडी	8	6
10	यूनियोनिडी	8	5
11	लेस्टिडी	8	8

ब–जल प्रदूषण के प्रति मध्यम सहिष्णु

1	डिटिस्सिडी	6	5
2	हाइग्रोबिडी	6	5
3	एटिडी	6	6
4	सिरफिडी	6	2
5	हाइड्रोमेटिडी	6	5
6	नेपिडी	6	5
7	हिरूडिडी	6	3
8	गोमफिडी	6	8
9	लिवेलुलिडी	6	8
10	हाइड्रोप्सिचिडी	6	5

स–जल प्रदूषण के प्रति मध्यम सहिष्णु

1	चिरोनोमिडी	4	2
2	वेलिडी	4	5
3	ग्लासिफोनिडी	4	3
4	प्लानोरबिडी	4	3
5	स्फेरिडी	4	3
6	थियरिडी	4	6
7	विविपारिडी	4	6
8	ओलिगोकीट	4	1

द–जल प्रदूषण प्रेमी

1	हाइड्रोफिलिडी	2	5
2	टिपुलिडी	2	5
3	अम्मिकोलिडी	2	
4	सेरिथिडी	2	
5	लिम्नाइडी	2	3
6	पिलिडी	2	

तालिका–6 परिशिष्ट–2

1– केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा प्रायोजित बी0एम0डब्ल्यू0पी0 स्कोर (सैप्रोबिक स्कोर) के बराबर संवेदनशीलता वाले कुल

क्र.सं.	कुल	संवेदनशीलता मान	बी0एम0डब्ल्यू0पी0 स्कोर(सी0पी0सी0बी0)
1	इफेमेरिडी	10	10
2	इफेमेरिडी	10	10
3	लेप्टोसेरेडी	10	10
4	लेस्टिडी	8	8
5	ऐटिडी	6	6

2– बी0एम0डब्ल्यू0पी0 स्कोर तथा इस अध्ययन द्वारा प्रायोजित संवेदनशीलता मान में कुल अन्तर वाले कुल

1	यूनियोनिडी	8	6
2	डिस्टिस्सिडी	6	5
3	हाइग्रोबिडी	6	5
4	हाइड्रोमेटिडी	6	5
5	नेपिडी	6	5
6	गोमफिडी	6	5
7	लिबेलुलिडी	6	8
8	हाइड्रोप्सिचिडी	6	5
9	विरोनेमिडी	4	2
10	वेलिडी	4	5
11	ग्लासिफोनिडी	4	3
12	प्लानोरबिडी	4	3
13	स्फेरिडी	4	6
14	थियरिडी	4	6
15	विविपारिडी	4	6
16	लिम्नाइडी	2	3

तालिका–7 परिशिष्ट–3

3– केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा प्रायोजित बी0एम0डब्ल्यू0पी0 स्कोर(सैप्रोबिक स्कोर) के बराबर संवेदनशीलता वाले कुल

क्र.सं.	कुल	संवेदनशीलता मान	बी0एम0डब्ल्यू0पी0 स्कोर(सी0पी0सी0बी0)
1	गिरिनिडी	10	5
2	कोरिक्सिडी	10	5
3	गेरिडी	8	5
4	रीयकोफिलिडी	10	7
5	नेरिडी	10	6
6	सिरफिडी	6	2
7	हिरूडिडी	6	3
8	ओलिगोकीट	4	1
9	हाइड्रोफिलिडी	2	5
10	टिपुलिडी	2	5

4– कुल जिनका बी0एम0डब्ल्यू0पी0 स्कोर नहीं है–

क्र.सं.	कुल	संवेदनशीलता मान	बी0एम0डब्ल्यू0पी0 स्कोर(सी0पी0सी0बी0)
1	अम्मिकोलिडी	2	फ्रेश वाटर इंहेबिटेंट्स
2	सेरिथिडी	2	सम मैरीन मैलस्कस
3	पिलिडी	2	फ्रेश वाटर इंहेबिटेंट्स

बी0एम0डब्ल्यू0पी0 + बायोलॉजिकल मॉनीटरिंग वर्किंग पार्टी

ए0पी0एच0ए0 + अमेरिकन पब्लिक हेल्थ एसोसिएशन(स्टैंडर्ड मैथड)

3. परिणाम

बी0एम0डब्ल्यू0पी0 के द्वारा सभी नमूना स्थलों की जलगुणवत्ता "बी" अथवा "सी" पाई गयी जब कि वनवासी सेवा आश्रम जल गुणवत्ता गुणक बी0एस0ए0 इंडेक्स से अच्छी तरह मिल पाती है(तालिका–4) इसके अनुसार नमूना स्थल बी–3, बी–6, बी–8, बी–9 बहुत ही ज्यादा प्रदूषित हैं क्योंकि इनके आसपास खदानों का अवजल जलाशय में गिरता है तथा स्थल बी–15 तक पहुँचते पहुँचते जलगुणवत्ता में कुछ सुधार पाया जाता है।

4. निष्कर्ष

बी0एस0ए0 गणक एक अच्छा अर्थपूर्ण और संवेदनशील इंगित लगता है। जो प्रदूषण का स्पष्ट संकेत देता है। बी0एस0ए0 गणक जी0बी0पी0एस0 में प्रवेश के पूर्व 8.0 से अधिक था जो जलाशय में विभिन्न प्रदूषकों के मिलने के फलस्वरूप 2.78 तक गिर गया। जलाशय स्थित अधिकांश नमूना स्थलों पर अधिकांश समय बी0एस0ए0 गणक 4.5 से कम था। यह निश्चित ही चिन्ता का विषय है।

संदर्भ

1. सी0पी0सी0बी0(2001) "परिवेश", बायो–मॉनीटरिंग ऑफ वाटर क्वालिटी इन प्रॉब्लम एरियाज।
2. गोविंदन, बी0 एस0 एवं सुंदरसन, बी0 बी0(1979) सीजनल सक्सेशन ऑफ एल्गी लोरा इन पॉल्यूटेड रीजन ऑफ आदयार रिवर, ज0 इनवायर0 हेल्थ, खण्ड 21, अंक 2, मु0पृ0 131–142।
3. जोशी, जे0 एवं अन्य(1996) ए स्टडी ऑफ प्लांक्टोनिक एण्ड बेंथिक कम्पोनेंट्स ऑफ थ्री सेलेक्टेड ट्रिब्यूटरीज ऑफ गंगा बिटवीन देवप्रयाग एण्ड ऋषिकेश, हिमाल0 ज0 इनवायर0 जूलॉजी, खण्ड 10, मु0पृ0 23–26।
4. जॉन, जे0(2000) "वाटर क्वालिटी ऑफ स्ट्रीम्स एण्ड रिवर्स इन द साउथ वेस्ट ऑफ वेस्टर्न ऑस्ट्रेलिया एण्ड डेवेलपमेंट ऑफ ए बायो–मॉनिटरिंग सिस्टेम", प्रोसीडिंग्स आई0ए0डब्ल्यू0क्यू0, मु0पृ0 579–587।
5. मलाठी एवं अन्य(1998) "ए स्टडी ऑन द एप्लीकेबिलिटी ऑफ ए न्यू वाटर क्वालिटी इंडेक्स–एच0डब्ल्यू0क्यू0आई0", आई0जे0ई0पी0, खण्ड 1, मु0पृ0 43–47।
6. त्रिवेदी, आर0 सी0(1981) "यूज ऑफ डाईवर्सिटी इंडेक्स इन इवेल्यूएशन ऑफ वाटर क्वालिटी", प्रोसीडिंग ऑफ द डब्ल्यू0एच0ओ0 स्पॉन्सर्ड वर्कशॉप ऑन बायोलॉजिकल इंडिसेज ऑफ इंवायरमेंटल पॉल्यूशन, प्रोब्स/6/1980–81, सी0पी0सी0बी0, दिल्ली, भारत।

धातु आयनों की विषाक्तताः एक विस्तृत अध्ययन

विजय शंकर
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
बी० एस० एन० वी० पी० जी० कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
rao.vijay55@gmail.com

सार

धातु आयन(सोडियम, पोटैशियम, कैल्शियम, मैगनिशियम, जिंक, मैंगनीज कॉपर, मालिब्डेनम, आदि) जीवधारियों के स्वास्थ्य तथा जीवन के लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। परन्तु इनमें से प्रत्येक की एक निश्चित मात्रा होती है, जहाँ तक वे किसी प्राणी के रक्त में उपस्थित रहते हैं। निश्चित मात्रा में धातु आयनों का रक्त में उपस्थित होना स्वास्थ्यवर्धक है। इसके विपरित यदि किसी प्रकार किसी प्राणी के परिसंचरण तंत्र में कोई धातु आयन अपनी निश्चित मात्रा से अधिक मात्रा में पहुंच जाए और उसका शीघ्र उत्सर्जन न हो पाये तो रक्त में विषाक्तता उत्पन्न हो जाती है। जिसके फलस्वरुप अनेक प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। धातु आयनों के विषैले प्रभाव को दूर करने के लिए मिश्रित संकरों द्वारा विषाक्त धातु आयनों को विस्थापित किया जा सकता है।

बीज शब्द– धातु आयन, विषाक्तता, मिश्रित संकर, मल्टीमेटल मल्टी लिगैन्ड।

Toxicity of metal ions: A comprehensive study

Vijay Shankar
Assistant Professor, Department of Chemistry
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
rao.vijay55@gmail.com

Abstract

Metal ions(Na, K, Ca, Mg, Zn, Mn, Cu, Mo etc.) are is essential for health and life of human beings. But there is a certain amount of each of them, where they are present in the blood of any creature. Certain amount of metal ions to be present in the blood is healthy. Conversely, if any circulatory system of an animal, metal ions in excess of your account reaches a certain amount, and its not quick excretion, there is in the blood are the accumulation leads to toxicity. Resulting in many sorts of diseases to occur. Toxic effect of these metal ions can be removed by mixed complexes of these toxic metal ions and thus, excreted.

Key words- Metal ions, toxicity, mixed complex, multimetal multiligand.

1. प्रस्तावना

जीवधारियों के स्वास्थ्य तथा जीवन के लिए आवश्यक धातु तत्वों को तीन वर्गो में वर्गीकृत कर सकते हैं (1) स्थूल धातुएं –Na, K, Ca, Mg जो कि किसी भी जन्तु में पाये जाने वाले धातुओं के अंश का लगभग 99.5 प्रतिशत होते हैं। इसका कार्य मुख्य रूप से अस्थि संस्थान तथा परासरणी साम्यावस्था से सम्बन्धित है। (2) आयरन तथा अन्य आवश्यक सूक्ष्ममात्रिक धातु तत्व Zn, Cu, Mn, Mo जो धात्विक एन्जाइमों के रूप में अथवा एंजाइम उत्प्रेरक के रूप में कार्य करते हैं। शेष अन्य धातुओं को तीसरे वर्ग में रखा जा सकता

है। ये प्रायः बहुत ही सूक्ष्म मात्रा में उपस्थित रहती हैं। और इनका कोई विशेष जैव कार्य नहीं होता। यहाँ यह ध्यान रखना आवश्यक है कि यद्यपि उपर्युक्त धातुओं में से प्रत्येक की अपनी एक निश्चित मात्रा होती है। जहाँ तक वे किसी प्राणी के रक्त में उपस्थित रहते हैं। और यह प्राणियों के लिए भिन्न–भिन्न होती है। इसी स्तर तक इन धातु आयनों का रक्त में उपस्थित होना स्वास्थ्यवर्धक है। इसके विपरीत यदि किसी प्रकार किसी प्राणी के परिसंचरण तंत्र में कोई धातु आयन इस सीमा से अधिक मात्रा में पहुंच जाये और उसका शीघ्र उत्सर्जन न हो पाये तो विशाक्तता उत्पन्न हो जाती है। इसके फलस्वरुप शरीर का लवण–संतुलन बिगड जाता है। कई अंगों में विशेष रूप से गुर्दों में उत्तेजना तथा दाह उत्पन्न हो जाता है। केन्द्रीय स्नायु संस्थान(मस्तिष्क आदि) प्रभावित हो जाता है। तथा अनेक एन्जाइम अभिक्रियाओं में व्यतिकरण आ जाता है। पोटैशियम का सामान्य बहिर्कोशिकीय स्तर 16–20 मि०ग्रा० प्रतिशत होता है। परन्तु यह दूना हो जाये तो स्नायुओं तथा मांसपेशियों के कार्य पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। यहाँ तक कि ह्रदय की गति के अवनमन[1] के कारण मृत्यु भी हो सकती है। जिंक तथा कॉपर लवणों से उल्टी होने लगती है, तथा पाचक अंगों में उत्तेजना आ जाती है। "विल्सन के रोग" में कॉपर के स्तर को नियंत्रित करने वाली प्रक्रिया बिगड़ जाती है। जिसके फलस्वरुप कॉपर का अवशोषण तो बढ़ जाता है, पर उसका उस सीमा तक उत्सर्जन नहीं हो पाता और धीरे–धीरे विशेष अंग यकृत में कॉपर जमा होने लगता है। लेड की विषाक्तता से गठिया रोग उत्पन्न हो जाता है। रक्त में इसका सामान्य स्तर 0.03 मि०ग्रा० प्रतिशत होता है। और 0.08 मि०ग्रा० प्रतिशत के स्तर पर पहुंचने पर इसकी विषाक्तता के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। बेरिलियम युक्त धूल के निश्वसन से फेंफड़े नष्ट हो जाते हैं। आर्सेनिक, मरकरी, एन्टिमनी, कैडमियम आदि सभी प्रबल विष हैं।(यूरेनियम[2] U^{4+} तथा UO_2^{++}) गुर्दे की कोशिकाओं में स्थित एन्जाइमों पर अपना विषैला प्रभाव डालते हैं।

2. विषाक्तता की प्रक्रिया

संकरण के निम्न सामर्थ्य वाले आयनों, जैसे K^+, Ba^{++}, Li^+ आदि की विषाक्तता मुख्य रूप से लवण संतुलन बिगड़ जाने के कारण होती है, अथवा यह इनके धन आवेश के कारण होती है, क्योंकि ये भी किसी जैव निकाय में उपस्थित ऋणीय स्थानों पर अधिशोषण की स्पर्द्धा कर सकते हैं, अथवा प्रोटीन के हाइड्रोजन अथवा अन्य धनायनों को विस्थापित करके उसके गुणों को परिवर्तित कर सकते हैं। ये गुण इन आयनों के आवेश तथा जलयोजित आयनों के आकार पर निर्भर हैं। इनके विपरीत अन्य धातु आयन जिनमें संकर निर्माण की क्षमता होती है, प्रोटीन के अनेक प्राप्य द्वाता परमाणुओं से उपसहसंयोजित होकर संकर बना लेते हैं। इनमें कुछ धातु आयनों में कुछ विशेष दाता परमाणुओं के प्रति अधिक बन्धुता होती है। उदाहरणार्थ मरकरी, आर्सेनिक, एन्टिमनी आदि में सल्फर के लिए विशेष बन्धुता होती हैं। कुछ अधिक प्रबल संकरकारी धातु आयन निर्बल आयनों को उनके उपसहसंयोजन के स्थानों से विस्थापित भी कर सकते हैं।

धातु आयनों की विषाक्तता तथा उपसहसंयोजन के परस्पर सम्बन्ध का सुझाव 1923 में वोग्तलिन[3] ने दिया था, जिनका विचार था कि जीवित कोशों पर आर्सेनिक की विषाक्तता क्रिया का कारण प्रोटोप्लाज्म में उपस्थित कुछ आवश्यक थाँयाल यौगिकों से उसका संयोग है। बाद में पीटर्स[4], स्टाकैन[5] तथा थामसन[6] आदि वैज्ञानिकों ने युद्ध में प्रयोग की जाने वाली आर्सेनिकीय गैसों के अध्ययन द्वारा इस निष्कर्ष की पुष्टि की। आर्सेनाइट आयन से पाइरुवेट–ऑक्सीडेस एन्जाइम निकाय की क्रिया का निरोध हो जाता है। जिससे रक्त में पाइरुवेट स्तर बढ़ जाता है, त्वचा द्वारा श्वसन क्रिया घट जाती है। और फफोले पड़ जाते हैं। इसका कारण आवश्यक एन्जाइमों के उपयुक्त -SH समूहों के साथ आर्सेनिक III के कीलेट का निर्माण है। मरकरी, कैडमियम, गोल्ड, जिंक, बिस्मथ, एन्टिमनी तथा सम्भवतः लेड के साथ भी समान अभिक्रियाएं होती हैं। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि आर्सेनिक तथा सम्भवतः एन्टिमनी भी $-S^-$ दाता समूहों से उपसहसंयोजन करना अधिक पसंद करते हैं और नाइट्रोजन से उपसहसंयोजन नहीं करते, परन्तु मरकरी नाइट्रोजन से प्रबल बन्धन कर सकता है, अतः पेप्टाइडों के -NH समूहों से भी बन्ध बन सकता है।

आर्सेनिक–एन्जाइम कीलेट के दिदंती प्रकृति के प्रमाण मोनो तथा डाईथाँयाल द्वारा इसके विषाक्त प्रभाव को दूर करने सम्बन्धी अध्ययनों[6] द्वारा प्राप्त हुए हैं। डाइ थाँयाल द्वारा इसकी विषाक्तता सफलतापूर्वक दूर की जा सकती है, परन्तु मोनो थायाल कोई प्रभावकारी सिद्ध नहीं होते हैं। इसी प्रकार एन्टिमोनिल टार्टरेट, टेट्राक्लोरो आरेट(III) तथा मरक्यूरिक क्लोराइड मस्तिष्क के पाइरुविक ऑक्सीडेस का निरोध कर देते हैं और उनका यह विषाक्त प्रभाव डाइ थाँयाल द्वारा दूर हो जाता है।[7] कोबाल्ट(II) भी -SH एन्जाइमों का निरोध कर देता है और इसकी विषाक्तता सिस्टीन द्वारा दूर हो जाती है।

इस प्रकार यह निश्चित है कि धातु आयनों की विषाक्तता तथा उनके द्वारा उपसहसंयोजन की क्षमता में गहरा सम्बन्ध है। यही नहीं जल के जीवों, मछलियों, टैडपोल आदि पर अध्ययनों के द्वारा यह सुझाव दिया गया है कि धातु आयनों की विषाक्तता तथा उनके संकरों के स्थायित्व में एक गहरा सम्बन्ध है और इनके घटने–बढ़ने का क्रम इर्विंग विलियम[8] क्रम Mn(II)<Fe(II)<Co(II) <Ni(II)<Cu(II)<Zn(II) के द्वारा होता है, और यही क्रम[9] कुछ एन्जाइमों जैसे यूरिऐज, डायस्टेस आदि के लिए भी पाया जाता है।

3. मिश्रित यौगिकों द्वारा धातु आयन विषाक्तता का उपचार

औषधि विज्ञान में धातु आयनों की विषाक्तता के उपचार के लिए कीलेटकारी यौगिकों का प्रायः व्यवहार किया जाता है। इसका कारण यह है कि ये यौगिक परिसंचरित तथा जैव निकायों में बन्धित दोनों प्रकार के धातु आयनों से सरलता से विलेय संकरों का निर्माण कर लेते हैं, जो फिर उत्सर्जित हो जाते हैं। इसके लिए आवश्यक दशा यह है कि कीलेटकारी तथा निर्मित कीलेट को धातु आयनों की अपेक्षा बहुत कम विषैला होना चाहिए इसे उपापचयी अभिक्रियाओं में भाग नहीं लेना चाहिए तथा इसमें धातु आयन के संग्रह स्थानों तक अन्तर्भेदन की क्षमता होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त इससे निर्मित कीलेट को बहुत अधिक स्थायी होना चाहिए और वरीयता की दृष्टि से बहुदन्ती लिगैंड होना चाहिए। बहुदन्ती लिगैंडों के उपयोग से धातु के सभी प्रमुख उपसहसंयोजन के स्थान भर जाते हैं, जिससे एन्जाइम के दाता समूहों के उपयोग के द्वारा मिश्रित संकरों के निर्माण की सम्भावना बहुत घट जाती है। अतः ये अधिक उपयोगी हैं।

युद्ध में प्रयुक्त आर्सेनिकीय गैसों से -SH एन्जाइमों की रक्षा के हेतु 2,3–डाइमरकैप्टो प्रोपैनाल[10] (BAL) (II) अतिउपयोगी पाया गया है और अब इसका उपयोग मरकरी आर्सेनिक, एन्टिमनी, गोल्ड तथा बिस्मथ की विषाक्तता के उपचार में किया जाने लगा है। ये सभी BAL के साथ संकर निर्माण करते हैं। उदाहरणार्थ Hg(II) के साथ यह दो मोनो तथा बिस संकर बनाता है। इनमें से मोनो संकर विद्युत अनपघट्य है, जबकि बिस संकर एक अम्ल है, जो कि शरीर के पी०एच० पर एक अति विलेय ऋणायन के रूप में रहता है। इसी प्रकार मोनो मरकरी (II) कीलेट के समान आर्सीनियस तथा एन्टीमोनस अम्लों से As(III) तथा Sb(III) के भी कीलेट बन जाते हैं, जिनमे इनके दो हाइड्रॉक्सी समूहों के स्थान पर S- उपधातु बन्ध बन जाते हैं हाइड्रॉक्सिल समूहों की उपस्थिति के कारण ये भी अम्लीय होते हैं।

कार्बनिक पारदीय यौगिकों जैसे क्लोरेमेरोड्रिन $Cl\text{-}HgCH_2CH(OCH_3)CH_2NHCoNH_2$ का व्यवहार मूत्रल औषधियों के रूप में किया जाता है। ये अधिकतर पारदयुक्त कार्बनिक अम्ल होते हैं। और $(R\text{-}Hg)^+$ के रूप में कार्य करते हैं। इनकी क्रिया वृक्कीय नलिकाकार कोशिकाओं के -SH एन्जाइमों के निरोध द्वारा प्रतीत होती है। BAL से यह एक मोनो (BAL) कीलेट बना लेता है। अतः BAL के प्रयोग से इसकी मूत्रल क्रिया तथा वाह्य विषैली अभिक्रियाएं नष्ट हो जाती हैं। इसी प्रकार कार्बनिक आर्सेनिकीय[11] यौगिक भी प्रबल औषधि है, तथा उनकी स्पाइरोकीट तथा प्रोटोजोआ विरोधी अभिक्रियाएं $R.As(OH)_2$ समूह के द्वारा होती है, जिससे एन्जाइम निष्क्रिय पड़ जाते हैं। BAL तथा अन्य -SH युक्त यौगिकों की उपस्थिति में इन पराजीवों की रक्षा हो जाती है। वे इन औषधियों से नष्ट नहीं होते।

लेड[12](सीसा) के विषैले प्रभाव को दूर करने के लिए EDTA के कैल्शियम कीलेट $Na_2[Ca\text{-}EDTA]$ तथा DTPA के कैल्शियम[13,14] कीलेट के इन्जेक्शन दिये जाते हैं। कैल्शियम आयन अधिक प्रबल संकरकारी लेड के द्वारा विस्थापित हो जाता है। और फिर लेड EDTA तथा लेड DTPA के कीलेट के रूप में उत्सर्जित हो जाता है। इसे आयरन[15] की गम्भीर विषाक्तता के उपचार में तथा शरीर में उपस्थित रेडियो सक्रीय[16] धातुओं को गतिशील करके उत्सर्जित करने में भी अति उपयोगी पाया गया है।

पेनिसिलामीन तथा 2,2 डाइमेथिल थायोजोलिडीन –4– कार्बोक्सिलिक एसिड निम्न विषाक्तता वाले द्विदन्ती लिगैन्ड होते हैं। इनका उपयोग विल्सन के रोग में संग्रहीत कॉपर को गतिशील बनाने में किया गया है।[17,18] आरिन ट्राइकार्बोक्सिलिक एसिड रंजक में एरोमैटिक वलयों में उपस्थित में कार्बोक्सिलिक समूहों की आर्थो स्थितियों में तीन ऑक्सीजन परमाणु होते हैं। और यह इनके द्वारा एक द्विदन्ती लिगैन्ड की भाति व्यवहार करता है। इसे बेरिलियम[19] के विषाक्तता के उपचार में अति प्रभावकारी पाया गया है। मिश्रित संकरों(मल्टीमेटल मल्टी लिगैन्डों)[20,21] के द्वारा शरीर में उपस्थित कई विषाक्त धातु आयनों को एक साथ विस्थापित किया जा सकता है। जो कीलेट के रूप में मूत्र द्वारा उत्सर्जित हो जाता है।

यद्यपि कीलेटकारी यौगिक धातु आयनों को गतिशील करके उत्सर्जित करने के अत्यन्त प्रभावकारी पाये गये हैं। परन्तु इस प्रकार निर्मित उनके कीलेट स्वयं भी विषैले होते हैं। अतः इनके प्रयोग से भी काफी सावधानी रखने की आवश्यकता है। उदाहरणार्थ BAL की अधिक मात्रा की उपस्थिति में जिंक तथा कैडमियम के BAL संकर सरल आयनों की अपेक्षा गुर्दे की नलिकाओं को अधिक हानि पहुंचाते हैं। बेरीलियम के सिट्रेट आयनों के द्वारा सिट्रेट संकर के रूप में शीघ्रता से उत्सर्जित किया जा सकता है, परन्तु इस उपचार की अपेक्षा अनुपचारित प्राणियों के जीवित बचने की संख्या अधिक[22] पाई गयी है। यद्यपि BAL मरकरी (II) की विषाक्तता से रक्षा करता है परन्तु इसका पूर्व निर्मित बिस कीलेट मुक्त धातु आयन के ही समान अधिक विषैला होता है। इसका कारण सम्भवतः यह है कि शरीर में विशेषकर गुर्दे में थॉयाल लिगैन्ड के वियोजन तथा ऑक्सीकरण के द्वारा धातु आयन अधिक मात्रा में मुक्त हो जाते हैं। इन कीलेट संकरों की विषाक्तता की व्याख्या इस प्रकार भी की जा सकती है कि यदि संकर का पूर्ण वियोजन तथा मुक्त धातु आयनों का उन्मुक्त होना न भी संभव हो तो (i) संकर के किसी कीलेटकारी समूह की हानि द्वारा, अर्थात बहुदन्ती कीलेटों में किसी उपसहसंयोजन के स्थान के मुक्त हो जाने से संकर का आंशिक वियोजन हो सकता है अथवा (ii) पूरा कीलेट स्वयं विषैला हो और वह आवश्यक एन्जाइमों से उपयुक्त स्थानों पर बिना सहसंयोजक बन्ध बनाये स्थिर विद्युत आकर्षक तथा वाण्डरवाल की शक्तियों द्वारा बन्धित हो जाये। इस प्रकार के बन्ध धनायनिक संकरों के लिए विशेष रूप से महत्वपूर्ण है।

4. निष्कर्ष

उपर्युक्त लेख में विभिन्न प्रकार के धातु आयनों की विषाक्तता का वर्णन किया गया है जिसकी अधिकता अथवा कमी शरीर की उपापचयी क्रियाओं पर विपरीत प्रभाव डालती है। वैज्ञानिक मतों के अनुसार शरीर से विषाक्त धातु आयनों को दूर करने के लिए मिश्रित यौगिकों का उपयोग अत्यन्त प्रभावकारी सिद्ध होते हैं जिसके अनुकरण से अनेक प्रकार के रोगों से बचा जा सकता है।

सन्दर्भ

1. गुडमैन तथा गिलमैन(1955) "द फार्मेकोलॉजिकल बेसिस ऑफ थेरेप्यूटिक्स", मैकमिलन, न्यूयार्क, मु०पृ० 596।
2. डाउन्स तथा टीन होलान(1949) "फार्मेकोलॉजी एण्ड टॉक्सिकोलॉजी आफ यूरेनियम कम्पाउण्ड्स", मैक्ग्राहिल, न्यूयार्क, मु०पृ० 759।
3. वोग्तलिन, डायर तथा लियोनार्ड(1923) यू0एस0पब्लिक हेल्थ रिपोर्ट, खण्ड 38, मु०पृ० 1882।
4. पीटर्स(1936) "टॉक्सिसिटी ऑफ मेटल आयन" नेचर, खण्ड 138, मु०पृ० 327।
5. स्टाकेन तथा थाम्पसन(1946) "टॉक्सिसिटी ऑफ मेटल आयन", बायोकेमि० जर्नल, खण्ड 40, मु०पृ० 529।
6. थाम्पसन(1946) "टॉक्सिसिटी ऑफ मेटल आयन", बायोकेमि० जर्नल, खण्ड 40, मु०पृ० 525।
7. थाम्पसन तथा हिटटेकर(1947) "टॉक्सिसिटी ऑफ मेटल आयन", बायोकेमि० जर्नल, खण्ड 41, मु०पृ० 342।
8. इर्विंग, एच०एम० एवं विलियम्स, आर०जे०पी०(1948) "स्टेबिलिटी ऑफ मेटल आयन" नेचर, खण्ड 162, मु०पृ० 746।
9. शॉ(1961) "टॉक्सिक इफेक्ट ऑफ मेटल आयन" नेचर, खण्ड 192, मु०पृ० 754।
10. पीटर्स, स्टाकेन तथा थाम्पसन(1945) "टॉक्सिसिटी ऑफ मेटल आयन", नेचर, खण्ड 156, मु०पृ० 616।
11. एल्वर्ट(1960) "सेलेक्टिव टॉक्सिसिटी", मैथ्युएन, लन्दन।
12. फोरमैन, हार्डी, शिपमैन तथा बेल्कनापर(1956) ए०एम०ए० आर्क० इण्ड० हेल्थ, खण्ड 7, मु०पृ० 148।
13. श्रीवास्तव, वी०के० एवं शंकर, विजय(2005) "हेटेरोवाइन्यूक्लियर कॉम्प्लेक्सेज", प्रोसी० नेश० अकेड० साइंस इण्डिया, खण्ड 75ए, मु०पृ० 95।
14. मिश्रा, जी०के०; सिंह, के०पी० एवं कृष्णा, वि०(2002) "मिक्स्ड मेटल कॉम्प्लेक्सेज" जर्न० ऑफ इण्डियन केमि० सोसा०, खण्ड 79, मु०पृ० 753।
15. रुबिन तथा प्रिंसियोटो(1960) "टॉक्सिसिटी ट्रीटमेंट ऑफ मेटल आयन" एन०वाई० ऐकेड० साइन्स, खण्ड 88, मु०पृ० 450।
16. फोरमैन(1960) "मेटल बाइन्डिग इन मेडिसिन"(सम्पादक : सेवेन) लिप्पिनकॉट, फिलाडेल्फिया, पेन्सिलवेनिया, मु०पृ० 160।
17. वाल्श, लैन्सेट 1(1956) "टॉक्सिसिटी ट्रीटमेंट ऑफ मेटल आयन", खण्ड 25।
18. उज्मान(1960) "मेटल बाइन्डिग इन मेडिसिन"(सम्पादक : सेवेन) लिप्पिनकॉट, फिलाडेल्फिया, पेन्सिलवेनिया, मु०पृ० 269।
19. शुर्वट तथा लिण्डेनवाम(1960) "मेटल बाइन्डिग इन मेडिसिन"(सम्पादक : सेवेन) लिप्पिनकॉट, फिलाडेल्फिया, पेन्सिलवेनिया, मु०पृ० 68।

20. शंकर, वि०; मिश्रा, जी०के० एवं कृष्णा, वि०(2006) "मल्टीमेटल मल्टी लिगैन्ड कॉम्प्लेक्सेज" जर्न० ऑफ इण्डियन केमि० सो०, खण्ड 83, मु०पृ० 23–25।
21. शंकर, वि०; मिश्रा, जी०के० एवं कृष्णा, वि०(2006) "मल्टीन्यूक्लियर कॉम्प्लेक्सेज", जर्न० ऑफ इण्डियन केमि० सो०, खण्ड 83, मु०पृ० 373–375।
22. शुवर्ट(1954) "केमिकल स्पेसिफिसिटी इन बायोलॉजिकल रिऐक्शन्स"(सम्पादकः गुर्ड) एकेडमिक प्रेस, न्यूयार्क, मु०पृ० 145।

एस्ट्रोजन हार्मोनः स्तन कैंसर का प्रमुख कारण–एक अध्ययन

प्रीति रावत[1], तृप्ति मिश्रा[2] व महेश पाल[3]
[1,2]शोध छात्रा, [3]वैज्ञानिक, पादप रसायन विभाग
सी0एस0आई0आर0–राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drmpal.nbri@rediffmail.com

सार

आधुनिक युग में बहुत सी महिलायें स्तन कैंसर से ग्रस्त हैं। यह एक घातक ट्यूमर है जो स्तन की कोशिकाओं में पनपता है। यह आसपास के ऊतकों या शरीर के सुदूर क्षेत्रों में विकसित होता है। यह पूर्णतया ज्ञात नहीं है कि महिलाओं में स्तन कैंसर क्यों होता है। इसके अनेक कारण हैं। घातक कारणों में से एक कारण एस्ट्रोजन है। जो स्तन कैंसर के लिए जिम्मेदार मुख्य अभिशाप है। इस कारण स्तन कैंसर का इलाज करने के लिए इसकी फिजियोलॉजी जानना महत्वपूर्ण है। स्तन कैंसर के उपचार और रोकथाम एवं उस औषधि का उपयोग करना जो एस्ट्रोजन की क्रिया को स्तन में रोके, इसकी प्रभावी रणनीति का अध्ययन इस पत्र में किया गया है।

बीज शब्द–स्तन कैंसर, सहनियत्रंक प्रोटीन, एस्ट्राडियॉल, एस्ट्रोजन, एस्ट्रोन।

Estrogen hormone: main cause of breast cancer-a study

Priti Rawat, Tripti Misra and Mahesh Pal
Research Scholars, Scientist, Phyto-chemistry Department
C.S.I.R.-N.B.R.I., Lucknow-226001, U.P., India
drmpal.nbri@rediffmail.com

Abstract

Today, millions of women are surviving breast cancer. It is a malignant tumor that starts in the cells of the breast. It can grow into (invade) surrounding tissues or spread (metastasize) to distant areas of the body. No one exactly knows why some women get breast cancer; there are a number of risk factors. But estrogen was found to be the main curse responsible for this. Thus in order to cure breast cancer it is important to know the physiology of estrogen. One of the most effective strategies for the treatment and prevention of breast cancer involves the use of drug that blocks estrogen action in breast.

Keywords: Breast Cancer, Coregulatory Proteins, Estradiol, Estrogen, Estrone.

1. प्रस्तावना

स्तन कैंसर सबसे सामान्य कैंसर है जो अमेरिका और यूरोप में महिलाओं में कैंसर से मौत का पाया जाना सबसे प्रमुख कारण है।[1] यह कैंसर का एक प्रकार है जो स्तन के ऊतकों में विकसित होता है जो सामान्यतः दुग्ध नलिकाओं की भीतरी परत या पालिका से जो नलिकाओं के दुग्ध की आपूर्ति करती है, में विकसित होता है।[2] इसको आक्रामक या अनआक्रामक में वर्गीकृत कर सकते हैं। आक्रामक स्तन कैंसर नलिकाओं या पालिका की आधार झिल्ली के माध्यम से स्तन की वसा ऊतकों में विकसित होता है। अनआक्रामक स्तन कैंसर स्तन ऊतक की नलिकाओं (वाहिनीपरक कर्कट रोग सामान्यतः डी0सी0आई0एस0 के रूप में) या पालिका (पालिका कर्कट रोग

एल0सी0आई0एस0 के रूप में) में विकसित होता है। इस प्रकार का कैंसर आधार झिल्ली के द्वारा नहीं फैलता।[3] अधिकतर मानव स्तन कैंसर महिलाओं में पाया जाता है लेकिन पुरूषों में भी स्तन कैंसर पाया जाता है।

एस्ट्रोजन स्तन कैंसर के कारणों में से एक है।[4] मुख्य रूप से दो प्रकार के एस्ट्रोजन रिसेप्टर á(ईआर$_á$) और â(ईआर$_â$) शरीर मे पाये जाते हैं। एस्ट्राडियॉल प्रतिक्रिया शरीर में नाभिकीय रिसेप्टर सहित कई ऊतकों में पायी जाती है जैसे स्तन ग्रंथि और स्तन कैंसर। कोशिका के चक्र प्रगति में वे विशिष्ट जीन को सक्रिय या बांधित कर सकते हैं।[5] कई किण्वक गतिविधियों के माध्यम से सक्रिय कोशिका अस्तित्व के परिणामस्वरूप घातक परिवर्तन होते हैं। रजोनिवृत्त महिलाओं में यह एस्ट्रोजन का मुख्य श्रोत है।[6–9]

एस्ट्रोजन स्टेयरॉयड यौगिकों का समूह है। ये एस्ट्रस चक्र में महत्वपूर्ण है। और ये प्राथमिक महिला सेक्स हार्मोन के रूप में कार्य करते हैं। ये कुछ कीड़ो सहित सभी रीढ़ धारी में संशलेषित होते हैं। महिलाओं में तीन प्रमुख स्वाभाविक रूप से एस्ट्रोजन पाये जाते हैं। एस्ट्रोन(ई–1), एस्ट्राडियॉल(ई–2) और एस्ट्रयॉल(ई–3)। ये अंडाशय, अधिवृक्क ग्रंथि तथा अपरा में संशलेषित होते हैं। हाइपोथेलेमस, जननग्रंथिपोषी रिहा हार्मोन (जी0एन0आर0एच0) स्रावित करता है जो अग्रवर्ती पिट्यूटरी को फॉलिकिल सक्रिय हार्मोन (एफ0एस0एच0) और ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन (एल0एच0) स्रावित करने के लिए उत्तेजित करता है। यह अंडाशय को एस्ट्राडियॉल और एस्ट्रॉन उत्पन्न कराता है।

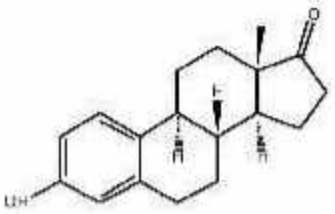

एस्ट्रोन

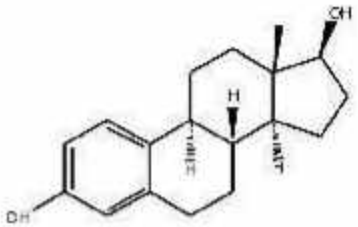

एस्ट्राडियॉल



एस्ट्रयॉल

ये एस्ट्रोजन अपने लक्ष्य एस्ट्रोजन रिसेप्टर के साथ बंधन बनाते हैं जो कि स्तन अंडाशय गर्भाशय मस्तिष्क, अस्थि, जिगर और हृदय में पाये जाते हैं। किशोरावस्था के समय यह हार्मोन अंडाशय से स्रावित होता है और स्तन ऊतक में नालिका तंत्र को उत्तेजित करता है जो पूर्णतया तब तक विकसित नही होता जब तक गर्भाशय दुग्धपान की तैयारी नही करता।[3] एस्ट्रोजन पुरूषों और महिलाओं दोनों में पाया जाता है। यह आमतौर पर प्रजनन आयु की महिलाओं में उच्च स्तर पर पाया जाता है। यह विकास, विभेदन और महिला प्रजनन अंगों के कार्यों(स्तन, गर्भाशय और अंडाशय) को प्रभावित करता है। यह अस्थि घनत्व को बनाये रखने और अस्थिसुषिरता के विरूद्व शरीर की रक्षा करता है। यह कोलेस्ट्रॉल(विशेष रूप से कम घनत्व वाले लिपोप्रोटिन(एल0डी0एल0) को कम करने में तथा पागलपन के विकास को धीमा करने में अहम भूमिका निभाते हैं। यह स्तन और गर्भाशय की कैंसर कोशिकाओं के विकास को बढ़ावा देता है। एस्ट्रोजन का कम स्तर आमतौर पर गर्म चमक, रात को पसीना आना, एल0डी0एल0 कोलेस्ट्रॉल की अधिक मात्रा, हृदय गति परिवर्तन और अस्थि क्षय में वृद्धि के साथ जुड़ा हुआ है।

2. एस्ट्रोजन रिसेप्टर

दो अलग प्रकार के एस्ट्रोजन ईआर$_á$ और ईआर$_â$ उपस्थित हैं। एस्ट्रोजन ईआर$_á$ के माध्यम से संकेत और कई रोगों में मुख्य भूमिका निभाता है जैसे स्तन और अंतगर्भाशयकला, अस्थिसुषिरता और हृदय रोग। इस प्रकार ईआर$_á$की गतिविधियों में अवरोध स्तन और अंतगर्भाशयकला कैंसर के लिए एक प्रभावी उपचार का विकल्प साबित हो गया है। ईआर$_â$ कभी कभी ईआर$_á$ के विपरीत प्रभाव दिखाता

है। संरचना की दृष्टि से दोनों रिसेप्टर बहुत मिलते जुलते हैं। COOH- के अंतिम सिरे के करीब (एफ कार्यक्षेत्र कहा जाता है) संलग्नी रिसेप्टर्स को डायमराइज और कार्यात्मक होमो या हैट्रोडाइमर बनाने के लिए अनुमति देता है। रिसेप्टर एस्ट्राडियॉल(ई–2) के साथ बंधन बना सकते हैं और एस्ट्रोजन उत्तरदायी जीन के सहायक क्षेत्र में उपस्थित एस्ट्रोजन प्रतिक्रिया तत्व (ईआर) को हैट्रो या होमोडायमराइज कर सकता है। जीन प्रतिलेखन केवल सहउत्प्रेरक अणुओं के साथ बंधन (को–ए) करके प्रतिलेखन ईकाई बना सकता है। सहदमनात्मक अणु (को–आर) संभावित रूप से बिना संलग्नी रिसेप्टर के बंधन के लिए पाये जाते हैं। एस्ट्रोजन रिसेप्टर विभिन्न कार्यात्मक क्षेत्रों में वर्गीकृत किये गये है(ए–एफ) परन्तु सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र "सी" है, डीएनए बाध्यकारी कार्यक्षेत्र और "ई" क्षेत्र संलग्नी कार्यक्षेत्र बंधन।[11]

ये ईआर$_{\alpha}$पर सक्रिय दो कार्य हैं जिनके नाम है एएफ–1 तथा एएफ–2, एएफ–2 सक्रिय होता है। ई–2 के बंधन से लेकिन इसे प्रतिलेखन ईकाई के लिए इष्तम को–ए के लिए एक स्थिर तालमेल कायम करने की आवश्यकता होती है। जब एस्ट्रोजन रिसेप्टर से बंधन करता है तो कई जीनों की अभिव्यक्ति करता है जो कि कोशिका प्रसार और विभेदन के नियमन में व्याप्त है। एस्ट्रोजन बंधन के कारण ई–आर गर्म झटका प्रोटीन से विघटित, डायमराइज और विशिष्ट डीएनए क्रम और इस प्रकार उत्तरदायी जीनों के प्रतिलेखन उत्तेजित करता है। यह प्रदर्शित होता है कि ईआर$_{\alpha}$ के एफ क्षेत्र में उपस्थित तत्व से डायमराइजेशन निष्प्रभावी होता है। इस प्रकार ई–आर ही प्रतिलेखन के प्रत्यक्ष नियत्रंक नहीं हैं। इसकी सहनियामक प्रोटीन (सहउत्प्रेरक या सहदमनात्मक) के साथ तालमेल की आवश्यकता है जो ईआर तथा सामान्य प्रतिलेखन मशीन के मध्यवर्ती संकेत के रूप में कार्य करता है।[12]

3. सहउत्प्रेरक तथा सहदमनात्मक

एस्ट्राडियॉल की ऊतक विशिष्ट प्रतिक्रिया के कारण सहउत्प्रेरक और सहदमनात्मक प्रोटीन है जो ईआर की क्रिया को बढ़ाते हैं। ई–आर सहउत्प्रेरक के तीन मुख्य समूहों में रिसेप्टर सहउत्प्रेरक–1(एसआरसी–1), एआरसी–2, एसआरसी–3 आते हैं। कुछ प्रोटीन जैसे चक्रीय एएमपी प्रतिक्रिया तत्व बाध्यकारी प्रोटीन, सीबीपी/पी 300 एडेप्टर या प्रत्येक कई प्रतिलेखन कारक के सहउत्प्रेरक के रूप में कार्य करते हैं। सहदमनात्मक प्रोटीन एंटीएस्ट्रोजन के कार्य को बढ़ाता है जैसे कि गठनात्मक परिवर्तन सहउत्प्रेरक के अतिरिक्त एंटीएस्ट्रोजन रिकुट सहदमनात्मक के द्वारा बढ़ता है। कोशिका में कोशिका प्रतिक्रिया का सहउत्प्रेरक तथा सहदमनात्मक का अनुपात एक महत्वपूर्ण कारक है।[13]

4. स्तन कैंसर की रोकथाम

1. **अपने पूरे जीवन में एक स्वस्थ शरीर के वजन(25 से कम बीएमआई एसआई) को बनाये रखें**–मध्य जीवन में वजन, स्वतंत्र बीएमआई स्तन कैंसर के खतरे को बढ़ाते हैं। साथ ही, और ऊँचा बीएमआई निर्णायक रजोनिवृत्ति के बाद स्तन कैंसर के खतरे को बढ़ाता है।
2. **कम से कम और शराब सेवन से बचे**–शराब का उपयोग स्तन कैंसर के लिए सबसे अच्छी तरह से स्थापित आहार जोखिम कारक है। प्रतिदिन एक से अधिक मादक पेय लेने से 20–25 प्रतिशत स्तन के खतरे को बढ़ा सकते हैं।
3. **ज्यादा से ज्यादा फलों तथा सब्जियों की खपत**–स्तन कैंसर के संरक्षण के लिए फ्रूसीफेरस सब्जियां (ब्रोकोली, गोभी, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, पत्तागोभी) गहरे पत्तेदार साग(कोलाइस केल, पालक) गाजर और टमाटर सम्मिलित हैं। फल नींबू, जामुन और चेरी भी सम्मिलित हैं। **नोट**– फ्रूसीफेरस सब्जियों को कच्चा या हल्का पका कर खाना लाभदायक है क्योंकि कैंसर के खिलाफ संरक्षण प्रदान करने वाले पादपरसायन अधिक ताप से नष्ट हो जाते हैं।
4. **नियमित रूप से व्यायाम करें**–कई अध्ययनों से ज्ञात होता है कि नियमित रूप से व्यायाम स्तन कैंसर के विरूद्व शक्तिशाली संरक्षण प्रदान करता है।
5. **वसा ठीक करें**–आहार में वसा के प्रकार स्तन कैंसर के खतरे को प्रभावित कर सकते हैं। ओमेगा–6 वसा (सूरजमुखी, कुसुम, मक्का और कपास तेल) संतृप्त वसा और ट्रांस वसा की खपत कम। विशेष रूप से मछली के तेल (सामन, ट्यूना, सार्डिंग, लेक, ट्राउट और हेरिंग) से ओमेगा–3 वसा का सेवन अधिकतर करें। मोनोसैच्यूरेटेड प्राथमिक वसा, श्रोत के रूप में (राई, जैतून

का तेल, नट,/बीज, एवोकेडोस) की खपत करें। इनमें विरोधी स्तन कैंसर के गुण होते हैं। विशेष रूप से, कैनोला तेल ओमेगा–3 वसा का एक अच्छा श्रोत है अतिरिक्त वर्जिन जैतून का तेल, स्क्वीलिन एंटीआक्सीडेंट सहित पॉलीफिनाल का अच्छा श्रोत है तथा नट और बीच कैंसर सुरक्षा के लिए खनिज और सेलेनियम प्रदान करते हैं।

6. **अपने कार्ब सही करो**–सफेद आटा, सफेद चावल, सफेद आलू, चीनी और उनसे युक्त उत्पादों–उच्च ग्लाइसिमिक सूचकांक, "ग्रेट व्हाइट खतरों" की खपत कम करें। ये खाद्य पदार्थ हार्मोनल परिवर्तन करके स्तन के ऊतको में कोशिका विकास को बढ़ावा देते है।
7. **सोया का उपयोग करें**–नियमित रूप से संपूर्ण सोया उत्पाद का उपयोग करें जैसे सोयाबीन का पनीर टैम्फे एडेमैमे, भुना हुआ सोया नट, सोया दूध और मिसो। महामारी विज्ञान के अध्ययन से ज्ञात होता है कि सोया की खपत और कम स्तन कैंसर के बीच एक सकारात्मक सहयोग दिखाया गया है।
8. **फार्मोकोलॉजिक एस्ट्रोजन और जीनो एस्ट्रोजन के जोखिम को कम करना**–जब तक चिकित्सीय संकेत न हो, एस्ट्रोजन मत लें। संपूर्ण जीवन एस्ट्रोजन का उपयोग स्तर कैंसर के विकास में एक मौलिक भूमिका निभाता है। इसके अलावा ऐसे कीटनाशकों और औद्योगिक रसायनों के रूप में पर्यावरण प्रदूषण में पाये जाने वाले एस्ट्रोजन की तरह के यौगिकों से बचें। जैविक उत्पाद खरीदें, अन्यथा गैर जैविक उत्पादों को अच्छी तरह से धो ले। गैर कार्बनिक डेयरी उत्पाद, मांस, पोल्ट्री में पाये जाने वाले अवशिष्ट हार्मोन के जोखिम से बचें।
9. **अपनी दैनिक खुराक लें**–एक मल्टीविटामिन, 500–1,000 विभाजित खुराक में विटामिन–सी की मिलीग्राम, मिश्रित टोकोफेराल्स के रूप में विटामिन–ई की 200–400 IUs और दवा ग्रेड मछली के तेल। इसके अलावा खनिज सैलेनियम की 200 मिलीग्राम लें या ब्राजील नट्स विकल्प के रूप में लें।
10. **एक सकारात्मक मानसिक दृष्टिकोण को बनाये रखें**–नियमित रूप से आत्म–पोषण कार्यो में सलंग्न रहें। परिवार और दोस्तों के साथ पारस्परिक रूप से लाभप्रद संबंधों का विकास करें। पर्याप्त नींद(प्रतिरात 7–8 घंटे) लें। स्तन कैंसर के साथ मन, शरीर संघ महत्वपूर्ण हैं।
11. **हार्मोन रिप्लेसमेंट थैरेपी से बचे**–रजोनिवृत्ति हार्मोन चिकित्सा स्तन कैंसर के लिए खतरा बढ़ाती है। अगर रजोनिवृत्ति के लक्षणों को कम करने के लिए हार्मोन लेना आवश्यक है तो जिनमें प्रोजेस्ट्रॉन होते हैं उनका तीन वर्ष से कम समय के लिए उपयोग करना चाहिए।
12. **एस्ट्रोजन अवरूद्ध दवायें**–परिवार में स्तन कैंसर का इतिहास या जो 60 वर्ष की आयु से अधिक महिलाओं को एस्ट्रोजन अवरूद्ध दवाओं जैसे टैमोक्सीफेन, रेलोक्सिफेन, के बारे में डॉक्टर से बात करनी चाहिए।

5. निष्कर्ष

स्तन कैंसर की रोकथाम तथा बचाव के लिए इसके प्रति लोगों का जागरूक होना आवश्यक है। स्तन कैंसर एक अभिशाप है और इसके बचाव स्वरूप कम से कम हार्मोन रिप्लेसमेंट थैरेपी तथा एस्ट्रोजन अवरूद्ध दवाओं का उपयोग करना चाहिए।

संदर्भ

1. के क्रिस्टा, बौमन; एवं कैस्टीडियॉन, मोनिका(2007) एस्ट्रोजन रिसेप्टर मोडूलेटर एंड डाउन रेगुलेटर्स ड्रगर्स, खण्ड 67, अंक 16, मु0 पृ0 2335–2353।
2. सेरेजा, जे0(2012) "ब्रेस्ट कैंसर इन द यूथ पेशेंट", द अमेरिकन सर्जन, खण्ड 76, अंक 12, मु0पृ0 1397–1401।
3. एमजे, एन0(2005) "ब्रेस्ट कैंसर कीमोप्रेवेंशनः ए रीव्यू ऑफ सेलेक्टिव एस्ट्रोजन रिसेप्टर मौड्यूलेटर", क्लीनिकल जनरल ऑफ आनकोलॉजी, नर्सिंग, मु0पृ0 317–20।
4. कैम्बे, योशिटेक(2006) "डिस्कवरी आफ थायोक्रोमेन एंड क्रोमेन डेरीवेटिब्स एज प्योर एंटीएस्ट्रोजन एंड देयर स्ट्रक्चर एक्टीविटी रिलेशनसिप", बायोऑरगैनिक एंड मेडिसनल कैमिस्ट्री, मु0पृ0 4803–4819।
5. रेनायर, एम0 जैक(2012) "एस्ट्रडियॉल रिसेप्टर इन ब्रेस्ट कैंसर सेल असोसिएटेड कोफैक्टर्स एज टारगेट फार न्यू थैरापेटिक, एपरोचेज", खण्ड–77, अंक 12, मु0पृ0 1249–1261।
6. रूप, एम0 ए0; मूरियल, सी; डेनाइज, एल0 सी0; ड्रिनजन, एना; जान, एम0 पी0 तथा मार्क, सी0(2007) "सिनथेरिस एंड बायोलॉजिकल, इवेल्यूशन ऑफ एबाइसिनान एंड इस्ट एनालांग ऐज एरोमटेज इनहिबिटर फॉर कीमोप्रीवेंशन ऑफ ब्रेस्ट कैंसर", ज0 मेडि0 कैम0, खण्ड 50, मु0पृ0 2799–2806।

7. एटर, ई0 एवं वूलन, एस0 ई0(2006) "एरोमैटेज इनहिबिटर: द नैक्स्ट जैनरेशन ऑफ थैराप्यूटिक्स फॉर एनडोमौट्रियॉसिस फरटाइल इस्टरलिटी", मु0पृ0 1307–1318।
8. जैलसर, जे0 एवं लौगिग, ई0 (2005) "ऐरोमैटेज इनहिबिटर ट्रांसलेशन इन टू सक्सेजफुल थैरापिटिक एपरोच", क्लीन कैंसर रेस, खण्ड 11, मु0पृ0 2809–2821।
9. मीकौड, एल0 बी0(2005) "एडजूवैंट यूज आफ एरोमेटेज इनहिबिटर इन पोस्टमैन्यूपॉजुअल वूमन विद ब्रेस्ट कैंसर", एम जे हैल्थ सिस्ट फार्म, खण्ड 62, मु0पृ0 266–273।
10. जान, एस0 एल0 एवं जारडेन, वी0 सी0(2005) "सैलेक्टिव एस्ट्रोजन रिसेप्टर मौडूलेटरर्स मैकेनिडम आफ एंटीकॉरसिनोजैनेसिस एंड–ड्रग रैजिस्टेन्स", म्यूटेशन रिसर्च, खण्ड 591, मु0 पृ0 247–263।
11. हार्टमैन, जो0; एसट्राम, ए0 तथा गुस्ताफसन, जे0 के0(2009) "एस्ट्रोजन रिसेप्टर बीटा इन ब्रेस्ट कैंसर–डायग्नॉस्टिक एंड थैराप्यूटिक्सन इम्प्लीकेशन", इस्टीरॉयड, खण्ड 74, मु0पृ0 635–641।
12. वीसी जौर्डन(2003) "एंटीएस्ट्रोजन एंड सेलेक्टिव एस्ट्रोजन रिसेप्टर मौड्यूलेटर्स एज मल्टीफंक्शनल मैडिसिन, रिसेप्टर इन्टरैक्शन", जनरल आफ मैडिसिनल कैमिस्ट्री, खण्ड 4 6, अंक 6, मु0पृ0 883–908।
13. थामस, टी; गैलो, एम0 ए0 तथा थामस, टी0 जे0(2004) "एस्ट्रोजन रिसेप्टर्स एज टारगैट फॉर ड्रग डैवलेपमेंट फॉर ब्रेस्ट कैंसर ऑस्टियोपोरोसिस एंड फॉडियोवैस्कुलर डिसीज", करंट कैंसर ड्रग टारगेट, खण्ड 4, अंक 6, मु0पृ0 483–499।

जीवन की गुणवत्ता–गणितीय नमूने द्वारा एक अध्ययन

श्रीमती कृष्णा यादव
रीडर, गणित विभाग
महिला विद्यालय डिग्री कॉलेज, अमीनाबाद, लखनऊ–226018, उ0प्र0, भारत
drkrishnayadav2508@gmail.com

सार

इस शोध पत्र में, जीवन की गुणवत्ता के तात्पर्य को गणितीय नमूने के रूप में दर्शाया गया है। जीवन की गुणवत्ता को विषम परिस्थितियों में किस प्रकार बनाये रखा जाय तथा इसके लिए विभिन्न शर्तें एवं आवश्यक कारक क्या होंगे, को रैखिक क्रमादेशन समस्या (लीनियर प्रोग्रामिंग प्रॉब्लम) के माध्यम से समझाया गया है। अंत में प्राप्त परिणामों को रेखाचित्रों के माध्यम से दर्शाया गया है।

बीज शब्द– जीवन की गुणवत्ता, गणितीय नमूना, रैखिक क्रमादेशन समस्या (लीनियर प्रोग्रामिंग प्रॉब्लम)।

Quality of life-A study through mathematical model

Krishna Yadav
Reader, Department of Mathematics
Mahila Vidyalaya Degree College, Aminabad, Lucknow-226018, U.P., India
drkrishnayadav2508@gmail.com

Abstract

In this paper, meaning of quality of life has been expressed through mathematical model. How to maintain quality of life even in odd situations and what are the supporting factors along with the different constraints have been explained by linear programming problem. In the end, results are depicted graphically.

Keywords- Quality of life, mathematical model, linear programming problem.

1. प्रस्तावना

"संसार में आया तो मैं रोया और जब मेरी अन्तिम विदाई हुई तो संसार रोया"
"संस्कृत के कथन का हिन्दी रूपांतरण"

इस आरम्भ और अंत के मध्य का प्रसार ही जीवन है तथा इस जीवन की गुणवत्ता द्वारा ही संसार को सुंदर बनाने की जिम्मेदारी हममें से प्रत्येक की है। इस जिम्मेदारी को निभाने में कई मूलभूत कारक हैं जिन्हें रेखांकित चित्रों द्वारा निरूपित करने का एक छोटा सा प्रयास है। जीवन को गणितीय रूप में निम्नवत परिभाषित किया जा सकता है–

$$\text{जीवन} = \int_{\text{जन्म}}^{\text{मृत्यु}} \text{अनुभव} \times (\text{समय अन्तराल})$$

$$F(t) = \int_{\text{जन्म}}^{\text{मृत्यु}} f(t)\,dt$$

उपरोक्त समीकरण में $F(t)$ समय आधारित जीवन के फलन को तथा $f(t)$ समय आधारित जीवन के फलन (अर्थात् अनुभव) को दर्शाते हैं। समयन्तराल $d(t)$ में समय का फलन अनुभव प्रभावित होता है। अनुभव समय के सापेक्ष है अर्थात् समय के साथ बदलता है।

चुनौतियों के साथ जीवन की गुणवत्ता

जीवन की गुणवत्ता का अर्थ है कि हमारा जीवन हमारे लिए कितना अच्छा है, निःसंदेह जब स्वयं के लिए यह सुन्दरता होगी तभी दूसरों के लिए भी प्रभावकारी बन पायेगी। जीवन की सुन्दरता इस बात पर निर्भर है कि हम अपने जीवन में कितने प्रसन्न तथा सुतुष्ट हैं। इस प्रसन्नता और संतुष्टि को समझने के लिए आवश्यक कारक हैं– 1. ज्ञान, 2. विशिष्टता, 3. मूल्य, 4. चरित्र।[2]

इन सबके साथ बढ़ते हुए जीना ही जीवन की गुणवत्ता को दर्शाता है। जीवन जीते हुए जीना ही गुणवत्ता को दर्शाता है। जीवन जीते हुए हम जो व्यवहार एक–दूसरे से करते हैं उस व्यवहार के लिए कई महत्वपूर्ण कारक हैं जो जाने अन्जाने हम अपनाये रहते हैं, उन पर यदि थोड़ी नजर रखें तो इन्हें बदला जा सकता है और एक गुणवत्तापूर्ण जीवन जिया जा सकता है जो एक सार्थक जीवन कहलायेगा। इन तथ्यों को गणितीय नमूने के द्वारा प्रस्तुत कर सकते हैं।

गणित की एक शाखा **क्रिया अनुसंधान(ऑपरेशन रिसर्च)** का जन्म उस समय हुआ जब द्वितीय विश्व युद्ध में ब्रिटिश सरकार जर्मनी के विरूद्ध संघर्षमयी थी। उस समय जो भी सूचना थी वह अपर्याप्त तथा अनिश्चित दोनों ही थी। कहते हैं आवश्यकता अविष्कार की जननी है ऐसा ही क्रिया अनुसंधान के अंतर्गत आने वाले विषय रैखिक क्रमादेशन(लीनियर प्रोग्रामिंग) के साथ हुआ। यह एक ऐसी शाखा है जिसका बहुत ही त्वरित गति से सांख्यिकी तथा अर्थशास्त्रियों द्वारा उपयोग किया जा रहा है।

2. रैखिक क्रमादेशन समस्या (लीनियर प्रोग्रामिंग प्रॉब्लम)

इसके अंतर्गत जो भी कारक हैं वह सब एक घातीय हैं साथ में उन कारकों की भी अपनी एक सीमा है जिसमें वह मौजूद रहकर अपना प्रभाव दिखाते हैं। समस्या का समाधान खोजना तथा यह समाधान सभी प्रभावित कारकों को संतुष्ट करते हुए होना चाहिए। यह प्रक्रिया क्रमादेशन (प्रोग्रामिंग) कहलाती है। इस प्रकार की समस्या के समाधान दो प्रकार के होते हैं–

1. सम्भव समाधान (फिजिकल सोल्यूशन)
2. उत्तम समाधान (ऑप्टिमल सोल्यूशन)

सम्भव समाधान (फिजिकल सोल्यूशन)– वह समाधान है जो समस्या के उन सभी कारकों से सम्पर्क रखता है जो कारक समस्या को प्रभावित करते हुए होते हैं।

उत्तम समाधान (ऑप्टिमल सोल्यूशन)– वह समाधान है जो अभिसरित क्षेत्र में पूर्णतया उपस्थित रहते हुए बहुभुज के शीर्ष पर अधिकतम मान देता है।

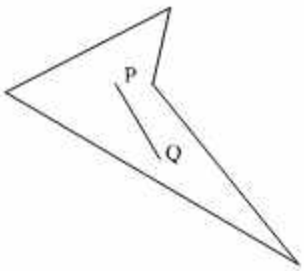

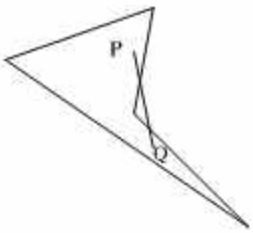

चित्र–1–अभिसरित क्षेत्रः PQ पूर्णतया शीर्ष के भीतर है। **चित्र–2**–अभावपूर्ण अभिसरित क्षेत्रः PQ का कुछ भाग शीर्ष के बाहर है।

3. **समस्या–1**

उत्तम समाधान ज्ञात करना जबकि $P = X + Y$, जहाँ X = आवश्यकता, चाहत तथा X = इच्छा को दर्शाता है।

निम्न रुकावटों के साथ

1. स्वास्थ्य > 0, स्वास्थ्य $\rightarrow$ शारीरिक स्वास्थ्य + मानसिक + आध्यात्मिक स्वास्थ्य

2. ज्ञान > 0, ज्ञान $\rightarrow$ औपचारिक या अनौपचारिक शिक्षा के माध्यम से अर्जित

3. विशिष्ट या श्रेष्ठ > 0, व्यक्ति अपनी रुचि के क्षेत्र में लक्ष्य को पाने हेतु अपने कौशल या अपनी प्रवीणता का किस प्रकार प्रयोग करता है।

4. चरित्र > 0, चरित्र का मुख्य आशय है कि व्यक्ति मूलरूप से किस प्रकार का है। चरित्र के प्रमुख भाग हैं– ईमानदारी, साहस, विचार या संकल्प आदि। अर्थात् साहस करते समय विनम्रता को भी धारण करना है इसका उसे स्मरण रहे।

X–अक्ष पर आवश्यकता, तथा Y–अक्ष पर इच्छा को व्यक्त करते हुए उपरोक्त चारों कारकों के प्रतिबंध के अंतर्गत निम्न लेखाचित्र–3 में दर्शाया गया है।

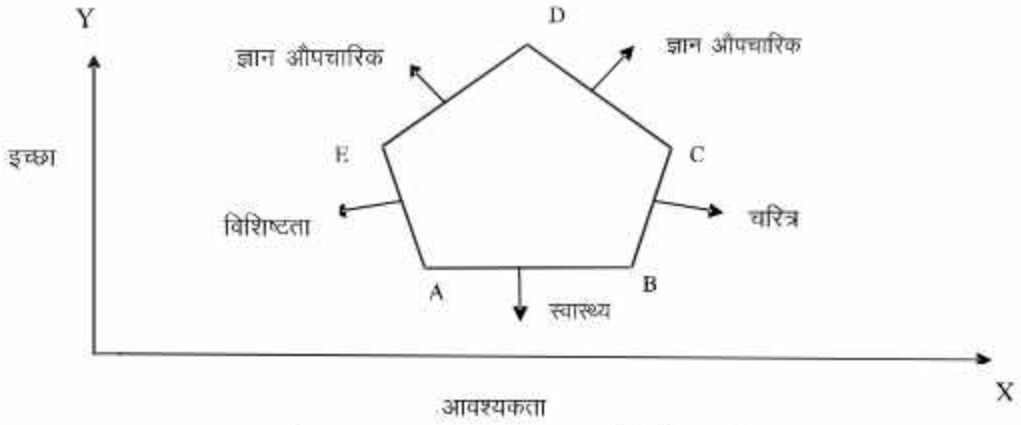

चित्र 3–आवश्यकता व इच्छा के बीच संबंध

1. आवश्यकता एक सीमित फलन है।
2. इच्छा एक असीमित फलन है।

सर्वशक्तिमान आवश्यकता तो प्रत्येक व्यक्ति की पूरी करता है परन्तु सभी इच्छाएं किसी भी व्यक्ति की पूरी नहीं होती हैं।

स्वास्थ्य को X–अक्ष पर निरुपित करने का कारण

चूँकि किसी भी व्यक्ति को अपना कर्तव्य निभाने के लिए स्वास्थ्य एक मूलभूत तथा महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

विशिष्टता एवं चरित्र Y–अक्ष की ओर चुनने का कारण तथा इच्छा को Y–अक्ष पर चुनने का कारण

चूँकि आकाश अनन्त है अतः विशिष्टताओं तथा चरित्र के द्वारा किसी भी ऊँचाई तक पहुँचा जा सकता है।

4. **समस्या–2**

उत्तम समाधान ज्ञात करना जबकि $P = X + Y$, जहाँ X = आत्मवाद (अहम का पोषण)$\rightarrow 0$ तथा Y = इच्छा$\rightarrow \infty$, को निम्न रुकावटों के साथ दर्शाता है।

1. उद्देश्य, 2. नियत–एकाग्र या नाभिकीय दृष्टिकोण

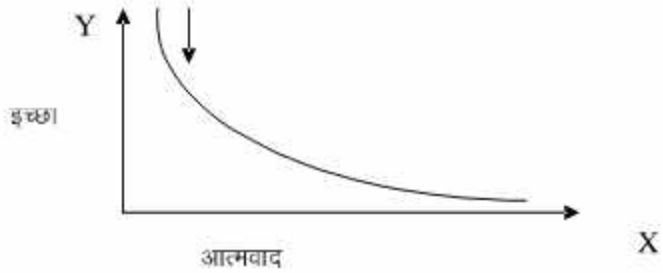

इच्छा में गिरावट किन्तु आत्मवाद में बढ़ोत्तरी के साथ प्राप्ति का स्वरूप अतिपरवलयाकार हो जाता है। अतिपरवलयाकार का आकार स्वयं को वर्णित करता है कि फैलाव दोनों दिशाओं (अक्षों) में होने के फलस्वरूप समाधान सम्भावित तो है किन्तु उत्तम कदापि नहीं है। इसके विपरीत यदि आत्मवाद को कम करते हुए तीव्र इच्छा या ललक के साथ जीवन–यापन करते रहने पर प्राप्ति के स्वरूप को परवलय द्वारा निरुपित किया जा सकता है। वह परवलय जिसका शीर्ष Y–अक्ष पर है अर्थात् उसका शीर्ष पर्वत की ऊँचाई को दर्शाता है।

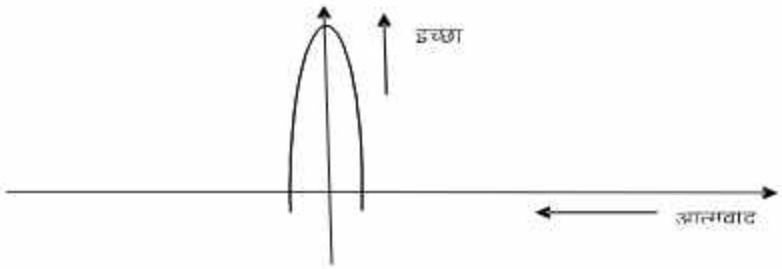

पुनः यदि आत्मवाद को बढ़ाते हुए इच्छा पोषित होती है तो प्राप्ति का स्वरूप एक घाटी जैसा होता है अर्थात् वह परवलय जिसका शीर्ष Y–अक्ष पर है तथा (0,0) मूल बिन्दु के निकट है।

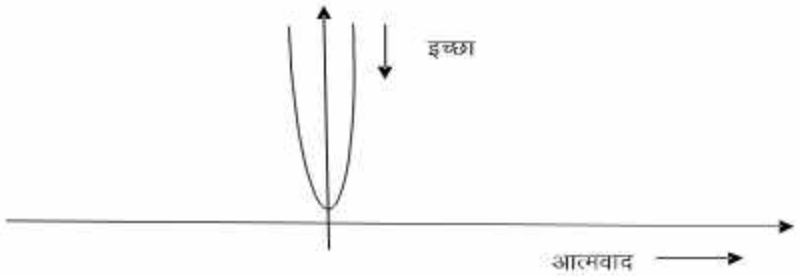

आत्मवाद को X–अक्ष पर चयन करने का कारण है कि कि X–अक्ष पृथ्वी के अक्ष के समानान्तर है। इस धरती पर वह जितना ज्यादा संसारिकता में लिप्त रहेगा अपने जीवन के उद्देश्य की खोज में उसका प्रयास उतना ही कम होता जायेगा और इस प्रकार जीवन की गुणवत्ता भी प्रभावित होती जायेगी।

यदि आत्मवाद < 0 है तो इसका अर्थ है कि आत्मवाद व्यक्ति को दृष्टिहीन बना रहा है जो उसे जिद्दी, अड़ियल, स्वार्थी तथा सामंजस्यता बैठाने में एक बाधा खड़ी करता है। ठीक इसके विपरीत इच्छा > 0 है तो इसका अर्थ है कि ललक में एक स्पष्ट दृष्टि होती है जो व्यक्ति में उत्साह साहस तथा कार्य करने की क्षमता में वृद्धि करता है। यह तीव्र इच्छा या ललक, जो लेखाचित्र में Y–अक्ष के अनुदिश तथा X–अक्ष के लम्बवत है, सर्वशक्तिमान की ओर इंगित करता है, इस दिशा में अपनी इच्छा को बढ़ाने का अर्थ हुआ कि जीवन में स्वयं ही संतुष्टि, आनंद व प्रेम का आगमन होना।

5. निष्कर्ष

जीवन में सफल होने के लिए दृढ़ इच्छा शक्ति का होना अति आवश्यक है और इस इच्छा शक्ति द्वारा होने वाला प्रयास दृढ़ता की तरफ है या जड़ता की तरफ है इसका ध्यान होना नितांत आवश्यक है। इस प्रकार के प्रयास द्वारा सहिष्णुता और सहनशीलता की कोमल पंखुड़ियों का जन्म होता है और इस पंखुड़ी के साथ जीवन यापन होने पर स्वतः ही भूल और क्षमा के सद्गुणों को भी अपना स्थान मिल जाता है और एक नये व्यक्तित्व का विकास होगा जिसमें प्रेम या स्नेह का बयार स्वयं ही बहने लगता है। जब स्नेह तथा प्रेम का आगमन होगा तो निश्चय ही आनन्द का अनुभव होगा और इस आनन्द का स्वाद जीवन को दमकाता है, चमकाता है।[3] यही कारण है कि तनावग्रस्त जीवन शैली, व्यक्ति की आयु को घटाती है। निराशा के कारण अवसाद जैसी बीमारी से ग्रस्त होने पर चेहरे पर झुर्रियों के साथ–साथ हृदय रोग से भी ग्रसित होना पड़ता है। अनेकों प्रकार की बीमारियों के कारण जीवन अस्वस्थ हो जाता है। अतः उत्तम समाधान के लिए यह आवश्यक है कि विचारों पर लगाम रखें क्योंकि यही विचार भावों में बदलते हैं और भाव शब्द बनते हैं, यही शब्द हमारे कार्य प्रणाली को दर्शाने लगते हैं। चूँकि विचार मस्तिष्क से आते हैं और भाव हृदय में उपजते हैं अतः सामंजस्यता बैठाते हुए भाव में अभाव न हो इसके प्रति सचेत रहना ही उत्तम समाधान है। अर्थात् विषम परिस्थितियों में भी अच्छाई के मार्ग पर चलते हुए तथा जीवन की गुणवत्ता बनाये रखते हुए आज के समाज का सामना किया जा सकता है।

आभार– सिद्धयोग मिशन।

संदर्भ

1. शर्मा, रॉबिन(2003) "हू विल क्राइ व्हेन यू डाइ", जायको पब्लिशिंग हाउस, प्रथम संस्करण, दिल्ली, भारत।
2. मित्तल, राकेश कुमार (2009) "सार्थक जीवन के सिद्धांत", पांचवाँ संस्करण, कबीर भाांति मिशन, "उपवन" 1/14 विश्वास खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ, मु0पृ0–6–12, 75, 80।
3. "सिद्धयोगा–गृह अध्ययन पाठ्यक्रम", अध्याय–10, "टर्न योर डिफिकल्टीज इन टू नेक्टर", निवृत्ति गिलेट, वर्ष 2009, चित्शक्ति पब्लिकेशन्स, चेन्नई, भारत।

भारत में प्राकृतिक संसाधनों के प्रबन्ध की समस्यायें एवं चुनौतियाँः नाबार्ड के पहल का केस अध्ययन

प्रीति पन्त[1] एवं राजीव श्रीवास्तव[2]
[1,2]असिस्टेन्ट प्रोफेसर, वाणिज्य विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
preeteepant@gmail.com

सार

'हम सोचते है कि सब कुछ सक्षम है और यह सत्य भी है कि हमारा जीवन तत्काल अनेक रूपों में बेहतर हो गया है। परन्तु यह सुधार प्राकृतिक संसाधनों के अत्यधिक असक्षम प्रयोग से प्राप्त किया गया है।'

''पाल हॉकेन

प्राकृतिक संसाधन मानव जाति को महत्वपूर्ण पारिस्थितिकी तन्त्र सेवायें प्रदान करते हैं जो न केवल उनके जीवन अपितु उनके समग्र विकास के लिए भी आवश्यक है। परन्तु दुर्भाग्यवश बढ़ती हुई जनसंख्या दबाव एवं सीमित संसाधनों की घटती हुई मात्रा के कारण इन संसाधनों का तत्कालिक वहनीय प्रबन्धन आवश्यक है। यह प्रबन्ध भारत जैसे विकासशील राष्ट्र में और भी अधिक महत्वपूर्ण है जिनका विकास उनके प्राकृतिक संसाधनों के अनुकूलतम दोहन में छिपा है। पारिस्थितिकी तन्त्र असन्तुलन अनेक प्राकृतिक आपदाओं जैसे बाढ़, सूखा, भूस्खलन इत्यादि को आमन्त्रण देता है। हाल ही में उत्तराखण्ड में 17 जून, 2013 को आयी बाढ़ त्रासदी इस असंतुलन का एक उदाहरण मात्र है। विश्व के सर्वाधिक प्राकृतिक सम्पदा सम्पन्न राष्ट्रों में एक होने के पश्चात भी भारत अपने प्राकृतिक संसाधनो का प्रभावपूर्ण एवं क्षमतापूर्ण दोहन नहीं कर सका है और कुछ संसाधन तो अभी भी पुर्णतया अनछुए हैं। इस दिशा में भारत सरकार एवं राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) भारत में प्राकृतिक संसाधनों के प्रबन्ध का उच्चीकृत एवं समेकित कर रहे हैं। यह शोध पत्र नाबार्ड द्वारा प्रदान किये जाने वाले कार्यक्रमों के माध्यम से भारत में प्राकृतिक संसाधनो के प्रबन्ध की समस्याओं एवं चुनौतियों को उजागर करता है और इस सम्बन्ध में सुझावों की भी विवेचना करता है।

बीज शब्द–प्राकृतिक संसाधन, प्राकृतिक संसाधन प्रबन्ध(एन.आर.एम.), पारिस्थितिकी, पारिस्थितिकी तन्त्र, वहनीय विकास, प्रदूषण, नाबार्ड।

Issues and Challenges of Natural Resource Management in India: A Case Study of Initiatives of NABARD

Preeti Pant[1] and Rajiv Srivastava[2]
[1,2]Assistant Professor, Department of Commerce
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
preeteepant@gmail.com

Abstract

"We assume that everything becoming more efficient & in an immediate sense that's true; our lives are better in many ways. But that improvement has been gained through a massively inefficient use of natural resources."

- Paul Hawken

Natural resources provide mankind with important ecosystem services which are essential for the survival and development of mankind. But unfortunately the increasing pressure of the human population combined with the decrease of the finite resources urgently calls for a sustainable management of these resources. Such management becomes more significant for a developing country like India, the development of which lies in the optimum utilization of its natural resources. The imbalanced eco-system invites several natural calamities i.e., floods, droughts, landslides etc. The recent *Uttarakhand flood tragedy* on June 17, 2013 is just an example of this imbalance. Being one of the most naturally endowed nations of the world, the natural resources of India has not been effectively & efficiently utilized & some of the resources have not even untapped. In this direction, the Indian Government & the *National Bank for Agriculture & Rural Development (NABARD)* is upscaling & integrating Natural Resource Management in India. This paper is an attempt to address various issues & challenges of natural resource management in India in the light of the initiatives provided by NABARD alongwith some suggestive measures.

Key Words- Natural Resources, Natural Resource Management(NRM), Ecology, Eco-system, Sustainable Management, Pollution, NABARD.

1. प्रस्तावना

प्राकृतिक संसाधन पर्यावरण से प्राकृतिक रूप से प्राप्त पदार्थ एवं घटक हैं। इनमें से कुछ हमारे जीवन के लिए आवश्यक हैं तो कुछ हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए। मनुष्य द्वारा निर्मित प्रत्येक पदार्थ आधारभूत रूप से प्राकृतिक संसाधनों द्वारा निर्मित हैं। आज का युग प्राकृतिक संसाधनों के वहनीय प्रबन्ध का युग है। वहनीयता का अर्थ प्राकृतिक संसाधनों के इस प्रकार प्रयोग से है जिससे कि वर्तमान की आवश्यकताओं की पूर्ति का भावी पीढ़ी के अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव न पड़े। प्राकृतिक संसाधनों का प्रबन्ध कोई नयी सोच नहीं है। आज से कई वर्षा पूर्व भी वन, मृदा, भूमि, जल आदि का संरक्षण किया जाता था। संरक्षण अभियान पर प्रकाशित सबसे पहली पुस्तक 'जान ईवीलीन' की 'ए डीसकोर्स ऑफ फॉरेस्ट ट्रीज एण्ड द प्रोपेगेशन ऑफ टिम्बर इन हिज मेजेस्टी डोमिनियन्स' है जो कि सन् 1664 में प्रकाशित हुई थी। इसे वन्य संरक्षण की सबसे प्रभावशाली पुस्तक के तौर पर देखा जाता है। धीरे–2 करके यह अभियान सम्पूर्ण विश्व में चलाया गया। भारत में ब्रिटिश सरकार ने भी 19वीं शताब्दी में इस अभियान को अंगीकृत किया। समय के साथ–साथ इस अभियान में नयी–नयी वैज्ञानिक तकनीकियों का प्रयोग बढता गया। अब इस अभियान के तीन प्रमुख सिद्धान्त हैं। मनुष्य ने पर्यावरण को बर्बाद कर दिया है; पर्यावरण संरक्षण हमारा मौलिक उत्तरदायित्व है; एवं वैज्ञानिक तकनीकियों का प्रयोग करके संरक्षण किया जा सकता है। प्राकृतिक संसाधन एवं मानव संसाधन एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों के मध्य सन्तुलन ही जीवन का आधार है। यदि यह संतुलन बिगड़ गया तो मानव जाति अपने सर्वनाश की ओर अग्रसर होगी।

2. भारत में प्राकृतिक संसाधन प्रबन्ध(एन.आर.एम.)

भारत की कृषिपरक जलवायु क्षेत्रों की विशाल श्रृंखला, भूमि एवं वन का भण्डार, एवं जैव विविधता की सम्पन्नशीलता, इसे विश्व के सर्वाधिक सम्पदा सम्पन्न राष्ट्रों में से एक बनाती है। भारतीय भूमि विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र अनेक प्रकार के जैविक एवं अजैविक संसाधनों का भण्डार है। जैविक संसाधनों में वन, पशुधन, मछलियाँ, कोयला, तेल, पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस एवं अजैविक संसाधनों में भूमि, स्वच्छ जल, वायु एवं अनेक धात्विक खनिज (स्वर्ण, रजत, लोहा, तांबा इत्यादि) व अधात्विक खनिज (संगमरमर, ग्रेनाइट ग्रुप, वोल्सटोनाइट, सिलीमेनाइट ग्रुप इत्यादि) सम्मिलित हैं। भारत प्राकृतिक एवं मनुष्यधन दोनों ही संसाधनों में धनी है। यहाँ आवश्यकता मात्र प्राकृतिक संसाधनों के प्रभावपूर्ण एव क्षमतापूर्ण दोहन की है; जिससे कि देश के मनुष्यधन का अधिकतम कल्याण किया जा सके।

भारत के विशाल प्राकृतिक भण्डार से सम्बधित कुछ तथ्य इस प्रकार हैं–

- भारत, 3287260 वर्ग कि0मी0 के भौगोलिक क्षेत्र के साथ विश्व का सातवाँ सबसे बड़ा राष्ट्र है।
- संयुक्त राष्ट्र संघ के 'खाद्य एवं कृषि संगठन' के अनुमानों के अनुसार भारत के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 20–21% भाग वनों से आच्छादित हैं।

- भारत में 3,60,400 वर्ग कि0मी0 की जलीय क्षेत्र एवं औसत वर्षा 1100 मिमी0 है। कुल जल संसाधन का 92% सिंचाई के कार्य में प्रयुक्त होता है। भारत के आंतरिक जल संसाधनों में नदियाँ, नहर, जलाशय व झील सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त हिन्द महासागर के पूर्वी एव पश्चिमी तटीय क्षेत्र एवं खाड़ी व गल्फ भी जल संसाधन में सम्मिलित हैं।
- भारत में 8118 कि0मी0 की तटीय क्षेत्र सीमा, 3827 मछुआरे गाँव एवं 1914 मछली पकड़ने के केन्द्र हैं। 1947 के पश्चात् मत्स्य उत्पादन में दस गुनी बढ़त हुई है।
- भारत में मछलियों की कुल 2546 प्रजातियाँ पायी जाती हैं जो संपूर्ण विश्व का 11.7 % है। भारत में विश्व के 4.4 प्रतिशत (197) उभयचरों की प्रजातियाँ भी पायी जाती हैं। सन् 2008 में भारत विश्व में समुद्री एव स्वच्छ जल मछलियों का छठा सबसे बड़ा उत्पादक एवं मत्स्यपालन मछलियों का द्वितीय सबसे बडा उत्पादक था।
- भारत में 4 प्रकार के ईंधन, 11 धात्विक, 52 अधात्विक एवं 22 लघु खनिजों का भण्डार है। भारत, विश्व में कोयला भण्डार में चतुर्थ, लौह अयस्क उत्पादन मे पंचम, मैंगनीज अयस्क भण्डार में सप्तम, शीट माइका उत्पादन में प्रथम, बॉक्साइट भण्डार में पंचम एव थोरियम में प्रथम स्थान रखता है।
- अप्रैल, 2010 में, भारत में 1437 बिलियन क्यूबिक मी0 का प्राकृतिक गैस भण्डार था। 125 मिलियन मीट्रिक टन के तेल भण्डार के साथ भारत एशिया प्रशांत महासागर क्षेत्र में तेल भण्डार में द्वितीय स्थान रखता है।
- भारत जैव एवं वनस्पति संसाधनों का भी भण्डार है। भारत विश्व के सत्रह सर्वाधिक जैव विविध राष्ट्रों में से एक है और विश्व के 7.6 प्रतिशत स्तनधारी, 12.6 प्रतिशत पक्षियों, 6.2 प्रतिशत सरीसृपों, 4.4 प्रतिशत उभयचरों, 11.7 प्रतिशत मछलियों एवं 6 प्रतिशत फूलों पर मंडराने वाले कीटों का संरक्षक है। भारत विश्व में सबसे बडा दुग्ध उत्पादन कार्यक्रम **आपरेशन फ्लड** का संचालक है। भारत में कृषकों द्वारा कृषि सहायक क्रिया के रूप में दुग्ध उत्पादन एवं मुर्गी पालन, इत्यादि व्यवसायों को भी अंगीकृत किया जा रहा है।
- भारत विश्व के 7 प्रतिशत वनस्पतियों का भण्डार है। भारत में फूलों वाली वनस्पतियों की 15000 प्रजातियों के साथ वनस्पतियों की 45000 प्रजातियाँ पायी जाती हैं। कुछ प्रजातियाँ विश्व में अन्य किसी भी राष्ट्र में नहीं पायी जाती हैं। भारत में प्रारम्भ से ही वनस्पतियों का औषधीय महत्व रहा है एवं इसमें कई प्रकार की औषधीय एवं सगंध प्रजातियाँ भी सम्मिलित हैं।
- भारतीय सरकार जैविक कृषि को भी प्रोत्साहित कर रही है। 2003–04 में जहाँ इस प्रकार की खेती मात्र 42000 हेक्टेयर में होती थी, वहीं सन् 2010 में यह आंकडे बढ़कर 4.4 मिलियन हेक्टेयर से अधिक हो गये हैं।
- भारत अक्षय ऊर्जा के स्त्रोतों का भी भण्डार है जैसे पवन ऊर्जा, बायोमास एवं बायोगैस ऊर्जा, हाइड्रोपावर ऊर्जा, सौर ऊर्जा, महासागरीय थर्मल ऊर्जा, ज्वारभाटीय ऊर्जा, भूगर्भ थर्मल ऊर्जा, हाइड्रोजन ऊर्जा एवं फ्यूल सेल्स। भारत विश्व का प्रथम राष्ट्र है जिसने अपरम्परागत ऊर्जा स्त्रोतों का मंत्रालय सन् 1980 में स्थापित किया। भारत पवन ऊर्जा क्षमता का पाँचवा सबसे बडा देश है। 'भारतीय सोलर लोन प्रोग्राम', जो कि संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम के सहयोग से चलता है, को घरेलू सौर ऊर्जा कार्यक्रमों के लिए वित्तीय सुविधा उपलब्ध कराने हेतु **'एनर्जी ग्लोब वर्ल्ड अवार्ड'** से सम्मनित किया गया है। इस कार्यक्रम के तहत 3 वर्षों में कुल 16000 घरेलू सौर ऊर्जा यंत्रों हेतु वित्तीय सुविधा प्रदान की गयी है। इसके अतिरिक्त भारत में कचरे से ऊर्जा बनाने की भी वृहद सम्भावनायें हैं। प्रतिवर्ष शहरीय क्षेत्रों से कुल 55 मिलियन टन ठोस कचरा एवं 38 बिलियन सीवेज का उत्सर्जन होता है। इस कचरे के प्रतिशत 1 से 1.33 प्रतिशत बढने का अनुमान है। कई कम्पानियों जैसे– ए टू जेड कम्पनी, हेनजीर एवं हिताची, जूसेन इण्डिया प्राइवेट लिमिटेड आदि कचरा प्रबन्धन एवं इससे ऊर्जा उत्पादन के कार्य में संलग्न है।

परन्तु दुर्भाग्यवश उपरोक्त संसाधनों का अत्याधिक दोहन के फलस्वरूप इनमें से कई संसाधनों का क्षय हो चुका है। इससे सम्बन्धित कुछ तथ्य इस प्रकार है–

- बढते हुए जनसंख्या दबाव एवं नगरीकरण के कारण भारत की उपजाऊ भूमि लगातार कम होती जा रही है। भारत में कुल 17051 वर्ग कि0मी0 भूमि बंजर अथवा अन्न उपजाने योग्य नहीं है। भारत में प्रतिवर्ष 2.4 प्रतिशत की दर से शहरीकरण बढ़ रहा है। इसके अतिरिक्त भूमि एवं मृदा की गुणवत्ता में भी कमी आयी है जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव उत्पादित खाद्यान्नों पर पड़ रहा है।
- भारत में प्रति व्यक्ति वन भूमि की उपलब्धता 0.08 हेक्टेयर विश्व में सर्वाधिक कम है जबकि यह उपलब्धता विश्व में 0.64 हेक्टेयर (औसत) रूप से एवं विकासशील राष्ट्रों में 0.50 हेक्टेयर है। वनों का क्षय एक अहम पर्यावरण समस्या है।

- भारतीय नदियाँ, सीवेज; औद्योगिक कचरा; धार्मिक अनुष्ठान अवशिष्ट; पेट्रोलियम, कीटनाशक व उर्वरक अवशिष्ट; मृदा अवशिष्ट इत्यादि को फेंकने के लिए प्रयुक्त होती है। जो न केवल नदियों अपितु भूमिगत जल एवं समुद्रों को भी दूषित करता है। जल में आर्सेनिक की अशुद्धि जल प्रदूषण की सबसे बड़ी हानि है।
- उद्योगों से निकलने वाली हानिकारक गैसें वायुमण्डल में हाइड्रोकार्बन, कार्बनमोनो ऑक्साइड, सल्फर डाइऑक्साइड, हाइड्रोजन सल्फाइड एवं ग्रीनहाउस गैसों की मात्रा को बढ़ा रही हैं। महानगरों में चलने वाले वाहन भी वायु प्रदूषण में लगभग 35 प्रतिशत का योगदान दे रहे हैं। भारत विश्व में कार्बनडाईऑक्साइड का तीसरा सबसे बडा उत्सर्जक है। भारत में होने वाली मृत्यु का पांचवा सबसे बडा कारण वायुप्रदूषण है। (टॉइम्स ऑफ इंडिया)
- भारतीय खनिजों पर भी प्रदूषण, विस्थापन, अत्याधिक शोषण इत्यादि का नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।
- यद्यपि भारत विश्व के सर्वाधिक जैव विविध राष्ट्रों में से एक है तथापि शिकार एवं मौसम के परिवर्तन के कारण जैव वनस्पतियों की प्रजातियों की संख्या में भारी कमी आयी है। **"इन्टरनेशनल यूनियन फॉर कनजरवेशन ऑफ नेचर"** के द्वारा प्रकाशित **रेड डाटा बुक** के अनुसार भारत में कुल 47 प्रजातियाँ संकटग्रस्त हैं। भारतीय वनस्पतियों की कई प्रजातियाँ औद्योगिक कटाई, अत्याधिक शोषण, नीची पुनरोत्पादन दर इत्यादि के कारण लुप्तप्राय हो रही हैं।
- भारतीय जलीय सीमा भी जलीय जीवों के अनावश्यक शिकार, प्रदूषण विशेषकर प्लास्टिक प्रदूषण, मौसमी परिवर्तन एवं ग्लोबल वार्मिंग के कारण समस्याग्रस्त है। अनेक जलीय जीव जैसे– गंगा डॉल्फिन, शार्क, ब्लू व्हेल, इण्डस डॉल्फिन, डुगान्ग इत्यादि का संरक्षण करना अत्यन्त आवश्यक हो गया है।
- भारत अपने अक्षय ऊर्जा स्त्रोतों का भी पूर्णतया दोहन करने में असफल रहा है। 30–31 जुलाई 2012, को उत्तर भारत के ग्रिड के फेल होने का उदाहरण भारत में अन्य वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोतों की आवश्यकता को प्रदर्शित करता है। इस प्रकरण से लगभग 700 मिलियन लोग प्रभावित हुए थे जो अमेरिका की कुल जनसंख्या का दोगुना है।
- भारत का 60 प्रतिशत भूमिगत जल वर्ष 2025 तक अत्यन्त संकटग्रस्त हो जाएगा। **(वर्ल्ड बैंक)**

यह तथ्य मात्र कुछ उदाहरण हैं, वास्तविक स्थिति तो और भी भयावह है। यद्यपि इस संदर्भ में भारत सरकार ने अनेक प्रकार के कदम उठाये हैं जैसे **'राष्ट्रीय प्राकृतिक संसाधन प्रबन्ध तंत्र'** की स्थापना सन् 1983 में; **'पर्यावरण एवं वन मंत्रालय'** की स्थापना सन् 1985 मे; **वन (संरक्षण) अधिनियम** सन् 1980 में, **जैव –विविधता (संरक्षण) अधिनियम** सन् 2002 में, **जल (संरक्षण) एवं प्रदूषण नियन्त्रण) अधिनियम**, सन् 1974 में, परन्तु इन नियमों एवं अधिनियमों के सख्ती से पालन न हो पाने की वजह से अपेक्षित परिणाम दूरगामी है। समस्त सकारात्मक एवं नकारात्मक तथ्यों के विश्लेषण के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि भारत में कोई भी प्राकृतिक संसाधन प्रबंध उपाय तब तक सफल नहीं हो सकता है जब तक निम्नलिखित क्षेत्रों में प्रयास न किए जाएं–

- भूमि संसाधन–विशेषता, प्रबंन्ध व प्रयोग नियोजन,
- जल प्रबंधन,
- मृदा स्वास्थ्य एवं न्यूट्रीयंट प्रबंन्ध,
- समस्या उत्पन्न करने वाली मृदा का प्रबंन्ध,
- मृदा व जल संरक्षण,
- खाद्यान्न विविधिकरण,
- सूखाग्रस्त क्षेत्रों एवं बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में खेती,
- कृषि व वन प्रबंध,
- अवांधनीय पौध प्रबंध,
- बंजर भूमि प्रबंध,
- अक्षय ऊर्जा स्त्रोत।

3. केस अध्ययनः भारत में प्राकृतिक संसाधन प्रबंध हेतु नाबार्ड की पहल

एक कृषि प्रधान देश होने के कारण भारत में कृषि एवं ग्रामीण विकास अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, **रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया** ने **क्राफीकार्ड (कमेटी टू रिव्यू अरेन्जमेन्ट्स फॉर इन्स्टीट्यूश्नल क्रेडिट फॉर एग्रीकल्चर एण्ड रूरल डेवलपमेन्ट)** को नियुक्त किया। इस कमेटी के सुझावों के फलस्वरूप 12 जुलाई 1982 को नाबार्ड की स्थापना की गयी। नाबार्ड का मुख्य उद्देश्य वहनीय एवं समान कृषि एवं ग्रामीण विकास करना है। भारत की लगभग 69 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में है। ग्रामीण

क्षेत्रों में प्राकृतिक संसाधनों की बाहुल्यता को ध्यान में रखते हुए नाबार्ड अनेक प्रकार की प्राकृतिक संसाधन प्रबंध कार्यक्रमों को संचालित कर रहा है, जो इस प्रकार है–

1. **इनवायरोन्मेन्टल प्रगोशनल असिस्टेन्स(डी0 पी0 ए0)**– यह कार्यक्रम सन् 1998 में पर्यावरणीय संरक्षण क्रियाओं को प्रोत्साहित करने के लिए संचालित किया गया था। यह कृषि एवं ग्रामीण क्षेत्रों में वहनीय विकास हेतु विभिन्न तकनीकियों के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

2. **ई0 पी0 ए0– न्यू इनीशिएटिव**– यह कार्यक्रम कर्नाटक के 4 जिलों में संचालित किया गया है। इसके अंतर्गत 100 कार्यक्रम सौर ऊर्जा के लिए चलाये जा रहे हैं।

3. **पोल्ट्री वेन्चर कैपिटल फण्ड(पी0 वी0 सी0 एफ0)**– डेयरी एण्ड पोल्ट्री वेन्चर कैपिटल फण्ड(पी0 वी0 सी0 एफ0) जो कि सन् 2005–06 में प्रारम्भ किया गया था, को दो अलग–अलग फण्डों में बांट दिया गया–पी0वी0सी0एफ0 और डी0वी0सी0एफ0। पी0वी0एफ0 1.04.2012 से कार्यरत अपरम्परागत राज्यों में मुर्गी पालन को प्रोत्साहित करता है। यह फण्ड मुर्गीयों के स्वास्थ्य, सफाई, उत्पादन दर, तकनीकी विकास, एवं विशिष्ट मुर्गीयों की प्रजातियों को बढ़ाने का कार्य करता है।

4. **डेयरी इन्टरप्रीन्यूअरशिप डेवलपमेन्ट स्कीम(डी0 ई0 डी0 स0)**– यह कार्यक्रम डेयरी वेन्चर कैपिटल फण्ड(डी0वी0सी0एफ0) का ही संशोधित रूप है। डी0ई0डी0स0(1.09.2010 से कार्यरत) ग्रामीण क्षेत्रों में दुग्धपालन को प्रोत्साहित करने, स्वरोजगार के अवसर बढाने, तकनीकी विकास करने, दुग्ध उत्पादन बढ़ाने इत्यादि का कार्य करता है।

5. **ट्राइबल एण्ड बॉडी डेवलपमेन्ट प्रोग्राम**– यह कार्यक्रम सन् 2004–05 से आदिवासी जनजातियों का उत्थान एवं उनको उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों के वहनीय विकास के लिए कार्य कर रहा है।

6. **बायो फ्यूल्स**– यह कार्यक्रम नाबार्ड एवं योजना आयोग द्वारा संचालित है। इसका मुख्य उद्देश्य **"जट्रोफा"** की खेती को बेकार पड़ी भूमि व वन भूमि पर करके बायो फ्यूल्स के निर्माण द्वारा रिन्यूवेबल ऊर्जा स्त्रोतों को बढ़ाना है।

7. **औषधीय, सगन्ध एवं आयुर्वेदिक पौधे (एम0ए0सी0)**– यह कार्यक्रम औषधीय, सगन्ध व आयुर्वेदिक पौधों की खेती को बढ़ाने, उत्पादकों को सही दाम दिलवाने उन्हें वित्तीय सुविधा, देने एवं राज्य स्तर पर इन पौधों के उत्पादन के प्रलेखीकरण का कार्य करता है।

8. **बांस की खेती**– यह कार्यक्रम बाँस के "वनीय दृष्टिकोण" को "कृषकीय दृष्टिकोण" में परिवर्तित करने के उद्देश्य से प्रारम्भ किया गया था यह बाँस की खेती को प्रोत्सहित करने का कार्य करता है। बाँस अनेक कार्यों जैसे– लकडी के प्रतिस्थापक, औद्योगिक वस्तुएं, निर्माण कार्य, एवं विशेषकर बायोमॉस ऊर्जा में प्रयुक्त होता है।

9. **वाटरशेड डेवलपमेन्ट प्रोग्राम(डब्ल्यू0डी0पी0)**– यह कार्यक्रम सन् 1992 में प्रारम्भ किया गया था। इसका मुख्य उद्देश्य जल संरक्षण, मृदा संरक्षण एवं अन्य प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण है।

10. **अम्रैला प्रोजेक्ट फॉर नेचुरल रिसोर्स मैनजमेन्ट(यू0पी0एन0आर0एम0)**– यह कार्यक्रम सन् 2007 में जी0आई0जेड0, जर्मनी के सहयोग से आरम्भ किया गया है। यह कार्यक्रम समाज के सबसे निचले वर्ग को प्राकृतिक संसाधनों के वहनीय व समान विकास के माध्यम से उठाने का कार्य करता है।

11. **नेचुरल प्रोजेक्ट फॉर ऑर्गेनिक फार्मिंग**– यह कार्यक्रम भारत सरकार द्वारा संचालित है एवं नाबार्ड इसके नोडल एजेन्सी की भांति कार्य करता है। जैविक खेती के महत्व को समझते हुए नाबार्ड इस सन्दर्भ में विभिन्न गोष्ठीयाँ, चर्चाएं, प्रशिक्षण केन्द्र एवं वित्तीय सुविधायें प्रदान करता है।

12. **संयुक्त वन प्रबन्ध**–इस कार्यक्रम के अन्तर्गत वनों की कटाई को रोकने के संयुक्त उपाय किए जा रहे हैं। इसके अतिरिक्त नाबार्ड रूरल इनोवेशन फण्ड के माध्यम से अनेक परियोजनाओं में विनियोग कर रहा है जो वनों के क्षय को रोकने में सक्षम है।

13. **डिस्ट्रिक्ट रूरल इन्डस्ट्रीज प्रोजेक्ट ड्रिप**– यह कार्यक्रम 1993 से 2010 तक कार्यरत था। जिस दौरान इतने ग्रामीण क्षेत्रों में अनेकानेक वहनीय रोजगार के अवसर उपलब्ध कराये।

14. **रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवलप्मेन्ट फन्ड(आर0आई0डी0एफ0)**– यह कार्यक्रम 1995–96 में आरम्भ हुआ। यह कार्यक्रम कृषि व सहायक क्रियायें (सिंचाई, मृदा संरक्षण, वन विकास, वृक्षारोपण, हॉरटीकल्चर, बीज, मत्स्यपालन, पशु पालन, कोल्ड स्टोरेज, ग्रेडिंग इत्यादि); सामाजिक क्षेत्र सेवायें (पीने का जल, शौचालय, आंगनबाडी केन्द्र व अन्य आधार भूत सेवाएं) एवं ग्रामीण सम्पर्क (सड़क एवं पुल) से सम्बन्धित कार्य करता है।

इस प्रकार, भारत के सर्वोच्च विकास संस्था के रूप में नाबार्ड देश में हरियाली व प्राकृतिक संसाधनों के वहनीय विकास के पथ पर अग्रसर है। अपने निर्माण के इन 31 वर्षो में नाबार्ड ने देश में प्राकृतिक संसाधन प्रबंध में अग्रसर भूमिका का निर्वाह किया है जो प्रशंसनीय है।

4. **भारत में प्राकृतिक संसाधन प्रबंध की समस्यायें एवं चुनौतियाँ**– भारत मे प्राकृतिक संसाधन प्रबंध की एवं चुनौतियाँ इस प्रकार हैं–

- जनसंख्या का बढ़ता दबाव (121 करोड),
- तीव्र शहरीकरण एवं औद्योगीकरण की लालसा,
- वनों की अंधाधुन्ध कटाई; एवं वन, भूमि एवं मृदा का क्षय,
- तीव्रगामी जल एवं वायु प्रदूषण,
- रिन्यूवेबल ऊर्जा स्त्रोतों का दोहन न हो पाना,
- आकस्मिक मौसमी परिवर्तन एवं वर्षा की कमी,
- पारिस्थितिकी तन्त्र में असंतुलन जो कि जैव–विविधता को प्रभावित कर रहा है,
- खनिज एवं संश्लेषणात्मक संसाधनों का अधिकाधिक खनिज शोषण,
- नियमों एवं अधिनियमों का सख्ती से पालन न होने,
- प्राकृतिक आपदाओं की बारम्बारता,
- समाज एवं कम्यूनिटी आधारित संस्थाओं का एन0आर0एम0 में कम योगदान,
- स्थानीय व्यक्तियों एवं कृषकों की संस्थाओं का निर्णयन एवं तकनीकी सृजन के कार्यों में कम योगदान,
- संरक्षण सम्बन्धी उपकरणों की ऊँची कीमत,
- स्थानीय व्यक्तियों के हितों की संरक्षक संस्थाओं का अभाव,
- महिलाओं की शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रशिक्षण सेवाएँ, सारव, फार्म तकनीकी इत्यादि में कम पहुँच,
- ईको–फ्रेन्डली तकनीकियों का ग्रामीण क्षेत्रों में कम प्रचार प्रसार,
- फार्म तकनीकियों एवं पशुधन संरक्षण में सीमित सुधार,
- कृषि के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में सीमित अथवा किसी सम्भावना का न होना,

नाबार्ड एक संस्था के अक्षय रूप में अपने लाभों को ग्रामीण क्षेत्रों के अनवरत अक्षय विकास में लगाते हैं। भारत सरकार एवं आर0बी0आई0 को नाबार्ड के कोषों मे वृद्धि करके नाबार्ड के विभिन्न कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करना चाहिए। नाबार्ड शहरी क्षेत्रों के कोषों के आधिक्य को ग्रामीण क्षेत्रों में लगाकर ग्रामीण विकास करके इन समस्याओं को दूर करने में प्रयासरत है।

5. **उपाय**

उपरोक्त समस्त समस्यायें एवं चुनौतियों केन्द्र सरकार , राज्य सरकार, कम्यूनिटी–आधारित संस्थायें, एन0 जी0 ओ0 एवं विभिन्न विकास संस्थाओं जैसे–नाबार्ड के संयुक्त प्रयासों के द्वारा ही हल की जा सकती है। इस संदर्भ में कुछ उपाय इस प्रकार हैं:–

- मृदा–क्षय को रोकना, बहुमूल्य खनिजों का संरक्षण, खेती में जैविक पदार्थों का प्रयोग, भूमिगत जल को बढ़ाना, एवं वन–क्षेत्र को बढाना।
- नदियों में कचरा डालने पर रोक एवं वर्षाजल संरक्षण।
- नदियों को आपस में इस प्रकार जोड़ना कि बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों के आधिक्य जल का प्रयोग सूखा ग्रस्त क्षेत्रों मे किया जा सके।
- जैव विविधता के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय पार्कों एवं वन्य जीव अभ्यारण्यों की स्थापना करना।
- उद्योगों के हानिकारक गैसों के उत्सर्जन का सख्त प्रमाणीकरण।
- कचरे के प्रबंन्ध में तीन आर का प्रयोग– रीड्यूस, रीसाईकिल और रीयूज,
- प्लास्टिक के स्थान पर ईको–फ्रेन्डली वस्तुओं का प्रयोग
- बेकार पड़ी भूमि पर जट्रोंफा, बाँस, यूकेलिप्टस इत्यादि कि खेती करना। इन पेड़ो का प्रयोग बायोमॉस ऊर्जा हेतु किया जा सकता है।
- स्थानीय व्यक्तियों के शक्तिशाली संगठन
- एन0 आर0एम0 से लाभान्वित व्यक्तियों का समूह
- महिलाओं का सशक्तिकरण

- पर्यावरणीय नियमों का सख्ती से पालन
- एन0आर0एम0 तकनीकियों के विकास का प्रलेखीकरण
- स्थानीय, राज्यीय, एवं राष्ट्रीय संस्थाओं को शक्तिशाली बनाने हेतु एन0आर0एम0 का अच्छा गवर्नेन्स
- एन0आर0एम तकनीकियों की सफलता मापने हेतु विश्वसनीय सूचक।

अनेक एन0आर0एम0 तकनीकियों का प्रयोग सूक्ष्म स्तर पर होता है परन्तु इसे मापक स्तर पर प्रयुक्त कर चुनौतियों का सामना किया जा सकता है।

6. निष्कर्ष

''प्राकृतिक संसाधन किसी क्रिसमस ट्री पर लगे सीमित उपहार नहीं है। प्रकृति प्रदत्त है, परन्तु संसाधन सृजित किए जाते हैं।''

–एलेक्स टेबेरॉक

प्राकृतिक संसाधनों का वहनीय प्रबंन्ध, किसी भी राष्ट्र के विकास एवं दीर्घकालिक वहनीयता के लिए अत्यन्त आवश्यक है। आज हमारा देश भूमि क्षय, वन क्षय, भूमिगत जल का घटता स्तर प्रदूषण, असंतुलित जैव–विविधता, खाद्यान्नों में अशुद्धि एवं पर्यावर्णीय प्रदूषण जैसी विभीषण समस्याओं से घिरा हुआ है। राज्य सरकार को इस सम्बन्ध में तत्कालिक कार्यवाहक योजना बनानी चाहिए। किसी भी संरक्षक तकनीकी का परिणाम शीघ्र नहीं मिलता है। इसके लिए समस्त संसाधनों का गूढ़ ज्ञान एवं समग्र दृष्टिकोण (पारिस्थितिकी, सामाजिक एवं आर्थिक) का होना आवश्यक है। समय की मांग है कि समस्त व्यक्ति अपने ग्रह एवं पर्यावरण को संरक्षित रखने के अपने उत्तरदायित्व को समझे। एन0आर0एम0 का उद्देश्य विभिन्न संस्थाओं एवं लाभान्वित होने वाले व्यक्तियों के सहयोग से ही पूर्ण हो सकता है।

सन्दर्भ

1. भारत सरकार(2007–2012), "रिपोर्ट ऑफ वर्किंग ग्रुप ऑन नेचुरल रिसोर्स मैनेजमेन्ट", ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना, खण्ड–1, सिन्थेसिस, मु0पृ0 6–26।
2. नेमना, विवेकानन्द(अक्टूबर 16, 2012) "इण्डिया प्लेजस् मिलियन्स फॉर ग्लोबल बायोडाइवरसिटी", एन0 वाई0 टॉइम्स।
3. सिन्हा, कौन्तेय(मार्च 26, 2014) "ऐयर पौल्यूशन बिगेस्ट हेल्थ रिस्क", सेज् डब्ल्यू0 एच0 ओ0, द टॉइम्स ऑफ इण्डिया।
4. स्टडी ऑफ वर्ल्ड बैंक(अप्रैल, 2000) "नेचुरल रिसोर्स मैनेजमेन्ट", वर्ल्ड बैंक ऑरगेनाइजेशन, मु0पृ0 4–15।
5. वार्षिक रिर्पोट– विभिन्न अंक, नाबार्ड।
6. नाबार्ड(दिसम्बर 2001) "स्टडी रिर्पोट ऑन वॉटरशेड डेवलपमेन्ट", कल्पतरु फाउंडेशन मु0पृ0 10–15।
7. गेरा, आर0 के0; रॉय, एच0; परवेज, यूनुस एवं सोनी, हिमांशु(2013) "रिन्यूवेबल एनर्जी सीनेरियो इन इण्डियाः ओपोरच्यूनिटी एण्ड चैलेन्जेस", इण्डियन जर्नल ऑफ इलेक्ट्रिकल एण्ड बायोमेडिकल इंजीनियरिंग, खण्ड 1, अंक 1, मु0पृ0 10–16।
8. देसाई, संजय; निगम, जय (2009) "इन्टीग्रेटिंग द इन्वायरोनमेन्ट इन फाइनेन्सिंग वॉटर रिसोर्स प्रोजेक्ट्स" टेक्निकल डाइजेस्ट, नाबार्ड, अंक 12, मु0पृ0 4–8।
9. "सर्कुलर ऑफ नाबार्ड ऑन "स्कीम फॉर इंस्टालेशन ऑफ सोलर एनर्जी", रेफरेन्स नं0–एनबी.डीपीडी–एनएफएस/1518/सोलर–एनर्जी–मिस/2008–09, 8 सितम्बर, 2008।
10. सेल्वराज, पी0(2011) "फिशिंग द फिशरीज सेक्टर फॉर फ्यूचर", टेक्निकल डाइजेस्ट, नाबार्ड, अंक 13, मु0पृ0 25–28।

मगध क्षेत्र में फैबेसियस पौधों में एल्केल्वॉइड्स का अध्ययन

नन्दजी कुमार[1], विकास कुमार प्रभात[2]
[1]प्रोफेसर, [2]शोध छात्र, स्नातकोत्तर वनस्पति विज्ञान विभाग
मगध विश्वविद्यालय, बोध गया, गया–824234, बिहार, भारत
kumarnandjee@rediffmail.com, kumarnandjee@gmail.com

सार

वर्तमान शोध पत्र मगध क्षेत्र के फैबेसियस पौधों के जड़ निचोड़ से एल्केल्वाइड्स अलग करने के बारे में है। एल्केल्वाइड्स बुनियादी पौधों की उपज है। फारमेकोलॉजी की दृष्टिकोण से पाँच फैबेसियस पौधों शालपर्णी, जंगली मेथी, जंगली नील, वांकुची एवं सार्फुन्का के एल्केल्वाइड्स का उपयोग निम्न रोग जैसे– पाइल्स, सिफलिस, गोनोरिया, यूरिन फ्लो ऋतुश्राव में तकलीफ, किडनी में गड़बड़ी इत्यादि रोगों के निदान में सहायक होती है। ह्वाटमैन पेपर नं0–1 पर अवरोही पेपर क्रोमैटोग्राफी तथा तीन मिश्रण का उपयोग किया गया। जो कि– एन ब्यूटाइल एसीटेट–एसीटिक एसिड/एन ब्यूटेनॉल–जल (85: 40/15: 22, मिश्रण–1), एन ब्यूटेनॉल–एसिटिक एसिड–जल(4: 1: 2, मिश्रण–2) तथा इथेनॉल–अमोनिया(4:1, मिश्रण–3) है। परिणामस्वरूप शालपर्णी में सात एल्केल्वाइड्स–बीटा फिनॉयल थायलामीन, एन–डाईमिथाइल ट्रिप्टामीन, एनबी ऑक्साइड, एन–मिथाइल टेरामीन, होरडानीन, हाइपाफोरीन एवं कैन्डीसीन पाया गया। जंगली मेथी में पाँच बीटा–फीनाइल थाइलामाइन, एन–डाईमिथाइल ट्रिप्टामीन, एनबी ऑक्साइड, होरडानिन एवं कैन्डासीन पाया गया। जंगली नील में चार एल्केल्वाइड्स, एन डाई मिथाइल ट्रिप्टामीन, एनबी ऑक्साइड, होरडानिन एवं कैन्डीसीन पाया गया। वाकुंची में पाँच एल्केल्वाइड्स, एन–डाईमिथाइल ट्रिप्टामीन, एनबी ऑक्साइड, एन–मिथाइल टेरामीन, होरडानिन एवं हेपाफेरिन पाया गया। सार्फुन्का में पाँच एल्केल्वाइड्स, एन डाईमिथाइल ट्रिप्टामाइन, एन वी0 ऑक्साइड, एन मिथाइल टेरामाइन, होरडानिन एवं हाइपाफोरिन पाया गया।

बीज शब्द– शालपर्णी, जंगली मेथी, जंगली नील, वांकुची, सार्फुन्का, एन–ब्यूटाइल एसीटेट, एन–ब्यूटेनॉल, एसिटिक एसिड, अमोनिया, इथेनॉल।

Study of Alkaloids in Fabaceous Plants of Magadh Region

Vikas Kumar Prabhat and Nandjee Kumar
P.G. Department of Botany
Magadh University, Bodh Gaya, Gaya-824234, Bihar, India
kumarnandjee@rediffmail.com, kumarnandjee@gmail.com

Abstract

The present paper deals with the study of alkaloids in Fabaceous plants in Magadh Region. Alkaloids are basic nitrogenous plant products possessing nitrogen heterocyclic as their structural units with a pronounced physiological action. From the pharmacological point of view the alkaloids of five Fabaceous plant species i.e. *Desmodium gangeticum(L) DC., Melilotus alba(L), Indegofera linifobia Retz, Psoralea corylifobia* and *Tephrosia purpurea(L) pers* may be useful for different diseases like piles, syphilis, gonorrohea, urine flow, menstruation trouble and kidney disorder. Descending paper chromatography on Whatman paper no. 1 and three solvent system were used viz. n-butyl acetate, acetic acid, n-butanol,

water(85: 40: 15: 22, solvent-1), n-butanol, acetic acid, water(4:1:2, solvent-2) and ethanol, ammonia(4:1, solvent-3). Our results revealed that seven alkaloids viz., β-phenyl thylamine, N-dimethyl tryptamine, Nb-oxide, N-methyl teramine, Hordanine, Hypaphorine and Candicine were detected in Desmodium gangeticum(L) DC. Five alkaloids, β-phenyl thylamine, n-dimethyl tryptamine, Nb-oxide, Hordanine and Candacine have been reported in Melilotus alba(L). Four alkaloids, n-dimethyl tryptamine, Nb-oxide, Hordanine and Candicine have been reported in Ingegofera linifobia Retz. Five alkaloids, n-dimethyl tryptamine, Nb-oxide, N-methyl teramine, Hordanine and Hypaphorine have been reported in Psoralea corylifobia. Five alkaloids, n-dimethyl tryptamine, Nb-oxide, N-methyl teramine, Hordanine and Hypaphorine have been reported in Tephrosia purpurea(L) pers.

Key words- *Desmodium gangeticum(L) DC*, *Melilotus alba(L)*, *Indegofera linifobia Retz*, *Psoralea corylifobia*, *Tephrosia Purpurea(L) Pers*, n-butyl acetate, n-butanol, acetic acid, ammonia, ethanol.

1. प्रस्तावना

फैबेसी परिवार का कृषि एवं फारमेकोलॉजी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान है इसे दलहनी परिवार के रूप में जाना जाता है। इस परिवार में बहुत सारे पौधे हैं जो रोग निदान में काम आते हैं। इस परिवार के पौधे स्थल, पठार एवं पहाड़ सभी जगहों पर पाये जाते हैं। अर्थव्यवस्था के दृष्टिकोण से इस परिवार के पौधे प्रोटीन, दवा, टिम्बर तथा मैन्यूर के प्रमुख स्रोत हैं। मगध क्षेत्र के ब्रह्मजोनी हिल्स एवं स्थलीय क्षेत्रों में फैबेसी के पाँच पौधे शालपर्णी, जंगली मेथी, वांकुची, जंगली नील एवं सार्फुन्का के जड़ों में एल्केल्वाइड्स का अध्ययन किया गया। ये एल्केल्वाइड्स नाइट्रोजीनस प्लान्ट उत्पाद हैं जो अनेक रोगों के निदान में सहायक होते हैं जैसे– पाइल्स, सिफलीस, गानोरिया, यूरिन फ्लो, ऋतुश्राव में दिक्कत इत्यादि।

2. सामग्री एवं विधि

2.1. सूखे जड़ चूर्ण को इथेनॉल में 10% एसिटिक एसिड के साथ चार घंटे तक रखा गया उसके बाद हाइड्रॉक्सिल एमीन (NH_2OH) को ड्रॉप द्वारा निचोड़कर मिश्रण में मिलाया गया। इसके बाद 1% अमोनियम हाइड्रॉक्साइड (NH_4OH) में साफ कर क्लोरोफॉर्म में मिलाया गया।

2.2. एल्केल्वाइड्स को क्रोमेटोग्राफिक विधि द्वारा वॉटमैन पेपर नं0–1 के उपयोग से अलग किया गया। इसमें तीन मिश्रण हैं–

1. एन–ब्यूटाइल ऐसीटेट–ऐसिटिक एसिड/एन ब्यूटेनॉल–जल(85: 40/15: 22)	मिश्रण–1
2. एन ब्यूटेनॉल–ऐसिटिक एसिड–जल(4: 1: 2)	मिश्रण–2
3. इथेनॉल–अमोनिया(4:1)	मिश्रण–3

2.3. स्प्रे अभिकर्मक(ड्रेगेन्ड्रॉफ, इडियोपलेटिनेट एवं मारक्युस की सहायता से) एल्केल्वाइड्स को अलग किया गया एवं क्रोमेटोग्राम्स पर उभरे हुए खास रंग द्वारा एल्केल्वाइड्स को पहचाना गया।

3. परिणाम एवं विवेचना

फैबेसी परिवार के पाँच पौधे शालपर्णी, जंगली मेथी, वांकुची, जंगली नील एवं सार्फुन्का में स्प्रे अभिकर्मक की सहायता से एल्केल्वाइड्स को अलग किया गया जिसमें शालपर्णी में सात एल्केल्वाइड्स, बीटा फिनायल थाइलामाइन, एन डाईमिथाइल ट्रिप्टामीन, एनबी ऑक्साइड, एन–मिथाइल टेरामीन, होरडानिन, हेपाफोरिन, हाइपाफोरीन एवं कैन्डीसिन पाया गया। जंगली मेथी में बीटा–फिनायल थाइलामाइन, एन–डाईमिथाइल ट्रिप्टामाइन, एनबी ऑक्साइड, होरडानीन एवं कैन्डीसिन पाया गया। जंगली नील में चार एल्केल्वाइड्स, एन डाईमिथाइल ट्रिप्टामाइन, एनबी ऑक्साइड, होरडानीन एवं कैन्डीसिन पाया गया वांकुची में पाँच एल्केल्वाइड्स, एन–डाईमिथाइल ट्रिप्टामाइन, एनबी ऑक्साइड, एन–मिथाइल टेरामाइन, होरडानिन एवं हेपाफोरिन पाये गये। सार्फुन्का में पाँच एल्केल्वाइड्स, एन–डाईमिथाइल ट्रिप्टामाइन, एनबी ऑक्साइड, एन–मिथाइल टेरामीन, होरडानिन एवं हेपाफोरिन पाये गये। सुविधा की दृष्टि से इस विश्लेषण को सूची 1 व 2 में क्रमबद्ध किया गया है।

4. निष्कर्ष

उपलब्ध परिणाम एवं आंकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि शालपर्णी में कुल सात प्रकार के एल्केल्वाइड्स तथा जंगली मेथी में सिर्फ चार प्रकार के एल्केल्वाइड्स मिले तथा शेष पौधों में पाँच–पाँच एल्केल्वाइड्स उपस्थित मिले। स्पष्टतः शालपर्णी में औषधीय गुण भरपूर है जिसका व्यवहार दशमुलारिष्ट के निर्माण में भी होता है। जंगली मेथी का उपयोग डायबिटीज की दवा के रूप में किया जाता है।

सूची–1

फैबेसियस पौधे में एल्केल्वाइड्स का अवलोकन

	पौधे का नाम	एल्केल्वाइड्स							
	शालपर्णी (*डेस्मोडियम गेंजेटिकम*)	बीटा फिनायल थाइलामाइन	एन–डाईमिथाइल ट्रिप्टामाइन	एनबी ऑक्साइड	एन–मिथाइल टेरामाइन	होरडानीन	हाइपाफोरीन	कैन्डीसीन	कुल संख्या
		+	+	+	+	+	+	+	07
	जंगली मेथी (*मेलिलोटस अल्बा*)	+	+	+	–	+	–	+	05
	जंगली नील (*इन्डिगोफेरा लिनीफोलिया*)	–	+	+	–	+	–	+	04
	वांकुची (*सोरेलिया कॉरिलिफोलिया*)	–	+	+	+	+	+	–	05
	सार्फुन्का (*टेफरोसिया परपुरिया*)	–	+	+	+	+	+	–	05

नोट– यहाँ + चिन्ह उपस्थित एवं – चिन्ह अनुपस्थिति को दर्शाता है।

सूची–2

फैबेसियस पौधे के जड़ निचोड़ में एल्केल्वाइड्स का अवलोकन

क्र0सं0	नमूने का वजन	मिश्रण नं0	पीएच स्तर	रंग	एल्केल्वाइड्स
1.	0.28	1	04	हल्का भूरा	बीटा फिनायल थाइलामीन
2.	0.12	2	04	गहरा भूरा	एन डाईमिथाइल ट्रिप्टामाइन
3.	0.15	3	04	भूरा	एन बी ऑक्साइड
4.	0.95	2	04	पीला	एन मिथाइल टेरामाइन
5.	0.55	1	07	सन्तरा	होरडानीन
6.	0.55	2	08	हल्का गुलाबी	हेपाफोरीन
7.	0.55	1	09	गुलाबी	कैन्डीसीन

संदर्भ

1. घोसाल, एस0(1972) "एल्केल्वाइड्स ऑफ *डेसमोडियम गैंजेटिकम(एल) डीसी*", प्लान्ट मेडिका, खण्ड 23, अंक 4, मु0पृ0 321–329।
2. घोसाल, एस0 एवं भट्टाचार्य, पी0 के0(1968) "इण्डोल एल्केल्वाइड्स ऑफ डेस्मोडियम गैंगेटिकम(एल) डीसी", इण्डियन जर्नल ऑफ फॉर्म0, खण्ड 30, पृ0 280।
3. प्रभात, वी0 के0 एवं कुमार, नन्दजी(2011) "स्टडीज ऑफ एल्केल्वाइड्स ऑफ सह एक्स्ट्रेक्ट ऑफ *टेफ्रोसिया परपुरिया(एल) परस*", बायोल0 रेस0, खण्ड 29, अंक 1, मु0पृ0 103–105।
4. प्रभात, वी0 के0 एवं कुमार, नन्दजी(2011) "एस्टीमेशन ऑफ एल्केल्वाइड्स इन *मेलिलोटस अल्बा(एल)* एवं *इन्डिगो फैरा लिनीफोलिया रिट्ज*(फैबेसी) परोस्पेक्टीम इन साइटोलॉजी एवं जेनेटिक्स", खण्ड 15, मु0पृ0 284–291।
5. प्रभात, वी0 के0 एवं कुमार, नन्दजी(2014) "ए कम्पेरेटिव स्टडी ऑफ *टेफ्रोसिया परपुरिया(एल) परस* एवं *इन्डिगोफेरा लिनीफोलिया रिट्ज*", एनाल्स ऑफ प्लान्ट साइंस में प्रकाशनार्थ स्वीकृत, 20 अगस्त, 2013।

डाईइलेक्ट्रिक पदार्थ में अल्ट्रासोनिक क्षय

अरविन्द कुमार तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर, भौतिक विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
tiwariarvind1@rediffmail.com

सार

इस शोध पत्र में फोनान–फोनान पारस्परिक प्रभाव के कारण AgBr में अल्ट्रासोनिक क्षय को ताप के फलन के रूप में < 100 > दिशा में 100–450 केल्विन के बीच पदार्थ के चित्रण/वर्णन हेतु समझाने का प्रयास किया गया है। इस आंकलन हेतु दो मूलभूत प्राचलों से शुरुआत करते हुए ताप निर्भर द्वितीय एवं तृतीय तन्य नियतांकों (इलास्टिक कॉन्स्टेंट) की भी गणना की गई है। महत्वपूर्ण विशेष लक्षणों, जो कि अकॉस्टिकल प्राचलों से सम्बन्धित है, की भी चर्चा की गई है।

बीज शब्द– फोनान–फोनान पारस्परिक प्रभाव, डाईइलेक्ट्रिक पदार्थ, अल्ट्रासोनिक क्षय।

Ultrasonic attenuation in dielectric material

Arvind Kumar Tiwari
Assistant Professor, Department of Physics
B.S.N.V. P. G. College, Lucknow-226001, U.P., India
tiwariarvind1@rediffmail.com

Abstract

In the present paper, an attempt has been made to explain ultrasonic attenuation due to phonon-phonon interaction in AgBr as a function of temperature along <100> direction from 100-450K for the characterization of material. For this evaluation, the temperature dependence of second and third order elastic constants starting with two basic parameters has been computed. Important characteristic features well connected to the acoustical parameters are discussed.

Key words- phonon-phonon interaction effect, dielectric material, ultrasonic attenuation.

1. प्रस्तावना

यह सर्वविदित है कि अल्ट्रासोनिक्स का उद्योगों एवं चिकित्सा उपकरणों में बहुत उपयोग है। अल्ट्रासोनिक वेग एवं क्षय प्राचल पदार्थों के सूक्ष्म संरचनात्मक एवं यांत्रिक गुणों से भलीभाँति जुड़े हुए हैं। ठोस पदार्थों में अल्ट्रासोनिक क्षय के अनेकों कारण होते हैं, लेकिन 100 केल्विन या उससे उच्च ताप पर क्षय मुख्यतः फोनान–फोनान पारस्परिक प्रभाव के कारण होता है। सिल्वर ब्रोमाइड एक सौम्य क्रिस्टल है। यह जल में अघुलनशील है। यह यू.वी. विकिरण पड़ने पर काला हो जाता है। सिल्वर ब्रोमाइड फोटोग्राफी, दर्पण एवं दन्त चिकित्सा में बहुत प्रयोग किया जाता है। अल्ट्रासोनिक अवशोषण की गणना में द्वितीय एवं तृतीय अनुक्रम के तन्य नियतांकों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अन्तर आणविक विभव, अवस्था का समीकरण डिवॉय ताप, ध्वनि वेग इत्यादि तन्य गुणों से सम्बन्धित हैं। विभिन्न तापों पर द्वितीय एवं तृतीय तन्य नियतांकों की गणना भी की गई है।

2. **विधि**

एखीजर हानि निम्न समीकरण से प्राप्त की जाती है–

$$\left(\frac{\alpha}{f^2}\right)_{Akh.} = \frac{4\pi^2 \tau E_0 \left(\frac{D}{3}\right)}{2\rho V^3}$$

जहाँ E_0 – तापीय ऊर्जा, V–डिवॉय औसत वेग, ρ– घनत्व, D–असंनादी प्राचल तथा τ–तापीय स्थिर समय है।

सिल्वर ब्रोमाइड के द्वितीय एवं तृतीय अनुक्रम के तन्य नियतांकों का गणना किया हुआ मान तालिका 1 में दर्शाया गया है। प्रयोगों द्वारा सिल्वर ब्रोमाइड के द्वितीय एवं तृतीय अनुक्रम के तन्य नियतांकों का मान निम्नवत है–

$C_{11} = 5.63$ Pa, $C_{12} = 3.28$ Pa, $C_{44} = 0.73$Pa

गणना द्वारा ये मान इस प्रकार प्राप्त हुए।

$C_{11} = 5.01$ Pa, $C_{12} = 1.13$ Pa, $C_{44} = 1.36$ Pa

प्रयोगों तथा गणना द्वारा प्राप्त मानों में अच्छा साम्य है।

तालिका–1(10^{11} डाइन/सेमी^{2} में)

ताप→ (केल्विन में) SOEC/TOEC↓	100	200	300	400	450
C_{11}	4.692	4.851	5.019	5.191	5.277
C_{12}	1.273	1.199	1.126	1.052	1.015
C_{44}	1.353	1.359	1.364	1.370	1.373
C_{111}	−7.544	−7.618	−7.701	−7.788	−7.832
C_{112}	−5.209	−4.930	−4.651	−4.371	−4.232
C_{123}	1.812	1.379	9.482	5.164	3.006
C_{144}	2.261	2.278	2.296	2.313	2.322
C_{166}	−5.517	−5.539	−5.564	−5.589	−5.602
C_{456}	2.243	2.243	2.243	2.243	2.243

तालिका–2(10^{-13} एन.पी.एस.^{2}/सेमी. में)

पदार्थ	ताप(केल्विन में)	$(\alpha/f^2)_{th}$	$(\alpha/f^2)_{AkhJong}$	$(\alpha/f^2)_{Akh.shear}$
AgBr	100	0.017	3.805	0.874
	200	0.013	4.030	0.999
	300	0.014	4.070	1.108
	400	0.013	4.783	1.400
	450	0.012	4.865	1.479

3. परिणाम

तालिका–2 से यह स्पष्ट है कि सिल्वर ब्रोमाइड में तापीय तन्य हानि (थर्मोइलास्टिक लॉस) फोनॉन श्यानता हानि (फोनॉन विस्कॉसिटी लॉस) की तुलना में नगण्य है। यह तापीय चालकता के कम मान की वजह से है। तालिका–2 से स्पष्ट है कि तापीय तन्य हानि ताप के साथ धीरे–धीरे घटता है। इसके पीछे तापीय चालकता के मान का ताप वृद्धि के सापेक्ष लगभग नियत रहता है।

4. निष्कर्ष

अल्ट्रासोनिक अवशोषण गुणांक आवृत्ति वर्ग पर, $(\alpha/f^2)_{एवी.}$, ताप बढ़ने के साथ बढ़ा है। ये बदलाव इस पदार्थ में तन्य नियतांकों के बदलाव पर निर्भर है। इस पदार्थ में हानि का क्रम अन्य पदार्थों जैसे पोटेशियम क्लोराइड, पोटेशियम ब्रोमाइड जैसा ही है($\approx 10^{-18}$ एन. पी.एस.^{2}/सेमी.)। यह हमारी सही गणना की पुष्टि भी करता है। इस प्रकार यह अध्ययन पदार्थ के औद्योगिक निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

संदर्भ

1. मेसान, डब्ल्यू0 पी0(1951) "पिजोइलेक्ट्रिक क्रिस्टल्स एण्ड देयर एप्लीकेशन्स टू अल्ट्रासोनिक्स", प्रिन्सटन: डी0 वान नारटलैण्ड, मु0पृ0 479–481।
2. मोरी, एस0 एवं हिकी, वाई0(1978) "कैलकुलेशन ऑफ थर्ड एण्ड फोर्थ ऑर्डर इलास्टिक कॉन्स्टेन्ट्स इन एल्कली हैलाइड्स", ज0 फिजि0 सोसा0 जापान, खण्ड 45, मु0पृ0 1449–1456।
3. एखीजर, ए0(1939) "ऑन द एब्जॉर्पशन ऑफ साउण्ड इन सॉलिड्स", ज0 फिजिक्स, यू0एस0एस0आर0, खण्ड 1, मु0पृ0 277।
4. गाल्ट, जे0 के0(1948) "मिकैनिकल प्रॉपर्टीज ऑफ NaCl, KBr, KCl", फिजिक्स रिव्यू, खण्ड 73, मु0पृ0 1460–1462।
5. हैन्सन, आर0 सी0(1967) "अटैन्यूएशन ऑफ हाई फ्रीक्वेंसी इलास्टिक वेव्स इन LiF", ज0 फिजिक्स, खण्ड 28, मु0पृ0 475–483।

रासायनिक प्रमात्रा गणनाओं की सहायता से जेनेस्टिन की आण्विक संरचना का इष्टमीकरण

राम कुमार तिवारी
असिस्टेंट प्रोफेसर, भौतिक विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, चारबाग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
rktshri@yahoo.co.in

सार

जेनेस्टिन(सी15एच1005) महत्वपूर्ण सोया उत्पादों में एक है जो एण्टीनियोप्लासिक सक्रियता के साथ आइसोफ्लेवोन तथा फाइटोएस्ट्रोजेन की श्रेणी में आता है। यह प्रोटिन– टायोसिन किनासे को बाँधता है जिससे संकेतों का प्रवाह बाधित न हो और कोशिका अन्तर उत्प्रेरित हो सके। इसमें टोपोआइसोमेरेज–2 का गुण होता है जो डी0एन0ए0 विखंडन को प्रभावित करता है और जी2/एम कोशिकीय चक्र को रोकता है। जेनेस्टिन में एण्टीऑक्सीडेंट, एण्टीएंजियोजेनिक एवं इम्यूनोसप्रेसिव के गुण होने के कारण इसे **चमत्कारिक औषधि** के रूप में जाना जाता है जिसकी कैंसर जैसे असाध्य रोगों के उपचार में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका है। जेनेस्टिन की आंतरिक संरचना को डेंसिटी फंक्शनल थ्योरी के डीएफटी/बी3एलवाईपी मॉडल पर 6–311++जी(डी, पी) बेसिस सेट द्वारा प्राप्त करने का प्रयास है।

बीज शब्द– जेनेस्टिन, रमन आई.आर. एण्ड यू.वी. स्पेक्ट्रा, डी.एफ.टी. गणना।

Molecular structure optimization of Genistein by quantum chemical calculations

Ram Kumar Tiwari
Assistant Professor, Department of Physics
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow-226001, U.P., India
rktshri@yahoo.co.in

Abstract

Genistein($C_{15}H_{10}O_5$), an important soy product is an isoflavone and phytoestrogen with antineoplastic activity. Genistein binds to and inhibits protein-tyrosine kinase, thereby disrupting signal transduction and inducing cell differentiation. This agent also inhibits topoisomerase-II, leading to DNA fragmentation and apoptosis, and induces G2/M cell cycle arrest. Genistein exhibits antioxidant, antiangiogenic, and immunosuppressive activities. It has been hailed as a 'wonder drug' for halting the spread of cancer (particularly breast and prostate cancer) and found to be useful in keeping skin youthful.The optimized geometry of Genistein has been determined by using density functional theory (DFT/B3LYP) method with 6-311++G(d,p) basis sets.

Keywords: Genistein, Raman, IR and UV spectra, DFT calculation

1. प्रस्तावना

जेनेस्टिन(4,5,7–ट्राईहाइड्रॉक्सीसॉफ्लेवॉन 5,7–डाईहाइड्रॉक्सी–3–(4–हाइड्रॉक्सीफिनायल)–4एच–1–बेंजोपायरान–4–वन) एक प्राकृतिक उत्पाद है जो कई बिमारियों खास कर कैंसर के उपचार में प्रभावी भूमिका होने के कारण शोध का विषय रहा है। जेनेस्टिन अनेकों ज्ञात आइसोफ्लेवोन्स में से एक है। आइसोफ्लेवोन्स कार्बनिक यौगिकों का वह वर्ग है जो स्वाभाविक रूप से जैविक रूप से सक्रिय होते हैं। जेनेस्टिन अनेक प्रकार के पादपों से प्राप्त किया जाता है जिनमें फावा बिन्स, सोया, कुडजु, पसोरालिया इत्यादि प्रमुख हैं[1–2]। यह अनेक औषधिय पौधों यथा फ्लेमिंगिया वेस्टिटा, मैक्रोफायला एवं कॉफी में भी पाया जाता है[3–5]।

जेनेस्टिन में एण्टीऑक्सीडेंट, एण्टीएंजियोजेनिक एवं इम्यूनोसप्रेसिव के गुण पाये जाते हैं। कोशिका विभाजन एवं कोशिका अस्तित्व को नियंत्रित करने वाले कारकों को प्रभावित करने वाले गुणों के कारण जेनेस्टिन को अनियंत्रित कैंसर की रोकथाम के रूप में पहचाना गया है[11–12]। विभिन्न अध्ययनों से पता चला है कि जेनेस्टिन की सूक्ष्म मात्रा अनेक प्रकार के कैंसर जैसे प्रोस्टेट, ग्रीवा, स्थन, मस्तिष्क, पेट आदि पर अत्यंत ही प्रभावकारी है[6–11]। यह भी पता चला है कि यह शरीर के कैंसर प्रभावित कोशिकाओं को रेडियो थैरेपी के समय संवेदनशील बना देती है। अध्ययनों का निष्कर्ष यह भी है कि कुछ एण्टी लुकेमिक दवाईयों के साथ जेनेस्टिन के उपयोग करने पर इन दवाईयों की प्रभाव क्षमता बढ जाती है[9]। जेनेस्टिन, एस्ट्रोजेन की भांति कार्य करने के कारण जीवों में यह स्त्रीत्व के गुणों को विकसित होने में मदद करता है एवं पुरूष उत्पादकता को प्रभावित करता है[13]।

जेनेस्टिन के रमन या आई–आर स्पेक्टा की क्वांटम रसायन गणना (केमिकल कैलकुलेशन) का अध्ययन ज्ञात नहीं है जिस कारण इसका अध्ययन आवश्यक है।

2. प्रायोगिक विवरण

जेनेस्टिन का इन्फ्रारेड स्पेक्टा बुकर टेंसर 27 एफटी आईआर पर 4सीएम$^{-1}$ स्पेक्टल रेजुलेशन पर 400–4000 सीएम$^{-1}$ रेंज में रिकार्ड किया गया। सैंपल हेतु पोटेशियम ब्रोमाइड एवं सैंपल को 100:1 भाग में मिलाकर ठोस अवस्था को प्राप्त किया जाता है। बेस लाईन करेक्शन के लिए ओपीयूएस सॉफ्टवेयर का प्रयोग होता है। एफटी रमन स्पेक्टा को बुकर आईएफएस एसएस ईक्यूयूआईएनओएक्स पर 20–3400 सीएम$^{-1}$ रेंज में रिकार्ड किया गया। सैंपल को अर्धवृत्ताकार गोलीय एल्यूमिनियम धातु के बर्तन में मापन हेतु रखा गया। 500 मा0 वाट लेजर शक्ति द्वारा 512 स्कैन प्राप्त किया गया।

3. अभिकलनात्मक विवरण

अणु के इलेक्ट्रॉनिक संरचना एवं आप्टिमाईज्ड आकार को डीएफटी विधि से गॉसियन 09 साफ्टवेयर[14] की सहायता से कम्प्यूट किया गया। इसमें बेसीस सेट 6–311++जी(डी,पी) का प्रयोग किया गया और बेक्स प्राचल निदेशांकों को ली–यांग–पार(बी3एलवायपी)[15–17] की फंक्शनल थ्योरी के साथ प्रयोग किया गया। बेसिस सेट6–311++जी(डी,पी) में भारी अणुओं पर डी पोलराइजेशन फंक्शन एवं हाइडोजन अणुओं पर डी पोलराइजेशन फंक्शन को डिफ्यूज फंक्शन के रूप में प्रयोग किया गया है[18–19]।

4. संरचना का इष्टमीकरण

एक्स–रे विर्वतन द्वारा प्राप्त जेनेस्टीन की संरचना के मूल आँकडों को लेकर बिना किसी रुकावट के संरचना के निम्नवत रूप को प्राप्त किया जाता है। निम्नवत उर्जा प्राप्त होने पर साम्य संरचना प्राप्त होती है। चित्र–1 में जेनेस्टीन के निम्नतर उर्जा स्तर की स्थायी संरचना को दर्शाया गया है। इस प्रक्रिया के द्वारा प्राप्त अणु, क्रिस्टिलोग्राफिक असममित ईकाई के अणुओं के सदृश होते हैं। इस प्रकार से प्राप्त अणु की संरचना को प्रयोगों द्वारा प्राप्त अणु की संरचना से मिलान कराया गया है जिसमें लीस्ट स्क्वायर एलगॉरिदम का उपयोग किया गया है जो गैर हाइडोजन परमाणुओं के मध्य दूरियों को न्यूनतम करता है। एब इनीशियो डीएफटी (बी3एलवायपी) का उपयोग करके अणुओं की सापेक्षिक उर्जा को ज्ञात किया गया है। डीएफटी विधि से प्राकलित उर्जा –412.06×10^{-18} जूल एवं प्राकलित द्विध्रुव आघुर्ण 4.64×10^{-30} कु0मी0 है। प्राप्त संरचना एवं मूल संरचना के अणुओं के विभिन्न प्राचलों को तालिका–1 में दर्शाया गया है। यह पता चलता है कि दोनों संरचनाओं में बन्धों की लम्बाईयों का अधिकतम अन्तर 0.037ए^0 है। बन्ध कोणों में सी(19)–सी(20)–ओ(5), सी(18)–सी(20)–ओ(5), एच(30)–सी(19)–सी(17) तथा एच(29)–सी(18)–सी(16) को छोड कर जिनमें यह अन्तर क्रमशः 5.27^0, 5.22^0, 1.46^0 तथा 1.38^0 है जो कि 0.82 डिग्री से अधिक नहीं है।

5. परिणाम/निष्कर्ष

इस कार्य में दिये गये अणु के अनेक उपलब्ध संरचना को स्कैन किया गया। आण्विक संरचना एवं जैविक क्रियाशीलता को समझने का यह उपयोगी तरीका है। प्रायोगिक एवं सिमुलेशन द्वारा प्राप्त परिणामों की तुलना से अणु की बेहतरीन संरचना को समझा जा सकता है। साम्य संरचना को 6–311++जी(डी,पी) बेसिस सेट पर डीएफटी विधि से ज्ञात किया गया है जिसके सबसे अधिक स्थायी कनफॉरमर हैं।



चित्र–1

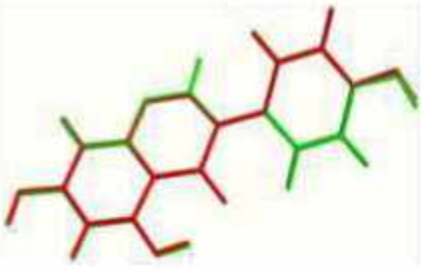

चित्र–2

चित्र–1 ऑप्टिमाइज्ड मॉलिक्यूलर स्ट्रक्चर ऑफ जेनेस्टिन मॉलिक्यूल

चित्र–2 कंपेरीजन ऑफ द ऐक्सपेरिमेंटल(फ्राम सिंगल क्रिस्टल एक्स–रे डिफ्रेक्शन)(ग्रीन) एण्ड ऑप्टिमाइज्ड स्ट्रक्चर ऑफ जेनेस्टिन(साफ चित्र हेतु हाइड्रोजन परमाणुओं को नहीं लिया गया है।)

संदर्भ

1. कोवार्ड, एल0; बार्नेस, एन0 सी0; सेशेल, के0 डी0 आर0 एवं बार्नेस, एस0(1993) ज0 एग्रीक0 फूड के0, खण्ड 41, पृ0 1961।
2. कॉफमैन, पी0 बी0; ड्यूक, जे0 ए0; ब्रीलमान, एच0 एवं हॉयट, जे0 ई0(1997) ज0 आल्टरने0 कॉम्प्लीमेंट मेड0, खण्ड 3, पृ0 7।
3. राव, एच0 एस0 पी0 एवं रेड्डी, के0 एस0(1991) फिटोटेरपिया0, खण्ड 62, पृ0 458।
4. वांग, बी0 एस0; जुआंग, एल0 जे0; यांग, जे0 जे0; चेन, एल0 वाय0; ताइ, एच0 एम0 एवं हुआन, एम0 एच0(2012) "एण्टीऑक्सीडेण्ट एण्ड एण्टीटायरोसिनेज एक्टिविटी ऑफ पलेमिन्गिया मैक्रोफायला एण्ड ग्लाइसीन टोमेन्टेला रूट्स", एविडेन्स–बेस्ड कॉम्प्लीमेंटरी एण्ड आल्टरनेटिव मेडिसिन, खण्ड 1, आर्टिकल आई0 डी0–431081।
5. आल्वेस, आर0 सी0; अल्मीएडा, आई0 एम0; कसाल, एस0 एवं ओलीवेयरा, एम0 बी0(2010) ज0 एग्री0 फूड केम0, खण्ड 58, पृ0 3002।
6. ली, एच0 पी0 एवं अन्य(1991) लान्सेट0, खण्ड 337, पृ0 1197।
7. मर्ज–डेम्लो, बी0 ई0 एवं अन्य(2000) अमे0 ज0 क्लिन0 न्यूट्रि0, खण्ड 71, पृ0 1462।
8. एलेकेल, डी0 एल0; सैंटजमैन, ए0 एवं अन्य(2000) अमे0 ज0 क्लिन0 न्यूट्रि0, खण्ड 72, पृ0 844।
9. मान, जी0 ई0 एवं अन्य(2009) करे0 ओपि0 फार्मेकोल0, खण्ड 9, पृ0 139।
10. कॉफमैन, पी0 बी0; ड्यूक, जे0 ए0; ब्रीलमान, एच0; बॉयक, जे0 एवं हॉयट, जे0 ई0(1997) ज0 आल्टरने0 कॉम्प्लीमेंट मेड0, खण्ड 3, पृ0 7।
11. डी लेमोज, एम0 एल0(2001) एनवल फारमेकोथर0, खण्ड 35, पृ0 1118।
12. किम, एस0 एच0 एवं अन्य(2009) एनवल एन0 वाय0 एकेड0 साइं0, खण्ड 1171, पृ0 495।
13. मिशेल, जे0 एच0 एवं अन्य(2001) क्लिन0 साइं0(लंदन), खण्ड 100, अंक 6, पृ0 613।
14. मार्टिन, जे0 एम0 एल0 एवं ऐस्लेनॉय, सी0 वान(1995) गार2पेड, यूनिवर्सिटी ऑफ एण्टवर्प।
15. जुर्को, जी0 ए0(2005) केमक्राफ्ट।
16. कैसिडा, एम0 ई0(1995) "रीसेन्ट डेवेलपमेंट इन डेन्सिटी फन्क्शनल थ्योरी", चोंग डी0 पी0(संपा0), वर्ल्ड साइंटिफिक, सिंगापुर, खण्ड 1, अंक 1, पृ0 155।

17. कैसिडा, एम0 ई0; कैसिडा, के0 सी0 एवं सलाहब, डी0 आर0(1998) इंटर0 ज0 क्वांटम केम0, खण्ड 70, पृ0 933।
18. स्ट्रैटमैन, आर0 ई0; शुसेरिया, जी0 ई0 एवं फ्रिश, एम0 जे0(1998) ज0 केमि0 फिजिक्स, खण्ड 109, पृ0 8218।
19. मियरटस, एस0; स्कोरॉक, ई0 एवं टोमेसी, जे0(1981) केम0 फिज0, खण्ड 55, पृ0 117।

तालिका–1ए: बन्ध दूरी (बॉन्ड लेन्थ)

परमाणु	वास्तविक मान	गणनात्मक मान	अंतर
एच(30)–सी(19)	1.0831	1.0862	0.0031
एच(29)–सी(18)	1.0862	1.0831	–0.0031
एच(28)–सी(17)	1.0845	1.0808	–0.0037
एच(27)–सी(18)	1.0811	1.0844	0.0033
एच(26)–सी(14)	1.0843	1.0843	0
एच(25)–सी(13)	1.0808	1.0808	0
एच(24)–सी(12)	1.0817	1.0815	–0.0002
एच(23)–ओ(5)	0.963	0.963	0
एच(22)–ओ(4)	0.9634	0.9634	0
एच(21)–ओ(2)	0.9934	0.9932	–0.0002
सी(20)–ओ(5)	1.3676	1.3675	–1ई–04
सी(20)–सी(18)	1.396	1.3956	–0.0004
सी(20)–सी(19)	1.3946	1.3948	0.0002
सी(19)–सी(17)	1.389	1.3904	0.0014
सी(18)–सी(16)	1.3902	1.3885	–0.0017
सी(17)–सी(10)	1.4035	1.4021	–0.0014
सी(16)–सी(10)	1.4016	1.4043	0.0027
सी(15)–सी(13)	1.3946	1.3945	–1ई–04
सी(15)–सी(14)	1.3986	1.3986	0
सी(15)–ओ(4)	1.3602	1.3602	0
सी(14)–सी(11)	1.3905	1.3905	0
सी(13)–सी(8)	1.3855	1.3855	0
सी(12)–सी(7)	1.3544	1.3551	0.0007
सी(12)–ओ(1)	1.3499	1.3496	–0.0003
सी(11)–सी(6)	1.4247	1.4249	0.0002
सी(11)–ओ(2)	1.3374	1.3374	0
सी(10)–सी(7)	1.4811	1.4813	0.0002
सी(9)–ओ(3)	1.2459	1.2462	0.0003
सी(9)–सी(7)	1.4702	1.4708	0.0006
सी(9)–सी(6)	1.4525	1.4526	1ई–04
सी(8)–सी(6)	1.4052	1.4051	–1ई–04
सी(8)–ओ(1)	1.3679	1.3676	–0.0003

तालिका–1बीः बन्ध कोण(बॉन्ड एन्गल्स)

परमाणु	वास्तविक मान	गणनात्मक मान	अंतर
सी(19)–सी(20)–सी(18)	119.7384	119.6881	−0.0503
सी(19)–सी(20)–ओ(5)	117.5127	122.7823	5.2696
सी(18)–सी(20)–ओ(5)	122.7467	117.5276	−5.2191
सी(30)–सी(19)–सी(20)	119.2033	120.0278	0.8245
एच(30)–सी(19)–सी(17)	121.1705	119.7132	−1.4573
सी(20)–सी(19)–सी(17)	119.6179	120.2589	0.641
एच(29)–सी(18)–सी(20)	120.0247	119.2108	−0.8139
एच(29)–सी(18)–सी(16)	119.7583	121.1426	1.3843
सी(20)–सी(18)–सी(16)	120.2168	119.6377	−0.5791
एच(28)–सी(17)–सी(19)	118.7843	119.2984	0.5141
एच(28)–सी(17)–सी(10)	119.6163	119.723	0.1067
सी(19)–सी(17)–सी(10)	121.581	120.977	−0.604
एच(27)–सी(16)–सी(18)	119.3158	118.6021	−0.7137
एच(27)–सी(16)–सी(10)	119.7472	119.7151	−0.0321
सी(18)–सी(16)–सी(10)	120.9358	121.6587	0.7229
सी(14)–सी(15)–सी(13)	121.7649	121.7516	−0.0133
सी(14)–सी(15)–ओ(4)	121.6102	121.6131	0.0029
सी(14)–सी(15)–ओ(4)	116.6249	116.6352	0.0103
एच(26)–सी(14)–सी(15)	121.3187	121.3186	−0.0001
एच(26)–सी(14)–सी(11)	118.8402	118.8262	−0.014
सी(15)–सी(14)–सी(11)	119.8411	119.8552	0.0141
एच(25)–सी(13)–सी(15)	121.1284	121.1345	0.0061
एच(25)–सी(13)–सी(8)	121.2724	121.2739	0.0015
सी(15)–सी(13)–सी(8)	117.5992	117.5915	−0.0077
एच(24)–सी(12)–सी(7)	123.5219	123.541	0.0191
एच(24)–सी(12)–ओ(1)	110.6494	110.5393	−0.1101
सी(7)–सी(12)–ओ(1)	125.828	125.9168	0.0888
सी(14)–सी(11)–सी(6)	120.0484	120.0543	0.0059
सी(14)–सी(11)–ओ(2)	119.2652	119.2273	−0.0379
सी(6)–सी(11)–ओ(2)	120.6864	120.7184	0.032
सी(17)–सी(10)–सी(16)	117.8989	117.7724	−0.1265
सी(17)–सी(10)–सी(7)	120.6859	121.4901	0.8042
सी(16)–सी(10)–सी(7)	121.4104	120.716	−0.6944
सी(7)–सी(9)–सी(6)	115.7226	115.7935	0.0709
सी(7)–सी(9)–ओ(3)	122.7899	122.8338	0.0439
सी(6)–सी(9)–ओ(3)	121.4868	121.3722	−0.1146
सी(13)–सी(8)–सी(6)	123.1186	123.1563	0.0377
सी(13)–सी(8)–ओ(1)	116.9745	116.9815	0.007
सी(6)–सी(8)–ओ(1)	119.9061	119.8614	−0.0447
सी(12)–सी(7)–सी(10)	120.2885	120.2792	−0.0093

तालिका–1सी: डाईहीड्रल कोण

परमाणु	वास्तविक मान	गणनात्मक मान	अंतर
सी(18)–सी(20)–ओ(5)–एच(23)	0.7833	–178.7211	–179.5044
सी(19)–सी(20)–ओ(5)–एच(23)	–178.682	0.7696	179.4519
ओ(5)–सी(20)–सी(19)–सी(17)	–179.853	–179.8508	0.0022
ओ(5)–सी(20)–सी(19)–एच(30)	–0.0252	0.0307	0.0559
सी(18)–सी(20)–सी(19)–सी(17)	–0.3987	–0.3707	0.028
सी(18)–सी(20)–सी(19)–एच(30)	179.429	179.5108	0.0818
ओ(5)–सी(20)–सी(18)–सी(16)	179.7734	179.7592	–0.0142
ओ(5)–सी(20)–सी(18)–एच(29)	0.8107	0.8281	0.0174
सी(19)–सी(20)–सी(18)–सी(16)	0.2909	0.2521	–0.0388
सी(19)–सी(20)–सी(18)–एच(29)	–178.672	–178.679	–0.0072
सी(20)–सी(19)–सी(17)–सी(10)	0.5289	–0.1875	–0.7164
सी(20)–सी(19)–सी(17)–एच(28)	–177.907	179.3633	357.2698
एच(30)–सी(19)–सी(17)–सी(10)	179.4707	179.9306	0.4599
एच(30)–सी(19)–सी(17)–एच(28)	1.0352	–0.5185	–1.5537
सी(20)–सी(18)–सी(16)–सी(10)	–0.3103	0.4279	0.7382
सी(20)–सी(18)–सी(16)–एच(27)	179.2936	–177.7826	–357.0762
एच(29)–सी(18)–सी(16)–सी(10)	179.8615	179.3378	–0.5237
एच(29)–सी(18)–सी(16)–एच(27)	–0.5346	1.1274	1.662
सी(19)–सी(17)–सी(10)–सी(7)	178.0063	–177.4899	–355.4962
सी(19)–सी(17)–सी(10)–सी(16)	–1.2068	0.8355	2.0423
एच(28)–सी(17)–सी(10)–सी(7)	–3.5711	2.9611	6.5322
एच(28)–सी(17)–सी(10)–सी(16)	177.2159	–178.7134	–355.9293
सी(18)–सी(16)–सी(10)–सी(7)	–178.116	177.3783	355.494
सी(18)–सी(16)–सी(10)–सी(17)	1.0913	–0.9607	–2.052
एच(27)–सी(16)–सी(10)–सी(7)	2.2821	–4.4308	–6.7129
एच(27)–सी(16)–सी(10)–सी(17)	–178.511	177.2302	355.7411
ओ(4)–सी(15)–सी(13)–सी(8)	–179.959	–179.9781	–0.0194
ओ(4)–सी(15)–सी(13)–एच(25)	0.1101	0.1028	–0.0073
सी(14)–सी(15)–सी(13)–सी(8)	0.1059	0.0762	–0.0297
सी(14)–सी(15)–सी(13)–एच(25)	–179.825	–179.8428	–0.0175
ओ(4)–सी(15)–सी(14)–सी(11)	–179.964	–179.9625	0.0012
ओ(4)–सी(15)–सी(14)–एच(26)	0.0315	0.0349	0.0034
सी(13)–सी(15)–सी(14)–सी(11)	–0.0315	–0.0196	0.0119
सी(13)–सी(15)–सी(14)–एच(26)	179.9637	179.9778	0.0141
सी(13)–सी(15)–ओ(4)–एच(22)	–179.876	–179.9125	–0.0365
सी(14)–सी(15)–ओ(4)–एच(22)	0.0596	0.0332	–0.0264
सी(15)–सी(14)–सी(11)–ओ(2)	–179.931	–179.9283	0.0022
सी(15)–सी(14)–सी(11)–सी(6)	–0.0348	–0.0132	0.0216

एच(26)–सी(14)–सी(11)–ओ(2)	0.0742	0.0742	0
एच(26)–सी(14)–सी(11)–सी(6)	179.9699	179.9893	0.0194
सी(15)–सी(13)–सी(8)–ओ(1)	−179.782	−179.7916	−0.0093
सी(15)–सी(13)–सी(8)–सी(6)	−0.1189	−0.1045	0.0144
एच(25)–सी(13)–सी(8)–ओ(1)	0.1487	0.1273	−0.0214
एच(25)–सी(13)–सी(8)–सी(6)	179.8121	179.8144	0.0023
ओ(1)–सी(12)–सी(7)–सी(9)	−2.443	−1.8998	0.5432
ओ(1)–सी(12)–सी(7)–सी(10)	177.1983	176.882	−0.3163
एच(24)–सी(12)–सी(7)–सी(9)	177.2296	177.4273	0.1977
एच(24)–सी(12)–सी(7)–सी(10)	−3.129	−3.7909	−0.6619
सी(7)–सी(12)–ओ(1)–सी(8)	0.7258	0.4933	−0.2325
एच(24)–सी(12)–ओ(1)–सी(8)	−178.983	−178.9078	0.0748
ओ(2)–सी(11)–सी(6)–सी(8)	179.9177	179.9018	−0.0159
ओ(2)–सी(11)–सी(6)–सी(9)	0.4112	0.4006	−0.0106
सी(14)–सी(11)–सी(6)–सी(8)	0.0234	−0.012	−0.0354
सी(14)–सी(11)–सी(6)–सी(9)	−179.483	−179.5131	−0.03
सी(6)–सी(11)–ओ(2)–एच(21)	0.0042	−0.0704	−0.0746
सी(14)–सी(11)–ओ(2)–एच(21)	179.8992	179.8441	−0.0551
सी(16)–सी(10)–सी(7)–सी(9)	−42.7194	141.8716	184.591
सी(16)–सी(10)–सी(7)–सी(12)	137.6542	−36.8554	−174.5096
सी(17)–सी(10)–सी(7)–सी(9)	138.0955	−39.8518	−177.9473
सी(17)–सी(10)–सी(7)–सी(12)	−41.5308	141.4212	182.952
ओ(3)–सी(9)–सी(7)–सी(10)	2.4478	2.8321	0.3843
ओ(3)–सी(9)–सी(7)–सी(12)	−177.917	−178.4091	−0.4921
सी(6)–सी(9)–सी(7)–सी(10)	−177.254	−176.9038	0.3501
सी(6)–सी(9)–सी(7)–सी(12)	2.3813	1.855	−0.5263
ओ(3)–सी(9)–सी(6)–सी(8)	179.4059	179.6316	0.2257
ओ(3)–सी(9)–सी(6)–सी(11)	−1.1048	−0.8849	0.2199
सी(7)–सी(9)–सी(6)–सी(11)	−0.8882	−0.6282	0.26
सी(7)–सी(9)–सी(6)–सी(11)	178.6011	178.8553	0.2542
ओ(1)–सी(8)–सी(6)–सी(9)	−0.783	−0.7463	0.0367
ओ(1)–सी(8)–सी(6)–सी(11)	179.7097	179.7517	0.042
सी(13)–सी(8)–सी(6)–सी(9)	179.5631	179.5752	0.0121
सी(13)–सी(8)–सी(6)–सी(11)	0.0558	0.0733	0.0175
सी(6)–सी(8)–ओ(1)–सी(12)	0.9631	0.8885	−0.0746
सी(13)–सी(8)–ओ(1)–सी(12)	−179.362	−179.4135	−0.0514

भूमि तल तक बने एक कमरे का मूल्यांकन–फैलावदार के साथ अर्ध फैलावदार नींव का एक आगणित अध्ययन

मनोज कुमार वार्ष्णेय[1], निवेश कुमार वार्ष्णेय[2] तथा रोहित कुमार वार्ष्णेय[3]
[1]वरिष्ठ प्रवक्ता एवं विभागाध्यक्ष सिविल इंजी0, डी0 एन0 पॉलीटैक्निक, मेरठ–250103, उ0 प्र0
[2]सहा0 प्रोफेसर, प्रताप इंस्टीटयूट ऑफ टैक्नोलॉजी एंड साइंस, सीकर–332402, राजस्थान
[3]प्रोजेक्ट ऑफिसर, राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान, रूड़की–247667, उत्तराखण्ड
manojvarshaney17@rediffmail.com; niveshvarshney07@gmail.com; rkvarshney88@gmail.com

सार

यह शीर्षक उन प्रोफैशनलों की ओर इंगित करता है जो मूल्यांकन करते समय भवन की अधः संरचना (सब स्ट्रक्चर) पर बहुत ज्यादा विचार नहीं करते, जब वे भवन की नीव संरचना का आगणन करते हैं। एक आम राय एवं धारणा यही है कि तीन तरफ से खुला भवन, अन्य दो तरफ से घिरे भवन की तुलना में ज्यादा मूल्यांकित किया जाता है। उक्त शीर्षक भी इस तथ्य की पुष्टि करता है एवं इसके आगणन में पाया गया कि केवल एक तरफ से सड़क की तरफ से खुले भवन की लागत के मुकाबले दो व तीन तरफ से सड़क की ओर खुले भवन का मूल्यांकन प्रायः 3% व 5% अधिक आंका जाता है। जिसमें भूमि की लागत पर विचार सम्मिलित नहीं किया गया है। विषयगत शीर्षक में इस बात पर जोर दिया गया है कि भवन के तीन तरफ सड़क अथवा दो तरफ सड़क होने की स्थिति में सब स्ट्रक्चर तक का मूल्यांकन भूमि लागत सहित 25% अथवा 9% क्रमशः भवन के एक तरफ सड़क होने के मुकाबले ज्यादा आंके जाना व्यवस्थित रूप से सही है।

बीज शब्द– टी.सी.एल.– कुल केन्द्र रेखा की लम्बाई, बी/डब्लू–ब्रिक वर्क–ईंट चिनाई का कार्य, सीमेंट कन्क–सीमेंट कंक्रीट।

Valuation of single room below ground level-an estimational study for spread v/s quasi spread footing foundation

Manoj Kumar Varshaney[1], Nivesh Kumar Varshney[2] and Rohit Kumar Varshney[3]
[1]Senior lecturer and Head, Department of Civil Engineering
D.N. Polytechnic, Meerut-250103, U.P., India
[2]Assistant Professor, Pratap Institute of Technology & Science, Sikar-332402, Rajasthan, India
[3]Project Officer, National Institute of Hydrology, Roorkee-247667, Uttarakhand, India
manojvarshaney17@rediffmail.com; niveshvarshney07@gmail.com; rkvarshney88@gmail.com

Abstract

The article is dealing with the professionals, merged in valuation, who ignore the substructure while valuating the buildings. It is in general consequences that three side open building entrance is subsequently better valued than two side open buildings. The title of the paper conforms it and confines to include the substructure for better valuation result, as assessed 5% and 3% more with respect to only side open under estimation point of view. The theme also explorers that the valuation to three side open and two side open v/s only side open, respectively stand more by 25% and 9% with respect to the base of the front open.

Key-Words:-T.C.L.-Total centre line B/W-Brick work, Cement conc.-Cement concrete

1. प्रस्तावना

मूल्यांकन एक ऐसी तार्किक सूत्र पर आधिारत वैज्ञानिक एवं तकनीकि विधि है जिसका किसी विशेष समय पर परिस्थितिनुसार उस वस्तु की कीमत का आगणन करना है। भवन का सम्पादन करने एवं निर्माण करने से पूर्व, भवन संरचना का आगणन तथा इसके बाद प्राक्कलन(कॉस्टिंग) करने के लिए अथवा केन्द्र रेखा विधि (सेंटर लाइन मेथड) का प्रयोग किया जाता है। आगणन में भवन के विभिन्न मदों को मात्रा गणितीय तरीकों से सूत्रों का प्रयोग करते हुए किया जाता है। भवन निर्माण में मदों के विवरण यथा सामान्य मृदा में नींव खुदाई का कार्य, नींव में कंक्रीट कार्य, नींव में प्रथम श्रेणी की ईंट चिनाई का कार्य 1:6 के सीमेंट मसाले के साथ, 2.5 सेमी मोटा 1:1.5 : 3 कंक्रीट का सीलरोक रद्दा कार्य, प्रथम श्रेणी की ईंट चिनाई का कार्य 1:6 अनुपात के सीमेंट मसाले के साथ अधः संरचना में, 2.5 सेमी0 मोटी टाइल का फर्श 7.5 सेमी0 चूना कंक्रीट के साथ तथा 1:2:4 की प्रवलित सीमेंट कंक्रीट (रिइंफोर्सड कंक्रीट) का कार्य स्लैब, लिन्टल, धरन व स्तम्भों में तथा 1:5 सीमेंट मसाले का 12 एम.एम. मोटा पलस्टर का कार्य भवन के अन्दर की तरफ आदि के रूप में किया जाता है। फिर इन मदों की मात्राओं को उनके क्रमशः दरों जो कि लोक निर्माण विभाग अथवा स्थानीय बाजार की दरों से गुणा कर आगणन किया जाता है। जिसमें मदों की मात्राओं तथा दरों का समय तथा उपयोग के अनुसार अवमूल्यन करते हुए मूल्यांकन कार्य किया जाता है।

सामान्यतः मूल्यांकक संरचना का मूल्यांकन करते समय भवन की अधः संरचना (सब स्ट्रक्चर) पर विचार नहीं करते। केवल अधिः संरचना(सुपर स्ट्रक्चर) जिसमें भवन का परिमाप, ऊँचाई, खूबसूरती, मदों का लुक व गुणवत्ता दिखाई देती है जिसका वे मूल्यांकन करते हैं। हालांकि अधिः संरचना, अधः संरचना का अभिन्न अंग है, फिर भी आखों से दिखाई देने वाले भवन के भाग यानि अधिः संरचना का ही मूल्यांकन कर पाते हैं। यदि अधः संरचना को भी देखा जाये एवं इसका मूल्यांकन किया जाये तथा इसे अधिः संरचना के मूल्यांकन में जोड़ने पर ही भवन का सही मूल्यांकन हो पायेगा। इससे मूल्यांकन भवन की विभिन्न स्थितियों में कितने प्रतिशत प्रभावित होगा, इस तकनीकी पेपर के माध्यम से स्पष्ट किया गया।

व्यवस्थागत तरीका– जैसा कि जानते हैं कि मूल्यांकन संरचना से प्राप्त किराया, पूँजी की तुलना, लाभ, क्षेत्रीय एवं स्थानीय विकास, अवमूल्यन, कुर्सीतल और विस्तृत माप आदि पर निर्भर करता है परन्तु फिर भी आवासीय भवनों का मूल्यांकन मदों की मात्राओं को उनके अवमूल्यित दरों से गुणा करके किया जाता है। परन्तु व्यापारिक एवं औद्योगिक भवनों का मूल्यांकन उनसे प्राप्त वार्षिक (नैट) शुद्ध आय से पूँजीगत लागत ज्ञात की जाती है जिसमें शुद्ध वार्षिक आय से गुणा कर मूल्यांकन किया जाता है। जहाँ बैंक में चल रही प्रचलित ब्याज दर पर निर्भर करता है। यदि प्रचलित ब्याज दर 5% है तो वार्षिक खरीद के हिसाब से एक रूपया प्राप्त करने के लिए बैंक में 20 रूपया जमा करना होगा। यही 20 रूपया वार्षिक खरीद है। जो पूंजीगत लागत अथवा एक रूपये के मूल्यांकन को दर्शाता है। व्यवसायिक अथवा व्यापारिक भवनो का मूल्यांकन भवनों की मदों के आधार पर अनुमन्य नहीं होता है। चूँकि भवन का मूल्यांकन प्रस्तुत शीर्षक में मदों की मात्राओं के आधार पर किया जाना है, अतः इसके लिए भवन की दीवार 30 सेमी0 मोटी मानकर रद्दे 40 सेमी, 50 सेमी, 60 सेमी, व 90 सेमी मानकर गणितीय गणनाओं से ज्ञात की गई हैं। भवन के जिस तरफ सड़क है व वहाँ विस्तृत खसकेदार नींव(स्प्रेड फुटिंग फाउंडेशन) रखी जाती है तथा जिस तरफ भवन अन्य भवनों से घिरा हुआ होता है वहाँ पर कैन्टीलीवर खसकेदार नींव(कैन्टीलीवर ऑफसेट फाउंडेशन) जिसे अर्ध विस्तृत खसकेदार नींव (क्वाजी स्प्रेड फुटिंग फाउंडेशन) भी कह सकते हैं, का प्रयोग किया जाता है।

तकनीकी पेपर के शीर्षक के आधार पर एक 4मी×3मी का कमरा लिया गया है जिसकी सभी दीवारें 30 सेमी मोटी हैं। सड़क की स्थिति के अनुसार नींव की व्यवस्था की गई है जो सभी स्थितियों में भवन का प्लान (प्लान– ऊपर से देखने पर भवन की स्थिति) तथा दो–दो खण्ड काट एलीवेशन (सेक्शनल एलिवेशन– प्लान को काट कर उसके कटे भाग को सामने से देखना) दर्शाये गये हैं।

केस 1– जब कमरे के सामने एक तरफ सड़क है।

कुल केन्द्र रेखा की लम्बाई 30 सेमी दीवार के लिए = 2X4.3 + 2X3.3 = 15.2 मी
40 सेमी के खसके के लिए = 2X4.2 + 2X3.25 = 14.9 मी
50 सेमी के खसके लिए = 2X4.1 + 2X3.2 = 14.6 मी
60 सेमी के खसके के लिए = 2X4 + 2X3.15 = 14.3 मी
90 सेमी के कंक्रीट ब्लाक के लिए = 2X3.5 + 2X3 = 13 मी

आगणन–

खुदाई कार्य = 1X13X0.9X0.9 = 10.53मी^{3}
सीमेंट कंक्रीट कार्य =1X13X0.9X0.3 = 3.51मी^{3}
ईंट चिनाई का कार्य = (1:6 के सीमेंट मसाले के साथ)
प्रथम रद्दा = 1X14.3X0.6X0.15 = 1.287मी^{3}
द्वितीय रद्दा = 1X14.6X0.5X0.15 = 1.095मी^{3}
तृतीय रद्दा = 1X14.9X0.4X0.15 = 0.894मी^{3}
चौथा रद्दा =1X15.2X0.3X0.15 = 0.684मी^{3}
कुल चिनाई का कार्य = 3.96मी^{3}

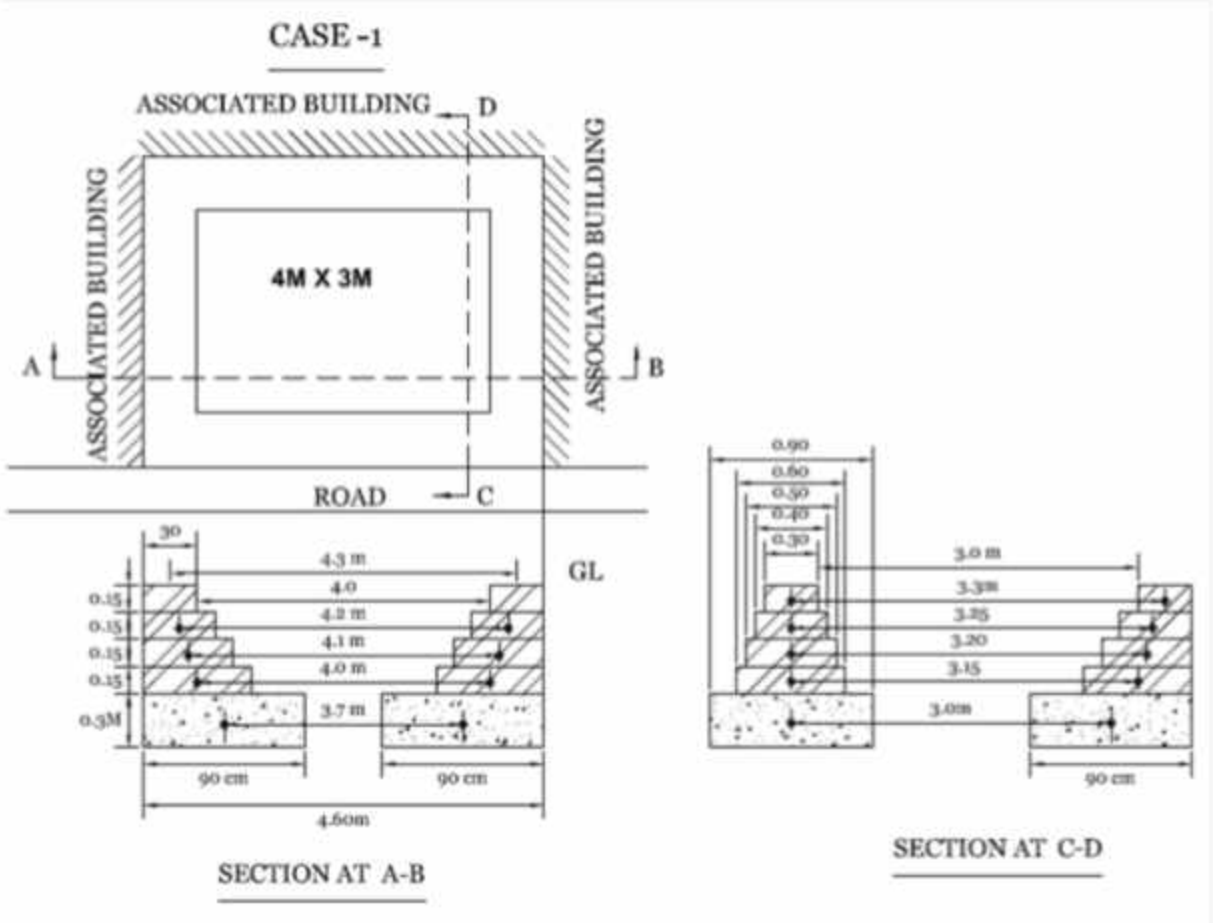

केस–2

टी.सी.एल. = 30सेमी दीवार के लिए = 2×4.3 + 2×3.3 = 15.2 मी
40सेमी दीवार के खसके के लिए = 2×4.25 + 2×3.25 = 15 मी
50सेमी के खसके के लिए = 2×4.2 + 2×3.2 = 14.8 मी
60सेमी के लिए खसके के लिए = 2×4.15 + 2×3.15 = 14.6 मी
90सेमी के लिए खसके के लिए =2×4 + 2×3 = 14 मी

आगणन

खुदाई कार्य = 1×14×0.9×0.9= 11.34मी^{3}
सीमेंट कंक्रीट कार्य = 1×14×0.9×0.3= 3.78मी^{3}
चिनाई कार्य (बी0 / डब्लू0)
पहला रद्दा =1×14.6×0.6×0.15= 1.314मी^{3}
दूसरा रद्दा = 1×14.8×0.5×0.15= 1.11मी^{3}
तीसरा रद्दा = 1×15×0.4×0.15= 0.9मी^{3}
चौथा रद्दा = 1×15.2×0.3×0.15= 0.684मी^{3}
कुल चिनाई कार्य = 4.008मी^{3}

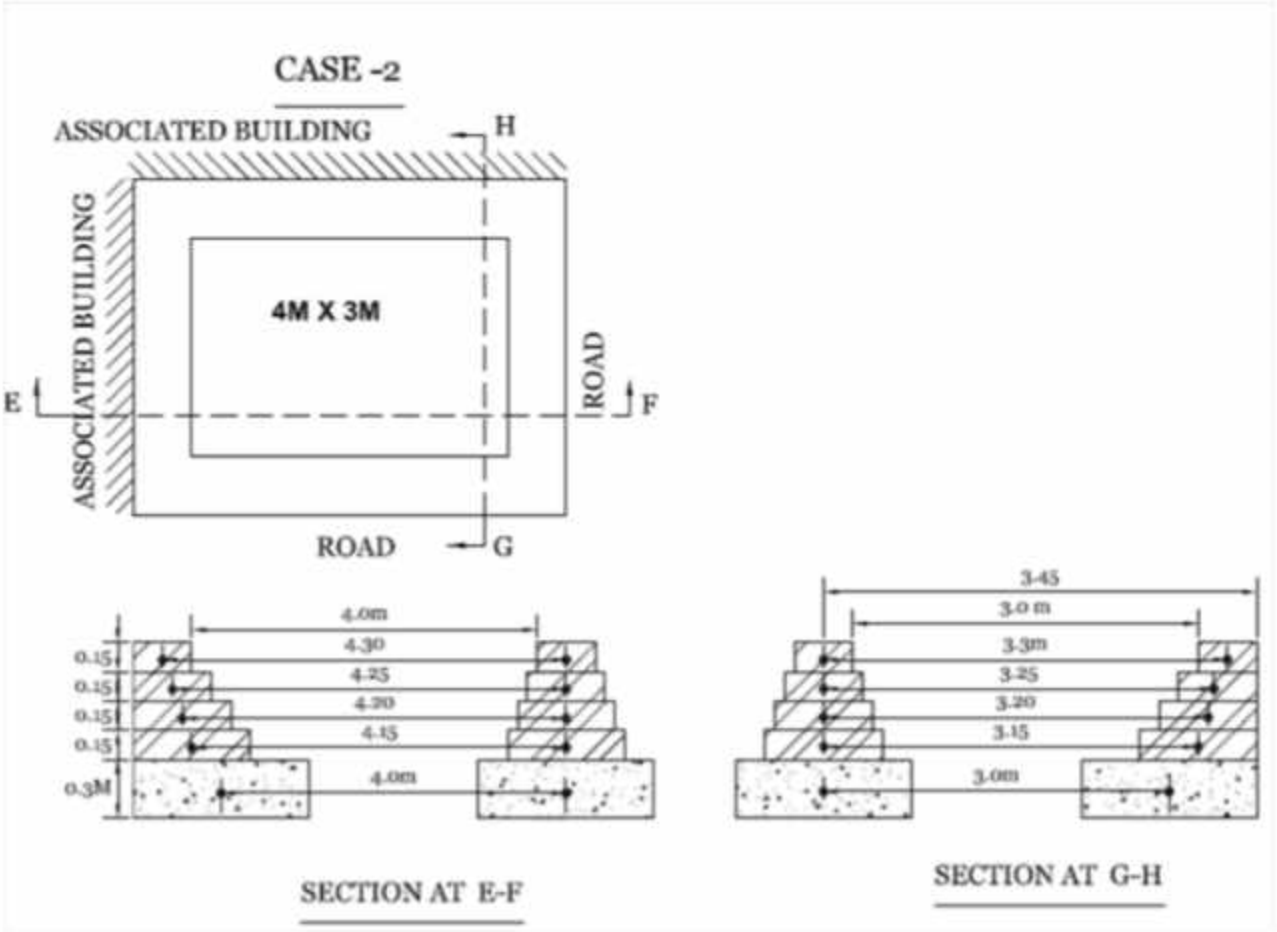

केस 3–

टी0सी0 30 सेमी0 दीवार के लिए = 2X4.3 + 2X3.3 = 15.2 मी

40सेमी खसके के लिए = 2X4.25 + 2X3.3 = 15.1 मी

50सेमी खसके के लिए = 2X4.2 + 2X3.3 = 15 मी

60सेमी खसके के लिए = 2X4.5 + 2X3.3 = 14.9 मी

90सेमी खसके के लिए = 2X4 + 2X3.3 = 14.6 मी

आगणन

खुदाई कार्य = 1X14.6X0.9X0.9= 11.82मी^{3}

सीमेंट कंक्रीट कार्य = 1X14.6X0.9X0.3= 11.34मी^{3}

चिनाई कार्य (बी./डब्लू0)

पहला रद्दा = 1X14.9X0.6X0.45= 1.341मी^{3}

दूसरा रद्दा =1X15X0.5X0.15= 1.125मी^{3}

तीसरा रद्दा = 1X15.1X0.4X0.15= 0.90मी^{3}

चौथा रद्दा =1X15.2X0.3X0.15= 0.684मी^{3}

कुल चिनाई कार्य = 4.056मी^{3}

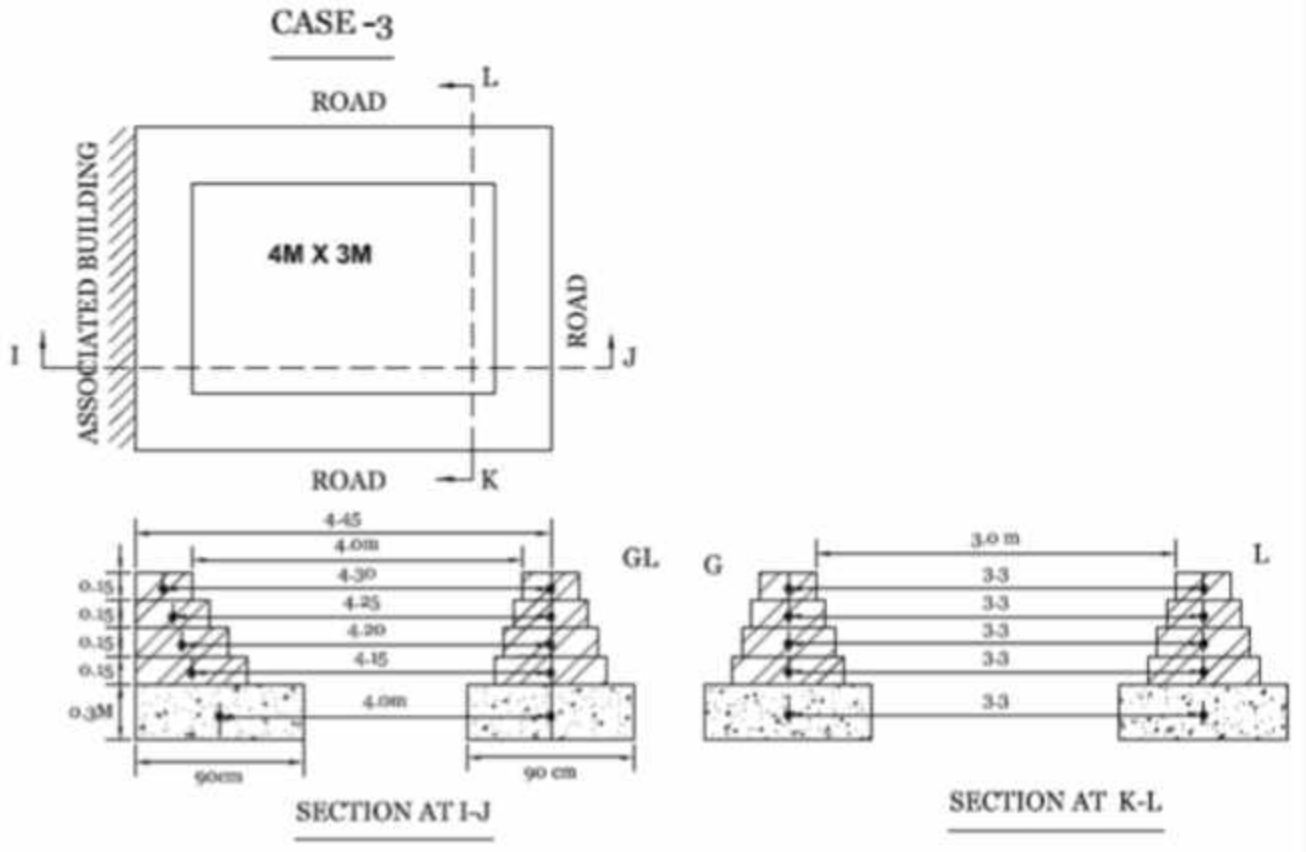

2. तुलनात्मक आगणित मूल्यांकन तालिका :– केस–1, केस–2 व केस–3 के लिए मूल्यांकन तालिका का तुलनात्मक विवरण तालिकाबद्ध है।

क्र.सं.	केस–1	केस–2	केस–3
1–भूमि	क्षेत्रफल = 16.56 मी^{2} रू0 5000 प्रति मी^{2} लागत = रू0 82800/–	क्षेत्रफल = 16.56 मी^{2} रू0 5000 प्रति मी^{2} लगत = रू0 82800/–	क्षेत्रफल = 16.56 मी^{2} रू0 5000 प्रति मी^{2} लगत = रू0 82800/–
2–खुदाई	मात्रा = 10.53 मी^{3} रू0 55 प्रति मी^{2} लागत = रू0 580/–	मात्रा = 11.34 मी^{3} रू0 55 प्रति मी^{2} लागत = रू0 624/–	मात्रा =11.826 मी^{3} रू0 55 प्रति मी^{2} लागत = रू0 651/–
3–सीमेंट कंक्रीट	मात्रा = 3.51 मी^{3} रू0 1300 प्रति मी^{3} लागत = रू0 4563/–	मात्रा = 3.78 मी^{3} रू0 1300 प्रति मी^{3} लागत = रू0 4914/–	मात्रा = 3.94 मी^{3} रू0 1300 प्रति मी^{3} लागत = रू0 5122/–
4–चिनाई कार्य	मात्रा = 3.96मी^{3} रू0 3585 प्रति मी^{3} लागत = रू0 4563/–	मात्रा = 4.008मी^{3} रू0 3585 प्रति मी^{3} लागत = रू0 14369/–	मात्रा = 4.056मी^{3} रू0 3585 प्रति मी^{3} लागत = रू0 14541/–
5–कुल लागत	रू0 102140/–	रू0 110987/–	रू0 127954/–
6–अनुपात	1	1.087	1.253
7–लागत भूमि रहित	रू0 19340/–	रू0 19907/–	रू0 20314/–
8–अनुपात	1	1.03	1.05

भूमि बिना लागत अनुपात = 1:1:03:1.05,
भूमि सहित लागत अनुपात = 1:1.087:1.253

भूमि सहित लागत में बचत अथवा अतिरिक्त लागत

केस–2 से केस–1 के लिए 8.7%, केस–3 से केस–1 के लिए 25.3%

भूमि रहित लागत में बचत/अतिरिक्त व्यय

केस–2 से केस–1 के लिए 3%, केस–3 से केस–1 के लिए 5%

कुर्सी तल दर(प्लिंथ एरिया रेट)

केस–1 = $\frac{19340}{16.56}$ = 1148 प्रति मी^{2}

केस–2 = $\frac{19907}{16.56}$ = 1202 प्रति मी^{2}

केस–3 = $\frac{20314}{16.56}$ = 1227 प्रति मी^{2}

दीवार की लम्बाई की दर

केस–1 = 19340/15.2 = 1273/–मी

केस–2 $= \frac{19907}{15.2} = 1310/-$मी

केस–3 $= \frac{20314}{15.2} = 1337/-$मी

3. निष्कर्ष

प्रायः भवन का मूल्यांकन उसके सुपर स्ट्रक्चर के लिये किया जाता है एवं सब स्ट्रक्चर वाले भाग को नजरअंदाज कर दिया जाता है। परन्तु यदि इस भाग पर भी विचार कर लिया जाये तो भवन के तीन तरफ, दो तरफ या एक तरफ से अन्य भवनों से घिरे होने की स्थिति में भवन की नींव संरचना का मूल्यांकन प्रभावित होता है। दोनो तरफ सड़क होने की स्थिति में भवन का मूल्यांकन तीनों तरफ से घिरे कुर्सी तल तक के भवन का मूल्यांकन कुर्सी तल तक 3% अधिक लिया जाना तथा तीन तरफ सड़क वाले भवन का केवल एक तरफ सड़क वाले भवन के मूल्यांकन का 5% अधिक लिया जाना अनुमन्य है। सामान्य भवन निर्माण कर्ताओं की राय में उपरोक्त मूल्यांकन में व्यवहारिक रूप से वृद्धि किये जाने की पुष्टि इस तकनीकी पेपर के माध्यम से की गयी है जिसमें केवल एक कमरे के कुर्सी तल तक किये गये निर्माण को ही आधार माना गया है। वास्तविक रूप में सही मूल्यांकन हेतु भवन के घिरे होने से उसका मूल्यांकन प्रभावित होता है। जिसमें भूमि तल तक बनी नींव संरचना का मूल्यांकन उपलब्ध ड्राइंग के आधार पर किया जाना जरूरी समझा जाता है।

संदर्भ

1. वार्ष्णेय, एम0 के0 (2009) सिविल एस्टिमेटिंग एण्ड कास्टिंग, नवभारत पब्लिकेशंस, चतुर्थ संस्करण।
2. वार्ष्णेय, एम0 के0 (2013) इंडियन वैल्यूअर जर्नल, खण्ड एक्सएलवी, मु0पृ0 674–682।

अतिभार एवं मोटापे से ग्रस्त लडकियों/महिलाओं में स्वास्थ्य आचरण प्रोत्साहित करने में आत्मक्षमता की भूमिका का अध्ययन

सोनल अग्रवाल
शोध छात्रा, जे0आर0एफ0–यू0जी0सी0
मनोविज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226007, उ0प्र0, भारत
aka.irs1986@gmail.com

सार

प्रस्तुत शोधपत्र में अतिभार एवं मोटापे से ग्रस्त लड़कियों एवं महिलाओं में स्वास्थ्य आचरण प्रोत्साहित करने में आत्मक्षमता की भूमिका का अध्ययन किया गया है। इस परीक्षण में यह परिकल्पना की गई है कि उच्च आत्मक्षमता वाले लोग अतिभार एवं मोटापे के नियंत्रण के लिये स्वयं कार्य करते हैं और अपने खानपान, व्यायाम इत्यादि में सकारात्मक परिवर्तन करके अतिभार एवं मोटापे का नियंत्रण कर लेते हैं। इसको प्रमाणित करने हेतु 40 लडकियों/महिलाओं, जिनकी उम्र 20 से 35 वर्ष के मध्य है और जो या तो छात्राएं हैं या गृहणियां हैं, और प्रतिदर्श लिया गया। इन सभी प्रतिभागियों का "हेल्थ स्पेसिफिक सेल्फ इफीकेसी क्यूशचनायर" के माध्यम से उनकी आत्मक्षमता की गणना की गई। इन सभी प्रतिभागियों के शरीर का वजन नापा गया। पुनः 3 माह पश्चात सभी प्रतिभागियों के शरीर का वजन मापा गया। दोनों शरीर के वजनों एवं प्रतिभागियों के शरीर की लम्बाई के आधार पर 'बाडी मास इन्डेक्स' की गणना, दोनों समयों पर की गई। पुनः समस्त प्रतिभागियों के बी0एम0आई0 में हुए परिवर्तन को नोट किया गया स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता एवं बी0एम0आई0 में हुये परिवर्तन के मध्य सह संबद्धता गुणांक की गणना की गई और यह (–) 0.83 आया। इस अध्ययन से यह तथ्य उजागर हुआ कि ऐसे प्रतिभागी जो अधिक आत्मक्षमता रखते हैं, वह स्वास्थ्य संबंधी आचरणों में सुधार का प्रयास करते हैं। परिणामतः उनके 'बाडी मास इन्डेक्स' में अधिक कमी आई। उच्च आत्मक्षमता वाले प्रतिभागी यह मानते हैं कि अतिभार का नियंत्रण उनके स्वयं के वश में है और वह अतिभार को नियंत्रित करने के लिये अपने रहने के तरीके, भोजन में बदलाव एवं नियंत्रण, नियमित व्यायाम एवं योग इत्यादि के रूप में सकात्मक परिवर्तन करते हैं।

A study on impact of self-efficacy on health promoting behaviors among girls and women suffering from obesity and overweight

Sonal Agrawal
Research scholar, J.R.F.-UGC
Department of Psychology, Lucknow University, Lucknow-226007, U.P., India
aka.irs1986@gmail.com

Abstract

In the present research paper, an attempt has been made to investigate the relationship between self efficacy and health promoting behaviors among overweight and obese females. It is hypothesized that persons having high health related self efficacy are better able to regulate their weight by adopting healthy behaviors. For this purpose, a sample of 40 overweight / obese females in age range of 20 to 30 years was taken. The health related self efficacy was measured by using 'Health related self efficacy

questionnaire' and "change in BMI (Body Mass Index)' was calculated by measuring the height (in Meters) and weight (In kilograms) at the start of the study and at the end of the three months. The Pearson correlation coefficient was calculated between the two variables –"Health related self efficacy" and 'change in B.M.I.' which was (-) .83 .The result reveals a negative correlation i.e . (-).83 between –"Health related self efficacy" and 'change in B.M.I.' indicating that persons with high health related self efficacy are able to reduce their weight and accordingly BMI by adopting healthy behaviors.

1. प्रस्तावना

प्रस्तुत शोध पत्र सकारात्मक मनोविज्ञान के क्षेत्र में हैं। पारम्परिक मनोविज्ञान में मानव के सकारात्मक गुणों एवं शक्तियों की उपेक्षा की गई है। मानव को केवल प्रकृति का दास माना गया या मानव जीवन के नकारात्मक पक्षों का अध्ययन किया गया। परंतु सकारात्मक मनोविज्ञान में मानव जीवन के सकारात्मक पहलुओं जैसे प्यार, आशा आत्मक्षमता का अध्ययन किया गया और लोगों की सकारात्मक अभिरूचि, विचारों तथा सकारात्मक संस्थाओं जैसे समाज, स्कूल, परिवारों की भूमिका की चर्चा की गई। आत्मक्षमता सकरात्मक मनोविज्ञान की एक महत्वपूर्ण नियामक है।

A. आत्मक्षमता

अल्बर्ट बंडूरा ने आत्मक्षमता को "किसी व्यक्ति की अपनी क्षमताओं पर पूर्ण विश्वास कि वह स्वयं की क्षमता से हर कार्य को कर सकता है" परिभाषित किया है। आत्मक्षमता आनुवांशिक नहीं है, बल्कि इसको अभ्यास से विचार परिवर्तन कर विकसित किया जा सकता है। आत्मक्षमता सामाजिक ज्ञानात्मक सिद्धांत के इस सिद्धांत पर आधारित है कि मानव प्रकृति का दास न होकर, अपनी आत्मक्षमताओं पर पूर्ण विश्वास कर, प्रयत्न करके मनोवांछित उद्देश्यों/लक्ष्यों को अर्जित कर सकता है।

आत्मक्षमता का महत्व जीवन के समस्त क्षेत्रों में है। आत्मक्षमता को विकसित करके मनुष्य बेहतर मनोवैज्ञानिक समायोजन, बेहतर स्वास्थ्य और बेहतर लक्ष्यों की प्राप्ति कर सकता है। उच्च आत्मक्षमता वाले व्यक्ति में अवसाद एवं कुंठा निम्न होती है, उनमें पीड़ा को सहन करने की अधिक शक्ति होती है, जीवन में कठिन लक्ष्यों को वे सुगमता से प्राप्त कर लेते हैं या भोजन में नियंत्रण और व्यायाम से अच्छे संतुलित स्वास्थ्य को भी प्राप्त करते हैं।

क. आत्मक्षमता को प्रभावित करने वाले कारक

अल्बर्ट बंडूरा ने निम्न चार कारकों की व्याख्या की है जो किसी व्यक्ति में आत्मक्षमता को प्रभावित करते हैं–

1. अनुभव

अपने पूर्व अनुभव में किसी कार्य को करने और अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने का अनुभव, आत्मक्षमता को और अधिक विकसित करता है।

2. प्रतिरूपण

यदि मनुष्य किसी व्यक्ति को विशेष परिस्थितियों में कर्म करते हुये वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति करते हुये देखता या सुनता है तो उस मनुष्य में भी यह भावना जागृत हो जाती है कि यदि वह मनुष्य कर्म करके, अपनी क्षमताओं पर विश्वास करके, अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है तो मैं भी कर सकता हूं। यह भावना आत्मक्षमता के विकास को प्रभावित करती है।

3. **सामाजिक प्रतिपादन**

अपनी क्षमताओं पर विश्वास करके तथा वांछित फल प्राप्त करने पर, समाज की क्या प्रतिक्रिया है, यह आत्मक्षमता के विकास के लिये एक महत्वपूर्ण नियामक है। यदि प्राप्त लक्ष्यों को समाज महत्वपूर्ण घोषित करता है तो आत्मक्षमता विकसित होगी और यदि समाज इस उपलब्धि को बहुत महत्वपूर्ण नहीं मानता तो आत्मक्षमता का विकास उतना अच्छा नहीं होगा।

4. **मनोवैज्ञानिक कारक**

विपरीत एवं तनावपूर्ण परिस्थितियों में लोग अवसाद, कुण्ठा, पीडा, थकावट अनुभव करते हैं। ये सभी तनावपूर्ण अनुभव उच्च आत्मक्षमता वाले व्यक्ति में कम होते हैं या उनकी तीव्रता कम होती है।

ख. **जीवन के विभिन्न आयामों में आत्मक्षमता का महत्व**

1. एक परिस्थिति में चुने गये विशेष व्यवहार
2. प्रेरणा
3. विचार प्रतिमान एवं प्रतिकिया
4. स्वस्थ एवं आदर्श व्यवहार
5. शैक्षिक उपलब्धियां

ग. **आत्मक्षमता के प्रकार :– सामान्य एवं क्षेत्र विशेष**

1.सामान्य आत्मक्षमता

सामान्य आत्मक्षमता से तात्पर्य यह है कि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से जुडी समस्याओं में व्यक्ति की सामान्य आत्मक्षमता जिससे व्यक्ति अपनी क्षमताओं पर पूर्ण विश्वास कि वह स्वयं की क्षमता से हर कार्य कर सकता है, के माध्यम से जीवन में निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करता है। इसका मापन 'जनरल सेल्फ इफीकेसी स्केल' पर किया जाता है।

2.सामाजिक आत्मक्षमता

सामाजिक आत्मक्षमता से तात्पर्य व्यक्ति की उस आत्मक्षमता से है जिसमें व्यक्ति सामाजिक उत्तरदायित्वों के निर्वाह में अपनी क्षमताओं पर पूर्ण विश्वास कर, पूरे मन से समाज से जुडता है और सामाजिक कर्तव्यों का अनुपालन तत्परता से करता है।

3. शैक्षणिक आत्मक्षमता

शैक्षणिक आत्मक्षमता से तात्पर्य व्यक्ति की उस आत्मक्षमता से है जिसमें व्यक्ति/छात्र शैक्षिक क्षेत्र में अपनी क्षमताओं पर पूर्ण विश्वास कर, पूरे मन से परिश्रम करता है और सभी शैक्षणिक लक्ष्यों को प्राप्त करता है।

4.अध्यापक आत्मक्षमता

अध्यापक आत्मक्षमता, अध्यापक उस आत्मक्षमता को कहते हैं जिसमें वह कक्षा एवं बच्चों से जुडी समस्त समस्याओं को हल करता है तथा एक अच्छे शिक्षक के रूप में स्कूल में अपना स्थान बनाता है।

5.स्वास्थ्य से संबद्ध आत्मक्षमता

स्वास्थ्य सम्बन्धी आत्मक्षमता मनुष्य का अपनी क्षमताओं पर पूर्ण आशावादी विश्वास कि वह अपने स्वास्थ्य को जीवनशैली में बदलाव खानपान पर नियंत्रण तथा नियमित व्यायाम कर बदल सकता है, को कहते हैं।

B. अतिभार एवं मोटापा

अतिभार एवं मोटापा से पूरे विश्व की एक तिहाई जनसंख्या प्रभावित है। यह चिंताजनक विषय है। अतिभार एवं मोटापे से अवसाद, तनाव, कैंसर, गठिया, मधुमेह इत्यादि होने का खतरा बढ जाता है। इससे जीवन असुविधाजनक हो जाता है तथा मनुष्य की कार्यक्षमता कम हो जाती है जिससे मनुष्य अपने जीवन के हर क्षेत्र में असफल होने लगता है और इस असफलता से निराशा एवं अवसाद बढ़ जाता है। अतः इस अतिभार एवं मोटापे को नियंत्रित करने का हरसंभव प्रयास प्रत्येक व्यक्ति को करना चाहिये। अतिभार एवं मोटापे को नियंत्रित करने के समस्त चिकित्सीय उपचार व्यर्थ हो गए हैं। इसको कम करने के लिये मनुष्य को अपनी जीवनशैली में परिवर्तन, खानपान पर नियंत्रण, नियमित व्यायाम एवं योग करने की आवश्यकता है। मोटापे एवं अधिभार को कम करने के लिये हमें बाहरी साधनों को छोंडकर अपने अन्तर्मन में निहित साधनों पर विश्वास करना सीखना चाहिये और अपनी शक्तियों पर विश्वास करना चाहिये कि हम अधिभार एवं मोटापे को नियंत्रित कर सकते हैं। यही विश्वास हमें जीवन में परिवर्तन, खानपान पर नियंत्रण और नियमित व्यायाम के लिये बाध्य करेगा और हम अधिभार एवं मोटापे पर नियंत्रण कर सकेंगे।

क. अतिभार

अतिभार की गणना एक निश्चित शरीर की लम्बाई पर एक प्रमाणिक भार, से अधिक भार के रूप में की जाती है। अतिभार की समस्या से वह लोग ग्रसित होते हैं जिनके पास खाने–पीने का कोई अभाव नहीं है, खूब ऐश्वर्य है, काम करने के लिये नौकर–चाकर हैं तथा स्वयं कोई कार्य नहीं करना पडता है। अतः भोजन से अर्जित समस्त ऊर्जा शरीर में समाहित हो जाती है, जिससे मोटापा एवं अतिभार हो जाता है।

ख. बॉडी मास इन्डेक्स(बी0एम0आई0)

बॉडी मास इन्डेक्स, मनुष्य के भार एवं लम्बाई के मध्य संबंध का उजागर करता है, बी0एम0आई0 की गणना मनुष्य के किलोग्राम यूनिट में भार को मनुष्य की लंबाई मीटर में के वर्ग से विभाजित करने पर आता है। इसकी यूनिट किलोग्राम/(मीटर)^2 है।

$$\text{बी0 एम0 आई0} = \frac{\text{भार (किलोग्राम में)}}{(\text{लम्बाई})^2 \text{ (मीटर में)}}$$

बी0एम0आई0 मनुष्य के अतिभार एवं मोटापे की गणना के लिये एक विश्वसनीय मापक है। यदि मनुष्य का बी0एम0आई0 25 से 30 के बीच में आता है तो उसे अतिभार की श्रेणी में डाला जाता है और यदि बी0एम0आई0 30 या उससे अधिक है तो उसे मोटापे की श्रेणी में डाला जाता है।

ग. अतिभार एवं मोटापे के परिणाम

किसी भी व्यक्ति में अतिभार एवं मोटापे के कारण निम्नलिखित रोग होने की संभावनाएं बन जाती है :–

हृदयरोग, मधुमेह, गाल ब्लेडर से संबंधित रोग, उच्च रक्तचाप, कैंसर, उच्च कोलेस्ट्राल स्तर, निद्रा रोग, श्वाँस संबंधी रोग।

घ. **अतिभार/मोटापे के कारण**

अतिभार या मोटापा मनुष्य के द्वारा अर्जित कैलोरी एवं व्यय की गई कैलोरी में विभिन्नता के कारण होता है। यदि मनुष्य ज्यादा कैलोरी अर्जित करता है और कम कैलोरी व्यय करता है तो वह अतिभार एवं मोटापे का शिकार हो जाता है। अतिभार एवं मोटापे के प्रमुख कारण निम्न हैं:–

अनियंत्रित खानपान, आनुवांशिक लक्षण, हारमोनल विसंगतियां, निद्रा रोग, व्यायाम न करना एवं आलसी जीवन व्यतीत करना, अधिक भोजन करना, तनाव, अचानक धूम्रपान छोडना।

ड. **अतिभार एवं मोटापे को कम करना**

अतिभार एवं मोटापे को नियंत्रित करने के निम्न दो उद्देश्य हैं–

1. एक स्वस्थ शरीर भार को प्राप्त करना
2. स्वस्थ शरीर भार को लगातार बनाये रखना

मेयो क्लीनिक के अनुसार अतिभार एवं मोटापे को निम्न माध्यमों से नियंत्रित किया जा सकता है–

1. **खान पान पर नियंत्रण एवं परिवर्तन**

अतिभार को कम करने के लिये मनुष्य को कैलोरी अर्जन पर प्रतिबंध लगाना चाहिये और उच्च वसा व कैलोरी प्रदान करने वाले खाद्य पदार्थों के सेवन से बचना चाहिये तथा हरी सब्जियों, फल इत्यादि का सेवन करना चाहिये।

2. **शारीरिक श्रम करना**

शारीरिक श्रम करना और नित्य व्यायाम करना एवं तेजी से पैदल चलना जिससे शरीर द्वारा अर्जित कैलोरी का व्यय होता है जिससे अतिभार एवं मोटापा कम होता है।

3. **चिकित्सीय उपाय**

वेट लास सरजरी (डब्लू0एल0एस0) के माध्यम से पेट या आँतों के आकार को छोटा कर दिया जाता है जिससे व्यक्ति एक समय में सीमित भोजन ही कर पाता है। इससे शरीर द्वारा अर्जित कैलोरी में कमी आती है और मनुष्य अतिभार/मोटापे को नियंत्रित कर लेता है।

2. **सामग्री एवं विधि**

(क) **उद्देश्य**

लडकियों एवं महिलाओं में आत्मक्षमता का परीक्षण एवं गणना करना तथा आत्मक्षमता की अच्छे स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये अपनाये गये आचरणों पर प्रभाव का अध्ययन करना।

(ख) **परिकल्पना**

उच्च आत्मक्षमता वाले लोग अतिभार एवं मोटापे के नियंत्रण के लिये कार्य करते हैं और स्वास्थ्य को अच्छा रखने के लिये सकारात्मक आचरणों जैसे खानपान का नियंत्रण और नियमित व्यायाम आदि का पालन करते हैं। निम्न आत्मक्षमता वाले लोग मानते हैं कि अतिभार/मोटापे को कम नहीं किया जा सकता और वह इसके लिये कोई सकारात्मक प्रयास नहीं करते हैं।

(ग) **प्रयुक्त प्रतिदर्श**

40 लडकियों एवं महिलाओं का प्रतिदर्श, जिनकी आयु 20 वर्ष से 30 वर्ष के मध्य है और सभी प्रतिभागी अतिभार एवं मोटापे से ग्रस्त हैं।

(घ) **चर**

'स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता' एवं 'बी0एम0आई0' में परिवर्तन।

(ङ) **हेल्थ स्पेसिफिक सेल्फ इफीकेसी स्केल**

'हेल्थ स्पेसिफिक सेल्फ इफीकेसी स्केल' की संरचना स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता के मापन हेतु की गई है। इसमें प्रतिभागी से 18 प्रश्न किये जाते हैं। दिये गये उत्तरों के आधार पर स्कोरिंग के माध्यम से उनके प्राप्तांक की गणना की जाती है। इस स्केल में अधिकतम 75 अंक एवं न्यूनतम 15 अंक प्राप्त किये जा सकते हैं। यह स्केल विश्वसनीय एवं तर्कसंगत है और इससे स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता का मापन एक संख्या में किया जा सकता है।

(च) **आँकड़े एकत्रीकरण एवं विश्लेषण की विधि**

प्रतिदर्श के चयन के उपरांत सभी 40 प्रतिभागियों को 'हेल्थ स्पेसिफिक सेल्फ इफीकेसी क्यूश्चनायर' में वर्णित प्रश्नों के आधार पर उनके द्वारा दिये गये उत्तरों को नोट किया गया है। उत्तरों के आधार पर प्रतिभागियों द्वारा अर्जित अंकों की गणना की गई, जो प्रतिभागियों की 'स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता' का मापन करती है। यह प्रक्रिया सभी 40 प्रतिभागियों में की गई और सभी के स्केल में प्राप्त अंकों को नोट किया गया। स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता को x चर के रूप में दर्शाया गया है। सभी प्रतिभागियों का वजन परीक्षण प्रारंभ होने पर नापा गया तथा 3 माह उपरांत वजन पुनः नापा गया। सभी प्रतिभागियों की लम्बाई (मीटर में) नापी गई। वजन एवं लम्बाई के आधार पर सभी प्रतिभागियों के बॉडी मास इन्डेक्स (बी0एम0आई0) की गणना परीक्षण प्रारंभ होने पर तथा 3 माह की अवधि के उपरांत की गई। बी0एम0आई0 में हुये परिवर्तन को नोट किया गया। इस परिवर्तन को y चर के रूप में व्यक्त किया गया। पुनः 'स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता' (x चर) एवं 'बी0एम0आई0' में परिवर्तन (y चर) के मध्य 'सह संबद्धता गुणांक' की गणना की गई, जिससे 'स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता' एवं 'बी0एम0आई0'में परिवर्तन के मध्य संबंध उजागर हो सकें।

3. परिणाम एवं चर्चा

क. प्राप्ताकों का तालिकाओं में प्रदर्शन एवं सह संबद्धता गुणांक की गणना

तलिका – 1 बी0एम0आई0 में 3 माह की अवधि के दौरान हुये परिवर्तन के मापन दर्शाती तालिका

प्रतिभागी संख्या	लम्बाई मीटर में	01.08.2013 को वजन किलोग्राम में	बी0एम0आई0 01.08.2013 को	01.11.2013 को वजन कि0ग्राम	बी0एम0आई0 01.11.2013 को	बी0एम0आई0 में परिवर्तन
1	1.53	63	26.9	58.5	25	-1.9
2	1.52	60	25.9	55.4	23.9	-2
3	1.54	66.3	27.9	59.2	24.9	-3
4	1.50	58.5	26	54.3	24.1	-1.9
5	1.56	63	25.9	58.5	24	-1.9
6	1.57	66.4	27	61.5	25	-2
7	1.57	68.8	27.9	64	26	-1.9
8	1.58	77.1	31	69.7	28	-3
9	1.60	81.9	32	76.5	29.9	-2.1
10	1.50	58.5	26	53.2	23.6	-2.4
11	1.50	58.5	26	53.2	23.6	-2.4
12	1.60	81.9	32	76.5	29.9	-2.1
13	1.58	77.1	31	69.7	28	-3
14	1.57	68.8	27.9	64	26	-1.9
15	1.57	66.4	27	61.5	25	-2
16	1.56	63	25.9	58.5	24	-1.9
17	1.50	58.5	26	54.3	24.1	-1.9
18	1.52	60	25.9	55.4	23.9	-2
19	1.53	63	26.9	58.5	25	-1.9
20	1.54	66.3	27.9	59.2	24.9	-3
21	1.51	61.6	27	61.6	27	0
22	1.52	64.7	28	67	29	1
23	1.52	67	29	67	29	0
24	1.54	61.6	26	61.6	26	0
25	1.54	64	27	68.7	29	2
26	1.55	64.8	27	67.2	28	1
27	1.55	64.8	27	64.8	27	0
28	1.58	74.7	30	74.7	30	0
29	1.57	76.2	31	78.7	32	1
30	1.57	73.8	30	73.8	30	0
31	1.57	73.8	30	73.8	30	0
32	1.57	76.2	31	78.7	32	1
33	1.58	74.7	30	74.7	30	0
34	1.55	64.8	27	64.8	27	0
35	1.55	64.8	27	67.2	28	1
36	1.54	64	27	68.7	29	2
37	1.54	61.6	26	61.6	26	0
38	1.52	67	29	67	29	0
39	1.52	64.7	28	67	29	1
40	1.51	61.6	27	61.6	27	0

तलिका – 2 'स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता' एवं 'बी0एम0आई0' में हुए परिवर्तन के मध्य 'सह संबद्धता गुणांक' की गणना तालिका

X आत्मक्षमता	$X^1 = X-X$	$(X^1)^2$	Y बी0एम0आई0 में परिवर्तन	$Y^1 = Y-Y$	$(Y^1)^2$	$X^1 Y^1$
43	2	4	-1.9	-1.04	1.08	-2.08
49	8	64	-2	-1.14	1.30	-9.12
72	31	961	-3	-2.14	4.58	-66.34
42	1	1	-1.9	-1.04	1.08	-1.04
42	1	1	-1.9	-1.04	1.08	-1.04
50	9	81	-2	-1.14	1.30	-10.26
42	1	1	-1.9	-1.04	1.08	-1.04
72	31	961	-3	-2.14	4.58	-66.34
68	27	729	-2.1	-1.24	1.53	-33.48
72	31	961	-2.4	-1.54	2.37	-47.74
72	31	961	-2.4	-1.54	2.37	-47.74
68	27	729	-2.1	-1.24	1.53	-33.48
72	31	961	-3	-2.14	4.58	-66.34
40	-1	1	-1.9	-1.04	1.08	1.04
50	9	81	-2	-1.14	1.30	-10.26
40	-1	1	-1.9	-1.04	1.08	1.04
40	-1	1	-1.9	-1.04	1.08	1.04
49	8	64	-2	-1.14	1.30	-9.12
40	-1	1	-1.9	-1.04	1.08	1.04
70	29	841	-3	-2.14	4.58	-62.06
50	9	81	0	0.86	0.74	7.74
17	-24	576	1	1.86	3.46	-44.64
17	-24	576	0	0.86	0.74	-20.64
16	-25	625	0	0.86	0.74	-21.50
15	-26	676	2	2.86	8.18	-74.36
16	-25	625	1	1.86	3.46	-46.5
18	-23	529	0	0.86	0.74	-19.78
18	-23	529	0	0.86	0.74	-19.78
17	-24	576	1	1.86	3.46	-44.64
42	1	1	0	0.86	0.74	0.86
25	-16	256	0	0.86	0.74	-13.76
16	-25	625	1	1.86	3.46	-46.50
50	9	81	0	0.86	0.74	7.74
45	4	16	0	0.86	0.74	3.44
17	-24	576	1	1.86	3.46	-44.64
15	-26	676	2	2.86	8.18	-74.36
45	4	16	0	0.86	0.74	3.44
50	9	81	0	0.86	0.74	7.74
18	-23	529	1	1.86	3.46	-42.78
40	-1	1	0	0.86	0.74	-0.86
योग 1640 औसत = 41		$\sum (X^1)^2$ = 15056	योग= (-) 34.2 औसत= (-) .86		$\sum (Y^1)^2$ = 85.96	$\sum X^1Y^1$ =(-) 947.11

सहसम्बद्धता गुणांक (r) $= \frac{\sum X^1 Y^1}{\sqrt{\sum (X^1)^2 \times \sum (Y^1)^2}}$

$= \frac{-947.11}{\sqrt{15056 \times 85.96}}$

$= \frac{-947.11}{\sqrt{15056 \times 85.96}}$

$= \frac{-947.11}{\sqrt{1294214}}$

$= \frac{-947.11}{1137.6}$

$= (-).83$

ख. प्राप्त आँकड़ों के आधार पर अध्ययन की व्याख्या एवं निष्कर्ष

इस अध्ययन का उद्देश्य अतिभार एवं मोटापे से ग्रस्त लडकियों एवं महिलाओं में स्वास्थ्य आचरण प्रोत्साहित करने में स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता की भूमिका के विषय में किया गया है। इस परीक्षण में यह परिकल्पना की गई थी कि उच्च आत्मक्षमता वाले लोग अतिभार एवं मोटापे के नियंत्रण हेतु, अपने खानपान, नियमित व्यायाम इत्यादि में सकारात्मक परिवर्तन करके अतिभार एवं मोटापे पर नियंत्रण कर लेते हैं। इसको प्रमाणित करने हेतु, 40 लड़कियों एवं महिलाओं का, जिनकी उम्र 20 से 30 वर्ष के मध्य थी, का प्रतिदर्श लिया गया था। समस्त प्रतिभागियों की 'स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता' की गणना 'हेल्थ स्पेसिफिक सेल्फ इफीकेसी स्केल' के माध्यम से की गई। समस्त प्रतिभागियों की लम्बाई (मीटर) में नापी गई। प्रतिभागियों के शरीर का वजन परीक्षण प्रारंभ होने पर और तीन माह की अवधि के उपरांत नापा गया। इन आंकडों के आधार पर बी0एम0आई0 (बाडी मास इन्डेक्स) की गणना परीक्षण प्रारंभ होने पर और तीन माह की अवधि के उपरान्त की गई तथा बी0एम0आई0 में हुये परिवर्तनों को नोट किया गया। 'स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता' (x चर) एवं 'बी0एम0आई0' में हुये परिवर्तन'(y चर) के मध्य 'सह संबद्धता गुणांक' की गणना की गई और यह (–).83 आया। इस अध्ययन से यह तथ्य प्रमाणित हुआ कि ऐसे प्रतिभागी जो उच्च स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता रखते हैं, वह अतिभार एवं मोटापे के नियंत्रण हेतु लगातार प्रयास करते रहते हैं और खान पान पर नियंत्रण तथा नियमित व्यायाम करते रहते हैं, परिणामतः उनके बी0एम0आई0, जो अतिभार एवं मोटापे का सूचक है, उसमें कमी आई है। सह संबद्धता गुणांक का ऋणात्मक चिह्न यह व्यक्त करता है कि उच्च आत्मक्षमता वाले लोग अपने सकारात्मक प्रयासों से अपने वजन एवं परिणामतः अपने बी0एम0आई0 में कमी कर लेते हैं। अतिभार एवं मोटापा से पूरे विश्व की जनसंख्या का एक तिहाई भाग प्रभावित है। यह चिन्तास्पद है। अतिभार एवं मोटापा भाँति–भाँति की बीमारियों जैसे, उच्च रक्तचाप, कैंसर, गठिया, मधुमेह को बढावा देते हैं। इससे मनुष्य की सक्रियता समाप्त हो जाती है। उसे चलने–फिरने में असुविधा होती है और समाज उन पर हँसता है। इस अतिभार एवं मोटापे के प्रमुख कारण हैं– आलसी जीवन व्यतीत करना, अनियंत्रित भोजन करना तथा कोई व्यायाम इत्यादि न करना। अक्सर अतिभार एवं मोटापे से ग्रस्त लोग वाह्य कारणों की खोज में लगे रहते हैं और चिकित्सीय उपचार से इसे नियंत्रित करना चाहते हैं, परन्तु उच्च आत्मक्षमता वाले लोग यह मानते हैं कि मोटापे एवं अतिभार का इलाज स्वयं उनके पास है और वह अपनी जीवनशैली में परिवर्तन कर, खानपान पर नियंत्रण कर, नियमित व्यायाम कर अतिभार एवं मोटापे पर नियंत्रण कर लेते हैं और सुखी एवं स्वस्थ जीवन जी लेते हैं। जीवन में सकारात्मक विचार एवं सकारात्मक लोगों के साथ रहकर हम अपनी आत्मक्षमता का विकास कर सकते हैं और हम अपने स्वास्थ्य को अच्छा कर सकते हैं। ऐसे उदाहरण अन्य लोगों के लिये भी उत्प्रेरक का कार्य करेंगे और वह अपनी आत्मक्षमता को विकसित कर, अच्छे स्वास्थ्य को पाएंगे एवं स्वस्थ एवं सुखी जीवन व्यतीत कर सकेंगे। इस अध्ययन से इस तथ्य की पुष्टि हुई है कि उच्च आत्मक्षमता वाले व्यक्ति अपनी जीवन शैली में परिवर्तन, खानपान पर नियंत्रण और नियमित व्यायाम कर अपने अतिभार एवं मोटापे को नियंत्रित करने में सक्षम हैं। अतः आवश्यकता है तो आत्मक्षमता का विकास, जीवन

में सकारात्मक प्रवृत्तियों में संलग्न रहकर अपनी आत्मक्षमता का विकास कर सकते हैं और स्वस्थ एवं सुखी जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

ग. सीमाएं एवं भविष्य में शोध की संभावनाएं

उपरोक्त अध्ययन केवल 40 प्रतिभागियों के प्रतिदर्श पर किया गया है। प्रतिदर्श के विस्तार को बढाया जा सकता है जिससे अधिक अर्थपूर्ण निष्कर्ष निकाले जा सकें। साथ ही स्वास्थ्य संबंधी आत्मक्षमता के परिक्षेत्र का विस्तार कर आर्थिक, सामाजिक, शैक्षणिक, पारिवारिक समस्याओं के निवारण में भी आत्मक्षमता के सहारे एक सफल हल ढूँढा जा सकता है।

4. कृतज्ञता ज्ञापन

मैं मनोविज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ के समस्त सम्मानित अध्यापकों की हृदय से आभारी हूँ, जिन्होंने मानव व्यवहारों के अध्ययन की सूक्ष्म विश्लेषण की क्षमता प्रदान की। यह शोधपत्र सभी अध्यापकों द्वारा प्रदत्त ज्ञान पर आधारित है।

संदर्भ

1. स्नाइडर, सी0 आर0 एवं लोपेज, एस0 जे0(2009), "हैण्डबुक ऑफ पॉजिटिव साइकोलॉजी", ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।
2. बन्डूरा, अल्बर्ट(1977), "सेल्फ इफीकेसीः टुवर्ड ए यूनिफाईंग थ्योरी ऑफ बिहेवियर चेन्ज", साइकोलॉजिकल रिव्यू, खण्ड 84, मु0पृ0 191–215।
3. बन्डूरा, अल्बर्ट(1982) "सेल्फ इफीकेसी मैकेनिज्म इन ह्यूमन एजेंसी", अमेरिकन साइकोलॉजिस्ट, खण्ड 37, मु0पृ0 122–147।
4. बन्डूरा, अल्बर्ट(1997) "सेल्फ इफीकेसीः दि एक्सरसाइज ऑफ कण्ट्रोल", न्यूयॉर्क, फ्रीमैन।

गैलिक एसिड में कार्बाक्सिलिक समूह का पुनर्दिक विन्यास एवं हाइड्रोजन बन्ध

सतीश चन्द्र मिश्र
पूर्व अध्यक्ष, भौतिक विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
पता–555 ग/46/6, चाणक्यपुरी, कृष्णा नगर, लखनऊ–226012, उ0प्र0, भारत

सार

ठोस गैलिक एसिड(3, 4, 5 ट्राईहाइड्रॉक्सी बेंजोइक एसिड) के विस्तृत रेखा प्रोटान चुंबकीय अनुनाद, ताप परास 77–526 डिग्री केल्विन (^{0}के) एवं 7.5 मेगा हर्ट्ज पर अंकित किये गये। 340 ^{0}के तक क्रिस्टल जालक को प्रभावी रूप में दृढ़ पाया गया। द्वितीय आघूर्ण विश्लेषण ने कार्बाक्सिलिक समूह के 348 ^{0}के पर पुनर्दिक विन्यास का सुझाव दिया। गति की सक्रियण ऊर्जा 10.8 किलो कैलोरी/मोल पाई गई। ताप परास 410–526 ^{0}के में p-OH समूह की असामान्य गति पाई गई। संक्रमण ताप पर अथवा ऊपर, क्रिस्टलीय संरचना में कोई अंतर नहीं प्राप्त हुआ।

बीज शब्द– गैलिक एसिड, कार्बाक्सिलिक समूह, पुनर्दिक विन्यास, हाइड्रोजन बन्ध।

Carboxylic group reorientation and hydrogen bonds in Gallic acid

Satish Chandra Misra
Former Head, Department of Physics
B.S.N.V. Post Graduate College, Lucknow-226001, U.P., India
Residence: 555 Ga/46/6, Chanakyapuri, Krishna Nagar, Lucknow-226012, U.P., India

Abstract

Broad line PMR spectra of solid Gallic acid (3, 4, 5 trihydroxy benzoic acid) were recorded in the temperature range 77&526 ^{0}K at 7.5 MHz. The crystal lattice is found to be effectively rigid up to 340 ^{0}K. The analysis of the second moment data suggested the onset of reorientation of carboxylic group at 348 ^{0}K. The activation energy for the motion is found to be 10.8 Kcal/mole. In the temperature range 410-526 ^{0}K, p-OH group is found to exhibit remarkable motion. No change in crystalline structure was observed at or above the transition temperature.

Key words- Gallic acid, carboxylic group, group reorientation, hydrogen bonds.

1. प्रस्तावना

प्रस्तुत प्रोटान चुंबकीय अनुनाद गैलिक एसिड(एक नितांत औषधीय एवं व्यावसायिक महत्व का यौगिक) में –COOH समूह के पुनर्दिक विन्यास की स्तरीय स्थिति एवं यौगिक के वलय में निकटवर्ती तीन –OH समूहों की गतिकी के अध्ययन हेतु किया गया।

1.1 क्रिस्टलीय विवरण

हैरी[1] ने गैलिक एसिड के एक्स–रे विवर्तन छायामों को प्रकाशित किया जो अणुओं में प्रबल हाइड्रोजन बंधों को उद्घाटित करता है। अणु में प्रोटानों की स्थितियाँ सारणी–1 में निरुपित हैं। चित्र–1, संरचना एवं बंध दूरियां दर्शाता है। कार्बाक्सिल समूह एवं तीन –OH समूहों की संरचना, अंतर आणविक हाइड्रोजन बंधों एवं प्रोटानों की परिलक्षित आवर्ती गति को प्रोत्साहित करती है। नमूना यौगिक के ईथाइल प्रतिउत्पाद का मुक्त मूलक जैविक कोशिकाओं की प्रोटीन संरचना[2] में निकट की संबद्धता रखता है तथा कैंसर कोशिकाओं में उनकी सान्द्रता को घटाता है। हाइड्रॉक्सिल समूहों में अनन्योन्य क्रिया है[4] तथा H-बंधक समूहों की पास–पास स्थितियों के कारण अवरोध को भी पाया गया है।[5–6] चमड़ाशोधन गुण[7] का आधार है, पेप्टाइड जोड़ों से प्रबल H-बंधों का होना, जो बेंजहाइड्रॉक्सी का p-OH समूह से कुइनोनाइड संरचना अनुनाद के कारण विकसित होता है।

सारिणी–1

गैलिक एसिड में प्रोटानों के स्थितीय निर्देशांक– एक द्विआयामी विश्लेषण

क्र.सं.	प्रोटान्स	Y	Z
1.	H_1	2.1217	1.2650
2.	H_2	2.1266	−2.2271
3.	H_3	−0.8177	−2.0243
4.	H_4	−3.1095	−0.7012
5.	H_5	−2.1909	1.2250
6.	H_6	1.8625	2.9212

2. गणनाएं

2.1 दृढ़ जाल प्रोटान द्वितीय आघूर्ण

प्रोटान द्वितीय आघूर्ण(S_2) के अंतरआण्विक अंशदान$(S_2)^1$ को वानव्लैक[8] के परिवर्तित संबंध द्वारा परिकलित किया गया। यह मान 7.37 जी[2] पाया गया। पारस्परिक आण्विक अंशदान$(S_2)^2$ की गणना एण्ड्रयू एवं ईऐदीज[9] की विधि द्वारा की गई जिसका मान 6.60 जी[2] प्राप्त हुआ। यह अग्रवाल एवं अन्य[10] के अध्ययन के प्रकाश में तर्कसंगत प्रतीत होता है। इस प्रकार दृढ़जाल प्रोटान द्वितीय आघूर्ण, $(S_2) = (S_2)^1 + (S_2)^2 = 13.97$ जी[2]।

2.2 –COOH समूह के परिघूर्णन हेतु घूर्णन द्वितीय आघूर्ण

श्लिचर[11] के सूत्र द्वारा घूर्णन द्वितीय आघूर्ण को अनुमानित किया जा सकता है। प्रतिस्थापित समूह की पारस्परिक आण्विक गति के कारण कुल दृढ़जाल प्रोटान द्वितीय आघूर्ण में कमी निम्नलिखित समीकरण द्वारा प्राप्त की गई।

$$\left(\Delta W^2\right)_{rot} = \left(\Delta W^2\right)_{r.l.}\left[\frac{3\cos^2\gamma_{jk} - 1}{2}\right]^2$$

ऊपर के कोष्ठक पद का मान पारस्परिक क्रिया के विभिन्न आयामों हेतु 0.53 परिकलित किया गया। कम हुआ घूर्णन द्वितीय आघूर्ण, इस प्रकार, 7.41 जी[2] प्राप्त हुआ और तब समूह परिघूर्णन हेतु सैद्धांतिक कमी का मान(13.97–7.41)=6.56 जी[2] होना चाहिए।

2.3 सक्रियण ऊर्जा

परिवर्तित बी0पी0पी0 सिद्धांत[12-14] जो रेखा चौड़ाई को घूर्णन आवृत्ति से संबंधित करता है, द्वारा संक्रियण ऊर्जा को परिकलित किया जा सकता है। प्रयुक्त समीकरण निम्न है,

$$(\Delta H)^2 = \beta^2 + \left(\frac{2}{\pi}\right) c^2 \tan^{-1}\left(\frac{\alpha\,\gamma\,\Delta H}{2\,\pi\,\nu_c}\right)$$

जिस आरहीनियस समीकरण का प्रयोग किया गया उसका स्वरूप निम्न था,

$$\nu_c = \nu_0 \exp\left(-\frac{E_2}{RT}\right)$$

इस प्रकार सक्रियण ऊर्जा का मान 10.8 किलो कैलोरी/मोल प्राप्त हुआ।

3. विवेचन

77 °के पर सैद्धांतिक दृढ़जाल प्रोटान द्वितीय आघूर्ण (13.97 जी^{2}) प्रायोगिक द्वितीय आघूर्ण(14.30±1जी^{2}) से संतोषजनक रूप से समता दर्शित करता है। यह तथ्य कल्पित आण्विक ढांचे को सत्यापित करता है तथा सुझाव देता है कि अणुजाल ठोस एवं घूर्णनगतिहीन है। 340 °के तक द्वितीय आघूर्ण क्रमशः कम होता जाता है। यह किसी प्रकृति की दोलनगति, जो वास्तविक समूह घूर्णन के प्रारम्भ होने से पूर्व ही घटित होती है, की ओर इंगित करती है। इस गति का कारण संभवतः –OH समूह की अंतरआण्विक गति के कारण है। इस प्रकार की गति की संभावना को कई प्रयोगकर्ताओं ने व्यक्त किया है[16-19]। जारोस्लाव[20] ने दर्शाया है कि कार्बनिक नाभिक में कार्मिक समूह की उपस्थिति से परिणति गति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। –OH समूह के स्टेरिक एवं ढांचागत प्रभावों से –COOH समूह अप्रभावी रहता है तथा बंध आघूर्ण प्रकार का डेस्मोट्रोपिक अनुनाद सशक्त औपचारिक बंध के बनने के साथ–साथ होता रहता है जो समूहगति को अधिक बाधित करता है। ताप परास 340 °के – 352 °के में द्वितीय आघूर्ण अनायास दृढ़जाल मान से 8.02 जी^{2} के मान पर गिर जाता है। यह आकस्मिक मानक्षय पुनर्दिक विन्यास के आरम्भ की ओर इंगित करता है[21,12]। क्रिस्टल संरचनात्मक सममिति अक्ष के चहुंदिशि पूरे अणु के घूर्णन की संभावना को अणु के आकार एवं इसकी समानान्तर तल में बंधन व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए नकारा जा सकता है। गुटॉवोस्की एवं पेके[13] तथा एण्ड्रयू एवं ईऐदेस[22] के सिद्धांतों से पूरे अणु के घूर्णन के कारण $S_2^{(1)}$ में कमी को आंकलित किया जा सकता है। उक्त शोधकर्ताओं ने दिखाया है कि सममिति अक्ष के परितः आण्विक घूर्णन के कारण $S_2^{(1)}$ में 0.24 के गणक से कमी आती है। इन गणनाओं से कम हुए अंतर एवं पारस्परिक अंशदान क्रमशः 2.51 तथा 1.58 जी^{2} प्राप्त हुए और इस प्रकार आण्विक घूर्णन की उपस्थिति से दृढ़जाल प्रोटान द्वितीय आघूर्ण 2.51 + 1.58 = 4.09 जी^{2} कम होना चाहिए। यह मान प्रायोगिक तौर पर प्राप्त कमी (8.02 जी^{2}) के मान से मेल नहीं खाता है। अस्तु, आण्विक घूर्णन की संभावना को नकारना उचित ही है। अन्य संभावना बनती है, –COOH समूह के C–C बंध के परितः घूर्णन की। –COOH समूह घर्णन का द्वितीय आघूर्ण पर प्रभाव को शिलचर[11] के संबंध (जिसका विवरण इसी प्रपत्र में पीछे है) से आकलित किया गया। सैद्धांतिक घूर्णन द्वितीय आघूर्ण 7.41 जी^{2} प्राप्त हुआ जो प्रायोगिक मान 8.02 जी^{2} से पूर्ण अनुरूपता दिखाता है और –COOH समूह घूर्णन की अवधारणा को पुष्ट करता है।

रमैयाह[23] के 303–353 °के ताप परास में अध्ययन एवं यू0वी0 स्पेक्ट्रम भी उक्त सीमा में ताप बढ़ने पर P_{ka} मानों में कमी का सुझाव देते हैं। सेडलेक[24] तथा एडम्स आदि[25] भी घूर्णन की संभावना का सुझाव देते हैं। इस सीमा में सक्रियण ऊर्जा का मान अनुमानतः

12.0 किलो कैलोरी/मोल है(वाघ एवं फेंडिन)[26]। निकटस्थ H– बंधों समूहों के कारण स्टेरिक प्रभावों को रॉबर्ट्स आदि[27] ने दर्शाया है। चूँकि गैलिक एसिड में समूह, आंतरिक स्तर पर दृढ़ता से H– बंधित हैं अतः स्वतंत्र घूर्णन असंभव प्रतीत होता है।

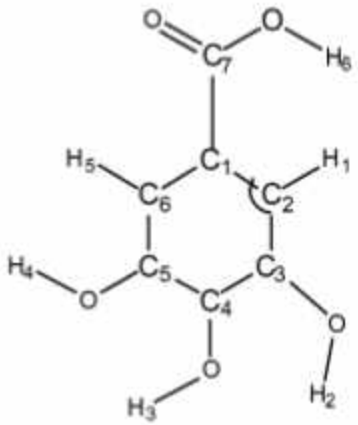

चित्र–1 गैलिक एसिड की आण्विक संरचना

4. प्रयोग एवं निष्कर्ष

विस्तीर्ण रेखा पी0एम0आर0 स्पेक्ट्रम को 12'' चुंबक व्यवस्था के वेरियन एसोसिएट्स के परिवर्तनशील आवृत्ति वाले वर्णक्रममापी से 7. 5 मेगा हर्ट्ज की स्थाई अनुनाद आवृत्ति पर टी0आई0एफ0आर0, बॉम्बे में चित्रित किया गया। परिवर्तित आयाम को छोटा रखा गया। मापन की शुद्धता लगभग ±1 जी[2] थी। प्रोटान द्वितीय आघूर्ण की गणना ट्रैपीजियम नियम, जिसका विवरण अन्यत्र है[15], से व्युत्पन्न रेखाचित्रों द्वारा किया गया। द्वितीय आघूर्ण का ताप के साथ परिवर्तन चित्र–2 में दर्शित है।

5. आभार

प्रपत्र प्रस्तुतकर्ता प्रोफेसर आर0 विजयराघवन, टी0आई0एफ0आर0, बॉम्बे, के प्रति प्रायोगिक सुविधा हेतु अपना हार्दिक आभार प्रकट करते हैं। प्रस्तुतकर्ता यू0जी0सी0, नई दिल्ली के प्रति आर्थिक सहायता हेतु धन्यवाद ज्ञापन करते हैं।

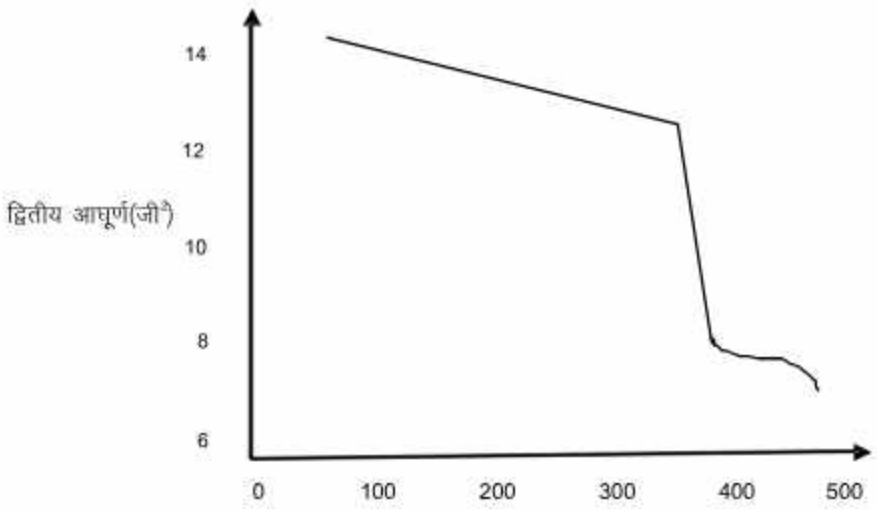

चित्र–2– द्वितीय आघूर्ण का ताप के साथ परिवर्तन(°के)

संदर्भ

1. हैरी, ए0 आर0 एवं आन, जे0 सी0(1956) एनालिटिक0 केम0, खण्ड 28, पृ0 1430।
2. ब्लायोमीफल्ड, एल0 ए0 एवं अन्य (1964) मिक0 काइनेटिका फर्न केटालिजा एकडे0 नौक0 एसएसआर, खण्ड 83(सीए61, 10697 एच)।
3. गोरोदेत्स्की, ऐ0 ऐ0 एवं अन्य(1961) डोपोविदी एकडे0 नौक, यूक्रेन, आर एस आर 812।
4. याशुहारा, एस0 एवं मस्यामा, एस0(1958) कगाकू टोकोग्योम, खण्ड 31, पृ0 399।
5. बायकोया, एल0 एन0 एवं अन्य(1970) जाह0 ऑब्सकेक0 खिम0, खण्ड 40, पृ0 230।
6. लेरोसेन, ऐ0 एल0 एवं अन्य(1953) एनालिटिक0 केम0, खण्ड 25, पृ0 666।
7. शुतुंग, टी0 एवं लोलर, आर0 एम0(1950) ज0 अमेरि0 लीट्क0 केम0 एशोन0, खण्ड 45, पृ0 324।
8. वॉन व्लेक, जे0 एच0(1948) फिजिकल रिव्यू, खण्ड 74, पृ0 1168।
9. एण्ड्रयू, ई0 आर0 एवं ईदेज, आर0 जी0(1953) प्रोसी0 फिजि0 सोसा0, खण्ड ए66, पृ0 415।
10. अग्रवाल, एस0 सी0 एवं अन्य(1972) इण्डियन ज0 ऑफ प्योर एण्ड एप्लाइड फिजिक्स, खण्ड 10, पृ0 602।
11. श्लिचटर, सी0 पी0(1963) प्रिन्सिपल्स ऑफ मैग्नेटिक रैजोनैन्स, हार्पर्स एण्ड रो, न्यू यॉर्क, पृ0 62।
12. ब्लोमबर्गेन, एन0 एवं अन्य(1948) फिजिकल रिव्यू0, खण्ड 73, पृ0 619।
13. गुटॉव्स्की, एच0 एस0 एवं फेक, जी0 ई0(1958) ज0 केम0 फिजि0, खण्ड 18, पृ0 162।
14. कूबो, आर0 एवं टोमिटा, के0(1954) ज0 फिजि0 सो0 जापान, खण्ड 9, पृ0 888।
15. मिश्रा, एस0 सी0 एवं अन्य(1978) करेन्ट साइंस, खण्ड 47, अंक 2, पृ0 37।
16. गुप्ता, आर0 सी0 एवं अग्रवाल, वी0 डी0(1967) इण्डियन ज0 फिज0, खण्ड 41, पृ0 559।
17. ह्वोस्लेफ, जे0(1958) एक्टा क्रिस्टलोग्रा0, खण्ड 11, पृ0 383।
18. नरेर, पी0 जी0 एम0(1938) प्रो0 इण्डियन एकेड0 साइंस, खण्ड 7ए, पृ0 251।
19. रोनाल्ड, आर0 एस0(1964) ज0 फार्म0 फार्माकोला0, खण्ड 18, पृ0 664।
20. जारोस्लाव, एफ0 एवं मिलान, डब्ल्यू0(1959) केम0 एण्ड इंडस्ट्री, खण्ड 52, पृ0 1474।
21. एल्पर्ट, एन0 एल0(1947) फिज0 रिव्यू, खण्ड 72, पृ0 637।
22. एण्ड्रयू, ई0 आर0 एण्ड ईऐदीज, आर0 सी0(1952) प्रो0 फिजि0 सोसा0, ए65, पृ0 371।
23. रमैयाह, एन0 ए0 एण्ड चतुर्वेदी, आर0 के0(1960) प्रोसी0 इण्डियन एकेड0 साइंस, खण्ड 51ए, पृ0 177।
24. सेडलाक, बी0(1966) नाहरंग, खण्ड 10, पृ0 155।
25. एडम्स, एम0 एवं अन्य(1958) ज0 केम0 फिजि0, खण्ड 28, पृ0 774।
26. वॉंघ, जे0 एस0 एण्ड फेडिन, ई0 आई0(1963) फिज0 ट्रवरडोगो टेला, खण्ड 4, पृ0 1633।
27. रॉबर्ट्स, ई0 ए0 एच0(1955) केम0 एण्ड इंड0, खण्ड 631(सीए 50, 4847ए)।

फेरस अमोनियम टंगस्टेट कृत्रिम झिल्ली की विद्युत चालकता का अध्ययन

मुहम्मद अयूब अन्सारी[1], प्रशान्त कुमार पाठक[2], एवं रमेश कुमार प्रजापति[3]
[1]रसायन विज्ञान विभाग, बिपिन बिहारी महाविद्यालय, झाँसी–284001, उ0प्र0, भारत
[2]रसायन विज्ञान विभाग, राजकीय एस0एल0पी0 महाविद्यालय, मुरार, ग्वालियर–474006, म0प्र0, भारत
[3]रसायन विज्ञान विभाग, दिगम्बर जैन कॉलेज, बड़ौत, बागपत–250611, उ0प्र0, भारत
ayub67@rediffmail.com; prashant_pathak58@yahoo.com; ks_dadoriya@gmail.com

सार

विभिन्न सान्द्रता वाले लिथियम, सोडियम एवं पोटेशियम क्लोराईड विलयन में भीगी हुई चर्म पत्र आधारित फेरस अमोनियम टंगस्टेट की संवाहकत्वता का मापन विभिन्न तापक्रमों पर किया गया है। $\Delta H^{\neq}$ $\Delta F^{\neq}$, Ea, $\Delta S^{\neq}$ आदि विभिन्न ऊष्मागतिक मानकों को व्युत्पन्न करने हेतु परिशुद्ध प्रतिक्रिया दर सिद्धान्त अपना कर अंतर आयनिक उछाल दूरी (d) का मूल्यांकन किया गया एवं यह 1.8 A^0 पाई गई। यह पाया गया कि संक्रीयण ऊर्जा भेदन प्रजाति के स्थल पर निर्भर करती है, तथा विद्युत अपघट्य विलयन की सांद्रता के बढ़ने के साथ कम होती है। यह निष्कर्ष निकला कि झिल्ली कम आवेशित है एवं जब आयनिक प्रजातियां झिल्ली से व्यापन कर रही हों तो वह स्वयं के जलयोजन कोष को अतिनिम्न आंशिक रूप से परिघृत करती हैं। इसके ऋणात्मक मान दर्शाते हैं कि आयनों का आंशिक स्थिरीकरण, संभवतः झिल्ली कंकाल के स्थाई आवेशित समूह की, आयनिक अंतःक्रिया एवं अंतरकाशीय पारगमन के कारण है।

बीज शब्द : प्रवाहकत्व, उष्मागतिक मानक, फेरस अमोनियम टंगरस्टेट झिल्ली।

Electrical Conductance Studies of Ferrous ammonium tungstate Model Membrane

Mohd. Ayub Ansari[1], Prashant Kumar Pathak[2] and Ramesh Kumar Prajapati[3]
[1]Department of Chemistry, Bipin Bihari College, Jhansi-284001, U.P., India
[2]Department of Chemistry, Govt. S.L.P. College, Morar, Gwalior-274001, M.P., India
[3]Departmentof Chemistry, Digambar Jain College, Baraut, Baghpat-250611, U.P., India
ayub67@rediffmail.com; prashant_pathak58@yahoo.com; ks_dadoriya@gmail.com

Abstract

Conductances of parchment supported ferrous ammonium tungstate membrane bathed in lithium, sodium and potassium chloride solutions of different concentrations and at different temperatures have been measured. Absolute reaction rate theory has been applied to derive various thermodynamic parameters, $\Delta H^{\neq}$, $\Delta F^{\neq}$ Ea and $\Delta S^{\neq}$. The interionic jump distance (d) has also been evaluated and found to be $1.8A^0$. The activation energies are found to depend on the site of penetrant species and decrease with the increase in the concentration of the bathing solutions. It is concluded that the membrane is weakly charged and ionic species retain their hydration shell at least partially, while diffusing through the membrane pores. The values are negative indicating that partial immobilisation of ions takes place probably due to the interstitial permeation and ionic interaction with the fixed charge groups of the membrane skeleton.

Keywords- Conductance, thermodynamic parameters, ferrous ammonium tungstate membrane.

1. प्रस्तावना

कार्बनिक आयन विनियम पदार्थों की अपेक्षा अकार्बनिक–कार्बनिक आयन विनिमय पदार्थ अधिक महत्व रखते हैं क्योंकि अकार्बनिक आयन विनिमय पदार्थ अधिक तापमान एवं विकरण पर भी स्थिर[1] रहते हैं। आयन विनिमय क्रिया के मूलभूत उपयोग डोनान झिल्ली संतुलन पर आधारित है। यह विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान जैसे मूल्यवान आयनों की पुनः प्राप्ति एवं संवर्धन, अपशिष्ट जल[2] से अवांछनीय आयनों के निष्कासन आदि में बहुत महत्वपूर्ण है। इस पत्र में हमने चर्म पत्र आधारित फेरस अमोनियम झिल्ली द्वारा आयन परिवहन की प्रक्रिया का पता लगाने हेतु एवं अंतर आयनिक उछाल दूरी की गणना करने हेतु विभिन्न तापमानों पर झिल्ली के प्रवाहकत्व आंकड़ों में परिशुद्ध प्रतिक्रिया दर सिद्धांत का वर्णन किया है।

2. सामग्री एवं विधियाँ

चर्म पत्र(अमूल ग्रुप ऑफ कम्पनीज, मुम्बई, भारत) फेरस अमोनियम सल्फेट एवं सोडियम टंगस्टेट के 0.1M जलीय विलयन के उपयोग से अंसारी एवं सहकर्मियों[3] द्वारा सुझाई गई विधि द्वारा फेरस अमोनियम टंगस्टेट झिल्ली बनाई गई। झिल्ली को दो विद्युत अपघट्य सेलों के बीच सील बंद[4] कर दिया जाता है। झिल्ली को लगाने के पहले अर्ध सेलों को विद्युत अपघट्य विलयन (KCl, NaCl या LiCl) से भर दिया गया एवं सतह तरल को बिना हटाए विलयन को स्वच्छ पारे से बदल दिया गया। यदि झिल्ली एवं विलयन के बीच कोई हवा का बुलबुला रह जाता है तो उसे हटा दिया जाता है, ताकि एक समान परिणाम मिल सके। विद्युत प्रवाहित करने हेतु प्लैटिनम इलैक्ट्रोड का प्रयोग किया गया। 10^3 हर्ट्ज आवृत्ति पर प्रत्यक्ष मान चालकता मीटर 303 (सिस्ट्रोनिक्स) द्वारा झिल्ली प्रवाहकत्व को नापा गया। सभी मापन 25^0C, 30^0C, 35^0C, 40^0C, 45^0C, 50^0C ($\pm 0.1^0C$) पर किए गए। विद्युत अपघट्य विलयन, ए0आर0 अभिकर्मक एवं विआयनीकृत जल द्वारा तैयार किए गए।

3. परिणाम एवं चर्चा

विभिन्न सांद्रता वाले लिथियम एवं सोडियम क्लोराइड विलयन में भीगी हुई, फेरस अमोनियम टंगस्टेट झिल्ली के विभिन्न तापक्रमों पर मापे गए प्रवाहकत्व को तालिका–1 में दर्शाया गया है एवं पोटेशियम क्लोराइड के विशिष्ट आंकड़े चित्र–1 में दर्शाए गए हैं। यह आंकड़े दर्शाते हैं कि विद्युत अपघट्य की सांद्रता बढ़ने के साथ विशिष्ट प्रवाहकत्व बढ़ता है एवं अधिकतम प्रतिबंधक मान तक पहुंच जाता है। यह, विभिन्न क्षारीय क्लोराइड एवं नाईलोन झिल्ली की, इजिमा एवं उनके साथियों[5] की खोज का समर्थन करता है। समान परिस्थिति में क्षारीय धातु आयन के, झिल्ली प्रवाहकत्व का क्रम $K^+ > Na^+ > Li^+$ है, जो कि इनकी आयनिक त्रिज्या के समान है। अनेक जांचकर्ताओं[6-10] द्वारा कुछ मानव निर्मित झिल्लियों पर किए गए प्रयोगों में एक सा व्यवहार पाया गया। यह क्रम दर्शाता है कि व्यापन प्रक्रिया में आयन का आकार एक महत्वपूर्ण कारक है। झिल्ली से पारगमन करती हुई जलीय प्रजाति के संबंध में झिल्ली–सारंध्रता उपर्लिखित क्रम को निर्धारित करती प्रतीत होती है। यद्यपि जलयोजित विद्युत अपघट्य का आकार निश्चित तौर पर ज्ञात नहीं है, लेकिन कुछ विद्युत अपघट्य के साथ जुड़े जल के अणुओं के आंकड़े[11, 12] ज्ञात हैं। चित्र–2 में झिल्ली में विभिन्न विद्युत अपघट्य (क्लोराइड) के विशिष्ट प्रवाहकत्व एवं धनायन के जलयोजन की अतिरिक्त ऊर्जा का रेखाचित्र दर्शाया गया है[13]। यह देखा गया कि जलयोजन ऊर्जा के बढ़ने के साथ विशिष्ट प्रवाहकत्व कम हो जाता है, अर्थात जल योजन के कारण आकार में बढ़ोत्तरी होती है। यह इस तथ्य को इंगित करता है कि विद्युत अपघट्य, छिद्र या आयाम मार्ग से, इस तरह विसरित होते है कि, झिल्ली में प्रवेश कर सके। भेदन करती हुई विद्युत अपघट्य के, जल योजन की स्थिति को, गतिशील अवस्था में, इस तरह से विचारित किया जा सकता है, कि अधिक तापक्रमों पर दिए गए विद्युत अपघट्य का अधिकांश भाग बोल्ट्जमैन वितरण के अनुसार $f = e^{-\Delta Ea/RT}$ (यहाँ R गैस नियतांक है)। प्रतिमोल अधिशेष ऊर्जा(ΔE) रखे। इन परिस्थितियों में ऐसी आयनिक प्रजातियां जिन्होंने पर्याप्त जल योजन की मात्रा को खो दिया है, अतः आकार में झिल्ली–रंध्र से छोटी है, झिल्ली में प्रवेश करेगी। यदि झिल्ली के आकार एवं संरचना में कोई अपरिवर्तनीय परिवर्तन नहीं है तो तापक्रमों के बढ़ने के साथ प्रवाहकत्व बढ़ेगा। चित्र 3 में लघु गणक्य प्रवाहकत्व एवं $1/T$ के मध्य रेखागत ग्राफ दर्शाते हैं कि झिल्ली में इस तरह का कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। इस ग्राफ का ढाल आरहीनियस समीकरण के लिए आवश्यक सक्रियण ऊर्जा के मान को दर्शाता है। तालिका 2 से पता चलता है कि विद्युत अपघट्य विलयन की सांद्रता बढ़ने के साथ ही सक्रियण ऊर्जा कम हो जाती है। विभिन्न विद्युत अपघट्य के लिए निश्चित सांद्रता पर सक्रियण ऊर्जा का क्रम $E_aK^+ > E_aN_a^+ > E_aLi^+$ है जो कि क्षारीय धातु धनायन की क्रिस्टेलोग्राफिक त्रिज्या के क्रम के समान है। जब कोई भेदक, किसी कम जल की मात्रा वाले बहुलक पदार्थ में चालन करता है तो उसकी गति बहुलक की खण्डीय गतिशीलता पर निर्भर करती है। विद्युत अपघट्य की व्याप्तित इस बात पर निर्भर करती है कि खण्ड, भेदक प्रजाति को समायोजित करने हेतु एक बड़ा छिद्र[14] बना दे। इस तरह की प्रणाली में

सक्रियण ऊर्जा भेदक प्रजाति के आकार पर निर्भर करती है, अर्थात सक्रियण ऊर्जा भेदक के आकार के आधार पर बढ़ती है। यदि, यह हमारी प्रणाली का मामला है, तो क्षारीय धातु आयनों के प्रकार पर, सक्रियण ऊर्जा की निर्भरता को, आयनिक क्रिस्टलोग्राफिक त्रिज्या द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। जो कि समान प्रणाली में किए गए व्याप्तिता मापन से प्राप्त निष्कर्ष[1, 15] के समान है।

ऊष्मागतिक मानक एवं $\Delta F^{\#}$ परम अभिक्रिया दर सिद्धांत के प्रयोग द्वारा पता किए गए। आयरिंग[16, 17] के अनुसार

$$\pi = \frac{RT}{Nh} e^{-\Delta H^{*}/RT} e^{\Delta S^{*}/R} \quad (1)$$

यहाँ h प्लैंक नियतांक, R गैस नियतांक, N एवोगेड्रो संख्या एवं T परम तापमान हैं। $\Delta F^{\#}$ आयनों के व्यापन की मुक्त सक्रियण ऊर्जा है, जिसे गिब्स हेल्मोट्ज समीकरण (2) के अनुसार दर्शाया गया है।

$$\Delta F^{\#} = \Delta H^{\#} - T\Delta S^{\#} \quad (2)$$

$\Delta H^{\#}$ निम्न समीकरण के अनुसार आरहीनियस सक्रीयण ऊर्जा Ea से संबंधित है।

$$Ea = \Delta H^{\#} + RT \quad (3)$$

लघु गणक्य प्रवाहकत्व एवं $1/T$ के मध्य का ग्राफ रेखीय है। इस ग्राफ की रेखा का कटाव एवं ढाल $\Delta H^{\#}$ एवं $\Delta S^{\#}$ की गणनायें देता है। इससे जांचे जा रहे निकाय की प्रयुक्त प्रणाली में, समीकरण–1 की प्रायोज्यता की सत्यता का पता चलता है। इससे व्युत्पन्न $\Delta H^{\#}$ एवं $\Delta S^{\#}$ के आंकड़ों का उपयोग समीकरण (2) एवं (3) द्वारा $\Delta F^{\#}$ एवं Ea के मानों का पता लगाने हेतु किया गया। इसके परिणाम इंगित करते हैं कि विद्युत अपघट्य भेदन $\Delta S^{\#}$ के ऋणात्मक मानों को उत्पन्न करते हैं। यह गणनायें झिल्ली में आयनों के आंशिक निसंचालन के लिए उत्तरदायी हो सकती हैं, जो कि मुख्यतः झिल्ली के स्थिर आवेश ग्रुप के साथ अंतरकाशीय भेदन एवं आयनिक अंतःक्रिया के कारण हैं।

दूसरी तरफ, निम्न समीकरण है–

$$\pi = \pi_0 e^{-Ea/RT} \quad (4)$$

एवं $$\pi_0 = 2.72\left(KTd^2/h\right)e^{\Delta S^{*}/R} \quad (5)$$

यहाँ K बोल्टमेन नियतांक है एवं d अंतर आयनिक उछाल दूरी है, $d \approx 1.8A^0$ अंतर आयनिक उछाल दूरी, झिल्ली में व्याप्त हो रही प्रजातियों के संतुलन स्थानों के बीच की दूरी है। समीकरण (4) बताता है कि लघु गणक्य प्रवाहकत्व एवं $1/T$ के मध्यग्राफ रेखीय है, जिससे Ea के मान का पता लगाया जा सकता है। $\Delta S^{\#}$ एवं Ea के मानों को समीकरण (4) एवं समीकरण (5) में रखकर अंतर आयनिक दूरी की गणना करते हैं। अंतर आयनिक दूरी का प्रयोग विभिन्न खोजकर्ताओं द्वारा किया गया एवं यह अनुभवजन्य मान ($1–6\,A^0$) के समान है।

आभार– लेखक आवश्यक अनुसंधान सुविधायें प्रदान करने के लिए महाविद्यालय के प्राचार्य के आभारी हैं।

तालिका–1

फेरस अमोनियम टंगस्टेट झिल्ली के आर–पार 1:1 विभिन्न विद्युत अपघट्य की सान्द्रता एवं तापक्रम पर विशिष्ट चालकताओं ($m\ \Omega^{-1}\ cm^{-1}$) के प्रायोगात्मक मान

विद्युत अपघट्य सान्द्रता (मोल. डेसीमी.$^{-3}$)	तापक्रम ($\pm 0.1^0$C)					
	25	30	35	40	45	50
NaCl						
0.1	7.96	9.80	9.50	11.90	12.00	13.90
0.01	5.82	7.40	8.12	8.00	9.00	8.70
0.001	5.20	4.80	4.19	5.90	6.80	7.50
0.0001	2.15	2.80	2.90	3.55	3.90	3.80
LiCl						
0.1	4.90	6.50	6.40	8.10	8.80	8.90
0.01	3.50	5.10	5.10	5.80	6.50	5.80
0.001	2.14	2.60	3.10	4.00	4.00	5.00
0.0001	1.15	2.40	2.90	3.80	3.90	4.50

तालिका–2

फेरस अमोनियम टंगस्टेट झिल्ली के सम्पर्क में 1:1 विद्युत अपघट्य विलयन की विभिन्न सान्द्रताओं के लिये उष्मागतिक मानक

विद्युत अपघट्य सान्द्रता (मोल. डेसीमी.$^{-3}$)	प्राचल (Parameters)			
	Ea (किलो जूल मोल$^{-1}$)	$\Delta H^{\neq}$ (किलो जूल मोल$^{-1}$)	$\Delta F^{\neq}$ (किलो जूल मोल$^{-1}$)	$\Delta S^{\neq}$ (जूल डिग्री मोल$^{-1}$)
KCl				
0.1	10.9	7.8	74.0	224.0
0.01	13.9	8.5	78.1	-234.8
0.001	15.0	11.9	90.5	-234.9
0.0001	23.0	17.3	90.0	-233.9
NaCl				
0.1	10.1	5.5	74.0	-225.0
0.01	13.1	6.7	74.5	-226.9
0.001	15.5	12.3	80.0	-228.0
0.0001	18.9	13.8	83.1	-236.9
LiCl				
0.1	9.9	6.5	74.9	-228.8
0.01	12.8	6.9	75.0	-225.7
0.001	14.0	12.0	78.0	-235.1
0.0001	18.90	8.8	80.50	-237.2

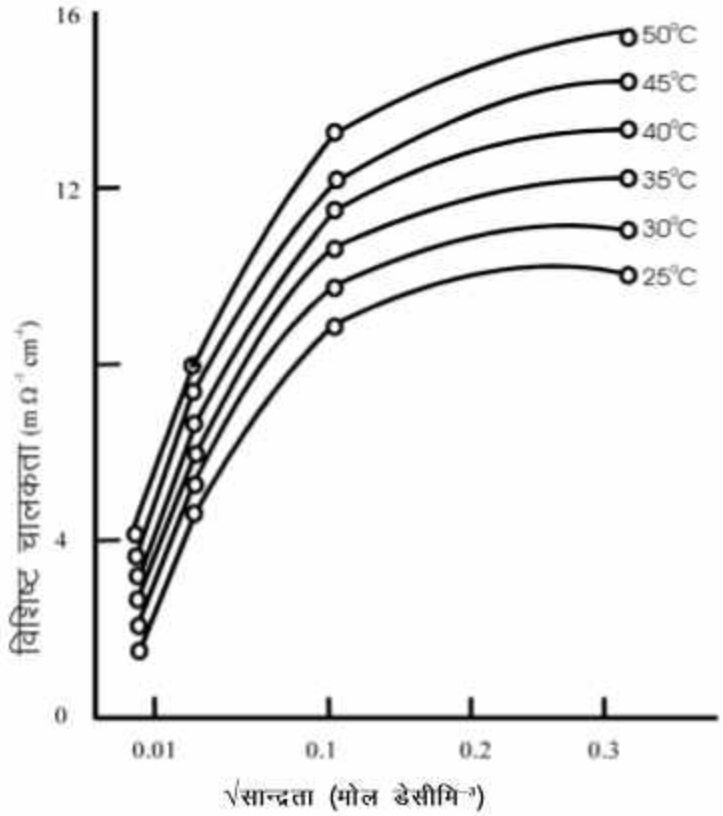

चित्र–1 फेरस अमोनियम टंगस्टेट झिल्ली के लिए **KCl** का विभिन्न तापक्रम पर विशिष्ट चालकता एवं √सान्द्रता के मध्य आरेख

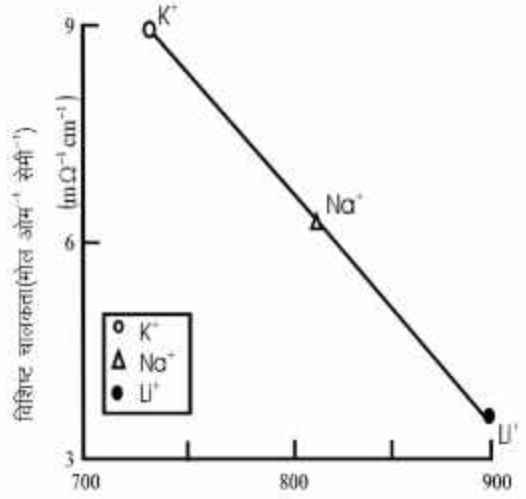

चित्र–2 फेरस अमोनियम टंगस्टेट झिल्ली के आर–पार 25°C पर विभिन्न 1:1 विद्युत अपघट्य की विशिष्ट चालकता एवं जलयोजन की मुक्त ऊर्जा के मध्य आरेख

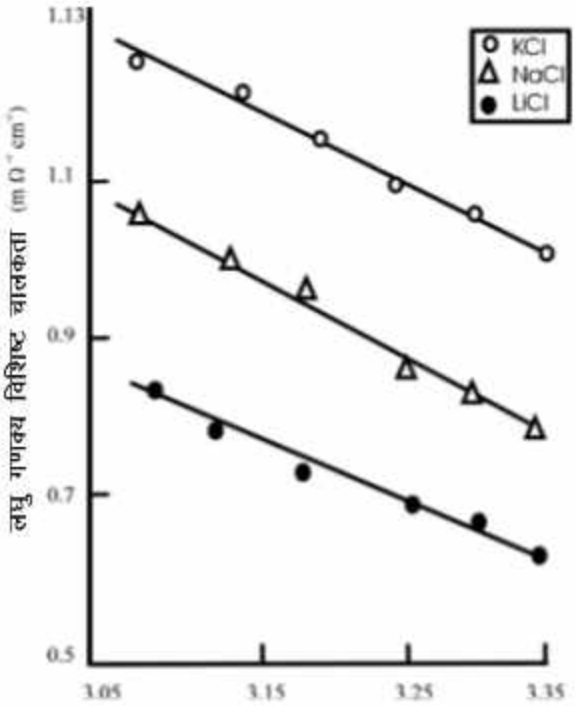

चित्र–3 विशिष्ट चालकता के आरहीनियस वक्र

सन्दर्भ

1. एम्फलेट सी0 बी0(1964) "इनआर्गेनिक आयन एक्सचेंज", इल्सवीयर, एम्सट्रडम।
2. नवी, एस0 ए0; नौशाद एम0 और इनामुद्दीन(2007) जर्नल ऑफ हजार्ड मेटेरियल, खण्ड 142, पृष्ठ 404।
3. अन्सारी, एम0 ए0; कुमार मनोज; गुप्ता अशोक; श्रीवास्तवा, प्रीती एवं कुशवाहा आर0 एस0(2005) इण्डियन काउन्सिल ऑफ कैमिस्ट, खण्ड 22, पृष्ठ 2331।
4. कुशवाहा, आर0 एस0 और अन्सारी एम0 ए0(2008) प्रोग्रेसिव रिसर्च, खण्ड 3, अंक 1, मु0 पृष्ठ 73–75।
5. टी0 इजिमा एवं टी0 ओवारा(1978) के0 जे0 कोलाइड इन्टरफेस साइन्स, खण्ड–63, पृष्ठ 421।
6. खांन, एम0 एम0 ए0 एवं रफीउद्दीन, इनामुद्दीन(2012) मैटीरियल साइन्स एण्ड इंजीनियरिंग, सी–32, मु0 पृष्ठ 1210–1217।
7. खान, एम0 एम0 ए0 एवं रफीउद्दीन, इनामुद्दीन(2013) मैटीरियल साइन्स एण्ड इंजीनियरिंग, सी–33, मु0 पृष्ठ 2360–2366।
8. अन्सारी एम0 ए0; कुमार, मनोज; सिंह एन0; दादौरिया के0 एस0; कुशवाहा आर0 एस0 एवं एस0 अयूब(2012) एडवान्स एप्लाईड साइन्स रिसर्च, खण्ड–3ए अंक 1, मु0 पृष्ठ 251–260।
9. खान, एम0 आर0 एवं रफीउद्दीन, इनामुद्दीन(2013) डिसेलिनेशन, खण्ड–329, मु0 पृष्ठ 103–114।
10. ओनवाउडी, डी0 सी0; अर्फिन, तनवीर एवं स्ट्रडोम सी0 ए0(2014) इलैक्ट्रो किमिका एक्टा, खण्ड–116, मु0 पृष्ठ 217–223।
11. हारन्ड एस0 एस0(1958) "द फिजिकल कैमिस्ट्री ऑफ इलैक्ट्रोलाईट सोलूशन", तीसरा संस्करण (रिनहॉल्ड न्यूयार्क), पृष्ठ 525।
12. मार्कुस, वाई0(1969), आयन एक्सचेंज एण्ड सालवेन्ट एक्ट्रेक्शन ऑफ मेटल काम्पलेक्सेस (इन्टरसाइन्स, न्यूयॉर्क), पृष्ठ 1।
13. क्यूमिन्स, सी0 ए0(1968) "डिफ्यूजन इन पॉलीमर्स", एकेडमिक प्रेस, लन्दन, अध्याय–4।
14. सिद्दीकी, एफ0 ए0 एवं बेग एम0 एन0(1978) कैनेडियन जर्नल ऑफ केमिस्ट्री, खण्ड–56 पृष्ठ 2206।
15. ज्वलेन्सकी, बी0 जे0; आयरिंग एच0 एवं रीज0 सी0 ई0 (1949)जर्नल ऑफ फिजिकल केमिस्ट्री, खण्ड–53, पृष्ठ 1426।
16. ग्लासटन, एस0 एवं लैडलर के0 जे0(1941) "द थ्योरी ऑफ रेट प्रोसेसेज", मेकग्रा–हिल, न्यूयार्क, पृष्ठ–525–544।
17. बेरर, आर0 एम0 एवं रीज, एल0 वी0 सी0(1961) जर्नल ऑफ फिजिकल केमिस्ट्री सॉलिड्स, खण्ड–21, पृष्ठ–12।

पौधों, पर्यावरण और मनुष्यों पर अन्तःपादप सूक्ष्मजीवियों का प्रभाव-एक समीक्षा

शिप्रा शुक्ला[1], तृप्ति मिश्रा[2], प्रतीक दीक्षित[3] व महेश पाल[4]
[1,2,3]शोध छात्र, [4]वैज्ञानिक, पादप रसायन विभाग
सी0एस0आई0आर0–राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drshipra.biotech@gmail.com, drmpal.nbri@rediffmail.com

सार

अन्तःपादप सूक्ष्मजीवी जैसे–(जीवाणु, कवक, एक्टिनोमाइसिटीस) होते हैं, जो पौधे के सुदृढ़ ऊतकों में रहते हैं, तथा इनसे एक सहजीवी सम्बन्ध रखते हैं। यह आज के काल में सर्वत्र रूप से अध्ययन किये गये अधिकतर पौधों से संबंध रखते हैं। कुछ सामान्य रूप से पाए जाने वाले अन्तःपादप–एन्टिरोवैक्टर, कोलैटोट्राइकम, फोमोप्सिस, फाइलोस्टिक्टा, क्लैडोस्पोरियम प्रजातियों से संबंधित होते हैं। अन्तःपादप आबादी सामान्यतः जलवायु परिस्थितियों व स्थान से प्रभावित होती है, जहाँ पोषक पौधा विकसित होता है। यह बड़ी संख्या में यौगिकों को उत्पन्न करते हैं, जो पौधे के विकास, पर्यावरण की स्थिति, सुरक्षा और स्थिरता के लिए उपयोगी होते हैं। अन्तःपादप पौधों की शाकाहारी जन्तुओं से सुरक्षा करते हैं, कुछ निश्चित यौगिकों को उत्पन्न करके कभी–कभी यह जैव–नियंत्रक घटक के रूप में कार्य करते हैं। यह बड़ी संख्या में जैव–नियंत्रक यौगिकों को उत्पन्न करते हैं, जो कि न केवल पौधों बल्कि मनुष्यों के लिए आर्थिक महत्व रखते हैं। यह प्रतिजैविक तथा दवाओं के रूप में उपयोगी होते हैं तथा अनुसंधान के क्षेत्र में उच्च प्रासंगिक यौगिकों अथवा खाद्य उद्योग में भी उपयोगी हैं। इनकी पोषक तत्व चक्र, जैव–निम्नीकरण तथा जैविक उपचार में महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इस समीक्षा में हमने अन्तः पादपों का पौधों, मनुष्यों तथा पर्यावरण पर पड़ने वाले महत्वपूर्ण प्रभावों को समझने का प्रयत्न किया हैं।

बीज शब्द– पौधे, पर्यावरण, मनुष्य, अन्तःपादप सूक्ष्मजीवी।

Impact of Endophytic Microorganisms on plants, environment and human-A review

Shipra Shukla[1], Tripti Misra[2], Pratik Dixit[3] and Mahesh Pal[4]
[1,2,3]Research Scholar, [4]Scientist, Phyto-chemistry Department
C.S.I.R.-N.B.R.I., Lucknow-226001, U.P., India
drshipra.biotech@gmail.com, drmpal.nbri@rediffmail.com

Abstract

Endophytes are microorganisms (bacteria or fungi or actinomycetes) that dwell within robust plant tissues by having a symbiotic association. They are ubiquitously associated with almost all plants studied till date. Some commonly found endophytes are those belonging to the genera *Enterobacter*, *Colletotrichum*, *Phomopsis*, *Phyllosticta*, *Cladosporium* and so forth. Endophytic population is greatly affected by climatic conditions and location where the host plant grows. They produce a wide range of compounds useful for plants for their growth, protection to environmental conditions, and sustainability, in favour of a good dwelling place within the hosts. They protect plants from herb ivory by producing certain compounds which will prevent animals from further grazing on the same plant and sometimes act as biocontrol agents. A large amount of bioactive compounds produced by them not only are useful for plants but also are of economical importance to humans. They serve as antibiotics, drugs and medicines,

or the compounds of high relevance in research besides useful to food industry. They are also found to have some important role in nutrient cycling, biodegradation, and bioremediation. In this review, we have tried to comprehend different roles of endophytes in plants and their significance and impacts on man and environment.

Key words- Plants, environment, human, endophytic microorganisms.

1. प्रस्तावना

अन्तःपादप, जीवाणु तथा कवकीय सूक्ष्मजीवी होते हैं, जो पौधों के स्वस्थ ऊतकों में अन्तःकोशिकीय रूप से निवास करते हैं।[1] बिना किसी रोग के स्पष्ट लक्षण को प्रदर्शित करते हुए यह सर्वत्र रूप से पौधे में निवास करते हैं, आधुनिक समय में अन्तःपादपों को लगभग सभी पौधों से पृथक कर लिया गया है। यह अपने पोषक के साथ जटिल पारस्परिक क्रिया प्रदर्शित करते हैं, जिसमें सहजीविता और प्रतिरोध भी सम्मिलित हैं।[2-4] पौधे सख्ती से अन्तःपादपों के विकास को नियमित करते हैं तथा यह अन्तःपादप कई क्रियाविधियों को धीरे–धीरे ग्रहण करके उन्हें वातावरण के अनुरूप बनाते हैं।[5] स्थिर सहजीवन बनाए रखने के लिए, अन्तःपादप पौधों के विकास के लिए अनेक यौगिकों का उत्पादन करते हैं तथा उन्हें पर्यावरण के लिए बेहतर अनुकूलन में सहायता करते हैं।[6-7] अन्तःपादपी संसाधनों में उन्नति से हमें विविध प्रकार के लाभ हो सकते हैं, जैसे–नवीन, प्रभावी यौगिक, जो कि रासायनिक प्रतिक्रियाओं द्वारा संश्लेशित नहीं किए जा सकते हैं।

2. पृथकीकरण और पहचान(आइसोलेशन एवं आइडेन्टिफिकेशन)

अन्तःपादपीय जीव पौधों के विभिन्न भागों से पृथक किए जाते हैं। यह एक बड़े पैमाने पर पौधों की जड़ों तनों, छाल, पत्ती, डंठल, कलियों, तथा राल नलिकाओं से पृथक किए गए हैं। अनुक्रम आधारित दृष्टिकोण से *पिन्यूमोन्टिकोला*, वेस्टर्नव्हाइट पाइन के बीजों तथा सुइयों में विविध कवकीय सूक्ष्मजीवियों के प्रसारण के लिए उपयोग किया गया था।[8] इससे 750 सतह–निश्कीटित सुई से 2003 कवकीय सूक्ष्मजीवी पृथक किए गए। इसके विपरीत केवल 16 अन्तःपादप, 800 सतह–निश्कीटित बीजों से प्राप्त किए गए हैं। अन्तःपादप सूक्ष्मजीव प्रारम्भिक सतह–निश्कीटित से पृथक किए जाते हैं, जैसे कि सतह ऊतकीय अर्क के संवर्धन से अथवा माध्यम में पादप ऊतकों के प्रत्यक्ष संवर्धन से जो जीवाणु कवकों तथा *एक्टिनोमाइसिटीस* के लिए उपयुक्त हो।[9] प्रारम्भिक समय में सूक्ष्मजीवी प्रजाति जैसे–*एक्रेमोनियम टेरिकोला, मोनोडिक्टाइस कैस्टनी, पेनिसिलियम ग्लेन्डिकोला, फोमा ट्रॉपिका* तथा *टेट्राप्लोआ एरिस्टाटा* अन्तःपादप कवक के रूप में सूचित किए गए हैं।

परम्परागत, अन्तःपादप की पहचान कवक, जीवाणु तथा *एक्टिनोमाइसिटीस* की संरचना के लक्षणों के आधार पर होती है, तथा इनके रासायनिक परीक्षण के द्वारा भी की जाती है। आण्विक जीव विज्ञान के विकास के साथ–साथ राइबोसोमल डी0एन0ए0 आन्तरिक लिखित स्पेसर(आई0टी0एस0) अनुक्रम विश्लेषण व्यापक रूप से पहचान के लिए प्रयोग किए जाते हैं।

3. जलवायु का अन्तःपादप आबादी पर प्रभाव

अन्तःपादप आबादी पौधों से पौधों के लिए प्रजातियों से प्रजातियों के लिए भिन्न होती है। यह एक ही प्रजाति के भीतर न केवल क्षेत्र से क्षेत्र तक बल्कि एक ही क्षेत्र में जलवायु परिवर्तन से बनी भिन्न प्रजाति होती है। अन्तःपादप कवक की संबंधी आवृत्ति में अस्थायी परिवर्तन का अध्ययन चैरेप्रासर्ट एवं अन्य[10] द्वारा किया गया। उन्होंने अपने अध्ययन में यह पाया कि सागौन (टेक्टोना ग्रेन्डिस एल0 *Tectona grandis* L.) और बारिश के पेड़ो (समैनी समन मेर0 *Samanea saman* Merr.) की परिपक्व पत्तियों में पीढ़ी और

प्रजातियों की संख्या उपनिवेश आवृत्ति के साथ–साथ उच्च होती है, जबकि युवा पत्तियों में इनकी पाए जाने की संख्या बरसात के मौसम में बढ़ती है।

तालिका–1

कवक जो सामान्यतः अंन्तःपादप के रूप में पौधे के विभिन्न भागों से पृथक किए गए, निम्न हैं–

अन्तःपादप	पौधा प्रजाति
फोमोप्सिस प्रजाति *Phomopsis species*	नियोलिटसी सेरिसी *Neolitse sericae* पैसैनिआ इड्यूलिस *Pasania edulis* जिन्कगो बिलोबा एल0 *Ginkgo biloba L.* टैक्सस चिनेसिस *Taxus chinensis*
क्लेडोस्योरियम प्रजाति *Cladosporium species*	ऑप्यून्टिआ फाइकस इन्डिका *Opuntia, Ficus indica* सिनैमोमन कैम्फोरा *Cinnamomum camphora*
सी0 हर्बेरम *C. herbarum*	लाइकोपरसिकम इस्क्यूलेन्टम मिल0 *Lycopersicum esculentum* Mill. ट्राइटिकम ऐस्टिवम *Triticum aestivum*
कोलैटोट्राइकम प्रजाति *Colletotrichum species*	ट्राइटिकम ऐस्टिवम *Triticum aestivum* साइट्रस पौधा *Citrus plants* सिनैमोमन कैम्फोरा *Cinnamomun camphora* पैसेनिआ इड्यूलिस *Pasania edulis*
सी0 ग्लोइओस्पोरिओड्स *C. gloeosporiodes*	लाइंकोपरसिकम इस्क्यूलेन्टम मिल0 *Lycopersicum esculentum* Mill.
फाइलोस्टिकटा प्रजाति *Phyllosticta species*	साइट्रस प्रजाति *Citrus species* पैसेनिया इड्यूलिस *Pasania edulis* कोफिआ एरैबिका *Coffea arabica* सेन्टेला ऐसिआटिका *Centella asiatica*
पेनिसिलियम प्रजाति *Penicillium species*	लाइकोपरसिकम इस्क्यूलेन्टम मिल0 *Lycopersicum esculentum* Mill. ह्यूपरजिआ सेराटा *Huperzia serrata*
एक्रेमोनियम प्रजाति *Acremonium species*	टैक्सस चिनेसिस *Taxus chinensis* ह्यूपरजिआ सेराटा *Huperzia serrata*

4. अन्तःपादप तथा आण्विक जीव–विज्ञान

आधुनिक युग में जैव प्रोद्योगिकी के क्षेत्र में विकास के साथ आण्विक स्तर पर अन्तःपादपों पर अधिक अध्ययन किया गया है, जिनमें मेटाजिनोमिक अध्ययन, आण्विक संकेतक का उपयोग, आण्विक क्लोनिंग तथा आनुवांशिक अभिव्यक्ति सम्मिलित हैं। अन्तः पादप के आण्विक अध्ययन में इन्टेरोबैक्टर प्रजाति 638 के जीनोम का सम्पूर्ण अध्ययन किया गया।

5. अन्तःपादपो के प्रयोग तथा भूमिका

पादप–उत्तेजनक *(Phytostimulation)*
रंजक निर्माण *(Pigment Production)*
उत्प्रेरक निर्माण *(Enzyme Production)*
जैवक्रियाशील तथा नवीन यौगिकों के श्रोत *(Source of Bioactives and Novel Compounds)*
जैवनियंत्रक घटक *(Biocontrol Agents)*
पोषक चक्र *(Nutrient Cycling)*

जैवोपचारण / जैव विघटन *(Bioremediation/Biodegradation)*
वाष्पशील यौगिकों का उत्पादन तथा उनके लाभ *(Production of Volatile Organic Compounds and Their Benefits)*

6. ऊतक संवर्धन में अन्तःपादप

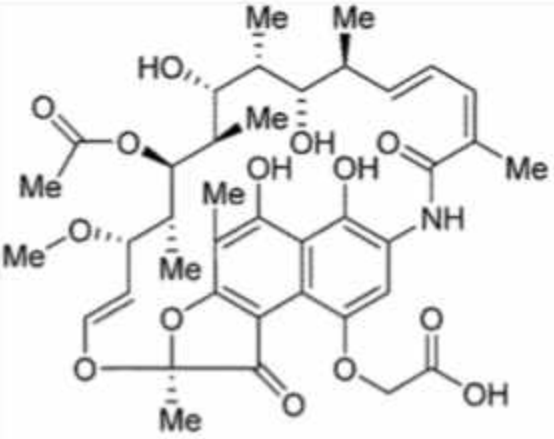

राइफामायसिन बी

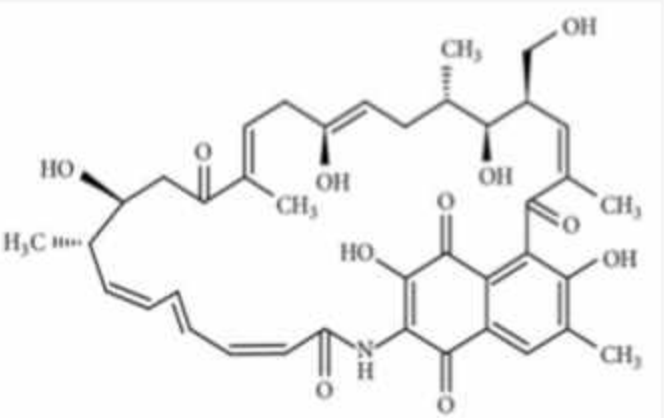

नैफ्थोमायसिन के

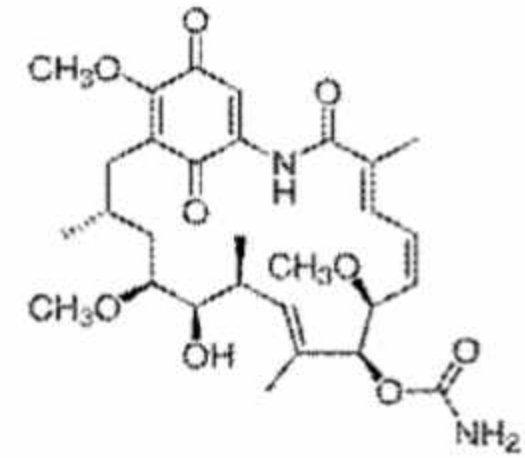

गेल्डनामायसिन

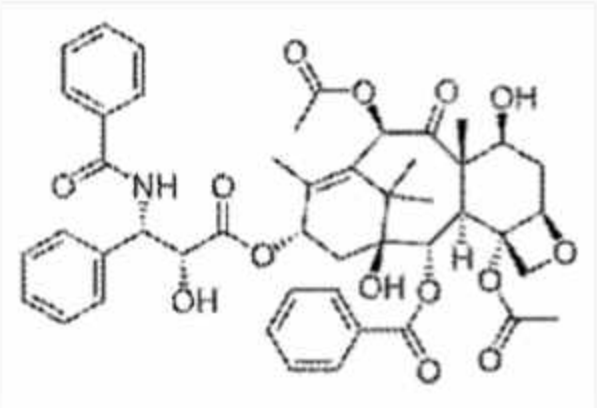

टैक्सॉल(पैक्लिटैक्सेल)

चित्रः– अन्तःपादप सूक्ष्मजीवी द्वारा उत्पन्न कुछ जैवक्रियाशील यौगिकों की रासायनिक संरचनाएँ

7. निष्कर्ष

आधुनिक काल में अन्तःपादप सूक्ष्मजीवियों के अध्ययन में अविष्कारकों का महान योगदान तथा रूचि पाई गई, उन्होंने अन्तःपादपों के अत्यन्त विकसित पहचान तथा पृथकीकरण के आसान तरीकों तथा आण्विक जीव विज्ञान के उपकरणों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। कई प्रकार के जैवक्रिया शील यौगिक जो अन्तःपादपों द्वारा उत्पन्न किए जाते हैं, दवाइयों, कृषि, पर्यावरण तथा उद्योगों के लिए उपयोगी सिद्ध हुए हैं। अन्तःपादप कवक, जीवाणु या *एक्टिनोमाइसिटीस* हो सकते हैं। इस समीक्षा में यह निष्कर्ष निकाला गया कि यह

ज्यादातर एक्टिनोमाइसिटीस होते हैं, जो पौधों के साथ महत्वपूर्ण यौगिकों के उत्पादन में सम्मिलित होते हैं। सामान्यतः कवक जैवोपचारण, जैव–विघटन तथा पोषक–चक्र में सम्मिलित होते हैं, इस प्रकार यह मलबे के भार को वातावरण से बेहतर रूप से कम कर देते हैं। सामान्यतः अन्तःपादपों का जीवाणुविक समुदाय विभिन्न प्रकार के वृद्धि हार्मोन्स का उत्पादन करके पौधों के उच्च विकास में सहायता करते हैं। निष्कर्षतः उपरोक्त सभी तथ्यों से यह सिद्ध होता है कि अन्तःपादप पौधों, पर्यावरण तथा मनुष्यों के ऊपर एक उचित रूप से अच्छा प्रभाव डालते हैं।

सन्दर्भ

1. विल्सन डी0(1995) "इन्डोफाइटः द इवोल्यूशन ऑफ ए टर्म, एण्ड क्लेरिफिकेशन ऑफ इट्स यूज एण्ड डेफिनिशन", ओइकोस, खण्ड 73, अंक 2, मु0पृ0 274–276।
2. कैरॉल जी0 सी0(1988) "फंगल इन्डोफाइट्स इन स्टेम एण्ड लीव्सः फ्रॉम लैटेन्ट पैथोजेन टू म्यूट्यूलिस्टिक सिमबॉयन्ट", इकोलॉजी, खण्ड 69, अंक 1, मु0पृ0 2–9।
3. कैरॉल जी0 सी0(1991) "फंगल इन्डोइट्स असोसिएट्स ऑफ बुडी प्लान्ट्स ऐज इन्सेक्ट एण्टागोनिट्स इन लीव्स एण्ड स्टेम्स", माइक्रोबिअल मेडिअेशन ऑफ प्लान्ट्स हर्बीवोर इन्टेरैक्शन्स, मु0पृ0 253–272।
4. क्ले के0(1988) "फंगल इण्डोफाइट्स ऑफ ग्रासेसः ए डिफेन्सिव म्यूट्यूअलिज्म, बिटवीन प्लान्ट्स एण्ड फंजाई", इकोलॉजी, खण्ड 69, अंक 1, मु0पृ0 10–16।
5. डुडेजा, एस0 एस0; गिरी आर0, सुनेजा; मदान पी0 एवं कोथे ई0(2012) "इन्टेरैक्शन ऑफ इण्डोफिटिक, माइक्रोल्स विद लेम्यूम्स", जर्नल ऑफ बेसिक माइक्रोबॉयोलॉजी, खण्ड 52, मु0पृ0 248–260।
6. दास ए0 एवं वर्मा ए0(2009) "सिमबॉयोसिसः द आर्ट ऑफ लिविंग", सिमबॉयोटिक फंजाई प्रिन्सिपल्स एण्ड प्रैक्टिस, मु0पृ0 1–281।
7. ली, एस0; फ्लोरेस–इन्कारनेकिअन एम0; कोन्ट्रिआस–जैन्टेला एम0; ग्रेसिआ– फ्लौस एल0; इस्कैमिला जे0ई0 एवं केनेडी सी0(2004) "इन्डोल–3–एसिटिक एसिड बायोसिन्थेसिज इज डिफीशिन्ट इन ग्लूकोनेसिटोबैक्टर डाईएजोट्राफिकस स्ट्रेन्स विद म्यूटेशन्स इन साइटोक्रोम सी बायोजेनेसिस जीन्स", जर्नल ऑफ बैक्टीरियोलॉजी, खण्ड 186, अंक 16, मु0पृ0 5384–5391।
8. गैन्ले, आर0 जे0 एवं न्यूकॉम्बे जी0(2006) "फंगल एण्डोफाइट्स इन सीड्स एण्ड नीडिल्स ऑफ पाइनस मॉन्टिकोला", माइक्रोबायोलॉजिकल रिसर्च, खण्ड 110, अंक 3, मु0पृ0 318–327।
9. राय, आए0, दास पी0 के0; प्रसन्ना बी0 एम0 एवं सिंह ए0(2007) "एण्डोफिटिक बैक्टीरियल फ्लोरा इन द स्टेम ऑफ अ ट्रॉपिकल माइज(जी मेज एल0) जीनोटाइपः आइसोलेशन, आइडेन्टीफिकेश एण्ड एन्यूमेरेशन", वर्ल्ड जर्नल ऑफ माइक्रोबायोलॉजी एण्ड बायोटेक्नोलॉजी, खण्ड 23, अंक 6, मु0पृ0 853–858।
10. चैरेप्रासर्ट, एस0; पाइआपिकुअ जे0; थियोन्हिरम एस0; वाल्हेय ए0 जे0 एस0 एवं सिहाओन्थ पी0(2006) "एण्डोफिटिक फंजाई ऑफ टी लीव्स टेक्टोना ग्रेन्डिस एल0 एण्ड रेन ट्री लीव्स समेनिआ समन मेर", वर्ल्ड जर्नल ऑफ माइक्रोबायोलॉजी एण्ड बायोटेक्नोलॉजी, खण्ड 22, अंक 5, मु0पृ0 481–486।

भारतीय वाङ्मय –वैज्ञानिक व तकनीकी श्रेष्ठता

उपेन्द्र नन्दन शुक्ल
पूर्व रीडर, रसायन विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
पता: 280/15, दुर्गापुरी, ब्लन्ट स्क्वायर, लखनऊ–226004, उ0प्र0, भारत

सार

भारतीय वाङ्मय में स्पष्ट उल्लेख उपलब्ध हैं जो सिद्ध करते हैं कि वैदिक युग से ही भारत वर्ष में जड़ी बूटियों पर किये गये शोध के उपरांत उन्हें मात्र आयुर्वेद चिकित्सा में ही नहीं अपितु दैनिक जीवन में भी भोजन का आवश्यक अंग बनाया गया। "रामायण" एवं "महाभारत" में वर्णित युद्ध प्रमाणित करते हैं कि भारत, नाभिकीय ऊर्जा तथा प्रक्षेपास्त्रों के प्रक्षेपण में निष्णात था। पौराणिक काल विभाजन का विस्तृत वर्णन मनीषियों की नितान्त सूक्ष्म तथा वैज्ञानिक दृष्टि का परिचायक है।

बीज शब्द– भारतीय वाङ्मय, आयुर्वेद चिकित्सा, नाभिकीय ऊर्जा, प्रकृति, पुराण।

Indian Vangmaya-scientific and technological excellence

Upendra Nandan Shukla
Former Reader, Department of Chemistry
B.S.N.V. Post Graduate College, Lucknow-226001, U.P., India
Address: 280/15, Durgapuri, Blunt Square, Lucknow-226004, U.P., India

Abstract

In Indian 'Vangmaya'(Composite Literature), Scholars have clearly mentioned that herbal vegetation was not only used in Ayurvedic medicines but in day to day Indian food as well after vigorous research. The description of wars available in epics of 'Ramayan' and 'Mahabharat' prove that India was a nuclear power and was technically very much advanced in Missile technology. 'Purans' provide the detailed description of the finest division of time which proves the scientific approach and advancement of ancient Indian scholars.

Key words- Indian 'Vangmaya', Ayurvedic Medicines, Nuclear Energy, Nature, Purans.

1. प्रस्तावना

जब कभी विज्ञान, वैज्ञानिक या तकनीकी युग की बात आती है तो विज्ञान क्या है ? यह जानने की एक सहज उत्कण्ठा अवश्य जागृत होती है। विभिन्न विद्वानों ने विज्ञान को विविध रूपों में परिभाषित किया है। एक सामान्य प्रचलित अवधारणा है कि किसी भी विषय के विषय ज्ञान को विज्ञान कहा जाता है किन्तु मैं इससे भिन्न अपना स्वयं का मत रखता हूँ। "प्रकृति के रहस्यों को उद्घाटित कर उनकी व्याख्या कर लेना ही विज्ञान होता है।" बात भू–गर्भ की हो, अन्तरिक्ष की हो, वनस्पति की हो, प्राणियों की हो, भौतिकी की हो

अथवा रसायन या किसी अन्य विषय की हो वस्तुतः प्रकृति के किंचित रहस्यों को जान लेना ही हमने उपलब्धि अथवा शोध माना है। जैसे–जैसे हम प्रकृति के सूक्ष्म से सूक्ष्मतम रहस्यों को जानकर उनका मानव के भौतिक, शारीरिक या मानसिक क्षेत्र में उपयोग करते जाते हैं हम स्वयं को विकासोन्मुख, विकसित अथवा तकनीकी दृष्टि से उन्नतिशील मानने लगते हैं। प्रकृति में अन्तर्निहित अतुलनीय सामर्थ्य के कुछ अंश पाकर हम गौरवान्वित होने लगते हैं। भगवद्गीता में कर्मयोग का निरूपण करते समय श्रीकृष्णजी ने कहा है–

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः। अहंकारं विमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते।।'(गीता–3/27)

अर्थात् प्रकृति सब कुछ स्वयं नियन्त्रित करती है किन्तु भौतिकवादी व्यक्ति अहंकारवश अपने को ही कर्ता मानता है।

यदा कदा मानव अतिक्रमणों से विक्षुब्ध हो प्रकृति अपनी अप्रतिम सामर्थ्य की कुछ कलाओं का प्रदर्शन कर मनुष्य को उसकी असमर्थता, उसकी पराधीनता का अनुभव करा देती है। मानव की आयुधी, एवं तकनीकी प्रगति पूर्णतः असहाय हो जाती है– सुनामी और उत्तराखण्ड में आयी प्राकृतिक आपदा इसके ज्वलंत उदाहरण हैं। प्रत्येक युग में मनुष्य प्रकृति के सारे रहस्य जानने के लिए लालायित रहा है और जब उसने अधिकाधिक रहस्य जानकर स्वयं सृष्टि कर्ता बनने की चेष्टा की है तो महाध्वन्श हुये हैं और पूरी की पूरी सभ्यता ही विलीन हो गई। पौराणिक इतिहास के पृष्ठ पलटें तो राम–रावण युद्ध (त्रेता युग), महाभारत युद्ध (द्वापर युग) आदि प्रमाण मिल जायेंगे।

2. वैज्ञानिक दृष्टि

भारतीय दर्शन आत्म चिन्तन व आत्म मन्थन को प्राथमिकता देता है। उसमें प्रदर्शन एवं प्रचार को हेय माना गया है। यहाँ स्वान्तः सुखाय को वरीयता प्राप्त है। यही कारण रहा कि वैज्ञानिक क्षेत्र में अर्जित उपलब्धियाँ प्रसार व प्रचार से वंचित होने के कारण मात्र भारत की सीमाओं में बंधी रह गईं। आयुर्वेद के प्रमुख ग्रन्थ सुश्रुत संहिता (ईसा पूर्व 1000 वर्ष–लैटिन अनुवादक हेसलर के अनुसार)[2] में परमाणु को निम्नवत् परिभाषित किया गया है–

जालान्तरगते भानौ यद् सूक्ष्मं दृश्यते रजः। तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः सउच्चते।।(सुश्रुत संहिता)[2]

अर्थात्– झरोखे से आने वाले सूर्य के प्रकाश में दिखाई देने वाले सूक्ष्म रज(बालू) के कण के तीसवें भाग को परमाणु कहते हैं। यह कथन समीकरण के रूप में निम्नवत् लिखा जा सकता है–

परमाणु = झरोखे के प्रकाश में दिखने वाला सूक्ष्म रज कण/30

जॉन डाल्टन, जिन्होंने 1809 ई0 में परमाणु को परिभाषित कर ख्याति अर्जित की तथा आधुनिक युग के जनक कहे जा सकते हैं, से 2800 वर्ष पूर्व भारत में परमाणु को परिभाषित किया गया था। मनीषियों और चिन्तकों की राष्ट्रीय संगोष्ठियां होती थीं, वाद विवाद के उपरान्त निष्कर्ष निकाले जाते थे किन्तु उनका अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रचार व प्रसार नहीं हो पाता था (सम्भवतः आवागमन की दुरूहताओं के कारण) अतः भारतीय शोध व उनके निष्कर्ष विश्व पटल पर न आ सके। वैदिक काल से प्रचलित भारतीय आयुर्वेद चिकित्सा पद्धति चरक व सुश्रुत (ईसा पूर्व 1000 वर्ष) के समय अपने चरमोत्कर्ष पर थी। वन्य औषधियों, कन्दों, मूलों, त्वक् आदि पर कितना परिश्रम और शोध किया गया होगा जब उनके गुणों के आधार पर चिकित्सा पद्धति में ही नहीं अपितु शरीर की रोधक क्षमता में वृद्धि हेतु इन वन्य उपलब्ध जड़ी बूटियों का प्रयोग दिन प्रतिदिन के भोजन में आरम्भ किया गया होगा। भोजन में प्रयुक्त होने वाले सभी मसाले (हल्दी, धनिया, जीरा, हींग, अदरख आदि) औषधीय गुणों से सम्पन्न हैं तभी तो अमेरिका जैसा समृद्धिशाली देश इन्हें पेटेन्ट कराने के कितने ही असफल प्रयास कर चुका है। आँवला, नीम, इमली, घुघवार इत्यादि की उपादेयता सर्वविदित है और अब तो कितनी ही एलोपैथिक दवाइयों में इनका प्रयोग हो रहा है। च्यवनप्राश जैसी कितनी ही काष्ठादिकों द्वारा निर्मित आयुर्वेदिक औषधियाँ विश्व बाजार में स्थान ले चुकी हैं। वन्य उपलब्ध जड़ी बूटियों के विषय में मनीषियों का निम्न कथन दृष्टव्य है–

अमन्त्रं अक्षरं नास्ति मूलं न औषधम्। अयोग्यः पुरूषः नास्ति योजकः तत्र दुर्लभः।।(शुक्रनीति)[3]

अर्थात्– वर्णमाला का कोई अक्षर ऐसा नहीं है जो मन्त्र न हो, कोई भी मूल ऐसी नहीं है जो औषधीय गुण न रखती हो तथा कोई भी पुरुष ऐसा नहीं जो पूर्णतः अयोग्य हो (जिसमें कोई न कोई गुण न हो) आवश्यकता मात्र एक कुशल संयोजक की है।

3. नाभिकीय ऊर्जा

भारतीय अध्यात्म का केन्द्र बिन्दु है कण–कण में ईश्वर के विद्यमान होने का दर्शन। वैदिक युग में सभ्यता के विकास क्रम में सम्भवतः परमाणु विस्फोट सदृश किसी घटना के उपरान्त ही इस सिद्धान्त का प्रतिपादन हुआ होगा। जब मनीषियों ने परमाणु में सन्निहित अकूत शक्ति का साक्षात्कार किया होगा। शस्त्रों की चर्चा की जाय तो राम–रावण युद्ध (त्रेता युग) तथा महाभारत युद्ध (द्वापर युग) में प्रक्षेपास्त्रों का प्रचुरता से प्रयोग हुआ है। तकनीक इतनी विकसित व सूक्ष्म थी कि उसमें सिद्धहस्तता प्राप्ति हेतु कठोरतम साधना करनी होती थी। प्रक्षेपास्त्र धारण करने के लिए अपनी स्वयं की पात्रता भी प्रमाणित करनी होती थी तभी वो शक्तिपूरित शस्त्र विद्या प्रदान की जाती थी। उस समय प्रक्षेपास्त्र को वापस लेने अथवा लक्ष्य परिवर्तन कर देने की भी क्षमता विकसित थी जिसका वर्णन उपरोक्त ग्रन्थों में प्राप्त होता है। त्रेतायुग में भगवान शंकर के जिस "अजगव" धनुष को सीता स्वयंवर के समय राम ने भंग किया था वह अप्रतिम नाभिकीय शक्ति का पुंज था जिसके नष्ट करने की कला श्री राम के अतिरिक्त किसी को भी नहीं थी यही कारण था कि देश देशान्तर के नरेश धनुष देखते ही तेजहीन हो जाते थे, अपने को असमर्थ पाते थे। महर्षि वाल्मीकि जी ने रामायण में धनुष भंग करने का वर्णन इस प्रकार किया है–

तस्यशब्दो महानासीन्निर्घात सम निःस्वनः। भूमि कम्पश्च सुमहान् पर्वतस्येवदीर्यतः।।
निपेतुश्च नराः सर्वे तेन शब्देन मोहिताः। वर्जयिता मुनिवरं राजानं तौ च राघवौ।।

(वाल्मीकि रामायण–67/18–19)[4]

अर्थात्– उस धनुष के टूटते समय उससे वज्रपात के समान बड़ा घनघोर शब्द हुआ। ऐसा प्रतीत हुआ मानों पर्वत फट पड़ा हो। उस समय पृथ्वी पर भूकम्प आ गया ।।18।। मुनिवर विश्वामित्र, राजा जनक तथा दोनों भाई राम और लक्ष्मण को छोड़कर शेष जितने भी लोग वहाँ खड़े थे, वे सब धनुष टूटने के उस भयंकर शब्द को सुनकर मूर्छित होकर गिर पड़े।

रामचरित मानस में भी तुलसी दास जी ने इसी प्रकार का वर्णन निम्न शब्दों में किया है–

भरे भुवन घोर कठोर रव रवि बाजि तजि मारग चले।
चिक्करहिं दिग्गज डोल महि अहि कोल कूरुम कलमले।।(रामचरित मानस बा0का0/261)[5]

उक्त वर्णन स्पष्ट करते हैं कि वह साधारण धनुष न होकर एक नाभिकीय यंत्र था जिसको नष्ट करने की विधि राम जैसे धीर वीर युग पुरूष के अतिरिक्त किसी को नहीं आती थी।

4. पौराणिक काल गणना विज्ञान

भारतीय वाङ्मय में पुराणों का अतिशय महत्व है वेदों में जो ज्ञान सूत्र रूप में स्थित है, पुराणों ने उसी ज्ञान को स्पष्ट, व्याख्यायित तथा विस्तृत किया है। काल तो सर्वथा अविभाज्य सूक्ष्म तत्व है अमूर्त है तथापि व्यवहार की सिद्धि के लिए उसका विभाजन किया गया है। ज्योतिष शास्त्र तथा पुराणों में इस पर अत्याधिक विचार हुआ है। यहाँ पुराणों की गणना पर संक्षिप्त विचार प्रस्तुत किया जा रहा है।

एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक के काल से मनुष्य के अहोरात्र को सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंशों में विभाजित करने का क्रम बड़ा ही वैज्ञानिक है। श्रीमद्भागवत में बताया गया है–

अणुद्वौ परमाणुस्यात्त्रसरेणुस्त्रयः स्मृतः। जालार्क रश्म्यवगतः रवमेवानुपतन्नगात्।।
त्रसरेणुत्रिकं भुङ्ते यः कालः स त्रुटिः स्मृतः। शतभागस्तु वेधः स्यात्तैस्त्रिभिस्तु लवः स्मृतः।।
निमेषस्त्रिलवो ज्ञेय आग्नातस्ते त्रयः क्षणः।।(श्रीमद्भागवत–3/11/5–7)[6]

अर्थात्– दो परमाणु संयुक्त होकर एक "अणु" होता है और तीन अणुओं के मिलने से एक "त्रसरेणु" बनता है, जिसे झरोखे में से होकर आयी हुई सूर्य की किरणों के प्रकाश के माध्यम से आकाश में उड़ते हुए देखा जा सकता है। ऐसे तीन त्रसरेणुओं को पार करने में सूर्य की किरणों को जितना समय लगता है उसे "त्रुटि" कहते हैं। इससे सौ गुना काल "वेध" कहलाता है तथा तीन "वेध" का एक "लव" होता है। तीन "लव" को एक "निमेष" और तीन "निमेष" को एक "क्षण" कहते हैं।

उपर्युक्त काल विभाजन को निम्न समीकरणों के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता है–

1 त्रुटि	=	3 त्रसरेणुओं को पार करने में सूर्य किरणों द्वारा लिया गया समय।
100 त्रुटि	=	1 वेध
3 वेध	=	1 लव
3 लव	=	1 निमेष
3 निमेष	=	1 क्षण

निमेश के आगे का काल विभाजन श्री विष्णु पुराण में निम्नवत् किया गया है–

निमेषो मानुषो योऽसौ मात्रा मात्रा प्रमाणतः। तैःपंचादशभिः काष्ठा त्रिंशत्काष्ठा कला स्मृता।।
नाडिका तु प्रमाणेन सा कला दश पंच च। नाडिकाभ्यामथ द्वाभ्यां मुहूर्तो द्विजसत्तम।
अहोरात्रं मुहूर्तास्तु त्रिंशन्मासो दिनैस्तथा।। (श्रीविष्णुपुराण–6/3/6–7,9)[7]

अर्थात्– मनुष्य का "निमेष" ही एक मात्रा वाले अक्षर उच्चारण–काल के समान परिमाण वाला होने से "मात्रा" कहा जाता है। पन्द्रह निमेषों की एक "काष्ठा" होती है और तीस "काष्ठा" की एक कला कही जाती है। पन्द्रह "कला" की एक "नाडिका" तथा दो "नाडिकाओं" का एक "मुहुर्त" होता है। तीस "मुहुर्त" का एक दिन–रात होता है तथा तीस दिन–रात का एक मास होता है।

उपरोक्त कथ्य को निम्न प्रकार समीकरणबद्ध किया जा सकता है–

15 निमेष (मात्रा)	=	1 काष्ठा
30 काष्ठा	=	1 कला
15 कला	=	1 नाडिका
2 नाडिका (30 कला)	=	1 मुहूर्त
30 मुहूर्त	=	1 दिन–रात
30 दिन–रात	=	1 मास

5. **निष्कर्ष**

इसी क्रम को आगे बढ़ाने में श्रीहरिवंश पुराण का निम्न अंश दृष्टव्य है:

निमिषैः पंचदशाभिः काष्ठा त्रिंशत् तु ताः कला। त्रिंशत्कलो मुहूर्तस्तु त्रिंशता तैर्मनीषिणः।।

अहोरात्रमिति प्राहुश्चन्द्र सूर्यगतिं नृप। विशेषेण तु सर्वेषु अहोरात्रे च नित्यशः।।
अहोरात्राः पंचदश पक्ष इत्यभिशब्दितः। द्वौ पक्षौ तु स्मृतो मासो मासौ द्वावृतुरुच्यते।।
अब्दं द्व्ययनमुक्तं च अयनं त्वृतुभिस्त्रिभिः। दक्षिणं चोत्तरं चैव संख्या तत्व विशारदैः।।

(श्रीहरिवंश पु0 हरिवंश पर्व–8/3–6)[8]

अर्थात्– पन्द्रह "निमेषों" की एक काष्ठा होती है और तीस काष्ठाओं की एक "कला" होती है। तीस कलाओं का एक "मुहूर्त" होता है तथा बुद्धिमान पुरूष तीस "मुहूर्तों" को एक दिन–रात कहते हैं जिसका निर्धारण सूर्य–चन्द्रमा की गति द्वारा होता है। पन्द्रह दिन–रात (अहरोत्र) का एक "पक्ष" होता है तथा दो "पक्षों" का एक "मास" माना जाता है और दो "मासों" की एक "ऋतु" कहलाती है। तीन "ऋतुओं" का एक "अयन" होता है और दो "अयनों" का एक वर्ष। संख्या के तत्व को जानने वाले मनीषियों ने दोनों अयनों का नाम "दक्षिणायन" और "उत्तरायण" बताया है।

उक्त निष्कर्ष निम्न समीकरणों में व्यक्त किया जा सकता है–

15 निमेष	=	1 काष्ठा
30 काष्ठा	=	1 कला
30 कला	=	1 मुहूर्त
30 मुहूर्त	=	एक दिन–रात(1 अहोरात्र)
15 अहोरात्र	=	1 पक्ष
2 पक्ष	=	1 मास
2 मास	=	1 ऋतु
3 ऋतु	=	1 अयन
2 अयन	=	1 वर्ष

ऐसे 100 वर्षों को मनुष्य की आयु बताया गया है।

उपर्युक्त भारतीय वाङ्मय के संक्षिप्त अंश प्राचीन भारतीय ऋषियों–मनीषियों की वैज्ञानिक दृष्टि, चिन्तन एवं तकनीकी उत्कृष्टता तथा उनके द्वारा किये गये कठोर परिश्रम और कष्ट साध्य शोधों का परिचय अवश्य देते हैं।

संदर्भ

1. श्रीमद्भगवतगीता–3/27।
2. सुश्रुत संहिता हिन्दी विश्वकोष, खण्ड–1, मु0पृ0–383।
3. शुक्रनीति–2/127।
4. वाल्मीकि रामायण–67/18–19।
5. रामचरित मानस बा0 का0/261।
6. श्रीमद्भागवत–3/11/5–7।
7. श्रीविष्णु पुराण–6/3/6–7,9।
8. श्री हरिवंश पुराण हरिवंश पर्व–8/3–6।

भारत में नागरिक केंद्रित ई–शासनः वर्तमान स्थिति और चुनौतियाँ

राकेश कुमार सिंह[1] और रंजन सिंह[2]
[1]वैज्ञानिक–डी (सूचना प्रौद्योगिकी), गोविंद बल्लभ पंत हिमालय पर्यावरण एवं विकास संस्थान
कोसी–कटारमल, अल्मोड़ा–263643, उत्तराखंड, भारत
[2]एमसीए छात्र, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली, भारत ।
rksingh@gbpihed.nic.in, ranjan418@yahoo.com

सार

वर्ल्ड वाइड वेब(डब्ल्युडब्ल्युडब्ल्यु) के द्वारा 'ई–शासन' का विकास आज के युग की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। देश भर में इंटरनेट से जुडे विभिन्न समुदायों के विकसित होने से आज की भारतीय राजनीति के समक्ष नई चुनौतियाँ तथा उन्नति के नए विकल्प उत्पन्न हुए हैं। लोकतांत्रिक राष्ट्र में सरकारी तंत्र विशेष रुप से चयनित विभिन्न मुद्दों पर राष्ट्र के नागरिकों द्वारा तथा नागरिकों के लिए काम करता है। ऐसे अनेकों पहलू हैं जिनके संदर्भ में ई–शासन विशेष रूप से महत्वपूर्ण साबित हुआ है। किसी भी तंत्र के क्रियान्वित तथा विकसित होने के लिए सर्वप्रथम सूचना एवं संचार के संसाधनों की आवश्यकता होती है। सफल लोकतंत्र के लिए जरुरी है कि राष्ट्र के नागरिक एक दूसरे से जुड़ सकें, उनकी आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति हो ताकि विभिन्न विकास नीतियों का निर्माण किया जा सके। नागरिक अपने राजनैतिक प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं तथा उनसे अपेक्षा करते हैं कि वे तीन महत्वपूर्ण विषयों जैसे कि अपने स्वयं के विवेक, अपनी पार्टी के उद्देश्यों तथा अपने निर्वाचन क्षेत्र के हित पर संतुलन बनाकर रखें।

बीज शब्दः ई–शासन, ई–नागरिकता, सूचना प्रौद्योगिकी, सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी, आदि।

Citizen centric e-governance in India: present status and challenges

Rakesh Kumar Singh[1] and Ranjan Singh[2]
[1]Scientist-D(Information Technology)
Govind Ballabh Pant Institute of Himalayan Environment & Development
Kosi-Katarmal, Almora-263643, Uttarakhand, India
[2]M.C.A. Student, I.G.N.O.U., New Delhi, India
rksingh@gbpihed.nic.in, ranjan418@yahoo.com

Abstract

The development of e-governance has been one of the most striking achievements of the World Wide Web (www). Development of the digital communities connected through internet in the country, a number of challenges and opportunities are rising in front of the today's Indian politics. Government systems in democratic nations are primarily a representative mechanism whereby the selected few debate and enact the legislation for and on behalf of the nation nation's citizens. There are many important dimensions that might prove of importance in the context of e-governance. Information and communication resources are essentially needed in functioning and development of any e-Governance system. It is necessary for the successful democratic nation that citizens can communicate with one another and to

discover and represent their wishes in front of the Government representatives so that development policies may be formulated for the citizens. Citizens elect their political representatives and expect them that they must maintain balance on three important aspects which are their own conscience; the philosophy of their party; and the interest of their constituency.

Key words: e-governance, e-citizenship, information technology, information and communication technology, etc.

1. ई–शासन क्या है ?

ई–शासन एक ऐसा तंत्र है जो सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के माध्यम से सरकारी तथा राजनैतिक कार्यों को ज्यादा दक्ष, प्रभावशाली, पारदर्शी और उत्तरदायी बनाता है। यह केन्द्र तथा राज्य के विभागों, नगर निगमों और व्यापारिक संगठनों के बीच संपर्क स्थापित कर देश के नागरिकों को उनके अधिकारों के प्रति सशक्त बनाता है। ई–शासन राजनैतिक स्तर पर सूचना तथा संचार को स्थापित करने में विशेष रुप से सक्षम है तथा ई–संचार (ई–मेल) द्वारा राजनीतिज्ञों को आपस में तथा विभिन्न राजनीतिक विभागों से बड़ी सरलता से जोड़ा जा सकता है। कई राज्य सरकारों द्वारा अपने मंत्रियों तथा पार्षदों को लैपटॉप उपलब्ध कराए गये हैं जिनके माध्यम से वे इन्टरनेट द्वारा अपने राज्य के विभागों और कार्यालयों से संपर्क कर सकते हैं। इस तंत्र द्वारा अपने विचार व्यक्त करने के इच्छुक नागरिक ई–मेल द्वारा अपना संदेश अपने राजनेताओं तक पहुँचा सकते हैं। नागरिकों को कुशल और पारदर्शी समाधान प्रदान करने के लिए सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी विशेष रूप से कारगर है।

2. ई–शासन का इतिहास एवं वर्तमान स्थिति

नब्बे के दशक में वर्ल्ड वाइड वेब के आगमन के साथ वैश्विक स्तर पर विभिन्न सरकारी कार्यक्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी के विकास को प्राथमिकता मिली। उस समय से सूचना प्रौद्योगिकी एवं ई–शासन ने साथ–साथ एक लंबा सफर तय किया है। इंटरनेट और मोबाइल कनेक्शन में वृद्धि के साथ नागरिक व्यापक स्तर पर इस नई विधा का उपयोग सीख रहे हैं। आधुनिक जगत के नागरिक सरकारी तथा व्यापारिक स्तर पर ज्यादा से ज्यादा सूचना एवं ऑनलाइन सेवाओं की उपलब्धता द्वारा अपनी जीवन शैली को अधिकाधिक सुलभ बनाना चाहते हैं। इस प्रणाली ने एक नए तंत्र "ई–नागरिकता" की उत्पत्ति की है। भारत में ई–शासन का जन्म 70 के दशक में हुआ तथा तब भारत सरकार ने इस पद्धति को रक्षा, आर्थिक निगरानी, योजना, चुनाव, जनगणना, कर आदि से संबंधित डाटा प्रबंधन करने तथा आईटी के विकास पर ध्यान देने में लागू किया। अस्सी के दशक में सभी जिला मुख्यालयों को जोड़ने के लिए राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केन्द्र (एनआईसी) ने महत्वपूर्ण कदम उठाए। नब्बे के दशक में सूचना प्रौद्योगिकी के साथ सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी के जुड़ने से गैर सरकारी संगठनों तथा निजी संगठनों को सरकार से जोड़ना संभव हो पाया। इस प्रकार सरकार को अपनी नीतियाँ तथा विकास योजनाएँ व्यापक स्तर पर लागू करने में अधिक से अधिक मदद मिली। विकासशील देशों में ई–शासन सम्बन्धित कानूनों और प्रौद्योगिकियों के विकास को उत्प्रेरित करने के लिए अंर्तराष्ट्रीय संगठनों की महत्वपूर्ण भागीदारी रही है।

राज्य स्तर पर जहाँ एक ओर स्वचालन और कम्प्यूटरीकरण पर जोर दिया गया वहीं दूसरी ओर सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी को सूचना ग्रहण करने तथा संचार द्वारा विभिन्न सेवाओं के प्रसंस्करण तथा वितरण में उपयोग किया गया है। ई–शासन द्वारा राज्य स्तर पर सरकारी नीतियों तथा योजनाओं को राज्य के कोने–कोने तक पहुँचाना संभव हुआ है। हमारे देश की 70 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रो में वास करती है। इस 70 प्रतिशत जनसंख्या के विकास तथा उत्थान में ई–शासन का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सूक्ष्म स्तर पर यह पद्धति सरकारी विभागों में इलेक्ट्रॉनिक फाइल निर्माण, कार्यप्रवाह, लोक शिकायत प्रणाली, बिलों के भुगतान, दिन–प्रतिदिन के कामकाज के लिए सेवा प्रदान करने तथा गरीबी उन्मूलन के लक्ष्य को पूर्ण करने में कारगर साबित हुई है। हर राज्य सरकार ने एक आई टी कार्यबल बनाकर आई टी पॉलिसी दस्तावेज की रूपरेखा तैयार करने की पहल की है।

वर्तमान में कुछ राज्य सरकारों द्वारा लागू महत्वपूर्ण ई–शासन परियोजनाएँ इस प्रकार हैं–

राज्य/ केंद्र शासित क्षेत्र	ई–शासन परियोजनाएँ
आंध्र प्रदेश	ई–सेवा, ई–कार्ड, ई–सिपाही, ऑनलाइन दुकान, ऑनलाइन लेनदेन प्रसंस्करण, आदि।
बिहार	सेल्स टैक्स एडमिनिस्ट्रेशन प्रबंधन सूचना
दिल्ली	स्वचालित वाहन ट्रेकिंग सेवा, इलेक्ट्रॉनिक निकासी प्रणाली, आरसीएस कार्यालयों की वेबसाइटों का कंप्यूटरीकरण, शिक्षा के लिए प्रबंधन सूचना प्रणाली, आदि।
गुजरात	ऑनलाइन सरकारी दस्तावेज, ऑनलाइन जनगणना, ऑनलाइन निविदा सूचना के लिए अनुरोध, प्रपत्र किताब ऑनलाईन, आदि।
हरियाणा	नई दिशा
हिमाचल प्रदेश	लोक मित्र
कर्नाटक	भूमी, कावेरी
मध्यप्रदेश	ज्ञानदूत, ग्राम सपर्क, परिवहन विभाग मे स्मार्ट कार्ड, कृषि विपणन बोर्ड का कम्प्यूटरीकरण, आदि।
महाराष्ट्र	सेतु, ऑनलाइन शिकायत प्रबंधन प्रणाली, आदि।
राजस्थान	जन मित्र, लोक मित्र, आदि।
अरूणाचल प्रदेश	सामुदायिक सूचना केन्द्र।
मणिपुर	समाज कल्याण, खाद्य आपूर्ति और उपभोक्ता मामलों से संबन्धित प्रपत्र, आदि।

3. ई–शासन के समक्ष व्यापक चुनौतियाँ

सन् 1996 के बाद से ही भारत में सरकारी तथा गैर सरकारी दोनो ही क्षेत्रों में ई–शासन के आंतरिक ढाँचे की संरचना तथा इसके बेहतर उपयोग के लिए परस्पर कदम उठाए गए हैं। सशक्त प्रयासों के बावजूद सरकारी तथा निजी स्तर पर ई–शासन का विकास धीमा ही रहा है। इस धीमें विकास का कारण कुछ मूल तत्व हैं जो कि इस प्रकार है–

▪ सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की बुनियादी सुविधाओं के उपयोग में कमी

विभिन्न विभागों में कम्प्यूटर का प्रयोग दस्तावेजों के प्रबंधन के लिए किया जाता है जिसके कारण इसकी पूर्ण कार्य क्षमता का प्रयोग नहीं हो पाता। इसी के परिणामस्वरूप हमारा सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का बुनियादी ढाँचा पिछड़ जाता है। हार्डवेयर की खरीद तथा अनुप्रयोगों के विकास के बीच का अंतराल इतना ज्यादा होता है कि यह अनुप्रयोग जब तक तैयार हो पाता है तब तक हार्डवेयर की कार्य क्षमता सीमित होने लगती है।

▪ सूचना प्रौद्योगिकी का सीमित ज्ञान तथा ई–शासन के प्रति जागरूकता की कमी

भारत में ई–शासन के सफल विकास तथा उपयोग में कमी का मूल कारण इसके प्रति जागरूकता की कमी है। हमारा प्रशासनिक ढाँचा ई–शासन के प्रति इतना सशक्त नहीं हो पाया है कि वह पूर्णतया इस पर निर्भर हो सके। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भी विभिन्न स्तरों पर साक्षरता की कमी है। इसी कारण प्रशासनिक स्तर पर दस्तावेज प्रबन्धन तथा कार्यप्रवाह में इस पद्धति का सशक्त उपयोग नहीं हो पाया है।

▪ सरकारी विभागों का दृष्टिकोण

सरकारी विभागों के कर्मचारियों की मनोवृति निजी क्षेत्र के कर्मचारियों से काफी अलग है। सरकारी कर्मचारी मानते हैं कि वे परंपरागत तौर पर सरकार की धरोहर, जैसे कि महत्वपूर्ण दस्तावेज को संजोए रखने, के लिए कार्यरत हैं। उन्हें लगता कि कार्यप्रवाह तकनीक की व्यवस्था में कोई भी परिर्वतन इस संतुलन को बिगाड़ सकता है। परिणामस्वरूप सरकारी विभागों में सूचना प्रौद्योगिकी तथा ई–शासन को खुले दिल से अपनाने में बाधा आई है।

▪ सरकारी विभागों तथा नीति निर्धारकों के बीच समन्वयन की कमी

किसी भी नई पद्धति की रुपरेखा तैयार करने के लिए सरकारी विभागों तथा विभिन्न विकास संगठनों के बीच समन्वय होना आवश्यक है। ई–शासन की रुपरेखा तैयार करने में सरकारी विभागों, नीति निर्धारकों तथा सरकारी उपयोगकर्ताओं का योगदान सीमित हो रहा है। इसी कारणवश वर्तमान में जो ढाँचा तैयार हुआ है वह विभिन्न ई–शासन परियोजनाओं को विकसित तथा क्रियान्वित करने के लिए पर्याप्त रूप से सशक्त नहीं है।

▪ राष्ट्रीय स्तर पर ई–शासन परियोजनाओं को बनाए रखने के लिए बुनियादी सुविधाओं का अभाव

ई–शासन का समर्थन करने के लिए सरकारी विभागों में बुनियादी ढाँचा मौजूद नहीं है। सरकारी विभागों की व्यथा यह है कि न तो वर्तमान में इनकी आवश्यकताओं को स्पष्ट रुप से परिभाषित किया जा सका है और न ही गैर सरकारी संस्थानों को शामिल करने के लिए कोई दिशानिर्देश बनाए गए हैं। जो कुछ प्रयास विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा किए गए हैं वे केवल कम्प्यूटरीकरण के द्वीपों के रूप में परिभाषित हैं। बुनियादी सुविधाओं के निर्माण के लिए एक समान राष्ट्रीय नीति अपनाने की आवश्यकता है। बेहतर संचार उपकरणों तथा विभागीय स्तर की नेटवर्किंग स्थापित करने की जरुरत है। संचार स्थापित करने वाली संस्था जैसे निकनेट(NICNET) को डाटा ट्रॉंसमिशन के उद्देश्य के लिए बहुत सीमित ढंग से उपयोग किया गया है। जिला, राज्य तथा केन्द्र स्तर पर ई–शासन परियोजनाओं के विकास में कोई ठोस कदम नहीं उठाए गए हैं अपितु संचार प्रौद्योगिकी को केवल ई–संदेश तथा इंटरनेट के प्रयोजन के लिए उपयोग किया जाता है।

4. ई–शासन कार्य योजनाः वर्तमान रणनीति तथा भविष्य के लिए रूपरेखा

भारत में ई–शासन को एक मजबूत अर्थव्यवस्था के निर्माण की बुनियाद माना जाने लगा है तथा इसमें नागरिकों की भागीदारी को महत्व दिया जाने लगा है। स्थानीय तथा केन्द्र स्तर पर कम्प्यूटरीकरण करने तथा ऑनलाइन सुविधाएं प्रदान करने के लिए नागरिकों द्वारा माँग की जाने लगी है। इस युग में सरकार द्वारा अपने नागरिकों के लिए सेवाओं के विकास मापन तथा जवाबदेही के लिए दबाव दिया जाने लगा है। यह दबाव नई प्रशासनिक व्यवस्था में उच्च स्तर की प्रौद्योगिकी को लागू करने के लिए दिया जाने लगा है। वर्तमान में नागरिक सरकारी सेवाओं तथा व्यापारिक जगत की सेवाओं का प्रयोग साथ साथ करते हैं। ई–सेवाओं की बढ़ती माँग के फलस्वरूप आज सरकारी बजट लेखकों द्वारा कम्प्यूटर आधारित बचत योजनाओं की रूपरेखा तैयार की जाने लगी है।

ई–शासन का उद्देश्य विभिन्न सरकारी प्रक्रियाओं को व्यवस्थित बनाने तथा सेवाओं में सुधार करना ही नहीं बल्कि सरकारी परियोजनाओं में नागरिकों की भागीदारी को बढ़ाना भी है। सफल ई–शासन लागू करने के लिए आवश्यक तत्व कुछ इस प्रकार हैं–

- ई–सेवा प्रदान करने के लिए पर्याप्त बैंडविड्थ के साथ देश भर में ई–शासन ढाँचा लागू करना।
- सेवाओं को देश के ग्रामीण क्षेत्रों तक पहुँचाने के लिए क्षेत्रीय भाषाओं का विकल्प तैयार करना।
- राष्ट्रीय नागरिक डाटाबेस तैयार करना।
- ई–शासन के मानकों का राज्यों और केन्द्र सरकार के विभागों के बीच सुरक्षित आदान प्रदान।
- केन्द्र और राज्यों में सुचारु विभागीय कार्यप्रवाह, स्वचालन तथा सहयोग के लिए सूचना केन्द्र स्थापित करना।

एक सफल ई–शासन परियोजना को स्थापित करने तथा बेहतर सेवा प्रदान करने के लिए आवश्यक है कि वह नागरिक केन्द्रित हो। यही ई–शासन की दीर्घकालीन सफलता का मूल मंत्र है। नागरिकों की आवश्यकताओं के हर पहलू के गहन अध्ययन करने की आवश्यकता है। यही अध्ययन एक सशक्त ई–शासन की रुपरेखा की बुनियाद बन सकता है। ऐसा ई–शासन समय के परिवर्तन के अनुकूल प्रयोग किए जाने के लिए सक्षम होता है। एक सफल ई–शासन के प्रारुप के लिए कुछ विशेष तत्वों का होना आवश्यक है जो कुछ इस प्रकार हैं–

▪ ई–शासन के प्रति उच्च स्तरीय साक्षरता तथा प्रतिबद्धता बनाना

नेताओं, लोक सेवकों तथा ई–शासन निर्माताओं का उत्तम प्रशिक्षण सबसे महत्वपूर्ण है। यह प्रशिक्षण नीति निर्माताओं की जरुरतों पर आधारित होना चाहिए। यह सुनिश्चित होना चाहिए कि सभी हितधारकों में सूचना प्रौद्योगिकी का कौशल हो। कुछ विशिष्ट परियोजनाओं में प्रशिक्षण के लिए विशिष्ट दक्षता होनी चाहिए तथा यह परियोजनाएं दस्तावेज प्रबन्धन, कार्यप्रवाह अनुप्रयोग, स्वचालन तथा सुरक्षा से संबधित हो सकती हैं।

▪ उपलब्ध ई–शासन परियोजनाओं का सर्वेक्षण तथा मूल्यांकन

वर्तमान में राज्य स्तर पर ई–शासन के विकास में भिन्नता पाई जाती है। कुछ राज्य अभी तक ई–शासन लागू करने के प्रारम्भिक चरणों पर है वहीं कुछ राज्य एक डिजिटल युग में प्रवेश करने जा रहें है। यही कारण है कि हमारे देश में ई–शासन की अवधारणा के कार्यान्वयन में भारी अंतर है। सभी राज्यों और विभागों में ई–शासन के विकास का सही मूल्यांकन करने की महती आवश्यकता है। लघु परियोजनाओं का कार्यान्वयन करते हुए उन्हें सफलता अथवा विफलता के आधार पर वर्गीकृत किया जाना चाहिए। यह मूल्यांकन इन परियोजनाओं के हर स्तर पर होना चाहिए। इन लघु परियोजनाओं की उपलब्धि के आधार पर बड़े स्तर की परियोजनाओं की रूपरेखा तैयार की जा सकती है।

▪ सरकारी वेबसाईट का कुशल तथा नियमित रूप से प्रबन्धन करना

वर्तमान में सूचना प्रौद्योगिकी के तीव्र विकास के चलते ई–शासन को भविष्य की आवश्कताओं के लिए अनुकूल होना चाहिए। यह आवश्यक है कि सरकार द्वारा कम्प्यूटरीकरण के तकनीकी दिशानिर्देशों का पालन किया जाए तथा यह भी जरूरी है कि सरकारी वेबसाईट के माध्यम से लेनदेन तथा संदेशों के आदान–प्रदान सुरक्षित एवं प्रतिबंधित रूप से हो। ई–शासन की सभी गतिविधियों का नियमित कार्यान्वयन सुनिश्चित करने की आवश्यकता है। एक सफल ई–शासन परियोजना को स्थापित करने के लिए सरकारी वेबसाईट का नियमित रूप से कुशल प्रबन्धन करना अत्यन्त आवश्यक है।

▪ ई–शासन के उत्तम आचरण का पालन करना

ई–शासन की सर्वोत्तम प्रथाओं को राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर लागू किया जा रहा है। यही उत्तम आचरण ई–शासन के विकास को प्रत्येक स्तर पर महान गति देगा। राज्य सरकारों को किसी नई पद्धति के अविष्कार करने की आवश्कता नहीं है अपितु वे पहले के घटनाक्रम से सीख लेकर ई–शासन का विकास कर सकते है।

5. निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि ई–शासन केवल विभागों का कम्प्यूटरीकरण मात्र ही नहीं है बल्कि इसमें सरकारी विभागों की मौलिक कार्यप्रणाली को बदलने की क्षमता है। इसका तात्पर्य है सरकार के समक्ष पुरानी कार्य संस्कृति को बदलकर भविष्य की जिम्मेदारियों के लिए नए लक्ष्य के संचालन की चुनौती प्रस्तुत हुई है। मौजूदा प्रक्रियाओं में बदलाव लाने की आवश्यकता है। आज के युग में पुरानी मानव चालित तकनीक को बदलकर नई स्वचालित तकनीक अपनाने की आवश्यकता है। हमें चाहिए कि हम प्रारम्भिक सूक्ष्म एवं समय निर्धारित परियोजनाओं से पहल करें। यही छोटी–छोटी परियोजनाएँ हमें ई–शासन को बड़े स्तर पर लागू करने में आने वाली बाधाओं को समझने में मदद करेंगी। परिणाम स्वरूप हम ई–शासन द्वारा विभिन्न सरकारी सेवाओं तथा नीतियों को सशक्त रूप से लागू कर सकेंगे। यही हमारे विकासशील से विकसित लोकतंत्र बनने की नींव होगी।

सन्दर्भ

1. http://www.nisg.org/knowledgecenter_docs/D01010001.pdf
2. http://deity.gov.in/content/citizen-centric-e-government-state-e-governance-consultation-workshops

3. http://nbo.nic.in/Webforms/hindi/Images/PDF/urban_and_provery_hindi%202010%20_24_05_2012.pdf
4. http://en.wikipedia.org/wiki/National_e-Governance_Plan
5. http://www.slideshare.net/vikaskanungo/citizen-centric-egovernance-in-india-history-and-future
6. http://deity.gov.in/content/national-e-governance-plan
7. http://egovernance.gov.in/
8. http://india.gov.in/e-governance/national-e-governance-plan
9. http://indiaegov.org/knowledgeexchg/egov_strategy.pdf
10. http://www.indiagovernance.gov.in/files/iras-egov.pdf

मधुमेह प्रकार 1 का ट्राँसविशिष्टीकरण के द्वारा उपचार

सुधीर मेहरोत्रा[1] एवं खुशवंत सिंह[2]
[1]एसोसिएट प्रोफेसर, [2]शोध छात्र, जैव–रसायन विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226007, उ0प्र0, भारत
sudhirankush@yahoo.com, singhkhushwant1991@gmail.com

सार

भारत में किसी भी अन्य देश की अपेक्षा ज्यादा लोग डायबिटीज से ग्रसित हैं। शारीरिक कार्यों में कमी, ज्यादा वसा तथा शुगर का सेवन, ज्यादा तनाव के कारण भारत में मोटे व्यक्तियों की जनसंख्या बहुत तेज दर से बढ़ रही है जिसके कारण मधुमेह का खतरा भी बढ़ता जाता है तथा मधुमेह के साथ कई और बीमारियाँ हो जाती है जैसे दिल की बीमारियाँ, किडनी की बीमारियाँ तथा आँखों की बीमारियाँ। ऑटो इम्यून डिजीजेस वह बीमारियाँ है जिसमें शरीर अपनी ही कोशिकाओं को क्षति पहुँचाने लगता है। इनमें से एक, प्रकार–1 मधुमेह भी है जिसमें शरीर अपने अग्न्याशय की β कोशिकाओं को क्षतिग्रस्त कर देता है जिस कारण इन्सुलिन का बनना बन्द हो जाता है तथा मधुमेह की समस्या उत्पन्न हो जाती है। किसी भी पश्चिम देश के मुकाबले भारतीयों में मधुमेह लगभग 10 साल पहले होती पायी गई है। क्योंकि मधुमेह का इलाज काफी महँगा है, अधिकांश लोग अपना इलाज नहीं करा पाते तथा मर जाते हैं। इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए ट्रांसविशिष्टीकरण के द्वारा एक सफल व सस्ता इलाज देने कि कोशिश में प्रयोग जारी है जिसमें प्रतिलेखन कारकों के द्वारा यकृत के कोशिकाओं को अग्न्याशय की β कोशिका में परिवर्तित करके इन्सुलिन की उत्पत्ति की वृद्धि द्वारा मधुमेह प्रकार–1 से मुक्ति पायी जा सके।

बीज शब्द– मधुमेह, ट्राँसविशिष्टीकरण, इन्सुलिन, वंशावली, कोशिका, प्रतिलेखन कारक।

Diabetes-1 treatment using Transdifferentiation

Sudhir Mehrotra[1] and Khushwant Singh[2]
[1]Associate Professor, [2]Research Scholar, Department of Biochemistry
University of Lucknow, Lucknow-226007, U.P., India
sudhirankush@yahoo.com; singhkhushwant1991@gmail.com

Abstract

In comparison to any other country India have the highest number of diabetes patients. Because of less physical work, consumption of more fat and sugar, increased tension, number of overweight and obese people in India are fast increasing. Because of obesity, occurrence of diabetes in people has increased with occurance of other diabetes associated problems like kidney failure, eye damage, atherosclerosis, coronary artery disease and other heart related problems. Auto-immune diseases are those diseases in which immune system starts damaging self cells of body. Type-1 diabetes is one of the auto-immune disease in which such type of antibodies are generated by body which damages its own pancreatic â cells

leading to decreased level of insulin production resulting in diabetes. On comparing with any western country Indians are becoming diabetic about 10 years earlier on an average. Since treatment is not cost effective many people in India do not get proper treatment and die because of diabetes. To cope with this problem research targeting to transdifferentiate liver cells to pancreatic â cell are in good progress. Results of these researches have given expectation to provide cost effective and efficient treatment for Type-1 diabetes in near future that most of the people can afford. In transdifferetiation transcription factor are used to convert liver cells to pancreatic â cells so as to increase insulin production that can be used to cure Type-1 diabetes.

Key words- Diabetes, transdifferentiation, insulin, cell line, cell, transcription factor.

1. प्रस्तावना

मधुमेह भारत की बड़ी स्वास्थ्य समस्याओं में से एक है। मधुमेह के मरीजों की संख्या सन् 1971 से 2000 के बीच दस गुना बढ़ी है और यह अनुमान लगाया गया है कि 613 लाख भारतीय जो कि 20–79 वर्ष के है इस बीमारी से ग्रसित हैं। इससे यह अनुमान भी लगाया गया है कि सन् 2030 तक मरीजों कि संख्या 1012 लाख तक पहुँच सकती है (डेविड एवं अन्य, 2011)। वर्तमान में 772 लाख ऐसे भारतीय हैं जिन्हें भविष्य में मधुमेह होने का खतरा बहुत ज्यादा है। ऐसे व्यक्तियों को प्री–डायब्टिक कहा जाता है। सन् 2012 में दस लाख भारतीय मधुमेह के कारण मरे थे (आई0डी0एफ0, 2012)। सबसे बड़ी चिन्ता का विषय यह है कि अब पश्चिमी देशों के अपेक्षा लगभग 10 साल पहले ही भारतीयों मे डायबीटिज के लक्षण दिखने लगे हैं। इसका सबसे बडा कारण शारीरिक कार्य का कम होना माना गया है तथा ज्यादा मात्रा में वसा तथा चीनी का सेवन एवं ज्यादा तनाव जिसके कारण शरीर की इन्सुलिन के प्रति संवेदनशीलता कम होती जा रही है (मोहन, 2013)। डब्ल्यू0एच0ओ0 के द्वारा किये गए पर्यवलोकन में यह ज्ञात हुआ कि कम आमदनी वाले भारतीय के घर में किसी को मधुमेह हो तो 25 प्रतिशत आमदनी उसके इलाज में व्यय हो जाती है (डब्ल्यू0एच0ओ0 "डायबिटीज फैक्ट शीट ए° 312", 2013)। इसलिए जल्दी ही एक प्रभावी तथा सस्ते इलाज की भारत को आवश्यकता है।

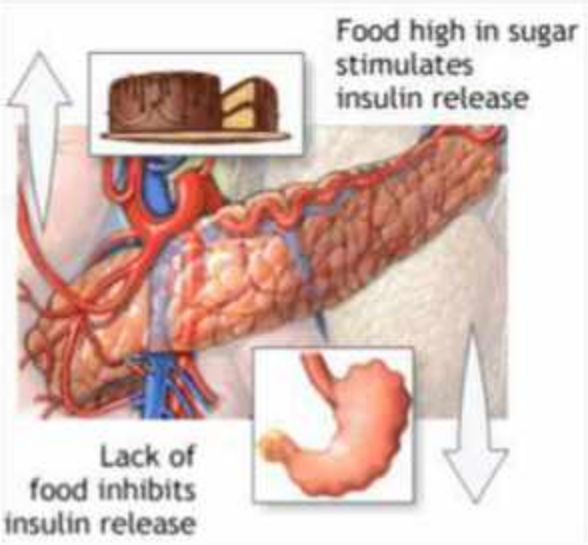

चित्र 1– शरीर में इन्सुलिन पर शुगर का प्रभाव
(स्त्रोतः ए0डी0ए0एम0 मेडिकल इनसाइक्लोपेडिया, संस्करण, 2012)

2. **मधुमेह**

बहुमूत्ररोग (डायबिटीज मेलीटस) या मधुमेह, शरीर की बहुत सारी रसायनिक प्रतिक्रिया की बीमारियों का समूह है। जिसमें मरीज के रक्त में शुगर की मात्रा बढ़ जाती है। रक्त में शुगर की मात्रा बढ़ने के कारण बहुत ज्यादा पेशाब आती है, प्यास बढ़ जाती है तथा भूख भी काफी बढ़ जाती है (कुक एवं प्लॉटनिक, 2008)। अगर इसका उपचार जल्दी न कराया जाय तो बड़े तीक्ष्ण परिणाम सामने आ सकते है जैसे मधुमेह अम्लरक्तता और गैर अम्लरक्तता हाइपर ऑसमोलर कोमा (किताब्वी एवं अन्य, 2009) तथा कुछ लम्बे समय के परिणाम जैसे दिल की बीमारियाँ (सरवर एवं अन्य, 2010), किडनी खराब होना (डब्ल्यू0एच0ओ0 "डायबिटीज प्रोग्राम", 2014) तथा आँखें खराब होने का खतरा (कहलॉन एवं अन्य, 2014) बढ़ जाता है। मधुमेह 3 प्रकार की होती है।

2.1 **प्रकार–1 मधुमेह**

यह शरीर के द्वारा पर्याप्त मात्रा में इन्सुलिन को न बना पाने के कारण होती है इसे "इन्सुलिन डिपेन्डेंट डायबिटीज मेलीटस(आई0डी0डी0एम0)", इन्सुलिन स्वतंत्र बहुमूत्ररोग या "जूवेनायल डायबिटीज" या किशोर मधुमेह भी कहा जाता है यह अग्नयाश्य की β कोशिकाओं के क्षतिग्रस्त होने के कारण होती है (राठौर, 2007)। मधुमेह होने के दो कारण होते हैं पहला कारण अनुवांशिक है जिसमें आई0डी0डी0एम0 1 जो की एम0एच0सी0 श्रेणी–2 के स्थान में क्रोमोसोम संख्या के 6_p21 हिस्से में स्टेन होता है। इस जीन के वेरिएंट जैसे डीआरबी10401, डीआरबीआई0402, डीक्यूए0301 इत्यादि इस बीमारी का खतरा बढ़ाते हैं क्योंकि शरीर इनके विरूद्ध प्रतिरक्षक बनाते हैं जो कि अपने ही β कोशिकाओं को मार देता है। दूसरा कारण वातावरण से जुड़ा है जिसमें वायरस के द्वारा, किसी दवा के द्वारा, या किसी प्रकार के भोजन के कारण ये बीमारी उत्पन्न होती है (ब्ल्यूस्टोन एवं अन्य, 2010)।

2.2 **प्रकार 2 मधुमेह**

यह शरीर का इन्सुलिन के प्रति असंवेदनशील होने के कारण होती है या इन्सुलिन का स्तर बहुत ज्यादा गिर जाने के कारण भी होती है (आरएसएसडीआई टेक्स्टबुक ऑफ डायबिटीज मेलीटस, 2012)। इसे "नॉन इन्सुलिन डिपेन्डेंट डायबिटीज मेलीटस(एनआईडीडीएम)" गैर इन्सुलिन स्वतंत्र बहुमूत्ररोग या "एडल्ट–ऑनसेट डायबिटीज" या वयस्क प्रारम्भिक मधुमेह भी कहा जाता है।

2.3 **गर्भावधि मधुमेह**– यह मधुमेह केवल गर्भवती महिलाओं को होता है।

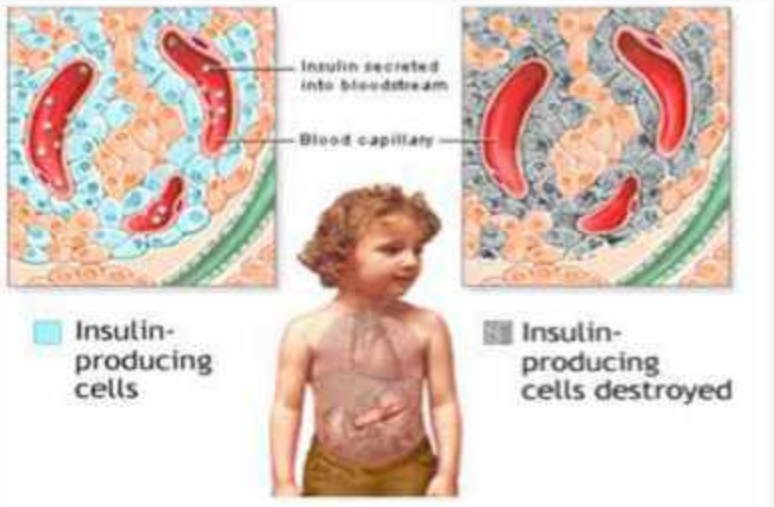

चित्र 2– इन्सुलिन स्रावित कोशिका का विनाश (ए0डी0ए0एम0 मेडिकल इनसाइक्लोपेडिया, संस्करण 2012)

2.4 मधुमेह के लक्षण

ज्यादा पेशाब, प्यास तथा भूख लगना (कुक एवं प्लॉटनिक, 2008) नजर धुंधलाना, सिरदर्द, कमजोरी, खुजली तथा चोटों का धीमे–धीमे सही होना। लम्बी बीमारी के कारण आँखों के लेंस में ग्लूकोज जमने से ग्लूकोमा भी हो सकता है (ए0डी0ए0एम0 मेडिकल इनसाइक्लोपेडिया, संस्करण 2012)।

3. ट्रांसविशिष्टीकरण

किसी वंशावली को फिर से व्यवस्थित करने की प्रक्रिया को ट्रांसविशिष्टीकरण कहते हैं (स्लैक एवं टोश, 2001)। इस प्रक्रिया में किसी पूर्ण विकसित कायिक कोशिका को किसी और प्रकार की कायिक कोशिका में परिवर्तित किया जाता है। वंशावली के विशिष्ट आनुवांशिक जानकारी स्थानान्तरण के कारकों में अदभुत शक्ति देखी गयी जिसके द्वारा किसी भी विकसित कोशिका को एण्डोक्राइन अग्न्याशय की कोशिका (मेइवर एवं फरबर, 2010), तांत्रिक कोशिका (अम्बासूधन एवं अन्य, 2011), रक्त कोशिका (सजाबू एवं अन्य, 2010) तथा हृदय कोशिका (लेडा एवं अन्य, 2010) में परिवर्तित किया जा सकता है।

4. ट्रांसविशिष्टीकरण के द्वारा प्रकार 1 मधुमेह का इलाज

फरबर तथा उनके साथियों (2000) द्वारा पहली बार एक मधुमेही चूहे के यकृत की कोशिकाओं को अग्न्याशय की कोशिकाओं में बदलने का सफल प्रयास किया गया जिसके कारण चूहे में मधुमेह के लक्षण कम होते पाये गये तथा बदली गयी कोशिकाओं को शरीर के प्रतिरोधक शक्ति के कारण कोई क्षति नहीं पहुँची (टर्नहॉल एवं अन्य, 2007) तथा वे कोशिकायें लगभग जीवन भर अच्छी तरह से इन्सुलिन का उत्पादन करती रही हैं।

इस प्रक्रिया में बाहर से दिये गये प्रतिलेखन कारक निष्क्रिय पड़े दूसरे प्रतिलेखन कारण को सक्रिय करते हैं तथा उनके साथ वंशावली को बदल देते हैं (वांग एवं अन्य, 2007)। यह प्रणाली भ्रूणीय अंग उत्पत्ति से ज्यादा तेज है तथा कुछ दिनों में ही पूर्ण हो जाती है (मेइवर एवं अन्य, 2010)। अग्न्याशय कोशिकाओं की उत्पत्ति की प्रणाली होम्योबॉक्स प्रतिलेखन कारक Pdx-1 में शुरू होती है जो की कोशिका के कार्य के लिये भी जरूरी है (स्टोफर्स एवं अन्य, 1997)। इसके बाद आगे की प्रणाली बेसिक हेलिक्स–लूप–हेलिक्स कारक Ngn 3(ग्रैडव्होल एवं अन्य, 2000) तथा न्यूरो डी1 (बर्नार्डो एवं अन्य, 2008) के द्वारा होती है। युग्मी होम्योबॉक्स कारक Pax-6, Pax- 4 तथा Arx सबसे महत्वपूर्ण पाये गये जो कि विभिन्न प्रकार की अंतःस्त्रावी कोशिकाओं को अलग–अलग करते है(ब्रन एवं अन्य, 2008)। β कोशिका के विकास की अन्तिम चरण के लिए उन कोशिकाओं में माफा कारकों का बनना बहुत जरूरी है(काटाओका एवं अन्य, 2002)।

5. परिणाम

1. पीडीएक्स–1 यकृत की कोशिकाओं को अग्न्याशय की कोशिकाओं में परिवर्तन करने में सक्षम है (मेइवर एवं अन्य, 2011)।
2. पीडीएक्स–1, पीएएक्स–4, माफा के एक साथ बनने से ट्रांस विशिष्टीकरण की क्षमता बढ़ जाती है (सॉन्ग एवं अन्य, 2007)।
3. बाहर से दिये गये प्रतिलेखन कारकों के कारण यकृत कोशिका के अन्दर के प्रतिलेखन कारक के सक्रिय होने में बदलाव आते है।
4. आखिरी चरण में आईएसएल–1 की अभिव्यक्ति में वृद्धि के कारण इन्सुलिन तथा सोमेटोस्टैटिन को एक साथ बनाने वाली कोशिकाऐं उत्पन्न होती हैं(विन्सेंट एवं अन्य, 2003)।

6. भविष्य में ट्रांसविशिष्टीकरण के परिप्रेक्ष्य/निष्कर्ष

ट्रांसविशिष्टीकरण के द्वारा β कोशिका को उत्पन्न करने की प्रणाली अभी अपने प्रायोगिक चरण में ही है पर अगर यह प्रणाली सफल होती है तो इसके द्वारा प्रकार–1 मधुमेह का सस्ते व सफल इलाज का फायदा अधिकतर लोग उठा सकेंगे तथा अगर इस प्रणाली के द्वारा सफलता प्राप्त होती है तो यह प्रणाली दूसरी बीमारियों जिसमें दूसरी कोशिकायें क्षतिग्रस्त होती हैं उनका भी सफल उपचार संम्भव है।

संदर्भ

1. व्हाइटिंग, डेविड आर0 एवं अन्य(2011) "आईडीएफ डायबिटीज एटलसः ग्लोबल ऐस्टीमेट्स ऑफ द प्रिवलेंस ऑफ डायबिटीज फॉर 2011 एण्ड 2030", डायबिटीज रिसर्च एण्ड क्लिनिकल प्रैक्टिस, खण्ड 94, अंक 3, मु0पृ0 311–321।
2. "आईडीएफ डायबिटीज एटलस", इंटरनेशनल डायबिटीज फेडरेशन, नवम्बर 2012, वेब0 मार्च 2013।
3. मोहन, वी0(2013) "व्हाय आर इण्डियन मोर प्रोन टू डायबिटीज?", ज0 एसोसि0 फिजिशियन्स इण्डिया, खण्ड 52, मु0पृ0 468–74। एनसीबीआई, वेब, मार्च 2013।
4. "डायबिटीज फैक्ट शीट एन°312", डब्ल्यूएचओ, अक्टूबर 2013, रिट्रीव्ड 25 मार्च 2014।
5. कुक, डी0 डब्ल्यू0, प्लॉटनिक, एल0(2008) "टाइप 1 डायबिटीज मेलिटस इन पेडियाट्रिक्स", पेडियाटर0 रिव्यू, खण्ड 29, अंक 11, मु0पृ0 374–84।
6. ए0डी0ए0एम0 मेडिकल इनसाइक्लोपेडिया, डायबिटीज, लास्ट रिव्यूड, जून 27, 2012।
7. किताब्बी, ए0 ई0; अमपेइरेज, जी0 ई0; मिल्स, जे0 एम0 एवं फिशर, जे0 एन0(2009) "हाइपरग्लाइसेमिक क्राइसेज इन एडल्ट पेशेन्ट्स विद डायबिटीज", डायबिटीज केयर, खण्ड 32, अंक 7, मु0पृ0 1335–43।
8. सरवर, एन0; गाओ, पी0; सेशासाई, एस0 आर0 एवं अन्य(2010) "डायबिटीज मेलिटस, फास्टिंग ब्लड ग्लूकोज कन्सेन्ट्रेशन, एण्ड रिस्क ऑफ वैस्कुलर डिसीजः ए कोलैबोरेटिव मेटा–एनालिसिज ऑफ 102 प्रोस्पेक्टिव स्टडीज" [doi:10.1016/S0140-6736(10)60484-9]
9. "डायबिटीज प्रोगाम" डब्ल्यू0एच0ओ0, रिट्रीव्ड 22 अप्रैल 2014।
10. काहलून, आर0; जेलेटी, बी0; जाओली, एस0 एवं अन्य(2014) "प्रिवेलैंस एण्ड कॉजेस ऑफ कवजुअल इंपेयरतेंट इन डायबिटिक पेशेंट्स इन ट्यूनीशिया", नॉर्थ अफ्रीका, आई(लंदन)[doi: 10.1038/eye.2014.131]
11. राठौर, के0 एल0(2007) "डायबिटीज ट्रीटमेंट–ब्रिजिंग द ड्राइव", द न्यू इंग्लैंड जर्नल ऑफ मेडिसिन, खण्ड 356, अंक 15, मु0पृ0 1499–501।
12. ब्ल्यूस्टोन, जे0 ए0; हेरोल्ड, के0 एवं आइजेन्बर्ग, जी0(2010) "जेनेटिक्स, पैथोजेनेसिस एण्ड क्लिनिक इंटरवेंशन्स इन टाइप 1 डायबिटीज", नेचर, खण्ड 464, अंक 7293, मु0पृ0 1293–1300।
13. "आर0एस0एस0डी0आई0 टेक्सटबुक ऑफ डायबिटीज मेलिटस रिव्यू", द्वितीय संस्करण, न्यू दिल्ली, जेपी ब्रदर्स मेडिकल पब्लिशर्स, 2012, पृ0 235(आईएसबीएन–9789350254899)।
14. स्लैक, जे0 एम0; टोश, डी0(2001) "ट्रांसडिफ्रैंशिएशंस एण्ड मेटाप्लासिया–स्विचिंग सेल टाइप्स", कर0 ओपिन0 जेनेट0 डेवेलप0, खण्ड 11, मु0पृ0 581–586।
15. मेइवार–लेवी, आई0 एवं फरवर, एस0(2010) "एडल्ट सेल फेट रिप्रोग्रामिंगः कन्वर्टिंग लिवर टू पैनक्रियाज", मेथड्स मॉल0 बायो0, खण्ड 636, मु0पृ0 251–283।
16. अम्बासूधन, आर0; टालन्टोवा, एम0 एवं अन्य(2011) "डायरेक्ट रिप्रोग्रामिंग ऑफ एडल्ट ह्यूमन फाइब्रोब्लास्ट टू फंक्शनल न्यूरॉन्स अंडर डिफाइंड कंडीशंस", सेल स्टेम सेल, खण्ड 9, मु0 पृ0 113–118।
17. सजाबो, ई0 एवं अन्य(2010) "डायरेक्ट कंवर्जन ऑफ ह्यूमन फाइब्रोब्लास्ट टू मल्टीलिनिऐज ब्लड प्रोजीनिटर्स", नेचर, खण्ड 468, मु0पृ0 521–526।

18. लेडा, एम0 एवं अन्य(2010) "डायरेक्ट रिप्रोग्रामिंग ऑफ फाइब्रोब्लास्ट इनटू फंक्शनल कारडियोमायोसाइट् बाय डिफाइंड फैक्टर्स", सेल, खण्ड 142, मु0पृ0 375–386।
19. टर्नहॉल–रॉन के0 एवं अन्य(2007) "एक्टोपिक पीडीएक्स–1 एक्सप्रेशन इन लिवर एमेलियोरेट्स टाइप–1 डायबिटीज", जर्नल ऑफ ऑटोइम्यूनिटी, खण्ड 28, अंक 2–3, मु0प्र0 134–42।
20. फर्वर, एस0 एवं अन्य (2000) "पैनक्रियाटिक एण्ड ड्यूओडेनल होमियोबॉक्स जीन 1 इन्ड्यूसेज एक्सप्रेशन ऑफ इंसुलिन जीन्स इन लिवर एण्ड अमेलियोरेट्स स्ट्रेप्टोजोटोकिन–इंड्यूज्ड हाइपरग्लाइसीमिया", नेचर मेडिसिन, खण्ड 6, मु0प्र0 568–572।
21. वांग, ए0 वाई0; एहरहार्ड्ट, ए0; जू, एच0 एवं के, एम0 ए0(2007) "एडिनोवायरस ट्रांसडक्शन इज रिक्वायर्ड फॉर द करेक्शन ऑफ डायबिटीज यूजिंग पीडीएक्स–1 या न्यूरोजेनिन–3 इन द लिवर", मॉल0 थिर0, खण्ड 15, अंक 2, मु0प्र0 255–263।
22. मेअवर–लेवी, आई0 एवं अन्य(2007) "पेंक्रियाटिक एण्ड ड्यूओडिनल होमियोबॉक्स जीन 1 इंड्यूसेज हेपाटिक डिडिफ्रेंशिएशन बाय सप्रेसिंग द एक्सप्रेशन ऑफ सीसीएएट/एन्हांसर–बाइंडिंग प्रोटीन बीटा", हेपाटोलॉजी, खण्ड 46, मु0प्र0 898–905।
23. मेअवर–लेवी, आई0 एवं अन्य(2011) "ह्यूमन लिवर सेल्स एक्सप्रेसिंग एल्ब्यूमिन एण्ड मेसेनकायमल कैरेक्टरिस्टिक्स गिव राइज टू इंसुलिन–प्रोड्यूसिंग सेल्स", ज0 ट्रांसप्लाण्ट, 252387[doi: 10.1155/2011/252387]
24. स्टोफर्स, डी0 ए0; थोमास, एम0 के0 एवं हेबनर, जे0 एफ0(1997) "होमियोडोमेन प्रोटीन आईडीएक्स–1", ट्रेन्ड्स इण्डोक्रायनल एण्ड मेटाब0, खण्ड 8, मु0पृ0 145–151।
25. ग्रैडवोहल, जी0, डियेरिच, ए0, लिमियुर, एम0 एवं गुइलमॉट, एफ0(2000) "न्यूरोजेनिन3 इज रिक्वायर्ड फॉर द डेवेलपमेंट ऑफ द फोर इंडोक्राइन सेल लिनिऐजेज ऑफ द पैंक्रियाज", प्रोसी0 नैश0 एकेड0 साइंस0, यू0एस0ए0, खण्ड 97, मु0पृ0 1607–1611।
26. बर्नार्डो, ए0 एस0; हे0 सी0 डब्ल्यू एवं डोकहर्टी, के0(2008) "पेनक्रियाटिक ट्रांसक्रिप्शन फैक्टर्स एण्ड देयर रोल इन द बर्थ, लाइफ एण्ड सर्वाइवल ऑफ द पैंक्रियाटिक बीटा सेल", मॉल0 सेल इंडोक्रायनल, खण्ड 294, मु0पृ0 1–9।
27. ब्रुन, टी0 एवं गॉथियर, बी0 आर0(2008) "ए फोकस ऑन द रोल ऑफ पीएएक्स4 इन मैच्योर पैंक्रियाटिक इजलेट बीटा–सेल एक्सपेंशन एण्ड सर्वाइवल इन हेल्थ एण्ड डिजीस", ज0 मॉल0 इंडोक्रायनोल0, खण्ड 40, मु0पृ0 37–45।
28. कटाओका, के0 एवं अन्य(2002) "माफा इज ग्लूकोज–रेग्युलेटेड एण्ड पैंक्रियाटिक बीटा–सेल–स्पेसिफिक ट्रांसक्रिप्शनल एक्टीवेटर फॉर द इंसुलिन जीन", ज0 बायो0 केम0, खण्ड 277, मु0पृ0 49903–49910।
29. सॉन्ग, वाई0 डी0; याशर, पी0 एवं अन्य(2007) "इसलेट सेल डिफ्रैंशिएशन इन लिवर बाय काम्बिनेटोरियल एक्सप्रेशन ऑफ ट्रांसक्रिप्शन फैक्टर न्यूरोजेनिन–3, बीटा2, एण्ड आरआईपीई3बी1", बायोकेम0 बायोफिज0 रिस0 कम्यूनि0, खण्ड 354, मु0पृ0 334–339।
30. विंसेन्ट, एम0 एवं अन्य(2003) "एड्रोगेशन ऑफ प्रोटीन कंवर्टेस 2 एक्टिविटी रिजल्ट्स इन डिलेड इसलेट सेल डिफ्रेंशिएशन एण्ड मैच्योरेशन, इंक्रीज्ड एल्फा–सेल प्रोलीफेरेशन, एण्ड इसलेट नियोजेनेसिस", इंडोक्रायनोलॉजी, खण्ड 144, मु0पृ0 4061–4069।

डायोफैन्टाइन समीकरण का हल-भास्कराचार्य द्वारा गणित में किये गये योगदान का तकनीकी विश्लेषण

रमा जैन
रीडर, गणित विभाग
महिला विद्यालय डिग्री कॉलेज, लखनऊ–226018, उ0प्र0, भारत
ramajain26@yahoo.com

सार

भास्कराचार्य मध्ययुगीन भारत के सबसे महान गणितज्ञ हैं। वे मैसूर जिले के एक गाँव में पैदा हुए थे और सन् 1114–1183 के बीच रहे थे। भास्कराचार्य ने 12वीं शताब्दी में गणितीय एवं खगोलीय ज्ञान में अनुकरणीय योगदान दिया। भास्कराचार्य वह पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सर आइजक न्यूटन से 500 वर्ष पहले गुरुत्वाकर्षण की खोज की थी। वे प्राचीन एवं मध्ययुग के गणितज्ञों में अद्वितीय थे। भास्कराचार्य ने द्विघातीय डायोफैन्टाइन समीकरण $61x^2 + 1 = y^2$ का हल भी प्रतिपादित किया। यह समीकरण सन् 1657 में फ्रांस के गणितज्ञ पियरे डी फर्मेट द्वारा उठाई गई थी। लेकिन इसका हल 18वीं शताब्दी में यूरोप में ऑयलर के समय तक अज्ञात था। एक डायोफैन्टाइन समीकरण वह है जिसमें केवल पूर्णांक हल ही मान्य है। प्रस्तुत तकनीकी विश्लेषण भास्कराचार्य के गणित को प्रदान इसी योगदान पर आधारित है।

बीज शब्द– डायोफैन्टाइन समीकरण, द्विघातीय समीकरण, भास्कराचार्य का योगदान।

Solution of Diophantine equation-A technical analysis of contribution of Bhaskaracharya to Mathematics

Rama Jain
Reader, Department of Mathematics
Mahila Vidyalaya Degree College, Lucknow-226018, U.P., India
ramajain26@yahoo.com

Abstract

Bhaskaracharya has been called the greatest mathematician of medieval India. He was born in a village of the Mysore district in India and lived between 1114-1185. Bhaskaracharya significantly contributed to mathematical and astronomical knowledge in the 12th century. Bhaskaracharya was the first to discover gravity, 500 years before Sir Isaac Newton. He was the champion among mathematicians of ancient and medieval India. Bhaskaracharya also gave the solutions of Diophantine equations of the second order, such as $61x^2 + 1 = y^2$. This equation was posed as a problem in 1657 by French Mathematician "Pierre de Fermot", but its solution was unknown in Europe until the time of Euler in the 18th century. A Diophantine equation is an equation in which only integer solutions are allowed. The present technical review is based on the contribution of Bhaskaracharya to Mathematics on same fact.

Key words- Diophantine equations, quadratic equations, Bhaskaracharyas contribution.

प्रस्तावना

डायोफैन्टाइन नामक शब्द तीसरी शताब्दी के प्राचीन ग्रीक गणितज्ञ, अलेक्जैण्ड्रिया के डायोफैन्टस के नाम से उद्धृत है जिसने ऐसे समीकरणों का अध्ययन किया और जो बीजगणित में प्रतीकों का प्रयोग करने वाले प्रथम गणितज्ञ थे। डायोफैन्टाइन समस्याओं के गणितीय अध्ययन को, जिसको डायोफैन्टस ने प्रारम्भ किया था, अब डायोफैन्टाइन विवेचना कहते हैं। गणित में डायोफैन्टाइन समीकरण दो या अधिक अज्ञात चरों के इस प्रकार के बहुघातीय समीकरण हैं जिससे कि सभी अज्ञातों के पूर्णांक हल हों। एक रेखीय डायोफैन्टाइन समीकरण शून्य या प्रथम डिग्री के दो एक घातीय पदों के योगों के बीच समीकरण होता है।

भास्कराचार्य का गणित में योगदान

भास्कराचार्य ने सन् 1150 ई0 में, जब वे 36 वर्ष के थे, "सिद्धांत शिरोमणि" की रचना की थी। उनकी इस विशाल रचना में कुल 1450 पद्य हैं। यह चार भागों में विभाजित है–

1. लीलावती, 2. बीजगणित, 3. गणिताध्याय और 4. गोलाध्याय।

वास्तव में प्रत्येक भाग एक पुस्तक की तरह है। प्रत्येक भाग में पद्यों की संख्या निम्नांकित है–

लीलावती– 278 पद्य, बीजगणित– 213 पद्य, गणिताध्याय– 451 पद्य, और गोलाध्याय– 501 पद्य।

इसमें अंकगणित, बीजगणित, ग्रहों एवं गोले का गणित सम्मिलित है। अपने लेखन में उन्होंने "स्थान चिन्ह" एवं शून्य के अंकगणितीय विशेष गुण का वर्णन किया है और जोर देकर यह कहा है कि किसी भी संख्या को शून्य से विभाजित करने पर अनन्त प्राप्त होता है। वे पृथ्वी की वक्रता के बारे में लिखते हैं कि "किसी भी वृत्त की परिधि का सौवां भाग सरल रेखा प्रतीत होता है। हमारी पृथ्वी एक बड़ा गोला है और इसी कारण यह समतल दिखाई देती है।" उनके प्रख्यात गणितीय कार्य "लीलावती" एवं "बीजगणितीय" अतुलनीय एवं उनकी अपार बौद्धिक क्षमता के प्रमाण माने जाते हैं। विश्व की अनेक भाषाओं में इसके अनुवाद स्वतः ही इसकी श्रेष्ठता को प्रमाणित करते हैं। "सूर्य सिद्धांत" में उन्होंने गुरुत्वाकर्षण बल पर एक टिप्पणी की है–

"पृथ्वी द्वारा लगने वाले आकर्षण बल के कारण ही वस्तुएं पृथ्वी पर गिरती हैं। अतः पृथ्वी, ग्रह, तारामण्डल, चन्द्रमा और सूर्य इसी आकर्षण के कारण अपनी कक्षाओं में रहते हैं।"

संभवतः सबसे अधिक आश्चर्यजनक खोज उनके अवकल गुणांक के सिद्धांत हैं। उन्होंने दिखाया कि इसे कैसे खगोलीय गणना में प्रयुक्त करते हैं। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि न्यूटन एवं लैब्नीज की अवकलन एवं समाकलन से सम्बन्धित प्राचीनतम खोजें सन् 1660 ई0 में हुई थीं जबकि भास्कराचार्य ने 12वीं शताब्दी में ही इन्हें प्रयोग किया था। इस प्रकार संभवतः वे इस दावे के अधिकारी हैं कि वे मध्ययुगीन भारत के महानतम गणितज्ञ थे।

डायोफैन्टाइन समस्या

डायोफैन्टाइन समस्याओं में अज्ञात परिवर्ती से कम समीकरण होते हैं जिनके सभी समीकरणों में सही कार्य करने वाले पूर्णांक हल सन्निहित होते हैं। ये एक बीजगणितीय वक्र, पृष्ठ व अन्य आकृतियाँ बनाते हैं। x और y अज्ञात चरों और दिये गये नियतांक में कुछ विशेष डायोफैन्टाइन समीकरण निम्नवत हैं–

1. **रेखीय डायोफैन्टाइन समीकरण**– सरलतम रेखीय डायोफैन्टाइन समीकरण $ax + by = c$ के रूप में होती है जहाँ a, b और c दिये गये पूर्णांक हैं। इसके हल को निम्नलिखित प्रमेय द्वारा पूर्णरूप से वर्णित कर सकते हैं–

"डायोफैन्टाइन समीकरण $ax + by = c$ जहाँ x और y पूर्णांक हैं, का हल सम्भव होगा यदि और केवल यदि c; a और b का महत्तम समापवर्तक होगा। इसके अतिरिक्त यदि (x, y) एक हल है तो दूसरा हल (x+kv, y-ku) प्रकार का होगा, जहाँ k एक पूर्णांक है, और u तथा v क्रम ः a और b के महत्तम समापवर्तक द्वारा a और b से जुड़े हुए हैं।"

2. **द्विघातीय डायोफैन्टाइन समीकरण**– दो परिवर्ती x और y में एक सामान्य द्विघातीय डायोफैन्टाइन समीकरण

$ax^2 + by^2 = k$ है, जहाँ a, b और k विशिष्ट, धनात्मक एवं ऋणात्मक पूर्णांक हैं और x और y समीकरण को संतुष्ट करने वाले पूर्णांक हैं जिनका मान प्रात करना है।

दूसरे उदाहरण के तौर पर– $ax^2 + 1 = y^2$, जहाँ a एक पूर्णांक है, एक विशेष प्रकार का समीकरण है जिसका नाम एक अंग्रेज गणितज्ञ जॉन पेल के नाम पर पेल समीकरण है। इस समीकरण का अध्ययन 7वीं शताब्दी में गणितज्ञ ब्रह्मगुप्त ने किया था जबकि 17वीं शताब्दी में फर्मेट ने इसका अध्ययन किया था। इस समीकरण के साथ जुड़ी एक रोचक कहानी है। प्रसिद्ध फ्रांसीसी गणितज्ञ पियरे डी फर्मेट(1601–1664) ने अपने मित्र बेसी से इस समीकरण को हल करने को कहा। बेसी, आधुनिक शकुन्तला देवी की तरह अपने मस्तिष्क में समस्याएं हल किया करता था। बेसी इसको हल करने में असमर्थ रहा। इसके 100 वर्ष बाद एक दूसरे फ्रांसीसी वैज्ञानिक ने इस समस्या को हल किया। लेकिन यह तरीका बहुत लम्बा था और इससे एक विशेष हल ही प्राप्त होता था जबकि भास्कराचार्य ने इसके पाँच दशाओं के लिए हल प्राप्त किया था जो कि इस प्रकार है– a=8, 11, 32, 61 और 67।

उदाहरण के तौर पर समीकरण $61x^2 + 1 = y^2$ का हल x=226153980 और y=1766319049 है, इसको प्रमाणित करना ही एक व्यक्ति के लिए बहुत बड़ा प्रयास है। इसी वजह से तथाकथित पेल के समीकरण के नाम से जानना चाहिए।

भास्कराचार्य ने बड़ी समस्याओं के वर्ग, वर्गमूल, घन और घनमूल निकालने के सरल तरीके बताये। उन्होंने पाइथागोरस प्रमेय की उपपत्ति मात्र दो पंक्तियों में दी थी।

निष्कर्ष

उनका कार्य अपने नियमबद्ध तरीकों, उन्नत विधियों और नये विषयों के लिए अद्वितीय है। इसके अतिरिक्त "लीलावती" में उच्चकोटि की सृजनात्मक समस्याएं निहित हैं और यह भी माना जाता है कि भास्कराचार्य का विचार था कि एक छात्र स्वयं को विधियों के यांत्रिकी उपयोग से सम्बद्ध कर सके। भास्कराचार्य के बहुत से गणितीय कार्य बाद में यूरोपीय और फारसी गणितज्ञों द्वारा प्रतिपादित किए गये। उनके बहुत से कार्यों की वजह से यूरोपीय और फारसी गणितज्ञों की कल्पना शक्ति में वृद्धि हुई और उन्होंने शोध के माध्यम से प्रसिद्धि और लोकप्रियता हासिल की। भास्कराचार्य को एक पद्य रचयिता कहते हैं, लेकिन सम्भवतः वह वेदों के ज्ञाता भी थे, क्योंकि अपने पदों में उन्होंने "परमब्रह्म" जैसे शब्द भी प्रयुक्त किये हैं। संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि भास्कराचार्य प्राचीन एवं मध्ययुगीन भारत के गणितीय आकाश के वह चमकते सितारे हैं जिन्होंने कई देशी व विदेशी गणितज्ञों को सही मार्ग दिखाया। हमें आज भी उनसे प्रेरणा मिलती है।

सन्दर्भ

1. शुक्ल, के0 शंकर (1960) "भास्कर प्रथम और उनकी कृतियाँ", भाग–2, महाभास्करीय संस्कृत, लखनऊ।
2. शुक्ल, के0 शंकर (1963) "भास्कर प्रथम और उनकी कृतियाँ", भाग–3, महाभास्करीय संस्कृत, लखनऊ।

3. शुक्ल, के0 शंकर (1971) "सातवीं सदी में हिन्दू गणित", आर्यभटीय पर भास्कर प्रथम की समीक्षा से, गणित, मु0पृ0 115–130।
4. जोशी, केदार दत्त (1988) "श्रीमद्भास्कराचार्य विरीचते सिद्धांत गिरोमणौ–गोलाध्याय", प्रकाशक–मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली।
5. युले, गुणाकर (2001) "भास्कराचार्य", ज्ञान विज्ञान प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. उपाध्याय, विजय कुमार (2010) "प्राचीन भारत के महान वैज्ञानिक–भास्कराचार्य", अभिव्यक्ति–हिन्दीडॉटऑर्ग/विज्ञान–वर्ता।

विज्ञान प्रसार द्वारा निर्मित लोकप्रिय विज्ञान आधारित फिल्में और उनका चित्रण

सचिन नरवडिया
वैज्ञानिक बी, विज्ञान प्रसार
सी–24, कुतुब संस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली–110016, भारत
sachin@vigyanprasar.gov.in, snarwadiya@gmail.com

सार

विज्ञान फिल्म निर्माण के क्षेत्र में कार्यरत विज्ञान प्रसार को अनेक समस्याओं जैसे प्रसारण के लिए उचित मंच न उपलब्ध होने जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। हालांकि विज्ञान प्रसार के विज्ञान संबंधी कार्यक्रमों का प्रसारण दूरदर्शन के राष्ट्रीय चैनल एवं अन्य चैनलों से होता है लेकिन लोगों तक इसकी पहुंच की सीमा है। इसीलिए विज्ञान प्रसार ने अन्य चैनलों जैसे राज्यसभा टीवी, लोकसभा टीवी, प्रसार भारती चैनलों के माध्यम से अपने कार्यक्रमों को जनमानस तक पहुंचाने का प्रयास किया है। आम जनता तक अपनी पहुंच को और व्यापक बनाने के उद्देश्य से विज्ञान प्रसार ने प्रसारण और विज्ञान प्रसार कार्यक्रमों के प्रदर्शन के साथ ही वेब आधारित पोर्टलों जैसे टीचर्स पोर्टल, यूट्यूब और अन्य गैर सरकारी संस्थाओं जैसे रीड इंडिया के पोर्टलों पर अपने कार्यक्रम उपलब्ध कराए हैं। यूट्यूब ने फरवरी 2005 पर ऐसा बेव मंच उपलब्ध कराया जिस पर उपयोगकर्ता आसानी से अपनी सामग्री डाल सकते हैं। यूट्यूब की इस सेवा ने उपयोगकर्ताओं के मध्य सामाजिक नेटवर्किंग को बढ़ावा दिया। उपयोगकर्ता अपने द्वारा अपलोड किए गए विडियो को टेग करने के साथ ही कीवर्ड, डाल सकते हैं या फिर अपनी सामग्री में से किसी विषय को हाईलाईट कर सकते हैं। अपने दृष्य कार्यक्रमों की सूची डाल सकते हैं। मीडिया रिपोर्ट के अनुसार यूट्यूब इंटरनेट पर साझेदारी वाली सबसे विशाल वेबसाईट है जिस पर 10 करोड़ विडियो उपलब्ध है और हर दिन इसमें 65,000 विडियो(यूएसए टूडे, 2006) डाले हैं। विभिन्न क्षेत्रीय भाषाओं में फिल्मों के प्रदर्शन के लिए एड्यूसेट टर्मिनलों का भी बेहतर ढंग से उपयोग किया जा सकता है।

बीज शब्द– यूट्यूब, विज्ञान प्रसार, विज्ञान दृष्य कार्यक्रम, दूरदर्शन।

Popular science films produced by Vigyan Prasar and their screening

Sachin Narwadiya
Scientist B, Vigyan Prasar
C-24, Qutub Instituional Area, New Delhi-110016, India
sachin@vigyanprasar.gov.in, snarwadiya@gmail.com

Abstract

Vigyan Prasar (VP) is the field of science movie production facing problems regarding telecast of the produced movies at good platforms. Although VP has Doodarshan(DD) as its main channel partner showcasing the popular science films produced by VP, but it has limitations regarding reach to the public. Hence, VP also explored the other channels like Rajyasabha TV, Loksabha TV, DD-Bharati which marginally increased the reach of the programme to the public. To increase the reach to the public and wide dissemination, recently VP started a new search for telecast and screening VP produced films through web portals like teacher's portal, YouTube and Non-Governmental Organizations (NGOs) like Read India may become good platform to showcase the films directly to the users and public. YouTube was founded in February 2005 as a Web site that enables users to easily share video contents. As YouTube

expanded, features were added to facilitate social networking among its users. Users can \tag" their uploaded videos with keywords or phrases that best describe their content, and these tags are used by YouTube to provide users with a list of related videos. According to recent media reports, YouTube is the largest video sharing Web site on the Internet with over 100 million video accesses per day and 65,000 video uploads per day(USA today,2006).

Key words- Youtube, Vigyan Prasar, Science films, Doordarshan.

1. प्रस्तावना

हमारे संविधान में निहित मूलभूत कर्तव्यों में से एक है देश में विज्ञान को बढ़ावा देना। सभी नागरिकों का कर्त्तव्य है कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण को अपनायें और तर्कसंगत सोच रखें। विज्ञान के प्रचार एवं प्रसार के लिये विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अर्न्तगत 1989 में विज्ञान प्रसार का गठन एक स्वायत्त संस्थान के रूप में किया गया था। तब से विज्ञान प्रसार व्यापक स्तर पर विज्ञान के लोकप्रियकरण के लिये निरन्तर कार्यरत है, जिससे कि वैज्ञानिक सोच और दृष्टिकोण को समाज के हर वर्ग और स्तर पर बढ़ावा मिल सके। विज्ञान प्रसार विज्ञान के संसाधनों को सरलता से उपलब्ध कराने के लिये एक केन्द्र के रूप में भी कार्य कर रहा है। विज्ञान संचार में नये उपयोग और तकनीक का प्रयोग भी विज्ञान प्रसार समय–समय पर अपनाता है। विज्ञान प्रसार अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये विभिन्न साधनों को प्रयोग करता है जिसमें किताबें, प्रचार पत्र, पोस्टर, डेस्क कैलेण्डर, मासिक पत्रिकाएं, विज्ञान क्लब, फिल्मों आदि का समावेश होता है।

विज्ञान प्रसार के दृष्य–श्रव्य विभाग में विज्ञान आधारित फिल्मों का निर्माण और प्रसारण का कार्य किया जा रहा है। यह फिल्में आम जनता में वैज्ञानिक दृष्टिकोण बनाने के लिये उपयुक्त होने के साथ–साथ उनका मनोरंजन भी कर सकें जिससे कि बेहतर तरीके से विज्ञान को आम आदमी के लिये बनाया जा सके।

2. कार्य प्रणाली

2.1 विज्ञान प्रसार के दृश्य–श्रव्य कार्यक्रम

वर्तमान समय में भारतीय मीडिया में विज्ञान के लिये कवरेज काफी कम है विशेषकर टेलीविजन के सन्दर्भ में, इसका मुख्य कारण यह है कि मीडिया के क्षेत्र में ऐसी प्रक्रिया का अभाव है जो कि संचार माध्यमों के द्वारा विज्ञान और तकनीकी की संस्थाओं से शोध की गतिविधियों को सही रूप से कवर करके कार्यक्रम बनाया जा सके। विज्ञान प्रसार के दृश्य श्रव्य विभाग द्वारा निर्मित कार्यक्रमों की सूची नीचे सारणी में दी गई है जिनको दूरदर्शन के राष्ट्रीय चैनलों, भारती के क्षेत्रीय चैनलों, राज्य सभा टीवी, लोक सभा टीवी, पर प्रसारित किया जा रहा है। ई–मीडिया के प्रयोग से और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिये वेब पोर्टल एवं यूट्यूब पर भी यह कार्यक्रम उपलब्ध कराये जा रहे हैं। जिनमें कार्यक्रमों का संक्षिप्त विवरण एवं टैग का समावेश है। वेब पोर्टल एवं यूट्यूब पर लोगों के विचार, एवं कितने लोगों ने इसे देखा और पसन्द किया का पता लगा सकते हैं।

2.2 रेडियो पर प्रसारित होने वाले कार्यक्रम

विज्ञान के लोकप्रियकरण के लिये रेडियो सदैव से अग्रणी रूप में कार्यरत रहा है। ऑल इडिया रेडियो (एआईआर) नें 1997 से तीन अत्यधिक सफल कार्यक्रमों का निर्माण एवं प्रसारण किया है जिनमें **पर्यावरण की पुकार**, **बिपन्न बसुधा** और **छू–मन्तर** हैं। विज्ञान प्रसार ने डिबरूगढ़ रेडियो के सहयोग से 26 कड़ियों वाले कार्यक्रमों **पृथ्वी** और **आकाश** का प्रसारण किया।

2.3 एजूसेट

यह संचार का एक अनोखा माध्यम है जिसमें उपग्रह के माध्यम से विज्ञान संचार का कार्य किया जा रहा है। एजूसेट उपग्रह को 20 सितम्बर, 2014 को भारतीय अन्तरिक्ष अनुसन्धान संस्थान (इसरो) ने पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया था। जिसके उपयोग से हम

सारिणी– विज्ञान प्रसार द्वारा निर्मित कार्यक्रम

क्रमांक	कार्यक्रम का नाम	एपिसोड की संख्या
1.	शुक्र पारगमन	1
2.	पंख और परवाज	1
3.	खोज रेडियो धर्मिता की	1
4.	संदेशवाही रेडियो तरंगे	1
5.	एक्स किरणों की खोज	1
6.	इलेक्ट्रॉन की खोज	1
7.	ऐसा ही होता है(देख खेल के)	43
8.	चमत्कार	13
9.	कम्प्यूटर की दुनिया	1
10.	तारों की सैर	26
11.	पी सी वैद्य	1
12.	हमारे खगोलीय पडोसी	13
13.	नैनों की दुनिया	12
14.	जीते रहो	26
15.	कहानी धरती की	26
16.	प्रो ए के राय चौधरी	1
17.	जिज्ञासा	26
18.	सूर्य–ग्रहण एक अद्भुद नजारा	3
19.	क्वांटम युग	1
20.	देख खेल के	13
21.	बातें राज की	13
22.	सांइस वाच	21
23.	मुखौटे सच का चेहरा	13
24.	कुछ तुक्के कुछ तीर	26
25.	जो है जैसा वो क्यों है वैसा	26
26.	इडिंया एट एलएचसी	1
27.	द हीटेड डिबेट	1
28.	द जीनियस औफ रामानुजन	1
29.	सुरों में सांइस	1
30.	रेडियोधर्मिता की खोज	1
31.	एस चन्द्रशेखर	1
32.	सूर्य ग्रहण	1
33.	जादुई वर्ष	1
34.	खोज खगोलीय इकाई की	1
35.	विज्ञान रेल भाग 1–4	1
36.	रेडियो तरंगे	1
37.	एक्स किरण	1
38.	सापेक्षता	1
39.	रेडियोधर्मिता	1
40.	जे सी बोस	1
41.	डार्विन की पहेली	1

अनौपचारिक शिक्षा को ऐजूसेट उपग्रह की मदद से प्रदान कर सकते हैं। यह उपग्रह हर प्रकार की शिक्षा को प्रोत्साहित करता है। यह उपग्रह पाठ्यक्रम आधारित, प्रभावकारी शिक्षकों का प्रशिक्षण और समाज की सहभागिता का समर्थन करता है। विज्ञान प्रसार ने ऐजूसेट को दोतरफा दृश्य–श्रव्य संवादात्मक स्थापित किया गया है। ऐजूसेट पर हर सोमवार विज्ञान प्रसार द्वारा निर्मित दृश्य कार्यक्रमों को दिखाया जाता है। सम्पूर्ण भारत में ऐजूसेट के 50 से अधिक टर्मिनल्स हैं जहाँ से दर्शक इन कार्यक्रमों का आनंद उठाते हैं साथ में विज्ञान की शिक्षा भी प्राप्त करते हैं।

2.4 यूट्यूब

यूट्यूब, दृश्य–श्रव्य कार्यक्रमों को साझा करने के लिए बनाई गयी वेब साईट है। यह वेब साईट गूगल द्वारा संचालित है। इस वेब साईट पर साझा किये दृश्य–श्रव्य कार्यक्रमों को पूरे विश्व में कहीं से भी देखा जा सकता है। इसमें ये सुविधा भी है कि आप किसी कार्यक्रम को पसंद या ना–पसंद कर सकते हैं, आप अपने सुझाव भी इसमें दे सकते है। जितने बार कार्यक्रम को देखा गया है उसका भी लेखा यहाँ उपलब्ध रहता है। कार्यक्रमों को इस साईट पर अपलोड करने के लिए रजिस्ट्रेशन करना होता है और देखने के लिए कोई भी देख सकता है। यूट्यूब के अनुसार हर मिनट 100 घंटों के दृश्य–श्रव्य कार्यक्रम अपलोड किए जा रहे हैं। विज्ञान प्रसार ने भी अपने कार्यक्रमों को यूट्यूब पर अपलोड करने की शुरुआत जून 2014 से की है। अभी "कहानी धरती की" की श्रृंखला की 5 कड़ियों को यूट्यूब पर अपलोड किया जा चुका है। इन कार्यक्रमों को अच्छी सराहना प्राप्त हो रही है। इन कार्यक्रमों को हिंदी भाषा में अपलोड किया गया है और इतने कम समय में कड़ी 1 को 80 लोगों ने देखा है, बाकी कड़ियों को भी लोग पसंद कर रहे हैं।

2.5 टीचर्स पोर्टल

अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन द्वारा संचालित वेब साईट http://www.teachersofindia.org/en पर भी विज्ञान प्रसार के कार्यक्रमों को शामिल किया जा रहा है। इस साईट के 7075 पंजीकृत शिक्षक उपयोगकर्ता है, जो विज्ञान प्रसार के दृश्य–श्रव्य कार्यक्रमों का निरंतर उपयोग करते है।

2.6 रीड इंडिया

रीड इंडिया शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए कार्यरत गैर सरकारी संस्थान है। यह संस्थान सुविधा से वंचित बच्चों को मदद करता है। रीड इंडिया के केन्द्रों में घटक इस प्रकार है–

- एक ग्रंथालय है जो कि 2000 किताबों से शुरू हुआ था, उसमें समाचार पत्र, पत्रिकाएं हिंदी और अंग्रेजी में है।
- सूचना तंत्र विभाग में कम्प्यूटर, इन्टरनेट और कम्प्यूटर सिखाने की व्यवस्था है।
- महिला सशक्तिकरण विभाग महिलाओं और लड़कियों को सुरक्षित स्थान प्रदान करता है जिसमें वे कंप्यूटर शिक्षा ग्रहण कर सकती हैं।

इस संस्थान को विज्ञान प्रसार ने अपने कार्यक्रम उपलब्ध करवाए हैं जिन्हें रीड इंडिया समय–समय पर बच्चों और महिलाओं को दिखाते हैं। इन बच्चों और महिलाओं के मध्य विज्ञान प्रसार द्वारा निर्मित कार्यक्रम विशेष रूप से पसंद किये जाते हैं।

3. निष्कर्ष

विज्ञान प्रसार अपने कार्यक्रमों को अलग–अलग माध्यमों से प्रचारित और प्रसारित करता है। हमेशा से नए–नए माध्यमों को खोजना और उनका दृश्य–श्रव्य कार्यक्रमों के प्रोत्साहन के लिए उनका उचित दोहन करना, ये विज्ञान प्रसार के उद्देश्यों में से एक है। विज्ञान प्रसार के कार्यक्रम ज्यादा से ज्यादा लोगों तक पहुंचें और लोगों में विज्ञान के प्रति सोच का निर्माण हो इस उद्देश्य के लिए विज्ञान प्रसार तत्पर है। जैसे–जैसे सूचना क्रांति आगे बढ़ेगी भविष्य में विज्ञान प्रसार एप्प का निर्माण करना, विज्ञान प्रसार निर्मित फिल्मों को मोबाइल पर उपलब्ध करवाना आदि भविष्य में सम्भव होगा।

संदर्भ

यू0एस0ए0–यूट्यूब सर्वज अप 100 मिलियन विडियोज ए डे ऑनलाइन, जुलाई 2006।

उत्तराखण्ड हिमालय में भूस्खलनः 2013 प्राकृतिक आपदा के विशेष सन्दर्भ में

आर0 ए0 सिंह[1] एवं मुकेश कुमार[2]
[1]एसोसिएट प्रोफेसर, भूविज्ञान विभाग, एल0 एस0 एम0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
पिथौरागढ़–262502, उत्तराखण्ड, भारत
[2]एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, एल0 एस0 एम0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
पिथौरागढ–262502, उत्तराखण्ड, भारत
singhdr.ramautar@yahoo.com

सार

वर्तमान समय में मानव की आत्म केन्द्रित विकास की अन्धी प्रवृत्ति पर्यावरण को असन्तुलित कर भूस्खलन एवं बाढ़ जैसी प्राकृतिक आपदाओं में निरन्तर वृद्धि कर रही है। लोभ के वशीभूत मानव विश्व के प्राणदाता हिमालय से अधिकाधिक भौतिक सम्पदा प्राप्त करना चाहता है, यद्यपि हमारे पूर्वजों, ऋषि–मुनियों ने इसे श्रद्धा एवं आदर की दृष्टि से देखा था। संस्कृत के प्रसिद्ध कवि कालिदास ने हिमालय को देवताओं की आत्मा कहा–

"अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः"(कुमारसम्भव– 1/1)

सृष्टि के आदिकाल से ही मानव, पशु–पक्षी, जीव–जन्तु सभी प्रकृति पर निर्भर रहे हैं। प्रत्येक प्राणी के हित की रक्षा के लिए प्राकृतिक पर्यावरण में सन्तुलन बनाए रखना अत्यन्त आवश्यक है। अन्यथा उसके असन्तुलन से प्राकृतिक आपदाएं मानव सहित सम्पूर्ण प्राणि जगत के लिए कहीं–कहीं पर महाविनाशक और संहारक हो जाती हैं। ये प्राकृतिक आपदाएं आकस्मिक एवं दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएं होती हैं, जो जन, धन एवं संसाधनों की क्षति के साथ–साथ मानवीय जीवन पर विपरीत प्रभाव डालती हैं और उन्हें संकटग्रस्त कर देती हैं। उत्तराखण्ड राज्य में विगत 16–17 जून, 2013 में आई प्राकृतिक आपदा से उत्पन्न स्थिति को देखते हुए उनसे होने वाली क्षति को रोकने और कम करने के लिए उपयुक्त उपाय करने तथा उनमें निरन्तर आधुनिक तकनीकि से सुधार करने की महती आवश्यकता है और प्रकृति से अनावश्यक छेड़–छाड़ न कर उसके प्रति आत्मीयता एवं संवेदनशीलता का भाव परम् आवश्यक है।

बीज शब्द– भूस्खलन, वृष्टि प्रस्फोट, जलभृत्, आपदा, वैदिक समाधान।

Landslides in Uttarakhand Himalaya: With special reference to Natural Disaster of 2013

R.A. Singh[1] and Mukesh Kumar[2]
[1]Associate Professor, Department of Geology
L.S.M. Govt. P.G. College, Pithoragarh-262502, Uttarakhand, India
[2]Associate Professor, Department of Sanskrit
L.S.M. Govt. P.G. College, Pithoragarh-262502, Uttarakhand, India
singhdr.ramautar@yahoo.com

Abstract

In the present time self centered superfluity development by human increases the imbalance of the environment and causes natural disasters like flood, landslides etc. People are interested to exploit more and more natural resources from the Himalaya; although, our ancestors and saints had seen Himalaya with respect and honour. The

famous poet of Sanskrit Maha Kavi Kalidas has said that Himalaya is the soul of God (Devtas) ["अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवतात्मा हिमालयो नाम नगाधिराजः" (**कुमारसम्भव– 1/1**)]. From the ancient times, human, birds, animals etc. are dependent on the nature. Therefore, it is essential to keep balance in environment in the interest of all creatures, otherwise natural disaster occur and destroy the lives and properties at many places. These natural calamities are fateful events depleting life, wealth and natural resources besides leading to irreversible dangerous effects on human life. Visualising situation due to natural disaster of past 16-17 June 2013 in Uttarakhand, suggestions have been made to incorporate suitable measures to be undertaken with gradually incresing techinques, besides preventing unnecessary disturbance in nature and becoming more sensitive and concerned with it.

Key words- Landslide, cloud burst, aquifer, disaster, Vedic solution.

1. **प्रस्तावना**

हिमालय विश्व की सर्वाधिक संवेदनशील पर्वत श्रृंखलाओं में से एक है। भारत के उत्तरी क्षेत्र में अवस्थित हिमालय की पर्वत श्रृंखलाएं अत्यन्त जटिल एवं बहु आयामी स्वरूप के साथ–साथ ऋषि–मुनियों, साधु–सन्तों, योगी–महापुरुषों के लिए साधना स्थल रहा है। प्रकृति–प्रेमियों के लिये भी प्राचीन काल से आकर्षण का केन्द्र रहा है। हिमालय अपनी समृद्धि, जैव विविधता, प्रचुर प्राकृतिक संसाधनों, जीवनदायी जल भण्डारण स्रोतों, औषधि–वनस्पतियों तथा भारत की आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक एवं प्राकृतिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रहा है।

उत्तराखण्ड राज्य(जो पूर्व में काली नदी तथा पश्चिम में सतलुज नदी के बीच अवस्थित है) में 16 व 17, जून 2013 में अतिवृष्टिजनित प्राकृतिक आपदा में रुद्रप्रयाग, चमोली, उत्तरकाशी और पिथौरागढ़ जनपदों को सर्वाधिक प्रभावित किया (चित्र: 1)। जिससे वहाँ की प्राकृतिक तथा सांस्कृतिक विरासत के साथ ही जान–माल की भी हानि हुई। इस प्राकृतिक आपदा में उत्तराखण्ड राज्य के लोगों के साथ–साथ देश के विभिन्न प्रान्तों से आये तीर्थयात्री काल–कवलित हो गये। उत्तराखण्ड सरकार के अनुसार 5748 लापता/मौतें हुई (अमर उजाला, 15 जून, 2014)। इस प्राकृतिक आपदा से प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रूप में लाखों लोग प्रभावित हुए हैं। ऐसी दुर्भाग्यपूर्ण घटना भारत के इतिहास में संभवतया कभी हुई हो। आपदा प्रभावित लोगों की माने तो यह एक ऐसी दुर्घटना है जिसे सदियों तक भुलाया नहीं जा सकेगा ।

ऐसी प्राकृतिक आपदाएं जो आकस्मिक और दुर्भाग्यपूर्ण होती हैं, वे समस्त प्राणिजगत् के जीवन पर तो विपरीत प्रभाव डालती ही हैं, उन्हें संकटग्रस्त भी बना देती हैं। प्राकृतिक आपदाएं मानव के लिए महाविनाशक एवं संहारक होती हैं। विकास की अन्धी दौड के कारण भूस्खलन एवं पर्यावरण ह्रास तीव्र गति से हो रहा है। हमारे आस–पास हो रही प्राकृतिक आपदाएं प्रायः हमारी ही स्वार्थपूर्ण नीतियों का दुष्परिणाम होती हैं। वेद के ऋषि का यह कथन–

"प्रणः पूर्वस्मै सुविताय वोचत मक्षू सुम्नाय नव्यसे "(ऋग्0–8/27/10)

अर्थात् हे ईश्वर! हमें प्राचीन परम् ऐश्वर्य की ओर ले चलो और हम भविष्य के नवीन से नवीनतम उत्कर्ष को भी प्राप्त करते चले जायें। वास्तव में मानव ने कभी यह विचार किया कि उसके सम्पूर्ण उत्थान में इस प्रकृति का ही वरदहस्त है, जो उसे बिना किसी याचना के ही स्वतः सब कुछ प्रदान करती रहती है ?

किसी भी राष्ट्र अथवा राज्य का सुविकास वहाँ के लोगों के लिए रोजगार और सम्पन्नता के द्वार खोलता है। शिक्षा और स्वास्थ्य की उत्कृष्ट सुविधा प्रदान कर सामाजिक उत्थान में सहयोग करते हैं और मानव के अस्तित्व के नये आयाम को जन्म देते हैं। मानसून काल में मौसम की विशेष अवस्था के कारण अतिवृष्टि, वृष्टि प्रस्फोट (क्लाउड बर्स्ट) से उफनती नदियाँ, ताश के पत्तों के समान गिरते मकान, खाई में परिवर्तित होती सडकें, बच्चों के खिलौनों की तरह बहते वाहन, गले–गले तक डूबे लोग, भूस्खलन के मलबे में दबे–कराहते मनुष्य, पशु, पक्षी, थरथराता पहाड एक बडी भयावहता को ही दर्शाता है।

मनुष्य के भौतिक तथा तकनीकी विकास यथा मकान, बांध, जलाशय, नदियों के किनारे तक बजरी/रेता खनन एवं अतिक्रमण के प्रभाव ने पर्यावरण तथा प्राकृतिक संसाधनों का समुचित दोहन न कर विदोहन किया है। जिसके परिणामस्वरूप अलकनन्दा, भागीरथी, काली तथा गोरी नदियों ने

जिस प्रकार का रौद्ररूप धारण कर ताण्डव किया, उससे स्पष्ट है कि हमने अतीत की दुर्घटनाओं से कोई शिक्षा नहीं ली। उत्तराखण्ड और हिमाचल प्रदेश ऐसी प्राकृतिक आपदाओं के कारण पहले से ही अतिसंवेदनशील माने जाते रहे हैं। वैसे तो भारत में राष्ट्रीय आपदा प्रबन्धन प्राधिकरण का गठन किया गया है किन्तु ऐसी प्राकृतिक आपदाओं से निपटने के लिए अभी भी उनको और अधिक नवीन तकनीकी तथा संसाधनों की आवश्यकता है, जिससे भविष्य में ऐसी आपदाओं से होने वाली जन–धन की हानि को कम किया जा सकें।



वृष्टि प्रस्फोट के बाद केदार नाथ मंदिर के चारों ओर एकत्र मलवा (archive.indianexpress.com)



जौलजीबी के पास काली नदी पर बना झूला पुल पूरी तरह बह गया है केवल एक ओर का टूटा आधार ओर टूटे तार दिख रहे हैं



बलुआकोट के पास काली नदी के तेज बहाव से मकान के नीचे तक कटान हो चुका है और तटबन्ध टूट चुके हैं



काली नदी के तेज बहाव से धारचूला, पिथौरागढ़ के पास नेपाल की ओर भी काफी कटाव हुआ है

चित्रः 1

उत्तराखण्ड में आई इस भयानक त्रासदी से यह विचारणीय हो गया है कि उत्तराखण्ड और हिमाचल प्रदेश जैसे पहाड़ी राज्यों में आवश्यकता से अधिक खनन तथा दोहन न हो, किन्तु आज इससे विपरीत कई स्थानों पर हो रहा है। गंगा, यमुना तथा उनकी सहायक नदियों पर जिस प्रकार अनेकों बांध एवं पनबिजली परियाजनाएं बनायी जा रही हैं जो जनोपयोगी एवं आवश्यक तो हैं फिर भी उनके आस–पास पर्यावरण सन्तुलन पर इनका प्रभाव होता है। केदारनाथ के नीचे फाटा व्यूंग और सिंगोली, भटवारी, जलविद्युत् परियोजनाएं बनायी जा रही हैं। इनमें लगभग 30 किलोमीटर की सुरंग खोदी जा रही है, इसके लिये भारी मात्रा में डायनामाइट का प्रयोग किया जा रहा है। इन विस्फोटों से पहाड़ के जलभृत् (एक्वीफर) फूट रहे हैं। यह जमा पानी रिस कर सुरंग के रास्ते निकल रहा है। पहाड़ के जलस्रोत सूखते जा रहे हैं। पेड़–पौधों को पानी नहीं मिल रहा है और वे कमजोर हो रहे हैं। वृक्ष कमजोर हों तो वर्षा का पानी सीधी धारा बनकर नीचे गिरता है और वह अपने साथ पेड़ों तथा पत्थरों को लाकर नदी में डाल देता है। तब उफनती नदी अपने साथ पेड़ों तथा पत्थरों को लेकर बहती है। इनकी टक्कर से मकान और पुल ध्वस्त हो जाते हैं, जैसा कि 16 व 17, जून 2013 को उत्तराखण्ड में हुआ है। वर्ष 2010 में उत्तराखण्ड राज्य में आपदा की दृष्टि से अतिसंवेदनशील 243

गाँवों को विस्थापित कर पुनर्वास के लिए चयनित किया गया था, जिनकी संख्या मार्च 2013 तक 550 हो गयी है। निश्चित रूप से यह मानसून इस आंकड़े को और बढ़ा देगा।

2. संवेदनशील क्षेत्रों में सक्रिय भूस्खलन, त्वरित बाढ़ एवं भूमि कटाव की पहचान

- ढालू जमीन जहाँ पर मृदा आवरण कम हो और वर्षा की अधिकता हो तथा जहाँ पर चट्टानें क्षरित, गलित और कमजोर पदार्थ से बनी हों जैसे स्लेट, फाइलाइट, माइका सिस्ट आदि वहाँ पर भूस्खलन एवं भूकटाव स्वाभाविक रूप से अधिक होता है।
- ऊपरी ढालों पर अनुप्रस्थ (चौड़ाई) दिशाओं में बृहत् दरारों का पड़ना और चटटानों में स्थित दरारों का पहले की अपेक्षा अधिक खुलने से भौलखण्ड या मलवा गिरने की स्थिति में तो नहीं आ गया है।
- खेत एवं जंगलों में पेड़ों का अपनी सामान्य स्थिति से इधर–उधर झुकना, सक्रिय भूस्खलन की सम्भावना को दर्शाता है।
- यदि किसी क्षेत्र में अति सघन पर्णीय जंगल हों तो वहाँ पर नमी की अधिकता का अवलोकन करना आवश्यक है जो वर्षा काल में भूस्खलन हेतु एक अतिरिक्त उत्प्रेरक का कार्य कर सकता है।
- जिन क्षेत्रों में गर्मी के दिनों में काफी आग लगी हो, वहाँ के ढलानों में मानसून के प्रारम्भिक काल में अदृढ़ शुष्क मिट्टी की अधिकता एवं भूमि की जल संग्रहण क्षमता में आयी कमी के कारण निचले क्षेत्रों में त्वरित बाढ़ की सम्भावना रहती है।
- ऐसे क्षेत्र जहाँ पर नये रास्तों, सड़कों, नहरों आदि का मलवा जमा हो अथवा भूमि कटाव हुआ हो, वहाँ पर भूस्खलन या मलवा आने की सम्भावना बढ़ जाती है।
- बाजार एवं संकरी बस्तियों में जहाँ बिना किसी उपयुक्त योजना के निर्माण के कारण जल निकासी में उत्पन्न हुये अवरोधों के कारण भूकटाव हो सकता है या मलवा जमा हो सकता है। अतः ऐसे क्षेत्रों का अवलोकन कर भूस्खलन एवं बाढ़ की सम्भावना को कम किया जा सकता है।
- नदियों/नालों या उसके सहायक नदियों/नालों एवं ऊँचे ढ़लान से प्रारम्भ होने वाले क्रमिक झरने अपने तीव्र वेग, द्रव्य वाहक क्षमता के कारण नीचे आने तक अत्यन्त खतरनाक हो जाते हैं। यह त्वरित बाढ़ एवं भूकटाव का एक मुख्य कारक होता है। अतः ऐसे क्षेत्रों में कभी भी आपदा घटित हो सकती है।
- सड़क, मकान, रास्ता, स्कूल आदि के निर्माण में जहाँ उर्ध्वाधर ढ़ाल को अत्यधिक काटा गया हो या जहाँ पर पुराना मलवा एकत्र हो, ऐसे स्थानों पर भूस्खलन की सम्भावना बनी रहती है।

3. खतरे से पूर्व तैयारी तथा प्रबन्धन

प्रायः हमें पता है भूस्खलन की प्रक्रिया बरसात के मौसम में और अधिक बढ़ जाती है और वह क्षेत्र जिनके ढाल स्थिर नहीं होते, चट्टानों में अधिक विभंग होते हैं, पहाड़ियों में कम पेड़–पौधे होते हैं, भूस्खलन से ज्यादा प्रभावित होते हैं। इन क्षेत्रों में बरसात से पूर्व कुछ प्राथमिक तैयारियाँ की जानी चाहिये जिससे भूस्खलन से होने वाले नुकसान को कम किया जा सके। अतः भूस्खलन को रोकने के लिये तथा उससे होने वाले नुकसान को कम करने के लिये निम्नलिखित तैयारियाँ करनी चाहिये।

- सीधी ढालों पर बनने वाले मकानों को बहुत सावधानी पूर्वक बनाना चाहिये।
- दुर्गम क्षेत्रों में बनने वाले मकानों आदि में प्रयोग होने वाला सामान उच्च गुणवत्ता का होना चाहिये।
- संभावित स्थानों पर भूस्खलन से होने वाले खतरों का प्रशिक्षण होना चाहिये।
- भूस्खलन ग्रसित क्षेत्रों का मानचित्र बनाना चाहिये तथा बचाव कार्य की तैयारियाँ पूर्व से ही कर लेनी चाहिये।
- समय–समय पर भूस्खलन के प्रति लोगों में जागरूकता बढ़ानी चाहिये।
- वनोन्मूलन एक मुख्य कारण है अतः इस पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिये।
- वनोन्मूलन के उपरान्त होने वाले भवनों के निर्माण पर नियंत्रण किया जाना चाहिये अथवा उचित योजना के बनने के बाद ही निर्माण होना चाहिए।
- अस्थायी ढलानों को स्थिर किया जाना चाहिए।
- पूर्व चेतावनी निकायों को प्रबल करना चाहिए।
- स्थानीय आपदा प्रबन्धन गुटों को ग्रामीण तथा शहरी स्तर पर बनाया जाना चाहिये जो आपदा में फँसे लोगों की मदद कर सकें।
- आधुनिक संचार माध्यम से जन सामान्य में जागरुकता लानी चाहिए।

4. खतरे के दौरान एवं उसके बाद के प्रबन्धन

भूस्खलन के दौरान निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिये तथा इन पर अमल करने से भूस्खलन के द्वारा होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है।

- घायलों को उचित समय पर प्राथमिक उपचार दिया जाना चाहिये।
- लोगों को सलाह दी जानी चाहिये कि घबराने के बजाय एक–दूसरे की मदद करें।
- आपदा प्रबन्धन से सम्बन्धित गतिशील घटकों को तुरन्त सक्रिय हो जाना चाहिये तथा दूर संचार और चिकित्सीय सहायता दी जानी चाहिये।
- स्थानीय आपदा प्रबन्धन गुटों को तुरन्त सक्रिय हो जाना चाहिये ताकि पीड़ितों को तत्काल उपचार एवं अन्य सहायता मिल सके।
- नुकसान का निर्धारण तथा विश्राम प्रबन्धन ग्रामीण एवं शहरी स्तर पर तुरन्त शुरू किया जाना चाहिये।
- निकटस्थ चिकित्सालयों में आपदा पीड़ितों हेतु आवश्यक संसाधन होने चाहिए।

5. आपदा के कारण, वैदिक समाधान एवं निष्कर्ष

पर्यावरणविदों का मानना है कि अनियोजित विकास, वनों का अवैध कटान, अत्यधिक खनन तथा नियमों की अवहेलना कर नदियों, पहाडों, एवं मार्गों के किनारे अतिक्रमण कर अवैध रूप से किये गये भवन निर्माण भी इस प्रकार की त्रासदी को बढ़ाने में कम योगदान नहीं करते हैं। आज मानव को आवश्यकता है प्रकृति के साथ संवेदनशीलता पूर्वक सामंजस्य बैठाकर ऐसे सन्तुलित विकास करने की जिससे पर्यावरण भी सुरक्षित रहे और मानव सहित सभी प्राणी सुखपूर्वक जीवन यापन कर सकें। सम्पूर्ण विश्व को मानवता का पाठ पढ़ाने वाले वेदों का योगदान भी पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण रहा है। वैदिक ऋचाएं वर्तमान तथा भविष्य की समस्याओं के निदान में अपनी भूमिका का निर्वहन करती रही हैं। अथर्ववेद के पृथिवीसूक्त का ऋषि स्वार्थ से कोसों दूर रहकर पृथिवी अर्थात् पर्यावरण की सुरक्षा और संवेदना का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करते हुए कहता है कि–

"यत्ते भूमि विखानामि क्षिप्रं तदपि रोहतु ।
मा ते मर्म विमृग्वरि मा ते हृदयमर्पिपम्।।" [9](अथर्व0–12/1/35)

अर्थात्–हे भूमि माता! तेरा जो कोई भाग मैं खोदूँ या लूँगा, वह उतना ही होगा, जिसे तू पुनः शीघ्र उत्पन्न कर सके। हे खोजने योग्य पृथिवी! मैं न तो तेरे मर्मस्थल पर या तेरी जीवन शक्ति पर कभी आघात अर्थात् चोट करूँ और न ही तेरे हृदय को हानि पहुँचाऊँ।

ऋषि की यह संवेदना ही प्रत्येक मानव के लिए प्रकृति अर्थात् पर्यावरण की सुरक्षा के मार्ग को प्रशस्त करने का शुभ संदेश है।

सन्दर्भ

1. ऋग्वेद–8/27/10
2. सिंह, आर0 ए0(2012) "भूस्खलन एवं पर्यावरण ह्रास", ज्ञानोदय प्रकाशन, सुमित्रा सदन, मल्लीताल, नैनीताल, उत्तराखण्ड।
3. अमर उजाला, मेरठ 30, जून 2013 संपादकीय पृष्ठ–15.
4. दैनिक जागरण, मेरठ 25, जून 2013 संपादकीय पृष्ठ–12.
5. अमर उजाला, नैनीताल 22, जून 2013 संपादकीय पृष्ठ–12.
6. अमर उजाला, मेरठ 30, जून 2013 संपादकीय पृष्ठ–15.
7. दैनिक जागरण, मेरठ 25, जून 2013 संपादकीय पृष्ठ–12.
8. अमर उजाला, नैनीताल 22, जून 2013 संपादकीय पृष्ठ–12.
9. अथर्ववेद–12/1/35.
10. अमर उजाला, लखनऊ 15, जून 2014 पृष्ठ–1.
11. archive.indianexpress.com

जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभाव एवं समाधानः एक तकनीकी विवेचना

अपर्णा टण्डन
असिस्टेंट प्रोफेसर, वाणिज्य विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0 प्र0, भारत
aparnashrish@gmail.com

सार

जलवायु परिवर्तन के कारण पृथ्वी का दूषित होता पर्यावरण आज सम्पूर्ण विश्व के समक्ष एक ज्वलन्त समस्या है। कोई भी राष्ट्र या व्यक्ति इसके दुष्प्रभावों से मुक्त नहीं रह सकता है। इसके परिणामस्वरूप आज विस्थापन, संघर्ष, भुखमरी, प्राकृतिक सौन्दर्य एवं संस्कृति का विनाश तथा राष्ट्रीय असुरक्षा की भावना को पोषण देने वाली समस्याएं दृष्टिगोचर हो रही हैं। ये समस्याएं देश की सीमाओं के बन्धन से मुक्त हैं। अतः इन विकराल समस्याओं के समाधान के लिए राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय साझा प्रयासों की आवश्यकता है ताकि हम विरासत में अपनी आने वाली पीढ़ियों को एक स्वच्छ एवं स्वस्थ पर्यावरण दे सकें।

बीज शब्द– जलवायु परिवर्तन, वायुमण्डल, भूमण्डलीय ऊष्मीकरण।

Side effects and remedies of climate change-a technical analysis

Aparna Tandon
Assistant Professor, Department of Commerce
B.S.N.V. P.G. College,Lucknow-226001, U.P., India
aparnashrish@gmail.com

Abstract

Change in climate is a burning issue for the whole world. No country or person can be immune from its effects. With this effect, today the world is facing the problem of displacement, starvation, struggle, disaster of natural beauty and culture, lack of national insecurity etc. These are the problems which do not consider the country's borders. Hence, for the solution of these dangerous problems, a joint effort should be taken nationally and internationally so that we can provide our generations or inherit a clean and hygienic environment.

Key words- Climate changes, environment, global warming.

प्रस्तावना

जलवायु परिवर्तन आज विश्व के समक्ष एक विकराल समस्या है जो भूमण्डलीय ऊष्मीकरण के रूप में मनुष्य के साथ–साथ इस भूमंडल पर रहने वाले प्रत्येक प्राणी को प्रभावित कर रही है क्योंकि हमारे आस–पास के वातावरण का हमारे स्वास्थ्य पर निश्चित और प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। इस विकराल समस्या के समाधान के लिए विश्व भर में प्रयत्न किये जा रहे हैं लेकिन समस्या साल दर साल कम

होने के स्थान पर बढ़ती ही जा रही है। यह अभी अपनी आरम्भिक अवस्था में है। यदि इस पर ध्यान न दिया गया तो भविष्य में यह और भी विकराल हो सकती है।

क्या है भूमंडलीय ऊष्मीकरण ?

पृथ्वी के वातावरण के तापमान में निरन्तर हो रही वृद्धि ही भूमंडलीय ऊष्मीकरण है। प्राकृतिक रूप से पृथ्वी सूर्य की किरणों से ऊष्मा प्राप्त करती है और यह किरणें वायुमंडल से होकर पृथ्वी की सतह पर पहुंचती हैं तथा परावर्तित होकर पुनः लौट जाती हैं। पृथ्वी का वायुमंडल विभिन्न गैसों से मिलकर निर्मित हुआ है जिसमें कुछ ग्रीन हाउस गैसें भी हैं। इनमें से अधिकतर गैसें पृथ्वी के ऊपर एक प्रकार का प्राकृतिक आवरण निर्मित करती हैं। यह आवरण वापस जाती किरणों के एक भाग को रोक लेता है और पृथ्वी के वातावरण को गर्म बनाये रखता है। अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि ग्रीन हाउस गैसों में निरन्तर वृद्धि से यह आवरण और भी सघन हो जाता है तथा सूर्य की अधिक किरणों को रोकने लगता है और भूमंडलीय ऊष्मीकरण की समस्या आरम्भ हो जाती है।

क्या है भूमंडलीय ऊष्मीकरण के कारण ?

भूमंडलीय ऊष्मीकरण के लिए अपने आप को इस पृथ्वी का सबसे बुद्धिमान प्राणी समझने वाला मनुष्य और उसकी गतिविधियाँ ही पूर्ण रूप से उत्तरदायी हैं। मनुष्य के क्रिया–कलापों से कार्बन डायआक्साइड, मीथेन, नाइट्रोजन ऑक्साइड आदि ग्रीन हाउस गैसों की मात्रा में निरन्तर वृद्धि हो रही है, जिस कारण इन गैसों का आवरण सघन होता जा रहा है और यह सूर्य की परावर्तित किरणों को रोक रहा है जिस कारण पृथ्वी के तापमान में वृद्धि हो रही है। वाहनों, हवाई जहाजों, बिजली बनाने के संयत्रों, उद्योगों आदि की संख्या में निरन्तर वृद्धि से इनसे होने वाले गैसीय उत्सर्जन में भी वृद्धि हो रही है जिससे वातावरण में कार्बन डायआक्साइड की मात्रा भी बढ़ रही है। जंगल कार्बन डायआक्साइड की मात्रा को प्राकृतिक रूप से नियंत्रित करते हैं लेकिन जंगलों की अन्धाधुंध कटाई से यह प्राकृतिक नियंत्रक भी इसको नियंत्रित करने में असहाय है।

हैलोजेनेटेड हायड्रोकार्बन्स पूर्ण रूप से उद्योगों की ही देन है। इनमें सबसे चर्चित है क्लोरो फ्लोरो कार्बन (सी0एफ0सी0) जो रेफ्रीजरेटर्स, एयरकण्डीशन, अग्निशामक आदि यंत्रों में प्रयोग की जाती है। यह पृथ्वी के ऊपर निर्मित प्राकृतिक आवरण ओजोन परत को नष्ट करने का कार्य करती है। सूर्य से निकलने वाली घातक पराबैंगनी किरणों को ओजोन परत पृथ्वी पर आने से रोकती है। वैज्ञानिकों का मानना है कि ओजोन परत में एक बड़ा छिद्र हो चुका है जिससे पराबैंगनी किरणें सीधे पृथ्वी पर पहुंच कर इसके तापमान में निरन्तर वृद्धि कर रही हैं जिससे ध्रुवों पर जमी बर्फ भी पिघलने लगी है। ऐशोआराम के साधन बढ़ने से आज विश्व के सभी राष्ट्रों में ऊर्जा की आवश्यकता में निरन्तर वृद्धि हो रही है। बिजली उत्पादन के लिए जीवाश्म ईंधन का अत्यधिक मात्रा में प्रयोग किया जाता है जिसके जलने पर कार्बन डायऑक्साइड उत्पन्न होती है जो ग्रीन हाउस गैसों के प्रभाव में वृद्धि कर भूमंडलीय ऊष्मीकरण को बढ़ावा देती है।

भूमंडलीय ऊष्मीकरण के प्रभाव

विश्व के जलवायु परिवर्तन पर दृष्टि रखने वाली संस्था इंटरगवर्नमेन्टल पैनल ऑफ क्लाइमेट चेंज (आई0पी0सी0सी0) की मैराथन बैठक मार्च 2014 में जापान के याकोहामा में एक सप्ताह चली। यह इस तरह की दूसरी बैठक थी। इसमें भूमंडलीय ऊष्मीकरण के कारण प्रभाव और निदान पर चर्चा की गयी। दुनिया भर के वैज्ञानिकों और अधिकारियों ने जलवायु परिवर्तन से हुए प्रभाव के बारे में 32 खण्डों का 2610 पेज का अब तक का सबसे व्यापक दस्तावेज पेश किया। इस नये दस्तावेज में इस बात को स्पष्ट किया गया है कि वर्ष 2007 में आयी रिपोर्ट की तुलना में पूरे विश्व में भूमंडलीय ऊष्मीकरण के बढ़ते खतरे को दर्शाने वाले साक्ष्य पहले से लगभग दोगुने हो चुके हैं। इस रिपोर्ट के सारांश में कहा गया है कि दुनिया के बढ़ते हुए तापमान से लोगों के स्वास्थ्य, रहन–सहन, आहार तथा सुरक्षा को व्यापक खतरा है।

मनुष्य के स्वास्थ्य पर प्रभाव

तापमान में तीव्र गति से हो रही वृद्धि जहाँ हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डाल रही है साथ ही हमारी रोग प्रतिरोधक क्षमता भी कम कर रही है। मानव समाज नित नई बीमारियों से ग्रसित हो रहा है। वातावरण में कार्बन डायआक्साइड और पराग कणों की मात्रा बढ़ने से विभिन्न प्रकार की एलर्जी व दमे के रोगियों की संख्या बढ़ रही है। वह समय भी जल्द ही आ सकता है जब हममे से अधिकांश को पीने के लिए स्वच्छ जल व खाने के लिए ताजा भोजन भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध न हो सके। ऐसा अनुमान है कि 2050 तक मक्का, चावल और गेहूँ के उत्पादन में 25 फीसदी तक नुकसान हो चुका होगा तथा 2050 के बाद फसलों को और ज्यादा नुकसान पहुंचेगा तब तक विश्व की जनसंख्या लगभग 9 अरब तक पहुंचने का अनुमान है।

पशु–पक्षियों व वनस्पितियों पर प्रभाव

माना जा रहा है कि तापमान में वृद्धि से पशु–पक्षी, मछलियाँ, वनस्पतियाँ एवं अन्य जीव धीरे–धीरे ध्रुवों तथा पहाड़ी इलाकों की ओर पलायन करेंगे। इस प्रक्रिया में कुछ का अस्तित्व ही नष्ट हो जायेगा। मूंगे की चट्टानें समाप्त होती जा रही हैं। मात्र 2 सेंटीग्रेड तापमान बढ़ने से ही समुद्र पहले से ज्यादा अम्लीय हो जायेंगे और मूंगे की चट्टानों सहित समुद्र में पाई जाने वाली कई प्रजातियों को खतरा और बढ़ने के आसार उत्पन्न हो जायेंगे।

समुद्र के जलस्तर में वृद्धि

तापमान में वृद्धि से ग्लेशियरों पर जमी बर्फ पिघलने लगेगी। कई स्थानों पर यह प्रक्रिया आरम्भ भी हो चुकी है। ग्लेशियरों की बर्फ पिघलने से समुद्र के जलस्तर में वृद्धि होगी। समुद्र की सतह में वृद्धि से प्राकृतिक तटों का कटाव शुरू हो जायेगा जिस कारण एक बड़ा भूभाग जल में समा जायेगा और तटीय इलाकों में निवास करने वाले अधिकांश लोग बेघर हो जायेंगे।

रोजगार के अवसरों में कमी

समुद्र के जलस्तर में वृद्धि से रोजगार के लाखों अवसर समाप्त हो सकते हैं। इसका सबसे ज्यादा प्रभाव मत्स्य उद्योग और पर्यटन उद्योग पर पड़ेगा। किसानों और निर्माण कार्य में लगे मजदूरों के लिए खतरे उत्पन्न होंगे। मत्स्य उद्योग पर विश्व के करीब 40 करोड़ लोग आश्रित हैं।

ग्रीन हाउस गैसों की उत्पत्ति को कम करने के लिए कतिपय सुझाव

1. विद्युत ऊर्जा को किफायत से उपयोग किया जाये तथा विद्युत उत्पादन के लिए कोयले के स्थान पर प्राकृतिक गैस को ईंधन के रूप में पावर प्लाण्ट में उपयोग किया जाये जिससे परमाणु भट्ठी की गर्मी को सीमित और कोयले की राख को कम किया जा सकेगा।
2. ऊर्जा के गैर परम्परांगत स्रोतों जैसे कि पवन ऊर्जा, हाइड्रोइलेक्ट्रिक ऊर्जा और सौर ऊर्जा को प्रमुखता से उपयोग किया जाये।
3. वस्तुओं को रिसाइकिल करने की प्रक्रिया आरम्भ की जाये क्योंकि किसी उत्पाद को रिसाइकिल करके पुनः उत्पादन में उसे नये सिरे से उत्पादन करने की अपेक्षा कम ऊर्जा खर्च होती है।
4. मीथेन (सी0एच0–4), क्लोरोफ्लोरो कार्बन (सी0एफ0सी0), सोडियम डायऑक्साइड (एन0ओ0–2), ट्रायऑक्साइड (ओ0–3), कार्बन मोनोऑक्साइड (सी0ओ0) आदि गैसों की मात्रा को नियंत्रित करना होगा। यह नियंत्रण इनके मित्र पदार्थों के उपयोग में वृद्धि कर ही किया जाना सम्भव है।
5. वनों का संरक्षण तथा वृक्षारोपण कार्यक्रम चलाकर जलवायु पर नियंत्रण, वर्षा के जल को आकर्षित करना, प्रकृति में विभिन्न हानिकारक गैसों की मात्रा को नियंत्रित करना तथा ऑक्सीजन की मात्रा को बढ़ाया जा सकता है।

6. दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु मानव जाति प्रकृति में पाये जाने वाले जीव–जन्तुओं एवं वनस्पतियों पर ही निर्भर है। मानव प्रागैतिहासिक काल से जैव विविधता का शोषण करता आया है, जिस कारण अनेक प्रजातियाँ विलुप्त हो चुकी हैं। अतः पर्यावरण संरक्षण के लिए जैव विविधता का संरक्षण आवश्यक है।

7. पर्यावरण संरक्षण के लिए परिस्थितिकी कृषि एक उत्तम विकल्प है। परिस्थितिकी कृषि मानव जीवनदायिनी कृषि भी कहलाती है। इसका उद्देश्य रासायनिक उर्वरक तथा कृषि में अधिक रसायनों के उपयोग को रोकना है।

सामान्य जन द्वारा भी इस त्रासदी को कम करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया जा सकता है जैसे–

1. लोगों के द्वारा कार पूलिंग या सार्वजनिक वाहन का उपयोग किया जाय तथा अत्यधिक पुराने हो गये वाहनों का प्रयोग बन्द कर दिया जाये।
2. सी0एफ0एल0 या एल0ई0डी0 बल्ब ही उपयोग किये जायें।
3. अधिक स्टार वाले उपकरणों का उपयोग किया जाये जिससे ऊर्जा की बचत हो सके।
4. टेलीविज़न व अन्य इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों को उपयोग के पश्चात पूर्ण रूप से बन्द कर दिया जाये, उन्हें स्टैण्डबाई मोड पर न छोड़ा जाये।
5. खाना पकाने के लिए कुकिंग गैस या सोलर कुकिंग का प्रयोग किया जाये।
6. जन साधारण में भूमंडलीय ऊष्मीकरण तथा इसके दुष्प्रभावों के प्रति जागरूकता उत्पन्न की जाये।

निष्कर्ष

ऊष्मीकरण के कारण पृथ्वी का दूषित होता पर्यावरण आज सम्पूर्ण विश्व के समक्ष एक ज्वलन्त समस्या है। इस कारण आज पृथ्वी से करोड़ों जीव–जन्तू एवं वनस्पतियाँ विलुप्त हो चुकी हैं और कई विलुप्त होने की कगार पर हैं। कोई भी राष्ट्र या व्यक्ति इसके दुष्प्रभावों से मुक्त नहीं रह सकता है। परिणामस्वरूप आज विस्थापन, संघर्ष, भुखमरी, प्राकृतिक सौन्दर्य एवं संस्कृति का विनाश तथा राष्ट्रीय असुरक्षा की भावना को पोषण देने वाली समस्याएं दृष्टिगोचर हो रही हैं। ये समस्याएं देश की सीमाओं के बन्धन से मुक्त हैं। अतः इन विकराल समस्याओं के समाधान के लिए राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय साझा प्रयासों की आवश्यकता है ताकि हम विरासत में अपनी आने वाली पीढ़ियों को एक स्वच्छ एवं स्वस्थ पर्यावरण दे सकें। हालाँकि जलवायु परिवर्तन का जो क्रम आरम्भ हो चुका है उस पर पूर्ण रूप से विराम लगा पाना तो सम्भव नहीं है परन्तु सावधानी रखकर उसे और परिवर्तित होने से अवश्य रोका जा सकता है।

संदर्भ

1. पुरी, योगेश्वर (2008) "ग्लोबल वार्मिंग", नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, भारत।
2. बेट्स, बी0; कुण्ड्जेविक्ज, जेड0 डब्ल्यू0, वू, एस0 तथा पालिटोकॉफ, जे0(2008) "क्लाइमेट चेंज एण्ड वाटर", इण्टरगॉवरमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज(आई0पी0सी0सी0), जिनेवा, स्विटजरलैंड।
3. थोमस, क्रिस डी0 एवं अन्य(2004) "एक्सिटंकशन एण्ड रिस्क फ्रॉम क्लाइमेट चेंज", नेचर, खण्ड 427, मु0पृ0 145–148।
4. ह्यूज, टी0 पी0 एवं अन्य(2003) "क्लाइमेट चेंज, ह्यूमन इम्पैक्ट्स, एण्ड द रिसायलिएंस ऑफ कोरल रीफ्स", साइंस, खण्ड 301, अंक 5635, मु0पृ0 929–933।
5. डब्लूडब्लूडब्लू.एनबीटी.इन।

शारीरिक शिक्षा और सामान्य शिक्षा में सम्बन्ध

रेनू मौर्या
असिस्टेंट प्रोफेसर, शारीरिक शिक्षा
संत कवि बाबा बैजनाथ राजकीय महाविद्यालय, हरख, बाराबंकी–225121, उ0प्र0, भारत

सार

शारीरिक शिक्षा वर्षों से प्रचलित शिक्षा पाठ्यक्रम का एक अंग रहा है, जो प्रभावी ढंग से समाज के उन्नयन में अपना योगदान देता रहा है। दोनों ही सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया का अंगभूत हिस्सा हैं तथा परस्पर एक दूसरे पर आश्रित है। प्रस्तुत लेख सामान्य शिक्षा व शारीरिक शिक्षा के अंर्तसंबंधों पर किये गये अध्ययन का संकलन है।

बीज शब्द– सामान्य शिक्षा, शारीरिक शिक्षा, आधुनिक समाज, सम्बन्ध।

Relation between general education and physical education

Renu Maurya
Assistant Professor, Physical Education
Sant Kavi Baba Baijnath Govt. College, Harak, Barabanki-225121, U.P., India

Abstract

Physical education has been a part of conventional education system far the last several years and contributing effectively in the betterment of the society. Both have been integral part of each other and dependent too. Present article embodies studies made on inter-relationship of physical education and general education.

Key words- General education, physical education, modern society, relation.

1. प्रस्तावना

आधुनिक समाज में तेजी से हो रहे बदलावों व अनेक समस्याओं के उत्पन्न होने के फलस्वरूप शारीरिक शिक्षा व सामान्य शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व को हम कम करके नहीं आंक सकते। इसी उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि इन दोनों के सम्बन्धों की विवेचना की जाए। इनका प्रमुख उद्देश्य है

छात्रों में आधुनिक जीवन के लिए शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व के बारे में सजगता पैदा करना एवं छात्रों को सामान्य शिक्षा व शिक्षा के बीच सम्बन्धों के योग्य बनाना।

2. आधुनिक समाज में शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व

शारीरिक शिक्षा ने आज के युग में विशेष सार्थकता, अद्वितीय भूमिका और असीमित योगदान दिया है। जैसे कि जैविक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को पूरा करना। स्वामी विवेकानन्द ने बल दिया है, "भारत को आज भगवत गीता की नहीं बल्कि फुटबाल के मैदान की जरूरत हैं।" शारीरिक शिक्षा की न केवल वर्तमान अपितु भविष्य में भी महान् उपयोगिता है। शारीरिक शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व पर बल देते हुए रोशयू ने कहा है, "यह शरीर का ठोस गठन ही है जो मन का सही और निश्चित संचालन करता है।" सैकेंडरी एजुकेशन कमीशन भी शारीरिक

शिक्षा की आवश्यकता एवं महत्व से परिचित था उसने कहा था कि, "देश के युवा का शारीरिक कल्याण राज्य के मुख्य सरोकारों में से एक होना चाहिए और जीवन की इस अवधि में शारीरिक कल्याण के सामान्य नियमों से भागने के परिणाम हो सकते हैं।"

आधुनिक जीवन में घर–घुस्सुवाद, यंत्रवत जीवन और कम्प्युटरीकरण ने एक नये प्रकार के मानव को पैदा किया है जो दिन में घंटों के लिए बैठते हैं। 21वीं शताब्दी, अंतरिक्ष और प्रौद्योगिकी की भीमकायता का युग है, जो गति, शोर और तनाव पैदा करने वाले कारकों से आवेशित है। हमारे समाज और आर्थिक व्यवस्था की मांग द्वारा पैदा किये बल और बुद्धिवाद की ओर हमारा समर्पण विस्मयकारी है। शहरी जीवन शैली ने कई तनावों को पैदा किया है और ये मानवता के लिए विनाशकारी साबित होंगे।

आधुनिकता हमारे ऊपर अपरिहार्य प्रतिकूल प्रभाव डाले हैं। पर्यावरण, प्रदूषण, संस्कृति का ह्रास, सामाजिक विघटन, धार्मिक असहिष्णुता आदि ने पारिस्थिक एवं सामाजिक संतुलन को बिगाड़ दिया है। आज मानव अस्तित्व और समायोजन संकट का सामना कर रहा है, जो अब से पहले कभी उसके सम्मुख नहीं था। अपना अस्तित्व बचाने और इन संकटों पर विजय पाने के लिए व्यक्ति को साहस, निर्भीकता, शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और बौद्धिक रूप से अपने आप को मजबूत बनाना होगा। शारीरिक शिक्षा वह एजेंसी है जो शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में व्यापकता व भिन्नता लाकर सामाजिक दायित्वों को प्रभावी ढंग से निभा रही है।

3. शारीरिक शिक्षा का महत्व

आधुनिक समाज में मनुष्य द्वारा स्वयं अपने चारों ओर खड़ी की गई समस्याओं से बाहर निकलने में शारीरिक शिक्षा हमारी जो मदद करती है उसे भी कम करके नहीं आंका जाना चाहिए। आधुनिक समाज में शारीरिक शिक्षा के महत्व का सार इस प्रकार है–

1. **सर्वांगीण विकास**– शारीरिक शिक्षा बच्चे के संगठित मानसिक, सामाजिक, नैतिक और शारीरिक गुणों का सर्वांगीण विकास, शारीरिक क्रियाकलापों के माध्यम से उपलब्ध कराती है।
2. **शारीरिक वृद्धि और विकास**– शारीरिक क्रियाकलाप आवश्यक हैं क्योंकि यह आंशिक व्यवस्था और मानव शरीर की क्रियाशीलता के विकास में सहायक होते हैं। यह उसकी थकान से लड़ने की सामर्थ्य बढ़ाती है उसके प्रदर्शन में सुधार और उसे और अधिक स्वस्थ बनाती है।
3. **बौद्धिक विकास**– शारीरिक क्रियाकलाप अवश्य सीखने चाहिए, अतः बौद्धिक तंत्र के बल सोचने की आवश्यकता है जिसका परिणाम ज्ञान ग्रहण करना है। शारीरिक क्रियाकलाप बच्चे के वैज्ञानिक अन्तर्मन, बौद्धिक और श्रेष्ठ विचारधारा का विकास, परमावश्यक है।
4. **भावनात्मक विकास**– शारीरिक शिक्षा भावनाओं पर नियंत्रण के अवसर उपलब्ध कराती है। खेल जीतना और हारना दोनों ही भावनाओं के छुटकारे और भावनाओं के नियंत्रण का क्षेत्र है।
5. **सामाजिक समायोजन**– शारीरिक शिक्षा प्रतिभागियों व अन्यों के साथ मेलमिलाप का अवसर प्रदान करती है। जिससे हम सामाजिक गुणों जैसे खेल भावना, ईमानदारी, मित्रता, भाईचारा, शिष्टाचार, आत्म–अनुशासन, सहयोग और ऐसी संस्था के प्रति आदर की भावना, जो व्यक्ति को सामाजिक समायोजन में मदद दे, को सीखते हैं।
6. **व्यक्तिगत समायोजन**– शारीरिक शिक्षा व्यक्ति को आत्म–अभिव्यक्ति का पूरा–पूरा अवसर देती है और अपने कार्य के परिणामों से संतुष्टि देती है और उसे जीवन में व्यक्तिगत समायोजन के लायक बनाती है।
7. **चारित्रिक विकास**– सामूहिक प्रयास, टीम के प्रति वफादारी और मजबूत इरादे, खेल और शारीरिक क्रियाकलापों के लिए आवश्यक है। ये एक नैतिक चरित्र के विकास के लिए बड़े उपयोगी साबित होते हैं।
8. **शारीरिक फिटनेस**– कसरत और व्यक्ति के शरीर के विषय में ज्ञान और शारीरिक फिटनेस के लिए आवश्यक योगदान शारीरिक शिक्षा के माध्यम से मिलता है। नियमित कसरत या व्यायाम हमारी शारीरिक कार्यक्षमता और बनावट को सुधारता है।
9. **मानसिक विकास**– शारीरिक शिक्षा सीखने की कला, खेलों, नियमों, तकनीकों और व्यूह रचनाओं एवं नई स्थितियों में व्यक्ति को प्रभावी ढ़ग से निर्णय लेने में सक्षम बनाती है। शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम व्यक्ति को स्वच्छता, स्वास्थ्य और सफाई के प्रति सचेत कर उसका मानसिक विकास करता है।
10. **स्नायु पेशी विकास**– शारीरिक क्रियाकलापों के माध्यम से व्यक्ति पेशी व स्नायु तंत्र में समन्वय बिठाना सीखता है। स्नायु पेशी तंत्र संयोजन का विकास अच्छी तरह तभी होता है जब विभिन्न प्रकार की कसरतों को दोहराते हुए लम्बा समय हो गया हो। किसी काम को सही तरीके से करने या सीखने की कला, अच्छा स्नायु–पेशी तंत्र नियंत्रण, अपरिहार्य है। यह हमें तीव्र और सक्षम गति उपलब्ध कराता है।

11. **स्वस्थ संवेग अभिव्यक्ति**– खेल संवेगों का अभियान है और मौलिक प्रवृतियों के प्रकटीकरण के अनेक अवसर प्रस्तुत करता है। खेल के गत्यात्मक गुणों को बच्चे की मूल प्रवृत्तियों के तुष्टिकरण के लिए उपयोग में लाया जा सकता है।

12. **सांस्कृतिक विकास**– खेल और शारीरिक क्रियाकलाप सभी लोगों की संस्कृति में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। ऐसे क्रियाकलापों के दौरान विभिन्न संस्कृतियों के व्यक्ति आपस में एक दूसरे से मिलते हैं और एक दूसरे के बारे में जानते हैं। उनके रीति–रिवाजों, परम्पराओं और जीवन शैली के बारे में परिचित होते हैं, जिससे सांस्कृतिक विकास को बढ़ावा मिलता है।

13. **नेतृत्व गुण**– एक अच्छे नेता में आत्म विश्वास, बुद्धि, वफादारी, ईमानदारी, समर्पण, और साधन सम्पन्नता जैसे गुण होने चाहिए। इन गुणों को और अधिक विकसित व सिंचित करने का मौका खेल की स्थिति और खेल के मैदान में मिलता है, जो ऐसे गुणों के विकास की प्रयोगशाला होती है।

14. **स्वास्थ्य एवं सुरक्षा आदतें**– शारीरिक शिक्षा, व्यक्ति को स्वास्थ एवं सुरक्षा आदतों के लिए निर्देश देती है, और खेल व क्रीड़ाएं सुरक्षा व स्वास्थ प्रेरक पद्धति के तरह ही खेली जाती हैं।

15. **लोकतांत्रिक मूल्य**– शारीरिक शिक्षा संगठन और प्रशासन लोकतंत्र के सिद्धान्तों, लो और दो तथा संस्था का आदर करो पर आधारित है। कार्यक्रमों की योजना व संचालन में अवसर द्वारा शारीरिक शिक्षा लोकतांत्रिक आदर्शों और मूल्यों को छात्रों के मन में बिठा देती है।

16. **स्वस्थ दृष्टिकोण विकसित करना और खेल भावना को प्रोत्साहन**– शारीरिक शिक्षा हार और जीत को शालीनता से स्वीकार ने की कला सिखाती है। अन्यों से दूर रहने की भावना और नियमों का पालन और मैत्री भाव का दृष्टिकोण बनाये रखना आदि सकारात्मक दृष्टिकोण के विकास और खेल भावना को प्रोत्साहन देता है।

17. **खाली समय का रचनात्मक उपयोग**– शारीरिक शिक्षा खाली समय के रचनात्मक उपयोग में भी अपना योगदान देती है। दक्षताओं और शारीरिक क्रियाकलापों से व्यक्ति अपनी अतिरिक्त ऊर्जा का समुचित उपयोग करना सीखता है। और खाली समय के घंटों का सदुपयोग करना सीखता है।

18. **अभिव्यक्ति और रचनात्मकता**– शारीरिक शिक्षा की भाषा, भावनाओं की अभिव्यक्ति और रचनात्मकता की इजाजत देती है तथा मूवमेंट और विचारों की नयी तर्ज को जन्म देती है।

19. **नागरिकता के गुण**– शारीरिक शिक्षा अच्छे नागरिक गुणों का भी विकास करती है जैसे–कानून का पालन करना, स्वच्छ खेल, खेल भावना, साफ रहन–सहन, दूसरों का आदर और देश भक्ति की भावना जो कि लोकतांत्रिक जीवन में आवश्यक है, को विकसित करती है।

20. **आर्थिक उपादेयता**– आजकल शारीरिक शिक्षा तेजी से कमाई वाले व्यवसाय के रूप में बदल रही है। व्यवसाय के लिए अवसर और स्वरोजगार व विभिन्न एजेंसियों में रोजगार के अवसर पैदा कर रही है। प्रायोजित करने की अवधारणा ने खेलों के क्षेत्रों को नयी और अर्थ पूर्ण दिशा दी है।

21. **मानसिक शान्ति**–शारीरिक क्रियाकलापों जैसे योगा, एरोबिक्स, फिटनेस कार्यक्रम, मनोरंजन क्रियाकलापों, खेल और क्रीड़ाएं, आधुनिक जीवन शैली में मानसिक तनावों को कम कर और उनसे मुक्त होने व ध्यान बटाने में मदद करते हैं और हताशा से भी मुक्ति दिलाते हैं।

22. **राष्ट्रीय एकता**–भारत में जहाँ विभिन्न धर्मों, जातियों, नस्लों व भाषाओं के लोग रहते हैं वहाँ शारीरिक शिक्षा इनमें एकता की भावना लाने और राष्ट्रीय एकता को प्रोत्साहित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

23. **अन्तर्राष्ट्रीय मेलमिलाप**– शारीरिक शिक्षा राष्ट्रीय सीमाओं के अवरोधों को तोड़कर एक बड़ा प्लेटफार्म प्रदान करती है। अन्तर्राष्ट्रीय स्पर्धाएं विभिन्न देशों के खिलाड़ियों को व्यक्तिगत मेलमिलाप का अवसर देती हैं और उन्हें साथ लाकर व एक दूसरे के निकट लाकर परस्पर अनुभवों एवं वैश्विक भाईचारे की भावना को बढ़ाने का अवसर देती हैं।

4. शारीरिक शिक्षा का सामान्य शिक्षा से सम्बन्ध

शारीरिक शिक्षा को लम्बे समय से शिक्षा प्रक्रिया के ही एक अंगभूत भाग के रूप में मान्यता मिली हुई है। मानव शरीर, मन और आत्मा का संघठित रूप है और शिक्षा इस एकीकरण को और भी मजबूत बनाती है। मानव को पूरी शिक्षा दी जानी चाहिए। शिक्षा की कोई भी संकुचित व्याख्या जैसे वह स्कूली पाठ्यक्रम, स्कूलेत्तर या बौद्धिक विकास के पहलू से सम्बन्धित हो, के रूप में करना शिक्षा के उद्देश्य से भटकना होगा। कोई भी व्यक्ति, समुदाय, राष्ट्र जीवन के एक ही पहलू पर निर्भर नहीं हो सकता। मानव मनो–शारीरिक जीव है और मन व शरीर को अलग–अलग करके नहीं देखा जा सकता। मोंटेग ने इसे बिल्कुल सही ढंग से व्याख्यायित किया है, यह केवल आत्मा नहीं है, केवल शरीर नहीं है जिसे हम प्रशिक्षण दे रहे हैं, यह व्यक्ति है और हमें इसे दो हिस्सों में नहीं बांटना चाहिए। जॉन लाकी ने भी इसी तरह से विचार प्रकट किये हैं, एक स्वस्थ शरीर में एक स्वस्थ मन विश्व स्तर पर स्वीकार की जाने वाली संक्षिप्त अपितु परिपूर्ण प्रस्तुति प्रसन्नता–पारक स्रोत हैं।

शिक्षा की परिभाषा में 3 आरज (रीडिंग, रायटिंग, अर्थमेटिक) से 3 एमज (मैन, मैटीरियल, मैथड) ने व्यक्तित्व के सर्वोत्मुखी विकास में महत्वपूर्ण बदलाव ला दिया। इससे यह स्पष्ट रूप से स्थापित होता है कि शारीरिक शिक्षा, और सामान्य शिक्षा, समस्त शिक्षा का एक अंगभूत हिस्सा है। चार्ल्स ए0 बुकार भी यही विचार रखते हैं।

अब यह सुस्थापित हो चुका है कि व्यक्ति की वृद्धि और विकास ही शिक्षा वास्तविक सारांश है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार, सभी शिक्षाओं, सभी प्रशिक्षणों का परिणाम मनुष्य को बनाना चाहिए। आधुनिक शिक्षा ने व्यक्ति के समग्र विकास जैसे–मानसिक, शारीरिक, भावनात्मक, बौद्धिक और सामाजिक पर बल दिया है तथा इन सभी का मकसद व्यक्ति के सम्पूर्ण विकास से संबंधित है। जे0 पी0 थॉमस के शब्दों में, शारीरिक शिक्षा शारीरिक क्रियाकलापों के माध्यम से दी जाने वाली यह शिक्षा है जिससे बच्चे के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है और इसकी पूर्ति एवं पूर्णता शरीर, मन और आत्मा में है।

शिक्षा का पहला सबक बच्चा शारीरिक कार्य व्यवहार से ही सीखता है। डी0 ओबर्टयूफर ने इसी तरह के विचारों को रेखांकित किया है और कहा है, शारीरिक शिक्षा उन अनुभवों का संकलन है जो व्यक्ति अपने कार्य व्यापारों के माध्यम से सीखता है। फ्रोबेल ने कहा है, खेल बचपन के अंकुरित पत्रों का स्वाभाविक प्रकटीकरण है। खेल एक अन्तर्निष्ठ प्रवृत्ति है और प्रकृति की देन है। वास्तव में खेल प्रकृति प्रदत्त शिक्षा का पाठ्यक्रम है और बच्चे को स्वतंत्रता, स्वाभाविकता और आत्म–अभिव्यक्ति उपलब्ध कराकर इसका शारीरिक मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक विकास करता है। एल0 पी0 जैक्स का बयान है कि जीवन में खेल की दिशा में खोजी गयी शैक्षणिक सम्भावनाओं को भी आज के महान अविष्कारों में गिना जाना चाहिए। यह उल्लेखनीय है, मैं इससे सहमत हूँ, यह शिक्षा के नये युग का उषाकाल है– समस्त सभ्य विश्व स्तर पर आज शिक्षा को मनोरंजन के लिए समझने की धारणा को विचारकों ने चुनौती के रूप में देखा है। शरीर की उदात्र शिक्षा ही मन की भी शिक्षा है।

खेल का मैदान एक छोटे क्लास रूम की तरह काम करता है, यह एक प्रयोगशाला है जिसमें एक साथ कई शैक्षणिक प्रक्रियाएं चलती है जो ज्ञान उपलब्ध करवा, मन को उदार बनाती कौशल में सुधार, मुक्त सोच को बढ़ावा, रचनात्मक प्रतिभा को प्रोत्साहन व सकारात्मक दृष्टिकोण को विकास करती है। बच्चे को सीखने और अपने आप को अभिव्यक्ति करने एवं दूसरों के व्यवहार जानने का अवसर प्राप्त होता है। जिससे उसका सम्पूर्ण विकास होता है। बुक वाल्टर के अनुसार शारीरिक शिक्षा उपदयेश्य व्यक्ति के शारीरिक, सामाजिक, मानसिक एकीकरण और समायोजन का अधिकतम विकास करना है। इसे इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि सामान्य शिक्षा और शारीरिक शिक्षा के उददेश्य सामान्य हैं और यह दोनों समान दिशा में निर्देश देते हैं जैसे–व्यक्ति का सम्पूर्ण एवं सुव्यवस्थित विकास।

यहाँ तक कि शिक्षा के लक्ष्य भी संगत है और शारीरिक शिक्षा के लक्ष्यों से मेल खाते है। अन्वेषक मन की प्राप्ति द्वारा, जीवन दर्शन के शिक्षण द्वारा, आत्म–अभिव्यक्ति और स्वयं के शरीर के मूल्यांकन के द्वारा शारीरिक शिक्षा स्वयं को पहचानने के शिक्षा लक्ष्यों को प्राप्त करने में योगदान देती है। शारीरिक शिक्षा, विभिन्न क्रियाकलापों के माध्यम से सामाजिक, संसक्ति का विकास, सहयोग और नेतृत्व गुणों के बहुत से अवसर उपलब्ध कराती है जो सब अच्छे मानव सम्बन्धों को ही सिंचित करते है। शिक्षा का एक और लक्ष्य है– शारीरिक शिक्षा आर्थिक क्षमता में भी योगदान देती है। शिक्षा का तीसरा लक्ष्य है शिक्षण के द्वारा पेशे या व्यवसाय की सफलता आंकना जो कि स्वास्थ्य और फिटनेस पर निर्भर करती है। शिक्षा का चौथा लक्ष्य है कि नागरिक दायित्वों, शारीरिक शिक्षा के माध्यम से अच्छी नागरिकता के गुण, नेतृत्व, देशभक्त, मानवतावाद और कानून का पालना आदि गुणों को उसके मन में बैठाना। हालांकि अपनायी जाने वाली प्रक्रिया अलग हो सकती है, शारीरिक शिक्षा निश्चित तौर पर और वास्तविक रूप में सामान्य शिक्षा के लक्ष्यों से मेल खाती है।

शारीरिक शिक्षा सामाजिक और सांस्कृतिक मूल्यों का भी प्रसारण करती है और समाज की विचारधाराओं को निरंतर क्रियाओं के माध्यम से नई पीढ़ी तक पहुंचती है। यह बच्चों को न केवल उसके बढ़ने और विकसित होने में मदद देती है बल्कि यह उन्हें सामाजिक माहौल में सामंजस्य बिठाने और सकारात्मक, मानसिक, सामाजिक और शारीरिक जिम्मेदारियों के सामायोजन करने लायक बनाती है। शारीरिक शिक्षा का अधिक बल बचपन में मुक्त निरंतर खेल रहता है, किशोरावस्था में कलात्मक क्रियाकलापों में और बुढ़ापे में मनोरंजनात्मक क्रियाकलापों पर अधिक बल रहता है जो कि जीवन की कुंजी है।

शारीरिक शिक्षा, शिक्षा के क्षेत्र का अपरिहार्य अंग है जो व्यक्ति के स्वास्थ्य, सामाजिक, भावनात्मक और मानसिक विकास में योगदान देती है। आधुनिक उच्च तकनीकी समाज में हम सामान्य शिक्षा में व शारीरिक शिक्षा में सम्बन्ध की महत्ता को कम करके नहीं आंक सकते। ये दोनों एक दूसरे के पूरक हैं। इनके उददेश्य एवं लक्ष्य एक ही ध्येय की ओर बढ़ते हैं, व्यक्तित्व का सर्वोत्मुखी विकास, व्यक्ति को समृद्ध बनाना, परिपूर्ण और

सुव्यवस्थित जीवन। इसलिए शारीरिक शिक्षा सामान्य शिक्षा का ही एक अंगभूत तत्व है और इनका सम्बन्ध नकारा नहीं जा सकता। ये दोनों परस्पर जुड़े हुए हैं और परस्पर एक दूसरे पर आश्रित हैं और अविभाज्य है।

5. निष्कर्ष

शारीरिक शिक्षा केवल वर्तमान में ही उपयोगी है बल्कि यह भविष्य के लिए भी उतनी ही उपयोगी है। आधुनिक जीवन शैली ने व्यक्ति के लिए अनेकानेक समस्याएं खड़ी कर दी हैं। सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था की मांग से भारी तनाव व दबाव पैदा होते हैं। आधुनिक साइबर युग में शारीरिक शिक्षा की महत्ता एवं आवश्यकता को कम करके नहीं आका जा सकता। शारीरिक शिक्षा व्यक्तित्व के सभी पहलुओं का विकास करने का यत्न करती है जैसे–व्यक्ति के शारीरिक, सामाजिक, भावनात्मक, सांस्कृतिक और बौद्धिक प्रवृत्तियों का सर्वोन्मुखी एवं सन्तुलित विकास करती है। शारीरिक शिक्षा व सामान्य शिक्षा दोनों ही उद्देश्य प्राप्ति की होड़ में एक दूसरे के पूरक हैं और दोनों के तत्व अविभाज्य हैं।

सन्दर्भ

1. बैरो, एम0 एवं हारोल्ड, बैरो (1983), "मैन एण्ड मूवमेन्ट", प्रिन्सीपल ऑफ फिजिकल एजूकेशन, ली फेबिगर तीसरा संस्करण, वाशिंगटन स्कावर फिलाडेलफिया।
2. शेफर्ड, आर0 जे0(1978) "द एथलीट", ऑक्सफोर्ड यूनि0 प्रेस।
3. शर्मा(2001), "स्पोर्ट डज नाट हेल्प बिल्डिंग ब्रिज ऑफ एनी लास्टिंग फ्रेंडसिप", द ट्रिब्यून चण्डीगढ़ में मई 26, 2001 को प्रकाशित लेख।

हरित रसायन

देवेन्द्र कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drdgupta65@gmail.com

सार

हरित रसायन का मुख्य लक्ष्य किसी रसायन का दुष्प्रभाव कम करना तथा उसकी दक्षता को बढ़ाना है। कार्बनिक संश्लेषण में मेटाथिसीस विधि हरित रसायन में बढ़ता कदम है जिससे छिपे तरीके से हानिकारक अवशिष्ट पदार्थ को कम करके अच्छे उत्पाद बनाये जाते हैं। हरित रसायन में खतरनाक सी0एफ0सी0 (क्लोरो फ्लोरो कार्बन) के स्थान पर सुपरक्रिटिकल कार्बन डाइ ऑक्साइड का उपयोग किया जा रहा है।

बीज शब्द– मेटाथिसीस,सुपरक्रिटिकल कार्बन डाई ऑक्साइड, क्लोरो फ्लोरो कार्बन, असमगिति संश्लेषण।

Green Chemistry

Devendra Kumar
Assistant Professor, Department of Chemistry
B.S.N.V. P.G. College, Lucknow- 226001, U.P., India
drdgupta65@gmail.com

Abstract

The objective of Green Chemistry is minimizing the hazard and maximizing the efficiency of any chemical. The development of metathesis method in organic synthesis is a great step forward for Green Chemistry, reducing potentially hazardous wastes through smarter product. Supercritical carbon dioxide (CO_2) is being used in Green Chemistry in place of hazardous CFC (Chloro Fluoro Carbon).

Key words- Metathesis, supercritical carbon dioxide, Chloro-fluorocarbon, asymmetric synthesis.

1. प्रस्तावना

हरित रसायन शब्द का प्रयोग पॉल एनास्टास[1] ने 1991 में किया था। हरित रसायन जीवन धारण करने योग्य एवं स्वस्थ अर्थव्यवस्था के लिए उपयोग में लाया जाता है इसीलिए हरित रसायन को जीवनधारण रसायन भी कहते हैं। हरित रसायन ऐसे उत्पाद के संरचना एवं विकास के लिए हैं जिसमें खतरनाक पदार्थों को उत्पन्न न किया जाये और अगर यह बन भी रहे हैं तो इनका उपयोग कम किया जाये।

ग्रीन केमेस्ट्री (हरित रसायन), पर्यावरण रसायन (इन्वायरन्मेंटल केमिस्ट्री) से अलग है। पर्यावरण रसायन, प्राकृतिक वातावरण और प्रकृति में प्रदूषित रसायनों का विज्ञान है जबकि हरित रसायन, रसायन विज्ञान की वह अध्ययन शाखा है जिसमें प्रदूषण के स्त्रोत को कम करना और प्राकृतिक संसाधनों द्वारा अच्छे रसायन बनाना है जो मानव जीवन के लिए उत्कृष्ट हो।

2. उद्देश्य एवं अध्ययन

हरित रसायन का मुख्य उद्देश्य किसी रसायन के द्वारा उत्पन्न नुकसान को कम करना एवं उस रसायन की कार्यक्षमता बढ़ाना है। 2005 में रयोजी नोयोरी[2] ने तीन मुख्य रसायनों को हरित रसायन में उपयोगिता के संबंध में अवगत कराया–

1) विलायक के रूप में सुपरक्रांतिक कार्बन डाई ऑक्साइड(CO_2)
2) ऑक्सीकरण के लिये जलीय हाइड्रोजन पराक्साइड(H_2O_2)
3) असममिति संश्लेषण में हाइड्रोजन(H_2) का उपयोग।

पाल एनॉस्टास, जॉन सी0 वारनर[3] ने हरित रसायन के लिए 12 सिद्धांतों का प्रतिपादन किया है–

1. अवशिष्ट पदार्थों को शोधन करने से अच्छा है कि रसायनिक अभिक्रिया के दौरान इसे बनने न दें।
2. संश्लेषण विधि इस प्रकार की हो कि रसायनिक अभिक्रिया में प्रयुक्त कुल अभिकारक एवं उनकी सम्पूर्ण मात्रा, उत्पाद में परिवर्तित हो।
3. पदार्थों के बनाने की विधि कुछ इस प्रकार की होनी चाहिए की अल्प या विषरहित उत्पाद न तो बने और न ही उसका उपयोग किया जाये। जिससे कि वातावरण एवं मानव स्वास्थ्य प्रभावित न हो।
4. संश्लेषण विधि का संचालन व्यापक ताप एवं दाब पर होना चाहिए।
5. रसायनिक उत्पादन में प्रयुक्त अभिकारक इस ढंग का लिया जाये कि उसका पुनः उत्पादन किया जा सके।
6. रसायनिक अभिक्रिया के दौरान कोई अवांछित उत्पाद न बने।
7. अभिक्रिया के दौरान उत्प्रेरक का प्रयोग किया जाए।
8. बनने वाला उत्पाद जैव विनाशी(बायोडिग्रेडेबल) हो।
9. रसायनिक अभिक्रिया में प्रयोग में लिये जाने वाले रसायन का चयन करते समय इसका ध्यान रहे कि जहरीली गैस का उत्पादन न हो, विस्फोट न हो और आग लगने का भय न हो।
10. विलायक तथा पृथक्कारी अभिकर्मक का उपयोग कम से कम किया जाये।
11. रसायनिक उत्पाद बनाते समय ध्यान रखना चाहिए कि बनने वाले उत्पाद की विशाक्ता तो कम हो, परन्तु उसकी उपयोगिता कम न हो।
12. विश्लेषणात्मक विधि का विकास इस तरह का किया जाये कि खतरनाक उत्पाद के बनने के पहले ही सूचना मिल जाए।

हरित रसायन का उपयोग करते हुए कई रसायनिक उत्पाद बनाये गये हैं, उनमें से कुछ का उल्लेख यहाँ पर किया जा रहा है–

पालिस्टाइरीन फोम, जिसका उपयोग खाद्य पदार्थों के पैकिंग तथा खाद्य पदार्थों के आयात–निर्यात में किया जाता है। यह पहले सी0एफ0सी0 (क्लोरो फ्लोरो कार्बन) के प्रयोग से बनाया जाता था जो कि ओजोन परत का क्षरण करता है। डाउ केमिकल ने 1996 में सुपरक्रिटिकल कार्बन डाई ऑक्साइड का उपयोग क्लोरो फ्लोरो कार्बन के स्थान पर किया। यह रसायन सी0एफ0सी0 के कार्य क्षमता के समान कार्य करता है। इस विधि में पुनः निर्मुक्त कार्बन डाई ऑक्साइड का उपयोग किया जा सकता है, इस तरह कार्बन का उत्सर्जन वातावरण में शून्य रखा और वातावरण भी सुरक्षित रहा।

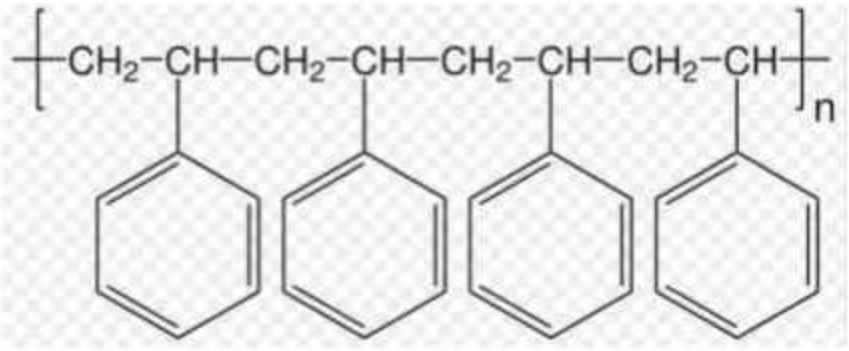

पालिस्टाइरीन

2. प्रोपेन 1, 3 डाइऑल का उत्पादन जैव पृथक्करण विधि से किया जा रहा है जिसमें आनुवंशिकीय रूप से रूपान्तरित एन्टएमीबा कोलाई[4] का उपयोग किया जा रहा है। इस रसायन का उपयोग दरी के बनाने में किया जाता है।



प्रोपेन 1, 3 डाइऑल

3) सक्सिनिक एसिड का उत्पादन पहले पेट्रोलियम पदार्थों से किया जाता था। 2011 में बायो अम्बर इनक[5] ने इसका उत्पादन पुनः प्राप्त होने वाले पदार्थों के किण्वन से, सुपर क्रिटिकल कार्बन डाई ऑक्साइड का उपयोग करके किया।

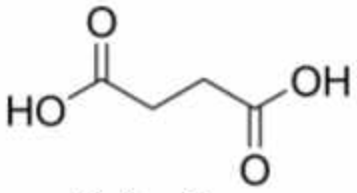

सक्सिनिक एसिड

4. 2006 में प्रोफेसर गलेन जे, सुफस, कोलम्बिया ने अप्रयुक्त ग्लिसरीन से प्रोपाइलीन ग्लाइकॉल का उत्पादन कापर–क्रोमाइट उत्प्रेरक का उपयोग करके किया। प्रोपाइलीन ग्लाइकॉल का इस तरह से उत्पादन करने में व्यय कम होता है तथा इसका उपयोग अधिक जहरीला इथाइलीन ग्लाइकॉल के स्थान पर किया जा सकता है। इथाइलीन ग्लाइकॉल का उपयोग मोटर वाहनों में प्रतिहिमकारी (एन्टीफ्रीज) के रूप में किया जाता है।

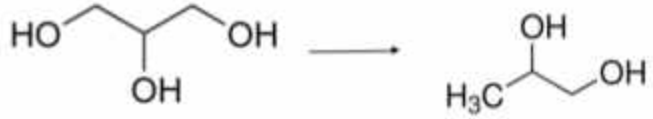

ग्लिसरीन **प्रोपाइलीन ग्लाइकाल**

3. निष्कर्ष

उपरोक्त से स्पष्ट है कि हरित रसायन के सिद्धांतों का पालन करते हुए मानव–हित एवं वातावरण को नुकसान न पहुँचाने वाले रसायनों का उत्पादन किया जा सकता है।

4. आभार

अनवरत् प्रोत्साहन एवं समसामयिक सुझावों हेतु लेखक, डॉ0 सुधीश चन्द्र, प्राचार्य बी0एस0एन0वी0पी0जी0 कॉलेज, डॉ0 एन0 के0 अवस्थी, अध्यक्ष, रसायन विज्ञान विभाग, बी0एस0एन0वी0पी0जी0 कॉलेज एवं डॉ0 डी0 के0 श्रीवास्तव, डी0एस–सी0, गणित विभाग, बी0एस0एन0वी0पी0जी0 कॉलेज का आभारी है।

संदर्भ

1. पॉल, एनॉस्टास(2006) "ग्रीन कमेस्ट्री", यूनाइटेड स्टेट्स इनवायरन्मेन्टल प्रोटेक्शन एजेन्सी 2006–06–28, रिट्राइव्ड 2011–03–23।
2. रयोजी, नोयोरी(2005) "परसुइंग ग्रैक्टिकल इलीगेन्स इन केमिकल सिन्थेसिस" केमिकल कम्यूनिकेशन, अंक 14, मु0पृ0 1807–1811।
3. पॉल एनॉस्टास एवं वार्नर, जॉन सी0(2006) "द 12 प्रिंसिपल आफ ग्रीन कमेस्ट्री", यूनाइटेड स्टेट्स इन्वायरन्मेन्टल प्रोटेक्शन एजेन्सी, रिट्राइव्ड 2006–7–31।
4. कूरिआन, जोसेफ वी0(2005), "ए न्यू पालिमर प्लेटफार्म फार द फ्यूचर सोरोना फ्राम कार्न", डेराइव्ड 1,3 प्रोपेनडाइऑल, जर्नल आफ पालिमर्स एण्ड द इनवायरन्मेन्ट, खण्ड 13, अंक 2।
5. जिममिलिस (2011) " 2011 स्माल बिजनेस एवार्ड", यूनाइटेड स्टेट्स इन्वायरन्मेन्टल प्रोटेक्शन एजेन्सी।

माइक्रोफाइनेन्सः आर्थिक अशक्त को सशक्त बनाने का एक प्रभावी उपकरण

मधु भाटिया
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, वाणिज्य विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज
स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
madhubhatia000@gmail.com

सार

माइक्रोफाइनेन्स एक नवीन अवधारणा है, जो समाज के निर्धन तथा कमजोर वर्ग के व्यक्तियों की आर्थिक उन्नति के प्रति कृतसंकल्प है। वाणिज्यिक बैंकों की ऋण प्रदान करने की सीमित क्षमता तथा सीमाओं के कारण यह अनुभव किया गया कि वे व्यक्ति, जो आर्थिक रूप से अशक्त हैं, उनके सशक्तीकरण के लिए एक विशेष उपकरण खोजा जाना चाहिए, इसी उपकरण का नाम माईक्रोफाइनेन्स है। माईक्रोफाइनेन्स के इसी तकनीकी पक्ष का अवलोकन इस पत्र में किया गया है।

बीज शब्द– लघु साख सुविधा, कमजोर वर्ग, ऋण, गरीबी रेखा, स्वरोजगार, आर्थिक सशक्तिकरण।

Microfinance: an effective tool to make economically weak people strong

Madhu Bhatia
Assistant Professor and Head, Department of Commerce
B.S.N.V.P.G. College, Lucknow- 226001, U.P., India
madhubhatia000@gmail.com

Abstract

Micro finance is a new concept which aims for economic progress of poor and weaker section of society. Because of limited capacity and other limitations to provide loan, it has been experienced that those people, who are economically weak, an special tool must be found for their empowerment, this tool is called Micro Finance. An overview of technical aspect of Micro Finance is presented in this paper.

Key words- Microfinance, weaker section, credit, poverty line, self employment, economic empowerment.

1. प्रस्तावना

निर्धन तथा निम्न आय–वर्ग के व्यक्तियों को वित्तीय सेवा प्रदान करने वाली संस्थाओं द्वारा प्रदत्त आर्थिक सहायता को 'माईक्रोफाईनेन्स' के नाम से जाना जाता है। इसके अन्तर्गत लघु सारव सुविधा, बचत, बीमा तथा अन्य बुनियादी वित्तीय सेवाएं उन निर्धनों को प्राप्त होती हैं, जो अभी तक इन सुविधाओं से वंचित थे। इसका उद्देश्य निर्धनता में जीवन व्यतीत कर रहे व्यक्तियों को आर्थिक रूप से स्वावलंबी बनाना है ताकि वे वर्तमान स्थिति से ऊपर उठकर अपनी व अपने परिवार की बेहतर देखभाल कर सकें। व्यवहार में, इस

प्रकार की वित्तीय सेवा उपलब्ध कराने वाली संस्थाएं माईक्रोफाईनेन्स संस्थाएं(एम0एफ0आई0) कहलाती हैं। ये संस्थाएं पिछले लगभग तीस वर्षों से अनियमित या निम्न आय प्राप्त करने वाले व्यक्तियों को बहुत कम जमानत या बिना जमानत के लघु वित्तीय सेवाएं तथा अन्य आर्थिक परामर्श उपलब्ध कराने के लिए नवीन पद्धतियां विकसित करने हेतु प्रयासरत हैं, जिसमें सम्मिलित हैः समूहों को ऋण प्रदान करना, ऋण देने से पूर्व समूह की व्यक्तिगत बचत को देखना तथा इस आधार पर ऋण की राशि निर्धारित करना तथा समय पर ऋण चुकाने वाले समूहों को भविष्य में आवश्यकता के समय अधिक मात्रा में ऋण प्रदान करना, बचतें स्वीकार करना, बीमा, परामर्श, धन का हस्तान्तरण तथा अन्य वित्तीय सेवाएं।

2. लाभार्थी वर्ग

वे निर्धन तथा निम्न आय वर्ग के व्यक्ति जो सामान्यतः वाणिज्यिक बैंकों द्वारा साख प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं, माईक्रोफाईनेन्स के ग्राहक या लाभार्थी हैं। छोटे फुटकर विक्रेता, फेरीवाले, कुम्हार, दर्जी या अन्य किसी स्वरोजगार में संलग्न व्यक्ति इस सेवा का लाभ ले सकते हैं। ये लाभार्थी गरीबी रेखा के आस पास के होते हैं, जिनमें अधिकांशतः महिलाएं होती हैं, जो 'स्वयं सहायता समूह' बनाकर सिलाई–कढ़ाई, टोकरी, अचार, पापड़, अगरबत्ती, माचिस, मोमबत्ती बनाना आदि कार्य व्यावसायिक उद्देश्य से करती हैं। पिछले दशक में कुछ माईक्रोफाईनेन्स संस्थाओं में वेतनभोगी कर्मचारियों तथा पेंशनभोगियों को भी अपना ग्राहक बनाया है, परन्तु इनकी संख्या सीमित है।

3. माईक्रोफाईनेन्स की आवश्यकता

1951 से भारतीय अर्थव्यवस्था की निरन्तर प्रगति के पश्चात आज भी हम पूर्ण रूप से विकसित देश की श्रेणी में नहीं आते। आय का निम्न स्तर तथा निम्न प्रति व्यक्ति आय आर्थिक कल्याण के निम्न स्तर तथा व्यापक गरीबी को इंगित करते हैं। 20वीं सदी में गरीबी में अत्यधिक गिरावट के बाद भी आज गरीबी भारत की विकास योजनाओं के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है, जिसके दुष्प्रभाव हमें निम्न जीवन–स्तर, कुपोषण, अशिक्षा तथा निम्नस्तरीय मानव संसाधन के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। भारत में, गरीब वह व्यक्ति हैं जो अपनी बुनियादी आवश्यकताओं हेतु आवश्यक आय प्राप्त करने में असमर्थ हैं। तेंदुलकर समिति 2009–2010 की सिफारिशों के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में 673 तथा शहरी क्षेत्रों में 860 प्रतिमाह से कम आय प्राप्त करने वाला व्यक्ति गरीबी रेखा से नीचे माना जाएगा।

योजना आयोग (2004–05 तथा 2011–12) के अनुसार गरीबी का अनुमान तेंदुलकर पद्धति पर आधारित

वर्ष	गरीबी का अनुपात (प्रतिशत में)			गरीबों की संख्या (मिलियन में)		
	ग्रामीण	शहरी	कुल	ग्रामीण	शहरी	कुल
2004–05	41.8	25.7	37.2	326	81	407
2011–12	25.7	13.7	21.9	216	53	263

स्त्रोत– जनगणना सर्वेक्षण संगठनः भारतीय अर्थव्यवस्था 2012–13 की तालिका पर आधारित

गरीबी में गिरावट की दीर्घकालीन प्रवृत्ति के पश्चात भी शहरी व ग्रामीण क्षेत्रों में भारी मात्रात्मक गरीबी व्याप्त है। 2011–12 के नवीन आंकडों के अनुसार भारत में 263 मिलियन लोग गरीबी रेखा से नीचे हैं, जो कुल आबादी का लगभग 22 प्रतिशत है। एक राज्यस्तरीय ताजा सर्वेक्षण के अनुसार 90 प्रतिशत से अधिक भारतीय ग्रामीण निर्धन 10 बड़े राज्यों, यथा आन्ध्र प्रदेश, बिहार, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, उड़ीसा, राजस्थान, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिम बंगाल में रहते हैं। इससे भी अधिक सोचनीय स्थिति यह है कि 2004–05 की जनगणना के अनुसार 54 प्रतिशत भारतीय निर्धन बिहार, मध्य प्रदेश, उड़ीसा तथा उत्तर प्रदेश में रहते हैं।

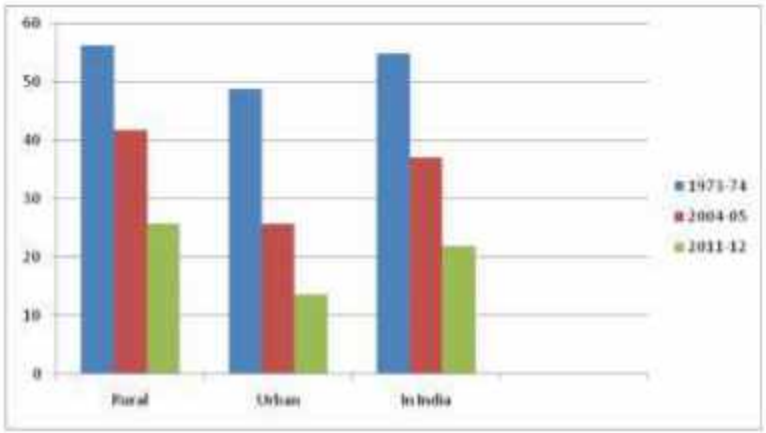

ग्रामीण गरीबों में अधिकांशतः भूमिहीन कृषक, कृषि श्रमिक, छोटे तथा सीमान्त कृषक, कुम्हार तथा पिछड़ी जाति तथा जनजाति के वे व्यक्ति हैं जो आर्थिक दृष्टि से निर्बल तथा समाज के कमजोर वर्ग में आते हैं। शहरी गरीबी मुख्यतः बेरोजगारों, अर्द्ध बेरोजगारों तथा उत्पादकता से जुड़े व्यक्तियों जैसे– गुमटी वालों, फेरीवालों, रिक्शा चालकों, छोटे फुटकर विक्रेता आदि के रूप में दिखती है जिनको अत्यन्त अल्प आय प्राप्त होती है। अधिकांश शहरी निर्धन या तो स्वरोजगार में संलग्न हैं अथवा असंगठित क्षेत्रों में कार्य करके अल्प आय प्राप्त कर रहे हैं।

भारत की निर्धन शहरी तथा ग्रामीण जनता विभिन्न गरीबी के दुष्चक्रों में घिरी है, ये दुष्चक्र हैं–

गरीबी के दुष्चक्र

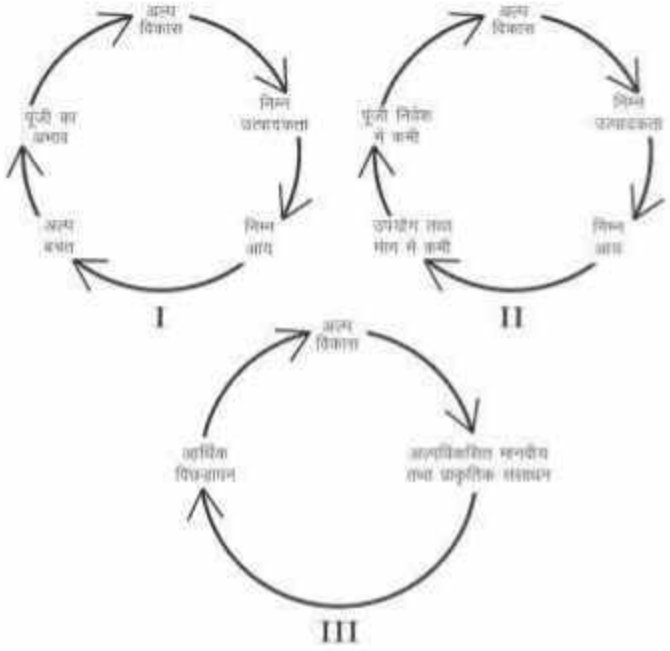

यद्यपि गरीबी के इन दुष्चक्रों से मुक्ति प्राप्त करने हेतु विभिन्न सरकारी योजनाएं कार्यान्वित की जा रही हैं परन्तु आवश्यकता इस बात की भी है कि गरीबों को आसान शर्तों पर, बिना जमानत या अल्प जमानत पर उचित समय पर सरलतापूर्वक वित्तीय सुविधा उपलब्ध कराई जाए। माइक्रोफाईनेन्स इस आवश्यकता की पूर्ति करता है।

4. माईक्रोफाईनेन्स असहायों का सहारा

माईक्रोफाईनेन्स प्राप्त करके एक निर्धन व्यक्ति दीर्घकाल में अपने परिवार की आय तथा उपयोग में वृद्धि कर सकता है। सामान्यतः निर्धन व्यक्तियों की आय अनियमित एवं अनिश्चित होती है, माईक्रोफाईनेन्स के द्वारा वे अपने परिवार की भोजन, आवास, शिक्षा संबंधी आवश्यकताओं को निर्बाध रूप से पूरा कर रहे हैं। यह अल्प वेतनभोगी व्यक्तियों को बीमारी, चोरी या अन्य किसी प्राकृतिक आपदा के समय राहत दे रहा है। निर्धन व्यक्ति इन धन का प्रयोग सम्पत्ति जैसेः भूमि, आदि की खरीद में करके अपना भविष्य सुरक्षित कर रहे हैं। महिलाएं माईक्रोफाईनेन्स के द्वारा स्वरोजगार कर अपनी पारिवारिक तथा सामाजिक स्थिति में सुधार कर रही हैं। ऋणकर्ताओं ने स्वीकार किया है कि माईक्रोफाईनेन्स ने उनके जीवन में उल्लेखनीय सुधार किया है तथा इसी कारण वे ईमानदारी से अपना ऋण चुकाने में समर्थ हो सके हैं।

माईक्रोफाईनेन्स प्रदान करने वाली संस्थाएं

अधिकांश संस्थाएं लाभ रहित संगठनों जैसेः एन0जी0ओ0, साख संगठनों, अन्य वित्तीय सहकारी संगठनों तथा राजकीय विकास एवं डाक बचत बैंकों के रूप में आरम्भ की गईं परन्तु समय के साथ–साथ यह आवश्यक हो गया कि स्वयं की निरंतरता को बनाये रखने के लिए ये संस्थाएं भी समुचित लाभ प्राप्त करें, चूंकि बचत योजनाएं चालू रखने के लिए इन्हें भी बैंकिंग अधिकारियों से लाईसेंस प्राप्त करना अनिवार्य है।

भारत की 5 शीर्ष माईक्रोफाईनेन्स संस्थाएं

	नाम	मुख्यालय	वैधानिक स्थिति	शाखाओं की संख्या	अशोधित ऋण (मिलियन में) 30 सितम्बर 2008	ऋण प्राप्तकर्ता 30 सितम्बर 2008	कुल परिसम्पत्तियां (मिलियन में) 30 सितम्बर 2008	कुल परिसम्पत्तियों से ऋण का अनुपात
	एस.के.एस. माईक्रोफाईनेन्स लिमिटेड	सिकंदराबाद आन्ध्रप्रदेश	प्राईवेट लिमिटेड कम्पनी	1413	18227	2590950	2395	7.37
	स्पंदन स्फूर्ति फाईनेंशियल लिमिटेड	हैदराबाद आन्ध्र प्रदेश	पब्लिक लिमिटेड कम्पनी	696	11987	166807	1225	7.04
	शेयर माईक्रोफिन लिमिटेड	हैदराबाद आन्ध्र प्रदेश	पब्लिक लिमिटेड कम्पनी	666	8568	123155	1448	5.03
	अस्मिता माईक्रोफिन लिमिटेड	हैदराबाद आन्ध्र प्रदेश	पब्लिक लिमिटेड कम्पनी	363	4944	694350	475	9.92
	श्रीक्षेत्र धर्मस्थल रूरल डेवलपमेंट प्रोजेक्ट	धर्मस्थल कर्नाटक	ट्रस्ट	22	4060	612482	157	29.81

5. माईक्रोफाईनेन्स के लाभ

1. वे लोग, जो चल–अचल सम्पत्ति के अभाव में वाणिज्यिक बैंकों से ऋण प्राप्त करने में असफल रहते हैं या मजबूरीवश साहूकार, महाजन से ऋण लेकर उनके शोषण का शिकार होते हैं, माईक्रोफाईनेन्स प्राप्त कर सकते हैं।
2. वे छोटे व्यवसायी/व्यापारी, जो समुचित धन के अभाव में अपने व्यवसाय/व्यापार का विस्तार नहीं कर पाते, माईक्रोफाईनेन्स ऋण प्राप्त करके अपनी विस्तारवादी योजनाओं को साकार कर सकते हैं तथा भविष्य में लाभ प्राप्त करके ऋण चुकाने के साथ ही जीवन–स्तर में सुधार कर सकते हैं।

3. यह निम्न आय–वर्ग के व्यक्तियों को अकस्मात् उत्पन्न हुई आर्थिक समस्याओं से निपटने हेतु साधन उपलब्ध कराके उन्हें आर्थिक स्थायित्व प्रदान करता है, जो उन्हें अच्छा पोषण, अच्छा स्वास्थ्य तथा समुचित शिक्षा प्राप्त करने योग्य बनाता है।
4. माईक्रोफाईनेन्स संस्थाएं महिलाओं को ऋण प्रदान करने हेतु अधिक इच्छुक होती हैं क्योंकि ऋण चुकाने की दर पुरूषों की अपेक्षा महिलाओं की अधिक है। वे महिलाएं, जो पूंजी के अभाव में इच्छुक होते हुए भी अपना व्यवसाय आरम्भ नहीं कर पाती, वे अपना व्यवसाय आरम्भ कर आर्थिक आत्मनिर्भरता प्राप्त कर सकती हैं।
5. भारत में 5–6 हजार रूपये की अल्प पूंजी से भी एक छोटा व्यवसाय आरम्भ किया जा सकता है। माईक्रोफाईनेन्स के द्वारा रोजगार के नये अवसर सृजित किये जा सकते हैं। इससे ऋण प्राप्त करके व्यक्ति न केवल स्वरोजगार प्राप्त कर सकता है वरन् अन्य व्यक्तियों को भी रोजगार प्रदान कर सकता है।

6. माईक्रोफाईनेन्स की चुनौतियाँ

माईक्रोफाईनेन्स संस्थाएं अनेक चुनौतियों का सामना करते हुए अपने व्यवसाय का संचालन कर रही हैं। पहली चुनौती है: ऋण प्रदान करने की लागत अधिक होना, चूंकि अधिक धनराशि के ऋण की अपेक्षा छोटी राशि के ऋण प्रदान करने की लागत अधिक होती है अतः इन संस्थाओं की ब्याज दर वाणिज्यिक बैंकों से अधिक होती है। अनेक बार ऋण प्राप्तकर्ता ऋण को अनुत्पादक कार्यों पर व्यय कर देते हैं, जिससे उनकी वापसी की संभावना क्षीण हो जाती है, ऐसे अचुकता ऋणों के कारण इन संस्थाओं को आर्थिक हानि उठानी पड़ती है। कभी–कभी ऋण प्राप्त कर्ता ऋण चुकाने को इच्छुक ही नहीं होता, चूंकि में ऋण कम जमानत या बिना जमानत के प्रदान किये जाते हैं अतः इनको वसूल करने में संस्थाओं को अपने संसाधनों का अपव्यय करना पड़ता है।

7. निष्कर्ष

व्यवहार में पाया गया है कि उपरोक्त चुनौतियों का सामना करके भी माईक्रोफाईनेन्स संस्थाएं लक्षित व्यक्तियों को उनके आर्थिक संकट या आवश्यकता के समय निरन्तर सहायता प्रदान कर रही हैं। ऋण प्राप्तकर्ताओं नें स्वीकारा है कि माईक्रोफाईनेन्स ने विपरीत आर्थिक परिस्थितियों से निपटने तथा आर्थिक कल्याण में वृद्धि करने में उनकी अतुलनीय सहायता की है। इस प्रकार माईक्रोफाईनेन्स आर्थिक रूप से अशक्त व्यक्तियों के सशक्तीकरण का मार्ग निरन्तर प्रशस्त कर रहा है।

सन्दर्भ

1. प्रभ, घाटे(2007) "इंडियन माईक्रोफाईनेन्स–द चैलेन्जेस फॉर रैपिड ग्रोथ", सेज पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
2. रॉबिन्सन, मार्गरेट एस0(2001) "द माईक्रोफाईनेन्स रिवोल्यूशनः सस्टेनेबल फाईनेंस फॉर द पुअर", इंटरनेशनल बुक फॉर रिकन्स्ट्रक्शन एण्ड डेवलपमेंट/द वर्ल्ड बैंक, वाशिंगटन डी0सी0।
3. बाई, मीरा (2006) "वुमेन एण्ड इकोनॉमिक रिफार्मस", न्यू देल्ही सीरियल पब्लिकेशंस, नई दिल्ली।
4. फिशर, टी0 एवं श्रीराम, एम0 एस0(2002), "बियॉन्ड माईक्रोक्रेडिट–पुटिंग डेवलपमेंट बैंक इन टू माईक्रोफाईनेंस", ऑक्सफेम पब्लिकेशन्स, यू0के0।
5. नाथ, धर समिरेन्द(2004), "माईक्रोफाईनेन्स फॉर वुमेन", नार्दर्न बुक सेन्टर, नई दिल्ली।
6. गवर्नमेंट ऑफ इण्डिया, रिपोर्ट फॉर द वर्किंग ग्रुप ऑफ इम्पावरमेंट ऑफ वुमेन फॉर द इलेवेंथ प्लान।
7. इंटरनेट तथा पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित विभिन्न लेख।
8. सरकारी प्रकाशन तथा प्रतिवेदन आदि।

प्रकृति का उपहार, वर्षा जल एवं उसका संग्रहण–एक तकनीकी विश्लेषण

रचना मिश्रा तथा अलका निवेदन
वनस्पति विज्ञान विभाग
भारतीय विद्या भवन गर्ल्स डिग्री कॉलेज, गोमतीनगर, लखनऊ– 226010, उ0प्र0, भारत
misharachna@gmail.com

सार

प्रकृति का सबसे अमूल्य उपहार है वर्षा का जल, जो कि विभिन्न कार्यों में उपयोगी है। जल मानव जीवन का मूलभूत अधिकार है, प्रकृति प्रदत्त वरदान स्वरूप जल को एकत्रित कर उसका उपयोग किसी लाभकारी एवं फलदायी कार्य के लिए करने की पद्धति को वर्षा जल संग्रहण कहते हैं। इस संग्रहित जल को कृषि, पेय, जल, भूगर्भ जल प्रबन्धन, अपशिष्ट जल प्रबन्धन इत्यादि में प्रयोग किया जा सकता है। प्रस्तुत लेख में वर्षा जल के संचयन एवं संग्रहण पर प्रकाश डाला गया है तथा इसकी प्रबन्धन विधि का भी उल्लेख किया गया है।

बीज शब्द– वर्षा जल, जल प्रबन्धन, भूगर्भ जल प्रबन्धन, संचयन एवं संग्रहण।

Nature's Gift; Rain water and its harvesting-a technical analysis

Rachna Mishra and Alka Nivedan
Department of Botany
Bhartiya Vidya Bhavan Girl's Degree College, Gomti Nagar, Lucknow- 226 010, U.P., India
misharachna@gmail.com

Abstract

Nature's most valuable gift is Rains, which is useful in numerous ways. Water is the fundamental right of human life. Storage of rain-water, the natural gift and its utilization in purposeful better direction is called water harvesting. The harvested water may be used for drinking, management of earth water level, waste water management, etc. Present note embodies techniques of water management and various methods of its harvesting.

Key words- Rain water, water management, ground water management, storage.

1. प्रस्तावना

देश में पेय जल की कमी के कारणों का यदि विश्लेषण किया जाए तो जो कारण होंगे बढ़ती जनसंख्या, जलवायु परिवर्तन एवं अनियन्त्रित और अनियोजित जल उपयोग। जल संकट से उबरने का सबसे सस्ता, सरल और सहज उपाय है वर्षा जल संग्रहण। वर्षा के जल को एकत्रित एवं संग्रहित करके उसका उपयोग किसी लाभदायी कार्य करने की पद्धति को वर्षा जल संग्रहण कहते हैं। इस संग्रहित जल को हम सिंचाई में, पेय जल के रूप में प्रयोग में ला सकते हैं। किसी भी वर्षा जल संग्रहण के तीन घटक होते हैं; पानी को एकत्रित करना, उसे किसी स्थान तक ले जाना, एवं उसका संग्रह करना।

विश्व भर में पेय जल की कमी एक संकट बनती जा रही है, उसका कारण पृथ्वी जल के स्तर का लगातार नीचे गिरता जाना भी है, इसके लिए अधिशेष मानसून अपवाह जो बहकर सागर में मिल जाता है, उसका संचालन और पुनर्भरण किया जाना अति आवश्यक है, ताकि भूजल भण्डारण का संवर्धन हो पाए। अकेले भारत में ही व्यवहार्य भूजल भण्डारण का आंकलन 214 बिलियन घन मी0 (बी0सी0एम0) के रूप में किया गया है, जिसमें से 160 बिलियन घन मी0 (बी0सी0एम0) की पुनः प्राप्ति हो सकती है। इस समस्या का समाधान जल–संचयन है। पशुओं के पीने के पानी की उपलब्धता, फसलों की सिंचाई के विकल्प के रूप में जल–संचयन प्रणाली को विश्व व्यापी तौर पर अपनाया जा रहा है। वर्षा जल के संचयन एवं संग्रहण से भारत में कृषि में काफी सहायता मिल सकती है, चूँकि कृषि भारत का एक बहुत महत्वपूर्ण अंग है, जिसमें कि पूरे देश में प्रयोग किए जाने वाले जल में से लगभग 80 प्रतिशत पानी की खपत होती है और कृषि में अच्छा जल प्रबन्धन करना भविष्य की दृष्टि से अति आवश्यक है, क्योंकि इससे हमें अच्छी फसल तो मिलेगी साथ ही साथ कुल उपज में बढ़ोत्तरी भी होगी, और वर्षा जल संग्रहण इसका सबसे उत्तम विकल्प है।

वहीं पेय जल मानव जीवन का मूलभूत अधिकार है। तथापि जल स्रोतों के अनुचित प्रबन्धन के कारण देश के कई भागों में पीने के जल की समस्या काफी गम्भीर बन गई है। भारत वर्ष के लोग सदियों से भविष्य में इस्तेमाल करने की दृष्टि से जल संग्रहित करते आ रहे हैं। किन्तु जब से पानी सीधे हमारे घरों में आने लगा है तब से हम इन पारम्परिक जल स्रोतों की उपेक्षा करने लगे है। नगरीय क्षेत्रों में बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण शहर के सभी लोगों को नियत्रित रूप से जल उपलब्ध कराना शासन के लिए एक कठिन चुनौती बनता जा रहा है। एक भविष्य वाणी के अनुसार "अगला विश्व युद्ध का कारण पानी ही होगा" ये वाक्य सत्य ही होगा यदि जल का प्रबन्धन ठीक प्रकार से नहीं किया गया। प्रकृति हमें भरपूर देती है तो उतना ही छीन भी लेती है। सम्पदा प्रदत्त प्रकृति को धन्यवाद देते हुए उसके वर्षा रूपी उपहार को हमें संरक्षित, संचित और संवर्धित करना होगा।

भारत वर्ष के अति शुष्क क्षेत्र बुंदेलखण्ड में गत वर्ष 372 एमएम के स्थान पर औसत 1,072 एमएम वर्षा हुई है, लेकिन बारिश सम्बन्धी इन सूचनाओं को हम खुशखबरी की तरह नहीं ले सकते, क्योंकि जल–प्रबन्धन के दक्ष जनों के अनुसार हम सिर्फ 10 प्रतिशत जल का ही उपयोग कर पाएंगे। विकास के नाम पर सड़कें और इमारते बनाते समय हम पानी के आवागमन के मार्ग बन्द करते जा रहे हैं। अव्वल तो तालाब व पोखर बचे नहीं है और जो शेष है उनमें पानी के पहुँचने के मार्ग में विभिन्न प्रकार की बाधाएं खड़ी होती जा रही हैं। उत्तर प्रदेश में हर वर्ष पृथ्वी जल स्तर 70 सेटीमीटर नीचे जा रहा है। राजधानी दिल्ली के अलग–अलग क्षेत्रों में भूजल स्तर 50 से 150 सीएम तक नीचे चला गया है। ये सभी स्थितियाँ चिन्ता जनक है। विकास के लिए नए तरीकों को अपनाने में जल के उपयोग के बीच हम यह भूलते जा रहे हैं कि भविष्य के दिनों में पानी आएगा कहाँ से ? लगातार हैण्डपम्प लगवाने से तात्कालिक समस्या तो दूर हो जाएगी परन्तु इसी रास्ते भूजल स्तर के और नीचे चले जाने से एक बड़ी तबाही भी अपने आने का संकेत दे सकती है। देश के अलग–अलग हिस्सों में पृथ्वी फटने की लगातार घटनाएं हमारे इस प्रकृति दोहन का कुफल ही है।

प्रकृति जब कुपित होती है, तो उसके कोप से जूझने की हमारी तैयारी अक्सर कम पड़ जाती है। बाढ, सूखा और अकाल इसी की परिणति है। वहीं प्रकृति जब कुछ देना चाहती है, तो हमारे हाथ छोटे पड़ जाते है और हम उस उपहार को समेट नहीं पाते। परन्तु जल–संग्रहण एक ऐसी सफल विधि है जिसके द्वारा हम प्रकृति प्रदत्त जल को एकत्रित कर उसका संग्रहण कर सकते है।

पुरातन काल में समय में देश के जिस हिस्से में जल की जितनी समस्या थी उतने ही पुख्ता इंतजाम भी थे, इसीलिए देश के हर क्षेत्र में पानी के संचयन और सदुपयोग की एक से एक बेहतरीन व्यवस्थाएं रही हैं। पहले जितने धार्मिक, सामाजिक स्थान विकसित किए गए, सब जगह तालाब या बड़े–बड़े जल–कुण्ड का निर्माण किया गया, लेकिन यान्त्रिक गति से बढ़ती विकास की गति ने प्रकृति से लेने के तो हजारों तर्क बना डाले परन्तु उसे लौटाने की व्यवस्था न तो सामाजिक और न ही सरकारी तौर पर ही प्रभावी हो पाई। पुराने समय से वर्षा जल को संग्रह करके उपयोग में लाने की पद्धति विशेष कारगर रही है। पहले लोग बड़े–बड़े मटके जैसे उपकरणों में वर्षा के जल को संग्रहित करके उसको विभिन्न कार्यों में उपयोग में लाते थे।

2. विधि

जल संचयन में घर की छतों, स्थानीय कार्यालयों की छतों या फिर विशेष रूप से बनाए गए क्षेत्र से वर्षा का जल एकत्रित किया जाता है, इसमें दो तरह के गड्ढे बनाए जाते हैं, एक गडढा जिसमें दैनिक प्रयोग के लिए पक्के गड्ढे, सीमेन्ट व ईट से निर्मित करते हैं और इसकी गहराई सात से दस फीट व लम्बाई तथा चौड़ाई लगभग चार फीट होती है। इन गड्ढों को नालियों व नालियों द्वारा छत की नालियों और टोटियों से जोड़ दिया जाता है, जिससे वर्षा का जल सीधे इन गड्ढों में पहुँच सके और दूसरे गड्ढों को ऐसे ही कच्चा

रखा जाता है, इसके जल से खेतों की सिंचाई की जाती है। घरों की छत से जमा किए गए जल को तुरन्त ही प्रयोग में लाया जा सकता है। विश्व में कुछ ऐसे इलाके हैं जैसे न्यूजीलैण्ड जहाँ लोग जल संचयन प्रणाली पर ही निर्भर रहते हैं और वर्षा होने पर अपने घरों की छत पर जल एकत्रित करते है। वर्षा संग्रहित जल का शुद्ध रूप हमें काफी कुछ तभी प्राप्त होने लगता है जब वह अति वेग से पाईप के जरिए उपकरणों में एकत्रित होता है, जिसके लिए पाइपों व नालियों में बारीक जालियों का प्रयोग किया जाता है।[1]

कई स्थानों पर वर्षा जल को सीधे छतों के जरिए न एकत्रित करके वर्षा तश्तरियों का जो कि उल्टे छाते की तरह प्रतीत होती है उनका प्रयोग वर्षा जल संग्रहण में किया जाता है, जो कि वर्षा के जल को सीधे आसमान से अपने तश्तरी नुमा उपकरण में एकत्रित करते है, ये विधि अधिक कारगर व प्रचलित है।[2] इस मुक्त वर्षीय जल का उपयोग बागवानी एवं सिंचाई में काफी सहजता से किया जाता है।[3] आज कल वर्षा के जल का संग्रहण कार्य क्षमता के साथ करने के लिए मूल एवं नवीनतम विधियाँ अपनाई जा रही हैं। वर्षा जल को संग्रहित कर उसे उपयोग में लाने के लिए हमारी सरकार सतत् प्रयासरत है। राजस्थान के थार रेगिस्तान में हर घर में वर्षा के जल का संचयन एक परम्परा के रूप में किया जाता है, सरकार ने भी इसे अधिकृत रूप से अपनाने पर जोर दिया है।[4] राजस्थान में ही लोग अपने घरों की छतों पर ढकी हुई नालियों के जरिये वर्षा के जल को अपने रसोईघर तक लाते हैं और उन्हीं नालियों द्वारा जल रसोई में रखे हुए बड़े–बड़े ढक्कन दार पात्रों में एकत्रित होता रहता है, इस तरह के जल संग्रहण को **चौका–प्रणाली** कहते है।[5,6] पुणे, महाराष्ट्र में अब घर बनाने से पूर्व वर्षा जल संग्रहण के लिए पंजीकरण अनिवार्य प्रक्रिया हो गई है। सरकार द्वारा पुरजोर प्रयास इस विधि को दैनिक उपयोग में लाने के लिए लगातार किए जा रहे हैं। अपनी पृथ्वी पर जल की कमी न होने पाए इस लिए हम सबको राजस्थान वासियों की तरह सजग एवं जागरूक होने की आवश्यकता है।

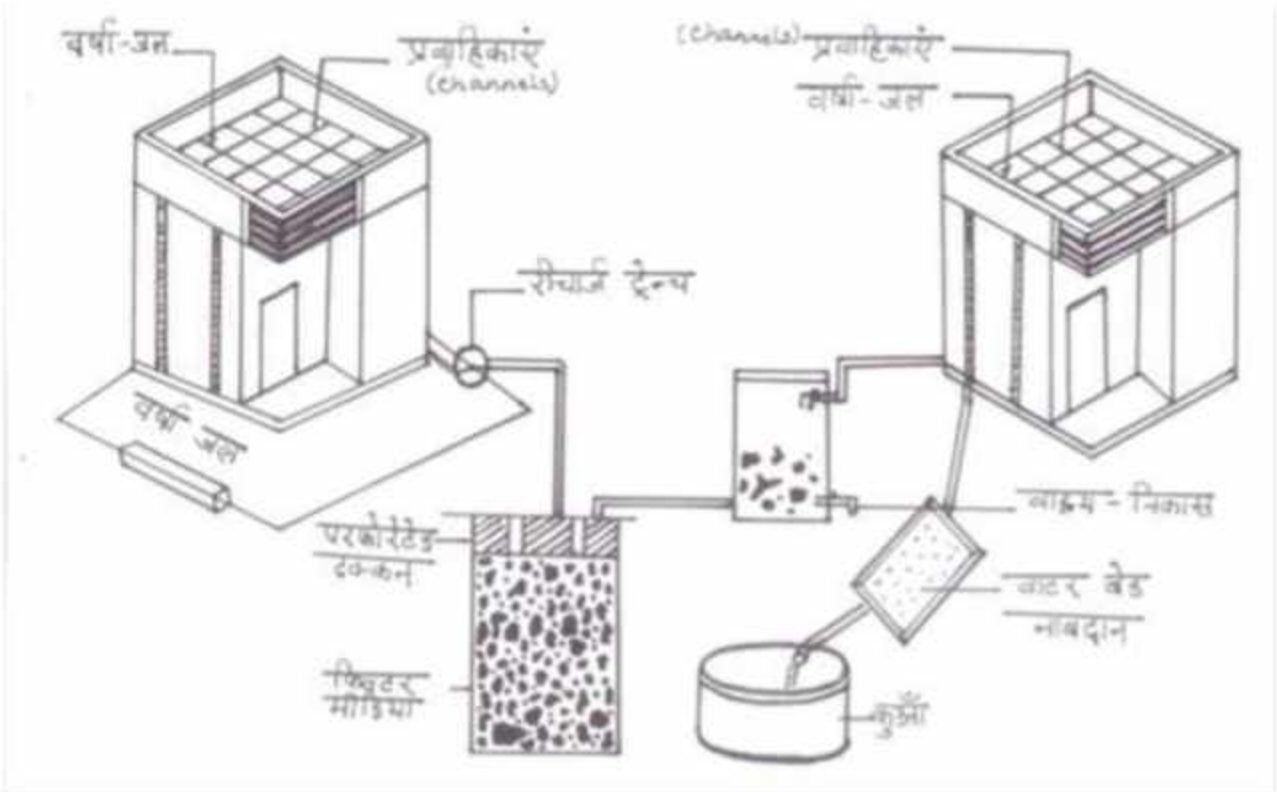

वर्षा जल संग्रहण विधि

3. निष्कर्ष

वर्षा के जल के संग्रहण का मुख्य उद्देश्य, कम खर्च में अधिक से अधिक जल का संचय और उसका विभिन्न कार्यों जैसे सिंचाई, पशु के लिए जल, पेय जल इत्यादि में उपयोग है। आजकल नवीन उपकरणों व प्रयोगों के माध्यम से वर्षा के जल का संग्रहण किया जा रहा है विदेशों में तो प्रकृति के इस अमृत को संचित कर उसका सदुपयोग विभिन्न क्षेत्रों में किया जा रहा हैं। बीजिंग(चीन) में तो लोग अपने घर की छतों पर वर्षा के जल को संग्रहित करके तथा उसका शुद्धि करण करने के पश्चात् उसे पीने के लिए प्रयोग में लाते हैं। भारत वर्ष के तमिलनाडु में किसी भी इमारत के निर्माण के लिए संग्रहित जल का ही प्रयोग किया जाता है ताकि भूमिगत जल का क्षरण न हो। वर्षा जल संग्रहण एक ऐसी पद्धति है जिसके प्रयोग का ज्ञान जन सामान्य को होना आवश्यक है क्योंकि यदि हम जल के संग्रह व संचय के प्रति जागरूक नहीं हुए तो बढ़ती हुई जनसंख्या, जलवायु परिवर्तन और अनियन्त्रित जल प्रयोग हमारे भविष्य के लिए अति घातक सिद्ध हो सकता है, अतः जो वरदान हमें प्रकृति के द्वारा वर्षा–जल के रूप में प्राप्त होता है उसे व्यर्थ न जाने देने के बजाय भविष्य के लिए संचित, संग्रहित एवं सवंर्धित करें, इसी में हम सब का कल्याण है।

संदर्भ

1. न्यू साईटिस्ट (1993)
2. किम, सुन जो (2013) हारवेस्टिंग रेन वाटर फॉर मोर दैन ग्रे वाटर स्मार्ट प्लानेट रिट्राइव्ड।
3. न्यू साइन्टिस्ट (1993)
4. रेयर चोला फाउन्ड नियर बिग टेम्पल। द हिन्दू 24 अगस्त (2005)
5. एनशिएन्ट वाटर हारवेसटिंग सिस्टम इन राजस्थान रेन हारवेस्टिंग ऑर्गनाइजेशन (2012)
6. चौका सिस्टम (2013) टेक्नोलॉजी रूल इम्प्रोवाइज्ड सेन्टर फॉर साइन्स एण्ड इनवायरमेन्ट रिट्राइव्ड।

(Footnotes)

रक्तदान का महत्व–एक तकनीकी अवलोकन

अर्चना रानी
एसोसिएट प्रोफेसर, शरीर रचना विभाग
किंग जॉर्ज चिकित्सा विश्वविद्यालय, लखनऊ–226003, उ0प्र0, भारत
archana71gupta@yahoo.co.in

सार

रक्त निर्मित नहीं किया जा सकता है, यह केवल उदार–दाताओं से आ सकता है। मानव रक्त का कोई विकल्प नहीं है। हर 2 सेकेण्ड पर किसी न किसी को रक्त की आवश्यकता होती है। एक रक्तदान से दो या तीन जीवन को बचाया जा सकता है।

बीज शब्द : मानव रक्त, रक्तदान, आधान, रक्त घटक।

Importance of Blood donation-a technical overview

Archana Rani
Associate Professor, Department of Anatomy
King George Medical University, Lucknow- 226003, U.P., India
archana71gupta@yahoo.co.in

Abstract

Blood cannot be manufactured, it can only be obtained from generous donors. There is no substitute for human blood. Every two seconds someone needs blood. Each donation can help save two or three lives.

Key words- Human blood, blood donation, transfusion, blood components.

1. प्रस्तावना

"रक्त का उपहार, जीवन का उपहार है।"

एक स्वस्थ व्यक्ति द्वारा स्वेच्छा से दिए गए रक्त को 'रक्तदान' कहते हैं। इसका उपयोग रक्त आधान (ट्रान्सफ्यूजन) के लिए होता है। प्रतिवर्ष हमारे देश को 4 करोड़ यूनिट रक्त की आवश्यकता पड़ती है, जबकि केवल 40 लाख यूनिट रक्त ही उपलब्ध हो पाता है। दिए जाने वाले रक्त की मात्रा और तरीके अलग–अलग हो सकते हैं, लेकिन एक आदर्श दान पूरे खून का 450 मिलीलीटर (लगभग एक यू0एस0 पिंट) होता है। इसे मैनुअली या स्वचालित उपकरण से संग्रहित किया जा सकता है, जो कि खून के विशिष्ट भाग को लेता है।

2. रक्तदान के प्रकार

रक्तदान में संग्रहित रक्त को कौन प्राप्त करेगा, इस आधार पर रक्त को समूहों में विभाजित किया गया है:[1]

– **एलोजेनिक (होमोलॉगस) दान** : जब कोई दाता किसी अनजान व्यक्ति के आधान के लिए ब्लड बैंक में भण्डारण करने के लिए खून देता है।

– **निर्देशित दान** : जब कोई व्यक्ति, किसी व्यक्ति विशेष के आद्यान के लिए रक्तदान करता है।

– **ऑटोलॉगस दान** : सर्जरी के बाद जब एक व्यक्ति का रक्त संग्रहित कर बाद में उसे ही वापस चढ़ा दिया जाता है।

3. रक्त परीक्षण

दान किए गए रक्त का कई तरह से परीक्षण किया जाता है, लेकिन विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा चार मुख्य परीक्षण सुझाए गए हैं–

- हिपेटाइटिस बी सतही एंटीजेन
- हिपेटाइटिस सी के लिए एंटीबॉडी
- एच0आई0वी0 के एंटीबॉडी (आमतौर पर 1 और 2 उपप्रकार के)
- उपदंश के लिए सेरोलॉजिक परीक्षण

4. रक्त लेने की क्रिया

अधिकतर, रक्त को कोहनी के भीतर माध्यिका प्रकोश्टीय शिरा से लिया जाता है। संक्रमण की रोकथाम के लिए, रक्तवाहिका के ऊपर की त्वचा को आयोडीन या क्लोरहेक्सीडाइन जैसे एंटीसेप्टिक से साफ किया जाता है। रक्त निकालने हेतु 16–17 गेज की बड़ी सुई का इस्तेमाल किया जाता है। जब लाल रक्त कणिकाएँ सुई से होकर बहती हैं तो उनको हानि से बचाने के लिए एक टूर्निकेट ऊपरी बांह में लपेट दिया जाता है, जिससे यह प्रक्रिया तेज हो जाती है। किसी वस्तु को हाथ में पकड़ने या मुट्ठी को कसते रहने से भी रक्त प्रवाह में तेजी आती है। लगभग 450–500 मिलीलीटर तक निष्कासित रक्त को एक लचीले प्लास्टिक की थैली में संग्रहित किया जाता है, जिसमें सोडियम साइट्रेट, फॉस्फेट, डेक्स्ट्रोज और कभी–कभी एडीनीन भी होता है। यह संयोजन भण्डारण के दौरान रक्त को थक्के बनाने से बचाता है और संरक्षित रखता है। एक स्वस्थ वयस्क हर 56 दिन पर रक्तदान कर सकता है, लेकिन एक वर्ष में अधिकतम 24 बार।

5. एफेरेसिस

यह रक्तदान का एक तरीका है, जहाँ रक्त एक उपकरण के माध्यम से होकर गुजरता है, जो एक घटक विशेष को अलग करता है और बाकी बचे हुए घटकों को दाता को वापस कर दिया जाता है। इस विधि का उपयोग कर कोई व्यक्ति सुरक्षित रूप से प्लाज्मा या बिंबाणु (प्लेटलेट्स) अधिक से अधिक बार दान कर सकता है।

6. जटिलताएँ

एक अध्ययन से पता चला है कि 2 प्रतिशत दाताओं में रक्तदान करने के बाद प्रतिकूल प्रतिक्रिया हुई।[2] रक्तचाप में तेजी से परिवर्तन होने के कारण हाइपोवॉल्यूमिक प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं, जिसमें बेहोशी आम है। सुई लगाने से हाथ एवं शिरा में जख्म, स्नायु में जलन, थ्राम्बोफ्लेबाइटिस और एलर्जी हो सकती है।

7. भण्डारण

लाल रक्त कोशिकाओं को रेफ्रीजेरेटर के तापमान में शेल्फ जीवन 35–42 दिन होता है।[3] ग्लिसरॉल के एक मिश्रण के साथ खून को जमाकर यह अवधि बढ़ायी जा सकती है। प्लाज्मा को अधिक समय तक जमाकर रखा जा सकता है और एक साल तक इसका इसदु सदुपयोग किया जा सकता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन ने प्रति वर्ष 14 जून को '**विश्व रक्तदाता दिवस**' के रूप में मनाने का निर्णय लिया है। यह ए0बी0ओ0 रक्त समूह प्रणाली की खोज करने वाले वैज्ञानिक कार्ल लैंडस्टीनर का जन्म दिवस है। भारत में 1 अक्टूबर को '**राष्ट्रीय रक्तदान दिवस**' मनाया जाता है।

8. निष्कर्ष

रक्तदान एक सुरक्षित प्रक्रिया है। रक्तदान में दिए गए तत्वों की पूर्ति शरीर में कुछ घंटों से कुछ सप्ताह में हो जाती है। एक रक्तदान से तीन लोगों की जान बचायी जा सकती है। अतः, सभी को स्वेच्छा से रक्तदान की महत्ता को संज्ञान में रखते हुए व्यवहार में लाना चाहिए क्योंकि रक्तदान "**महादान**" है।

संदर्भ

1. ब्रेचेर, ऐमई(संपादक) (2005), "एएबीबी तकनीकी मैनुअल", पन्द्रहवाँ संस्करण, बेथेस्डा, एमडीः एएबीबी आइएसबीएन 1–56935–19607, पृ0 98–103।
2. "ऐडवर्स इफेक्ट ऑफ ब्लड डोनेशन, सिरीराज एक्सपीरियन्स", अमेरिकन रेड क्रॉस अभिगमन तिथि : 2008–06–0।
3. लॉकवुड, डब्लू0 वी0; ह्यूजेन्स, आर0 डब्लू0; जाईमान्राकी, आई0 ओ0; टीनो, आर0 ए0 एवं ग्रे, एडी(2003) "इफेक्ट्स ऑफ रिजुविनेशन एण्ड फ्रोजन स्टोरेज ऑन 42–डे–ओल्ड एएस–3 आरबीसी", ट्रांस्फ्यूजन, खण्ड 43, अंक 11, मु0 पृ0 1527–32।

रक्त समूह–एक विवेचना

नवनीत कुमार गुप्ता
परियोजना अधिकारी(एडूसेट), विज्ञान प्रसार
सी–24, कुतूब संस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली–110016, भारत
ngupta@vigyanprasar.gov.in

रक्त हमारे शरीर का आधार है। यह ऐसा शारीरिक तरल है जो ऑक्सीजन और पोषक तत्वों को शरीर की करोड़ों कोशिकाओं तक पहुंचाता है और इन कोशिकाओं से अनुपयोगी तत्वों जैसे कार्बन डाइऑक्साइड, यूरिया, और लैक्टिक एसिड आदि को शरीर से बाहर निकालने में सहायता करता है। इसके अतिरिक्त यह शरीर की प्रतिरोधी क्षमता के विकास में सहायक होता है। शरीर का पीएच नियमित रखने के साथ ही रक्त शरीर का तापमान नियत बनाए रखता है। हालांकि रक्त की परिभाषा इससे कहीं अधिक व्यापक है दुनिया को रक्त की ऐसी ही विभिन्न विशेषताओं का परिचय सबसे पहले रोग विज्ञानी कार्ल लैंडश्टाइनर (14 जून, 1868–26 जून 1943) ने कराया। लैंडश्टाइनर ने अपने कैरियर के आरंभ में बीमारी और संक्रमण पर शोध किया। उनका अधिकांश समय रक्त और उसके विभिन्न घटकों के अध्ययन में गुजरा।

सदियों पहले समाज में यह धारणा थी कि संसार में दो रक्त समूह हैं एक अच्छे व्यक्तियों में और दूसरा बुरे व्यक्तियों में पाया जाता है। बाद में समय बदलने के साथ यह विचार भी बदला। लैंडश्टाइनर के समय यह धारणा प्रचलित थी कि सभी मानवों का रक्त एक सा होता है। लेकिन उस समय तक रक्त का ट्रांसफ्यूजन यानी एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में रक्त स्थानांतरित करने का कार्य आम नहीं था। कभी–कभार यह संयोग हो जाता था कि चढ़ाने वाला रक्त, ग्रहण करने वाले के रक्त से मेल खा जाता था। इसके अलावा रक्त चढ़ाने के लिए तकनीक भी उन्नत नहीं थी इसलिए रक्त पाने वाले को इससे उतना लाभ नहीं होता था जितना होना चाहिए। ऐसे ट्रांसफ्यूजन यानी रक्त आधान के मामले में रक्त की कोशिकाओं के थक्के बन जाते थे और रक्त प्रवाह बंद हो जाता था। थक्के बनने के कारण प्रायः व्यक्ति को आघात और पीलिया हो जाता था और उसकी मौत भी हो जाती थी। ऐसा इसलिए होता था क्योंकि ऐसे ट्रांसफ्यूजन में जब रक्त देने वाले के रक्त की कोशिकाओं और रक्त पाने वाले के सीरम या प्लाज्मा से मिलता था तो हीमोगल्युटिनेशन की वजह से क्रॉस मैचिंग हो जाती है, जिससे पता चलता है कि रक्त देने वाले का रक्त किसी व्यक्ति विशेष के लिए अयोग्य है।

1901 में लैंडश्टाइनर ने पता लगाया कि ऐसी प्रकिया भिन्न रक्त के सीरम व रक्त कणिकाओं के परस्पर सम्पर्क में आने की वजह से होता है। उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि अलग–अलग लोगों के रक्त की बनावट अलग–अलग थी और इसी कारण से रक्त देने वाले की कोशिकाओं और रक्त पाने वाले की कोशिकाओं में समानता और असमानता उत्पन्न होती है। अपने इस सिद्धांत की पुष्टि के लिए उन्होंने वियना यूनिवर्सिटी हॉस्पिटल में कई दर्जन मरीजों के रक्त के नमूने लिये। अपनी लेबोरेटरी में उन्होंने रक्त के घटक आर0बी0सी0 को, हर नमूने के मूलभूत रक्त सीरम से अलग किया। ऐसे सैकड़ों नमूनों की जांच और रक्त की लाल कोशिकाओं की संकर परीक्षण यानी क्रॉस टैस्टिंग के बाद उन्होंने पाया कि कुछ मामलों में रक्त देने वाले का रक्त कुछ सेरम नमूनों में थक्कों में बदल जाता था और कुछ नमूनों में ऐसी कोई विपरीत प्रतिक्रिया नहीं होती थी। पूरे एक साल तक परीक्षण, क्रॉस टैस्टिंग और रक्त की पेचीदी संरचना का अध्ययन करने के बाद उन्होंने रक्त के समूहों पर अपने विचार दुनिया के सामने प्रस्तुत किए। कार्ल लैंडश्टाइनर यह समझाने में कामयाब रहे कि इंसानी रक्त प्रमुख रूप से कम से कम तीन तरह का होता है जो रक्त की लाल कोशिकाओं के प्लाज्मा झिल्ली से जुड़े प्रतिजन के अनुसार भिन्न होता है। इस सिद्धांत का प्रयोग करके लैंडश्टाइनर ने मानव के रक्त को तीन समूहों में बांटा: ए, बी और सी। बाद में सी को ग्रुप ओ नाम दिया गया। एक साल बाद उनके दो साथियों – एल्फ्रैड फॉन डिकास्टेलो और एड्रियानो स्टरली ने और ज्यादा लोगों की जांच की और एक चौथे ब्लड ग्रुप का भी पता लगाया और इसे 'एबी' ग्रुप नाम दिया गया।

वास्तव में रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर वंशानुगत एंटीजेनिक सामग्री की उपस्थिति या अनुपस्थिति पर आधारित रक्त का वर्गीकरण किया गया है। रक्त समूह व्यवस्था पर आधरित ये प्रतिजन प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, ग्लाइकोप्रोटीन या ग्लाइकोलिपिड्स के रूप में हो सकते हैं। इनमें से कुछ एंटीजन विभिन्न ऊतकों की अलग–अलग तरह की कोशिकाओं की सतह पर मौजूद होते हैं। एक

युग्मजीविकल्पी से निकलने वाले रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर मौजूद प्रतिजन किसी एक रक्त समूह व्यवस्था का निर्माण करते हैं। इंटरनेशनल सोसायटी फॉर ब्लड ट्रांसफ्यूजन (आईएसबीटी) के अनुसार मानव रक्त की तीस रक्त समूह व्यवस्था हैं। किसी सम्पूर्ण रक्त समूह व्यवस्था में आरबीसी की सतह पर मौजूद सभी 30 तत्वों का वर्णन होता है, और रक्त की कोई एक प्रकार ब्लड ग्रुप प्रतिजन के बहुत से संभावित मेलों में से कोई एक होती है।

रक्त के प्रकारों की खोज एक क्रांतिकारी कदम थी। लेकिन उस समय का वैज्ञानिक समुदाय इस खोज को स्वीकारने और इसका प्रयोग करने के सिलसिले में आशंकित था। 1907 में यानी लैंडश्टाइनर की खोज को सार्वजनिक किए जाने के चार साल बाद न्यूयॉर्क के सेनाई हॉस्पिटल में डॉक्टर रयूबिन ओटनबर्ग ने ब्लड टाइपिंग का इस्तेमाल करके पहले आधुनिक ब्लड ट्रांसफ्यूजन को अंजाम दिया, ये ट्रांसफ्यूजन वैसा ही था जैसा कि आजकल होता है। 1915 तक लैंडश्टाइनर के ब्लड टाइपिंग सिद्धांत को पूरी दुनिया में काफी हद तक स्वीकारा जाने लगा।

लेकिन ब्लड टाइपिंग का इस्तेमाल करके बड़े स्तर पर पहला ब्लड ट्रांसफ्यूजन इतिहास में एक बदकिस्मत दौर में आया। पहले विश्व युद्ध के दौरान बहुत बड़े स्तर पर ब्लड ट्रांसफ्यूजन हुआ। हृदय, फेफड़ों और शरीर के अन्य महत्वपूर्ण अंगों की सर्जरी पहले ब्लड ट्रांसफ्यूजन की कमी के कारण असंभव सी मानी जाती थी लेकिन अब ये काम आसान हो गया। ब्लड टाइपिंग से होने वाले ब्लड ट्रांसफ्यूजन के कारण बहुत सी जिंदगियां बचाई जा सकीं।

लेकिन ब्लड टाइपिंग की ये कार्यवाई अब भी अधूरी थी, लैंडश्टाइनर अब भी मानव के रक्त के अध्ययन और इसका जायजा लेने में जुटे थे। लैंडश्टाइनर ने देखा कि बहुत थोड़े मामलों में रक्त देने वाले और रक्त पाने वाले के ब्लड ग्रुप का पूरी तरह मिलान करने के बावजूद रक्त पाने वाले की रक्त कोशिकाएं नए रक्त को स्वीकारने से इंकार कर देती थी जिससे खतरनाक और कभी–कभी घातक परिणाम हो जाते थे। इस प्रकार लैंडश्टाइनर और उनके सहशोधकर्त्ता डॉक्टर एलेक्जैंडर वाइनर एक कामयाब ब्लड ट्रांसफ्यूजन के एक और महत्वपूर्ण निर्धारक तत्व से परिचित हुए। इससे इंसान के रक्त में आर एच फैक्टर की खोज हुई। इसे आर एच फैक्टर इसलिए कहा गया क्योंकि इसे पहले रीसस बंदर में खोजा गया था।

आर एच फैक्टर, रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर उपस्थित होता है। लगभग 85 प्रतिशत मानव की रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर आर एच फैक्टर होता है और इसे आर एच पॉजिटिव कहा जाता है। बाकी लोगों की रक्त की लाल कोशिकाओं में आर एच फैक्टर नहीं होता है और उन्हें आर एच निगेटिव कहा जाता है। आर एच फैक्टर को, आर एच ब्लड ग्रुप सिस्टम का सबसे ज्यादा इम्यूनोजैनिक **डी** प्रतिजन कहा जाता है। लैंडश्टाइनर और वाइनर ने अनुमान लगाया कि अगर आर एच निगेटिव वाले लोग आर एच पॉजिटिव रक्त का एक से ज्यादा ट्रांसफ्यूजन पाते हैं तो उनके रक्त में एंटी फैक्टर विकसित हो जाते हैं। इसलिए ये साबित हो गया कि एक कामयाब ब्लड ट्रांसफ्यूजन के लिए ये महत्वपूर्ण है कि रक्त की प्रकार के साथ–साथ रक्त का आरएच फैक्टर भी मेल खाए। इस अध्ययन से एक और कमाल की खोज हुई। आर एच फैक्टर का पता चलने से नवजात बच्चों की एरिथ्रोब्लास्टोसिस फैटालिस या हिमोलिटिक बीमारी की वजह पता चली। ऐसा तब होता है जब मां और भ्रूण के रक्त की किस्में आपस में नहीं मिलती हैं और इसके कारण मां की एंटीबॉडीज भ्रूण को घायल कर देती हैं। ये जानकारी मिलने के साथ ही अब प्रसव से पहले के चरण में इन पेचीदगियों का पता लगाना और जहां कहीं संभव हो उनका इलाज करना और जोखिम को कम से कम करना भी आसान हो गया है।

ब्लड टाइपिंग और आर एच फैक्टर की खोज के कुछ अप्रत्याशित प्रयोग भी निकले हैं। ब्लड टाइपिंग से मैडिको–लीगल मामले में पितृत्व से जुड़े मुकदमों और हत्या के मुकदमों को सुलझाने में एक नया अध्याय खुला है। ए बी ओ ब्लड टाइपिंग से इन मामलों को सुलझाने में काफी मदद मिल रही है। सन् 1902 में लैंडश्टाइनर ने वियना इंस्टीट्यूट ऑफ फॉरेंसिक मैडिसिन के मैक्स रिक्टर के साथ मिलकर एक लैक्चर दिया जिसमें उन्होंने अपराधों को हल करने में मदद के लिए रक्त के सूखे हुए धब्बों की टाइपिंग की एक नई विधि के बारे में बताया, जहां अपराध वाली जगह पर रक्त के धब्बे पाए जा सकते थे। लैंडश्टाइनर, ब्लड टाइपिंग और आर एच फैक्टर के बारे में अपनी खोजों को और पुष्ट तो बना रहे थे लेकिन उन्हें ये पता नहीं चल पाया कि ब्लड ग्रुप पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ते हैं। सन् 1910 के आसपास एमिल प्रफाइहर फॉन डंजर्न और लुड्विक हर्षफैल्ड ने ब्लड ग्रुप्स के वंशानुक्रमण के सिद्धांत के लिए अपनी पहली अवधारणा की परिकल्पना को प्रस्तुत किया। पितृत्व या मातृत्व से जुड़े विवादों को निम्न प्रकार से हल किया जाता है।

जिस व्यक्ति के रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर 'ए' प्रकार का एंटीजेन होता है उसका रक्त 'ए' प्रकार का होता है। जिसके रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर 'बी' प्रकार का एंटीजेन होता है उसका रक्त बी प्रकार का होता है। जिस व्यक्ति का रक्त "ए बी" किस्म का होता है, उसके रक्त में दोनों प्रतिजन होते हैं और जिस व्यक्ति का रक्त 'ओ' ग्रुप का होता हैं उसके रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर कोई प्रतिजन नहीं होता। प्लाज्मा की एंटीबॉडीज को रक्त की लाल कोशिकाओं की सतह पर प्रतिजन के साथ मिश्रित नहीं होना चाहिए अन्यथा एग्लूटिनेशन यानी थक्काकरण होने लगता है। रक्त के प्रकार की इस समानता का प्रयोग माता–पिता या उनके बच्चों के ब्लड ग्रुप को निर्धारित करने में होता है, बशर्ते इनमें से एक की जानकारी हो। इस प्रकार माता–पिता के ब्लड ग्रुप उनके बच्चों के संभावित ब्लड ग्रुप का निर्धारण करते हैं और इसका विपरीत भी सत्य है।

तो इस प्रकार मानव रक्त के व्यवहार से जुड़ी कठिन पहेली को सुलझाया गया। लैंडश्टाइनर के बाद के समय वाले वैज्ञानिक इस कमाल की खोज को और बेहतर बनाते गए जिससे इस बात के प्रति बेहतर समझ हासिल हुई कि मानव का शरीर किस तरह काम करता है। दुनिया इस सिलसिले में ऑस्ट्रियाई मूल के कार्ल लैंडश्टाइनर की आभारी है जो बाद में अमरीका में जा कर बस गए थे। अपने काम से आधिकारिक रूप से सेवानिवृत्त होने के काफी समय बाद तक भी वे सूक्ष्मदर्शी से शोध करके उन सभी चीजों को नोट करते रहते थे जो अध्ययन काल में उन्हें पता चलती थी। 1943 में लैंडश्टाइनर की दिल का गम्भीर दौरा पड़ने से उस स्थान पर मृत्यु हो गई जहां उन्होंने अपना लगभग पूरा जीवन व्यतीत किया था– अर्थात उनकी लैब में, लैंडश्टाइनर ने जो भी खोज की, उसमें वो अग्रणी थे। इसके बावजूद वो प्रचार से और भाषण देने से बचते रहते थे। वे बहुत प्रतिभाशाली व्यक्ति थे और उनके काम को उनके जीवन काल के दौरान पूरी दुनिया में प्रसिद्धि और मान्यता मिली। सन् 1930 में उन्हें शारीर विज्ञान के लिए नोबेल सम्मान दिया गया था।

हाल ही में अमेरिका में आई–ट्रेस नामक एक नयी युक्ति के आविष्कार से रक्त के घटकों के ठीक होने या ना होने के बारे में सटीक जानकारी मिल सकेगी। आने वाले समय में यह युक्ति भारत समेत सभी देशों को लाभ दिलाएगी इससे जरूरतमंद मरीजों को जल्द रक्त चढाया जा सकेगा।

संदर्भ

1. डीन लाउरा(2005) ब्लड ग्रुप एंड रेड सेल एंटीजन, नेशनल सेंटर फॉर बायोटेक्नोलॉजी इंफॉरमेशन (यू0एस0)।
2. विकीपीडिया।
3. विज्ञान प्रसार वेबसाइटः www.vigyanprasar.gov.in

कोलेस्टेरॉल कितना भयावह

एस0 सी0 शुक्ल
अ0प्रा0 प्राचार्य एवं विभागाध्यक्ष, प्राणि विज्ञान विभाग
बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
पता: ए–1104, इन्दिरा नगर, लखनऊ–226016

"कोलेस्टेरॉल" आधुनिक युग के जीवन व जीवन शैली से जुड़ा हुआ एक अत्यन्त बहुचर्चित रसायन है जिससे हम में से अधिकांश अल्पाधिक परिचित अवश्य हैं। इससे बचाव हेतु न केवल चिकित्सा क्षेत्र द्वारा आगाह किया जाता रहा है अपितु स्वयं हम भी इसकी वृद्धि के प्रति सशंकित बने रहते हैं। हमारे दैनिक जीवन में उपयोग किये जाने वाले फास्ट फूड्स (शीघ्र तैयार हो जाने वाले भोज्य पदार्थ), टिन्ड भोजन पदार्थ (डिब्बों में बन्द होकर आने वाले भोजन पदार्थ), आलस्यपूर्ण/आरामदायक रहन–सहन, बढ़ता हुआ शहरीकरण (अर्बनाइजेशन)/सूचना प्रकमण (इंफॉर्मेशन प्रोसेसिंग प्रक्रिया), एक–दूसरे से दैनिक अनचाहा संपर्क, स्थानाभाव आदि हमारे शरीर में तनाव पैदा कर सकते हैं तथा इस प्रकार से उत्पन्न विशेषकर भावनात्मक तनाव सभी व्यक्तियों में "कोलेस्टेरॉल" की मात्रा की वृद्धि करता हुआ देखा गया है जिससे अस्थानिक आरक्तता की दशा (इस्कीमिया) पैदा होती है। यही अस्थानिक आरक्तता हृदय रोगों को जन्म दे सकती है जिन्हें अस्थानिक आरक्तता जनित हृद–रोगों (इस्कीयामिक हार्ट डिजीजेज–आई0एच0डी0) के नाम से जाना जाता है। इन सभी उपरोक्त दशाओं में कोलेस्टेरॉल की मात्रा हमारे शरीर में बढ़ती दिखाई देती है।

'kjhj e lkekU; fyfiM izksQkby

कोलेस्टेरॉल(सम्पूर्ण)	130–220	मि0ग्रा0/डे0ली0
कोलेस्टेरॉल(एच0डी0एल0)	35–70	मि0ग्रा0/डे0ली0
कोलेस्टेरॉल(एल0डी0एल0)	0–130	मि0ग्रा0/डे0ली0
कोलेस्टेरॉल(वी0एल0डी0एल0)	5–38	मि0ग्रा0/डे0ली0
ट्राईग्लिसेराइड	20–150	मि0ग्रा0/डे0ली0
कुल कोलेस्टेरॉल/एच0डी0एल0 अनुपात	3.3–4.4	कम खतरा
	4.4–7.1	औसत खतरा
	7.1–11.0	हल्का खतरा
	> 11.0	अत्यधिक खतरा
एल0डी0एल0/एच0डी0एल0 अनुपात	0.5–3.0	कम खतरा
	3.0–6.0	हल्का खतरा
	> 6.0	अत्यधिक खतरा

आधुनिक चिकित्सा शास्त्रियों के अनुसार हृद–रोग (कार्डियक डिजीजेज) विषाणुओं के संक्रमण द्वारा भी हो सकते हैं तथा इस विषाणु संक्रमण सिद्धांत के अनुसार विषाणुओं के संक्रमण से उत्पन्न हृद–रोगों के कारण "कोलेस्टेरॉल" का जमाव रक्त वाहिनियों (विशेषकर धमनियों) में तेजी से होने लगता है। यह भी देखा गया है कि कई रोगियों में हृदय की बीमारी के कोई ठोस व समुचित कारण न उपस्थित होने पर भी उनमें हृद–रोग दिखाई देते हैं। वैसे "कोलेस्टेरॉल" का सामान्य स्तर में हमारे शरीर में पाया जाना अनिवार्य रूप

से आवश्यक होता है जिसके निम्नलिखित कारण होते हैं:–

(अ) हमारे शरीर में विटामिन–डी का जैव–संश्लेषण किया जाना।

(ब) अधिवृक्क ग्रन्थियों (एड्रीनल ग्लैण्ड्स) के कार्टेक्स में स्रावित होने वाले विभिन्न आवश्यक हार्मोन जैसे कार्टीसोन, डी–ऑक्सीकार्टीसोन, कार्टिकोस्टीरॉन आदि जो हमारे शरीर को सुचारु रूप से चलाने हेतु न केवल आवश्यक होते हैं अपितु तनाव प्रबन्धन में महत्वपूर्ण योगदान देकर उससे मुक्ति दिलाने में सहायता प्रदान करते हैं।

(स) लिंग हार्मोनों का उत्पादन– वृषण में टेस्टेस्टेरॉन का निर्माण व अण्डाशय से प्रोजेस्टेरॉन के जैव संश्लेषण हेतु कोलेस्टेरॉल एक महत्वपूर्ण रसायन है।

(द) नन्हे बच्चों में कोशिका निर्माण हेतु कोलेस्टेरॉल का उपयोग होता है परन्तु वयस्क अवस्था में आने पर कोशिका निर्माण में अपेक्षाकृत कमी आ जाने से इसका उपयोग कम हो जाता है जिससे इसके संकलन की संभावना बढ़ जाती है।

**ÞdkyLVjkyÞ 'kjhj e dl vkrk g **

सामान्यतः "कोलेस्टेरॉल" वसा युक्त भोजन पदार्थों के द्वारा (जैसे मक्खन, घी, मेवे, आइसक्रीम, चॉकलेट, मिठाई आदि) शरीर में आता है। इसके अतिरिक्त हमारे शरीर में इसका जैव संश्लेषण भी किया जाता है। हमारे भोजन में जो भी वसा होती है उसका पाचन होने पर वसीय अम्ल (फैटी एसिड्स) का निर्माण होता है। इनके "बीटा–ऑक्सीडेशन" के फलस्वरूप "एसिटिल कोइन्जाइम–ए" बनता है। इस पदार्थ के अधिकांश भाग का प्रयोग शरीर द्वारा ऊर्जा उत्पादन हेतु उपयोग किया जाता है तथा कुछ भाग "कोलेस्टेरॉल" में परिवर्तित होता रहता है।

ÞdkyLVjkyÞ d teko d n"iHkko

शरीर में सामान्य से बढ़ी हुई "कोलेस्टेरॉल" की मात्रा हमारी धमनियों में जमा होने लगती है जिससे उनका आन्तरिक व्यास धीरे–धीरे कम होने लगता है तथा रक्त परिवहन में अवरोध होना आरम्भ हो जाता है। इस स्थिति को "धमनी काठिन्य" (आरटीरियोस्क्लेरोसिस) कहा जाता है। इस दशा में धमनियों की दीवारें मोटी व कड़ी होना आरम्भ कर देती हैं तथा अस्थानिक आरक्तता(इस्कीमिया) की दशा उत्पन्न करती है। धमनी काठिन्य की एक और अवस्था, जिसे अवरोधी धमनी काठिन्य (आरटीरियोस्क्लेरोसिस ऑब्लीटेरन्स) कहा जाता है, में धमनियों की दीवारें इतनी मोटी हो जाती हैं कि उनमें रक्त प्रवाह अवरोधित होने लगता है व चलने फिरने में काफी व्यथा अनुभव की जाती है।

हृदय को रक्त ले जाने वाली धमनियों में धमनी काठिन्य की अवस्था से अस्थानिक हृद पेशीय आरक्तता (मायोकार्डियल इस्कीमिया) होना देखा जाता है जिससे हृदयाघात (मायोकार्डियल इन्फार्कसन) की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। इसे कोरोनरी स्ट्रोक भी कहते हैं। इसी प्रकार मस्तिष्क को रक्त ले जाने वाली धमनियों में "कोलेस्टेरॉल" के जमाव से उनमें भी अस्थानिक आरक्तता (इस्कीमिया) की दशा उत्पन्न हो सकती है, फलस्वरूप मस्तिष्क आघात (सेरेब्रल अटैक) की स्थिति उत्पन्न हो सकती है। हाथों और पैरों की धमनियों में "कोलेस्टेरॉल" के जमाव के कारण "कोथ" (गैन्ग्रीन) हो सकती है जिसमें ऊतक गलने की स्थिति पैदा होती है। "कोलेस्टेरॉल" के विषय में किये गये अनेको अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि इसकी बढ़ी हुई मात्रा लगभग 40 प्रतिशत व्यक्तियों में, जो विकसित नगरों में रहते हैं, पाई जाती है। भारत वर्ष में लगभग 15 प्रतिशत व्यक्ति "कोलेस्टेरॉल" के जमाव की समस्या से ग्रस्त हैं। कम आयु के व्यक्तियों में हृदयाघात की बीमारियों के आनुवंशिकी के कारणों को छोड़कर "कोलेस्टेरॉल" व उच्च रक्तचाप भी प्रमुख कारक देखे गये हैं।

प्रायः यह जमाव की प्रक्रिया 30 वर्ष की आयु से आरम्भ होती दिखाई पड़ती है जो आयु बढ़ने के साथ–साथ तेज होने लगती है तथा 40 वर्ष की आयु में जब यह जमाव एक सीमा से ऊपर पहुँच जाता है तब संबंधित व्यक्ति में इसके लक्षण दिखाई देना आरम्भ हो जाते हैं। फलस्वरूप हृदयाघात व तीव्र वाहिका संकुचन सहित दर्द की स्थिति (वाहिका संकुचन/एन्जाइना) जो हृदशूल के रूप में दिखाई दे सकती है। ऐसे में छाती में ऐंठन सहित दर्द होता है जिसका प्रमुख कारण कम रक्त व ऑक्सीजन की आपूर्ति होती है। "कोलेस्टेरॉल" के जमाव की प्रक्रिया आनुवंशिकी से भी सम्बद्ध मानी जाती है तथा मनुष्यों में जीन की व्यतिक्रम से इसके जमाव की दर बढ़ जाती है। ऐसी दशा में आहार में भी इसकी अधिक मात्रा हो जाने से हमारे लिए इसके दुष्प्रभावों की आशंका और भी बढ़ जाती है।

**d l cp Þdky LVjk yÞ t eko d n"iHkko l **

"कोलेस्टेरॉल" के जमाव के दुश्प्रभाव अधिकांशतः नियंत्रित किये जा सकते हैं जिसके लिए निम्नलिखित श्रेणियों के उपायों पर अमल करना हितकर सिद्ध हो सकता है। ये हैं–

(अ) **vk"kf/k;k }kjk**– "स्टैटिन" समूह की औषधियाँ जैसे "एटोर्वा स्टैटिन", "नोवो स्टैटिन" बहुधा चिकित्सकों द्वारा प्रयोग की जाती हैं। ये औशधियाँ संभवतः यकृत को प्रभावित करके "कोलेस्टेरॉल" को बढ़ाने वाले इन्जाइमों का नियंत्रण करने में सहायक होती हैं।
(ब) **/keuh l/kku¼,fUt;kIykLVh½@ckbikl }kjk 'kY; fpfdRlk**– धमनियों में अधिक मात्रा में "कोलेस्टेरॉल" जमा हो जाने पर शल्य द्वारा "बाईपास" या फिर धमनी संधान (एन्जियोप्लास्टी) अपनाकर मरीज को जीवनदान दिया जा सकता है। परन्तु इन उपायों से स्थाई मुक्ति संभव नहीं है क्योंकि "कोलेस्टेरॉल" जमाव की प्रक्रिया रोकी नहीं जा सकती।
(स) **?kjy mik;**– हमारी जीवन शैली, भोजन ग्रहण आदि में नियंत्रण की आवश्यकता है जिसके लिए निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है क्योंकि समस्या को यदि समाप्त नहीं कर सकते हैं तो इसे कम से कम नियंत्रित रखा जाय। ये उपाय हैं:–

1. मक्खन, मिठाई, घी, सूखे मेवे, आइसक्रीम, चॉकलेट आदि का सेवन कम से कम किया जाय।
2. हरी सब्जियों, सलाद आदि का भरपूर उपयोग किया जाय।
3. नियमित व्यायाम से हृद–कार्य क्षमता (कार्डियक इफीशियेंन्सी) बढ़ती है व शरीर में एच0डी0एल0 (उपयोगी "कोलेस्टेरॉल") की मात्रा बढ़ जाती है जो एल0डी0एल0 या वी0एल0डी0एल0 (हानिकारक "कोलेस्टेरॉल") को घटाने में सहायक हो सकती है। अतः नियमित व्यायाम/योग आदि को दिनचर्या में सम्मिलित किया जाना चाहिए इससे कम से कम 20 प्रतिशत "कोलेस्टेरॉल" में कमी देखी जाती है।
4. भोजन में कम से कम 35 प्रतिशत प्रोटीन को स्थान अवश्य दें।
5. विटामिन सी (नींबू तथा गाजर आदि) में पाये जाने वाले "एण्टीऑक्सीडेन्ट्स", "कोलेस्टेरॉल" को कम करने में सहायक हैं। अतः इनका प्रयोग किया जाना चाहिए।
6. दूध वाली चाय कम पी जाय क्योंकि दूध में "कोलेस्टेरॉल" होता है। बिना दूध व चीनी की हर्बल चाय में एण्टीऑक्सीडेन्ट्स होते हैं। कम से कम 2–3 कप ऐसी चाय लेनी चाहिए।
7. लहसुन, अदरख, मेथी आदि से "कोलेस्टेरॉल" व रक्त वाहिनियों का चिपचिपापन न केवल कम होता है बल्कि रक्तचाप भी घटता है।
8. थोड़ा बादाम का भी सेवन किया जाना चाहिए।

lnHk

1. शुक्ला, एस0 सी0(2013) "भावनाएं एवं हृद्घात की संभावनाएं", अनुसंधान (विज्ञान शोध पत्रिका), खण्ड 01, अंक 01, मु0पृ0 173–175।
2. लाल, पुरुषोत्तम (2012) "कोलेस्टेरॉल क्या बला है ?", होमियोपैथिक हेरिटेज, मु0पृ0 8–10।
3. "हाउ टु हैव ए हैपी हार्ट", टाइम्स लाइफ(वेलनेस), सितम्बर 01, 2013।
4. "सैम्सन राइट्स एप्लाइड फिजियोलॉजी", ऑक्सफोर्ड प्रेस, लंदन।

देश में गणित शिक्षण और शोध की दशा एवं दिशा

महेन्द्र पाठक
कार्यक्रम अधिशासी, आकाशवाणी (ऑल इण्डिया रेडियो)
हजरतगंज, लखनऊ–226001, उ0प्र0
drpathakmp@gmail.com

भारतीय संस्कृति दर्शन प्रधान रही है न कि प्रदर्शन प्रधान। परन्तु आधुनिकता की अंधी दौड़ में आज प्रदर्शन को ही प्रश्रय दिया जा रहा है। सम्भवतः यही कारण है कि गणित जैसे महत्वपूर्ण और अति उपयोगी विषय को भी आज भारत में वह सम्मान और स्थान नहीं दिया जा रहा है जो कि इसको दिया जाना चाहिए। गणित को महत्व देकर हम गणित पर उपकार नहीं करेंगे वरन अपना व अपनी आने वाली पीढ़ियों का भविष्य सँवारेंगे। गणित (दर्शन) के अनुप्रयोगों से जन्में विषयों (प्रदर्शन) को जो सम्मान प्राप्त है वह उनके जनक को नहीं।

भारतीय मनिषा ने अति प्राचीन समय से ही गणित की महत्ता को समझ लिया था। ईसा से 1200 वर्ष पूर्व रचित ग्रन्थ **''वेदांग ज्योतिष''** में कहा गया है

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।
तद्वद् वेदांगशास्त्राणां गणितं मूर्धनि स्थितम्।।[1]

अर्थात् जिस प्रकार मोर के सिर पर कलगी तथा सर्प के फन पर मणि शोभा पाती है उसी प्रकार वेदांग शास्त्रों में सर्वोच्च स्थान गणित का है। पश्चिम के दार्शनिक गणितज्ञों ने भी इसी तथ्य को अपने–अपने ढ़ंग से प्रस्तुत किया और गहन शोधों व अनुभवों के आधार पर अनेक गणितीय नियमों, सिद्धान्तों और सूत्रों का प्रतिपादन किया। जिन्हें आज आधुनिक गणित के नाम से जाना जाता है। लोग सामान्यतः गणित को मात्र गणना करने तक ही सीमित समझते हैं जबकि ऐसा कदापि नहीं है। गणितशास्त्र का मूल तर्क और युक्तिसंगत अंवेशणा में है। प्रायः बच्चों से एक सवाल पूछा जाता है कि यदि एक पेड़ पर दस चिड़ियाँ बैठी हों और एक बहेलिया बंदूक से एक चिड़िया को मार दे तो पेड़ पर कितनी चिड़ियाँ शेष रह जायेंगी? इस प्रकार के प्रश्न बच्चों को यह तथ्य समझाने हेतु ही किये जाते हैं कि सिर्फ गणना नहीं है गणित।

गैलिलियो ने कहा **''गणित ही वह भाषा है जिसमें ईश्वर ने विविधतापूर्ण सृष्टि रची जो युगों–युगों से सहज चलती आ रही है।''**[2] अपने प्रसिद्ध शोध ग्रंथ **''फिलासफिए नेचुरलिस प्रिंसपिया मैथेमेटिका''** में **सर आइजक न्यूटन** ने लिखा है कि **''पूरा विश्व सरल प्राकृतिक नियमों से संचालित है।''**[3] महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि सभी प्राकृतिक नियम प्रकृति से गणितीय रूप में सृजित किये गये हैं।

आज एक आम आदमी के जीवन यापन हेतु भी सामान्य गणित का ज्ञान आवश्यक हो गया है, क्योंकि वर्तमान युग की असली साक्षरता यही है। प्रत्यक्ष रूप से गणित उतनी महत्वपूर्ण और उपयोगी भले ही न लगे पर व्यक्ति की सोच को तर्कसंगत बनाने और विकसित करने में गणित की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सामान्य तौर पर लोग गणित को कक्षाओं में पढ़ाया जाने वाला एक विषय मात्र समझने की भूल करते हैं जबकि यह केवल एक विषय न होकर अपने आप में एक सम्पूर्ण संस्कृति है। गणित का ज्ञान मानव मस्तिष्क को अनुशासित और संतुलित करता है। गणित के अभ्यास के दौरान मानव मस्तिष्क एक विशिष्ट पद्धति से प्रशिक्षित होता है जो चीजों को तार्किक ढंग से जानने व समझने में मदद करता है। इधर कई प्रदेशों के शिक्षा बोर्डों द्वारा 10वीं कक्षा में गणित की अनिवार्यता समाप्त किये जाने के पीछे यह तर्क दिया जा रहा है कि गणित के कारण छात्र अपनी पढ़ाई के दौरान काफी दबाव महसूस करते है

और उनका अधिकांश समय गणित पढ़ने में ही खर्च हो जाता है इसके बावजूद भी बोर्ड परीक्षाओं और अन्य परीक्षाओं में अपेक्षित परिणाम सामने नहीं आते।

कुछ लोगों को यह तर्क प्रथम दृष्टा राहत दिलाने वाला लगेगा, लेकिन वो लोग इसके दूरगामी परिणामों से अनभिज्ञ हैं। जिस गणित का ज्ञान अनेक प्रकार की समस्याओं और कठिनाइयों को हल करने में सहायक है उसे लोग भला कठिन और नीरस क्यों कहते हैं? थोड़ी देर के लिए अगर मान भी लें कि गणित कठिन है तो उसे सरल व सुबोधगम्य ढ़ंग से बच्चों के समक्ष प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी स्पष्ट रूप से शिक्षकों और शिक्षण संस्थाओं की है। पाठन और शिक्षण पद्धतियों में लगातार आई कमियों के कारण ही गणित को कठिन, दुरूह और नीरस माना जाने लगा है। प्रारम्भिक स्तर पर जिन छात्रों को सौभाग्य से अच्छे अध्यापक मिल जाते हैं उनको गणित रूचिकर लगने लगती है। वे छात्र समस्याओं को समझने तथा उनके समाधान मिलने पर आगे बढ़ने की प्रेरणा पाते हैं। जिन्हे यह सौभाग्य नहीं मिलता उनके लिए गणित माथापच्ची के सिवा कुछ और नहीं लगती और वे इसे कठिन कहकर उससे कतराने लगते हैं।

यदि हम कठिनाइयों से यूँ ही किनारा करते रहे तो परिणाम कभी भी अच्छे नहीं होंगे। कतराने को तो आज की पीढ़ी के ज़्यादातर बच्चे दूध, दाल और हरी सब्जियों से भी कतराते हैं पर क्या माता–पिता इनको ये पौष्टिक चीज़ें देना **बन्द कर दें** ? नहीं, बिल्कुल नहीं, कुछ न कुछ नये तरीके निकालकर इन चीजों को रूचिकर और स्वादिष्ट बनाकर इन्हें बच्चों को खिलाने पिलाने का हर सम्भव प्रयास प्रत्येक समझदार माता–पिता को करना चाहिए। ठीक वैसे ही गणित को भी रूचिकर बनाकर बच्चों को पढ़ाया जाना चाहिए। एक बार यदि बच्चे में गणित के प्रति रूचि जागृत हो गई तो बच्चा स्वयं एक जिज्ञासु की भाँति प्रश्नों का हल निकालने हेतु उत्सुक रहेगा और सफलता भी पायेगा।

आज दुनिया भर में भारत के इन्जीनियरों, आई.टी. विशेषज्ञों और प्रौद्योगिकीविदों का डंका बज रहा है तो उसके मूल में उनकी गणितीय क्षमता व अभिरूचि ही है, जिसके बल पर वो इतनी उन्नति कर पाये। भारतीय सेना अपने अधिकारियों का चयन करने के लिए एन. डी.ए. की जो परीक्षा आयोजित करती है, उसकी प्रवेश परीक्षा में ढाई–ढाई घन्टे के दो प्रश्नपत्र होते हैं जिनमें से पहला प्रश्नपत्र केवल गणित का होता है, दूसरे प्रश्नपत्र में अभ्यर्थी की सामान्य योग्यता परखने हेतु अन्य अनेक विषय समाहित होते हैं। भारतीय सेना के नीति–नियंता यह भली भाँति जानते हैं कि यदि छात्र में गणितीय योग्यता है तो ही वह एक योग्य व सक्षम सेनाधिकारी के रूप में हर समस्या का समाधान करने में सफल होगा।

गणित का प्रयोग सिर्फ विज्ञान व प्रौद्योगिकी में ही नहीं बल्कि व्यापक रूप से मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान के विषयों में भी होता है। माइक्रोइकोनॉमिक्स तथा इसी प्रकार मानविकी के अन्य कई विषयों का पठन–पाठन व शोध गणित के समग्र ज्ञान के बिना सम्भव ही नहीं है। अमेरिका जैसे अतिविकसित देश गणित के पठन–पाठन और उच्च गणित में शोध व अनुसंधान कार्यों हेतु अरबों डालर यूँ ही नहीं खर्च कर रहे हैं। वे अच्छी तरह से जान और मान गए हैं कि देश का विकास पूर्णतः उसके नागरिकों के बौद्धिक विकास पर निर्भर होता है। वहाँ पर गणितीय पखवारों/सप्ताहों के आयोजन के माध्यम से और विशेष अभियानों के तहत पोस्टरों, बैनरों और पैम्फलेटों के माध्यम से गणित की उपयोगिता व महत्ता का प्रचार–प्रसार व्यापक रूप से बड़े पैमाने पर किया जाता है। भारत में किसी सरकारी या गैर सरकारी संस्था द्वारा ऐसा कोई प्रयास शायद ही कभी किया गया हो। स्वयं सेवी संस्थायें तो सिर्फ उन्हीं कार्यों को अपने हाथ में लेने की अभ्यस्त हो गई हैं जिनमें मेहनत कम और कमाई के साथ प्रचार(प्रदर्शन) अधिकाधिक हो।

उच्च गणित विशेषकर शुद्ध गणित में शोध और अनुसंधान की स्थिति तो भारत में बिल्कुल अच्छी नहीं कही जा सकती है। आज गणित के शोध में भी कम्पार्टमेंटलाइजेशन हो गया है सिर्फ उसी प्रकार की गणित के शोध को बढ़ावा मिल रहा है जिसके तत्कालिक लाभ हों। यूँ कहें तो **तुरंता** किस्म के उपयोगी या **टेलरमेड** शोधों पर जोर दिया जा रहा है। शुद्ध गणित में व्यापक शोधों के अभाव में इस प्रकार के शोध तत्काल तो उपयोगी हो सकते हैं पर गणित और मानवता के भविष्य के लिए यह प्रवृत्ति खतरनाक साबित होगी। भारत में उच्च गणित के शोध और विकास की उत्तरदायित्व नेशनल बोर्ड ऑफ हायर मैथेमैटिक्स (एन0बी0एच0एम0) का है। लेकिन

एन0बी0एच0एम0 का नियंत्रण परमाणु ऊर्जा आयोग के अधीन है। अब प्रश्न उठता है कि अपने गठन के दशकों बाद भी एन0बी0एच0एम0 की बागडोर उसके हाथ में न होकर किसी अन्य संस्था के हाथों में क्यों हो ? कल को यदि इसकी कमान किसी और के हाथों में दे दी जाये तो वह अपने तात्कालिक उपयोग में प्रयुक्त शोध की दिशा में ही ज़्यादा ध्यान देगा, गणित के समग्र विकास पर नहीं।

यदि भारत को वास्तव में विकसित राष्ट्र बनाना है तो गणित का समग्र विकास अत्यन्त आवश्यक है। भारत में गणित के पठन–पाठन व उच्च स्तरीय शोध के लिए एन0बी0एच0एम0 को एक स्वायत्तशासी व स्वतंत्र संस्था का मान दिया जाना चाहिए जिससे गणित के हर क्षेत्र में शोधों व अनुसंधानों को बढ़ावा मिले और इसके लिए पर्याप्त धन सरकार द्वारा मुहैय्या कराया जाना चाहिए। गणित का विकास और हमारा विकास एक दूसरे पर निर्भर है इस तथ्य को भली भाँति जान और मान लेने में ही भलाई है।

संदर्भ

1. "वेदांग ज्योतिश", खगोलशास्त्र पर संस्कृत में लिखा गया भारतीय प्राचीन ग्रन्थ, 1400–1200 बी0सी0ई0।
2. गैलीलियो गैलिली (15 फरवरी–8 जनवरी 1642)।
3. न्यूटन, आईजक (सर) (5 जुलाई, 1687) "**फिलासफिए नेचुरलिस प्रिंसपिया मैथेमेटिका**" , लातिन भाषा में लिखा गया ग्रन्थ।

इलेक्ट्रानिक कचरा (ई–वेस्ट)

दीप्ति सिंह
रीडर एवं विभागाध्यक्ष, गणित विभाग
महिला विद्यालय डिग्री कालेज, लखनऊ–226013, उ0प्र0, भारत
deeptisingh1967@gmail.com

ई–वेस्ट क्या है ?

जब हम इलेक्ट्रानिक उपकरणों को लम्बे समय तक प्रयोग करने के पश्चात उसको बदलने/खराब होने पर दूसरा नया उपकरण प्रयोग में लाते हैं तो इस निष्प्रयोज्य खराब उपकरण को ई–वेस्ट कहा जाता है। जैसे कम्प्यूटर, मोबाइल फोन, प्रिंटर्स, फोटोकापी मशीन, इन्वर्टर, यू0पी0एस0, एल0सी0डी0/टेलीविजन, रेडियो/ट्रांजिस्टर, डिजिटल कैमरा आदि। विश्व में लगभग 200 से 500 लाख मी0 टन ई–वेस्ट जनित होता है। केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, नई दिल्ली द्वारा किये गये एक सर्वेक्षण के अनुसार वर्ष 2005 में भारत में जनित ई–वेस्ट की कुल मात्रा 1.47 लाख मी0 टन थी। जो कि वर्ष 2012 में बढ़कर लगभग 8 लाख मी0 टन हो गयी है। जिससे विदित है कि भारत में जनित ई–वेस्ट की मात्रा विगत 6 वर्षों में लगभग 5 गुनी हो गयी है तथा इसमें निरन्तर वृद्धि हो रही है।

भारत के दस बड़े शहरों में जनित होने वाले ई–वेस्ट (इलेक्ट्रॉनिक/इलेक्ट्रिकल वेस्ट) की मात्रा

शहर का नाम	जनित ई–वेस्ट की मात्रा (टन/वर्ष)
मुम्बई	11017.1
दिल्ली	9730.3
बैंग्लूरू	4648.4
चेन्नई	4132.2
कोलकाता	4025.3
अहमदाबाद	3287.5
हैदराबाद	2833.5
पुणे	2584.2
सूरत	1836.5
नागपुर	1768.9

इलेक्ट्रानिक वेस्ट (ई–वेस्ट) को अवैज्ञानिक तरीके से निस्तारित किये जाने (खुले में जलाने) से उत्पन्न वायु प्रदूषण से मानव पर पड़ने वाले कुप्रभाव–

इलेक्ट्रॉनिक वेस्ट को जलाने से कार्सेनोजेन्स– डाईबेन्जो पैरा डायोक्सिन (टी0सी0डी0डी0) "एवं न्यूरोटॉक्सिन्स जैसी विषैली गैसें उत्पन्न होती हैं। इन गैसों से मानव भारीर में प्रजनन क्षमता, शारीरिक विकास एवं प्रतिरोधक क्षमता प्रभावित होती है। साथ ही हार्मोनल असंतुलन व कैंसर होने की सम्भावनायें बढ़ जाती हैं। इसके अतिरिक्त कार्बन डाई आक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड, तथा क्लोरो–फ्लूरो कार्बन भी जनित होती है। जो वायुमण्डल व ओजोन परत के लिये हानिकारक है।

ई–वेस्ट में पाये जाने वाले विषाक्त पदार्थ एवं मानव पर पड़ने वाले कुप्रभाव –

क्र0 सं0	ई–वेस्ट का प्रकार	विषाक्त पदार्थ	मानव पर पड़ने वाला कुप्रभाव
1	प्रिंटेड सर्किट बोर्ड	लेड, कैडमियम	वृक्क, यकृत, तंत्रिका तंत्र, सिर दर्द।
2	मदर बोर्ड	बेरिलियम	फुफ्फुस, त्वचा व दीर्घकालिक रोग।
3	कैथोड टयूब	लेड आक्साइड, बैरियम, कैडमियम	हृदय, यकृत, मांसपेशियां, उदरशोथ।
4	स्विच, फलैट स्क्रीन मॉनिटर	मरकरी	मस्तिष्क, वृक्क, भ्रूण का अविकसित होना।
5	कम्प्यूटर बैटरी	कैडमियम	वृक्क, यकृत को प्रभावित करता है।
6	केबिल इन्सुलेशन कोटिंग	पॉली विनायल क्लोराइड	शारीरिक प्रतिरोधक क्षमता को प्रभावित करता है।
7	प्लास्टिक हाउसिंग	ब्रोमीन	हार्मोनल तंत्र को प्रभावित करता है।

कुछ लोगों द्वारा आर्थिक लाभ कमाने के उददेश्य से बड़े शहरों जैसे दिल्ली, नोएडा, गुडगाँव, गाजियाबाद आदि में जनित होने वाले ई–वेस्ट को अवैध रूप से लाकर, टुकड़ों में अलग किये जाने का कार्य एवं अवैज्ञानिक तरीके से खुले में अवैध रूप से जलाकर धातु एकत्र करने का कार्य किया जाता है। जिससे शहर के पर्यावरण एवं आम जनता के स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है। इस प्रकार जलाये गये ई–वेस्ट के अवशेष की, ड्रम बाल मिल में पिसाई की जाती है उसके पश्चात् उसको छलनी से छाना जाता है तथा बची हुई राख की धुलाई की जाती है। ई–वेस्ट की राख में विभिन्न प्रकार की विषैली धातुएं होती हैं जो कि पानी के साथ मिलकर नदी के जल को भी विषाक्त करने के साथ साथ नदी के किनारों पर एकत्र हो जाती है, जिससे नदी लगातार उथली होती जाती है। इन क्षेत्रों में परिवेशीय वायु गुणता में जिंक, कॉपर, आयरन, एल्युमिनियम, क्रोमियम, निकिल, लेड की मात्रा मानकों से अधिक पायी गयी है। वायु में इन विषैली धातुओं की उपस्थिति का मुख्य स्रोत ई–वेस्ट का जलाया जाना है। क्योंकि ई–वेस्ट में उपरोक्त धातुएं पायी जाती हैं जिसको जलाने से उक्त धातुएं उत्सर्जित होती हैं जो परिवेशीय वायु में रहकर साँस के माध्यम से शरीर में पहुंचकर शरीर के विभिन्न अंगों को अपनी विषाक्तता से प्रभावित करती हैं।

इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों के डिस्कार्ड होने की औसत अवधि

इलेक्ट्रॉनिक उपकरण	डिस्कार्ड होने की औसत अवधि
मोबाइल टेलीफोन्स	1 से 3 वर्ष
पर्सनल कम्प्यूटर्स	2 से 3 वर्ष
कैमरा	3 से 5 वर्ष
टेलीविजन / एल0सी0डी0	5 से 8 वर्ष
रेफ्रीजरेटर	5 से 10 वर्ष
वाशिंग मशीन	5 से 10 वर्ष
आई0टी0 ऐसेसिरीज	बहुत जल्दी जल्दी

पर्यावरणीय दृष्टि से इलेक्ट्रानिक वेस्ट के सम्बन्ध में प्रख्यापित नियम–

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, भारत सरकार के अधिसूचना संख्या–एस0ओ0 1035 (ई0) ई–वेस्ट (प्रबंधन एवं हथालन) नियम 2011 प्रख्यापित किया गया है जो 1 मई, 2012 से सम्पूर्ण भारतवर्ष में लागू है।

ई–वेस्ट को अवैध रूप से अवैज्ञानिक तरीके से जलाये जाने से रोकने के सम्बन्ध में सुझाव–

दिल्ली, नोएडा, गुडगांव गाजियाबाद आदि से इलेक्ट्रॉनिक वेस्ट लाने वाले ट्रकों का भाहर की सीमा में प्रवेश प्रतिबंधित किया जाये। यदि ट्रक ड्राइवर के पास इस आशय का कोई प्रमाण पत्र हो कि उसके ट्रक में लोड ई–वेस्ट वैज्ञानिक तरीके से रिकवरी हेतु प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड से प्राधिकार प्राप्त हुए प्लाण्ट पर ही ले जाया जा रहा है तो उसे छोड़ा जा सकता है।

1. ई–वेस्ट ट्रान्सपोर्ट करने वाले वाहन के प्रस्थान एवं गन्तव्य के बारे में ट्रक के ऊपर लेबल होना चाहिए, जिससे पता चल सके कि ट्रक को कहाँ से लाया जा रहा है एवं इसका गन्तव्य स्थान क्या है। शहर में ई–वेस्ट के प्रसंस्करण की इकाई की स्थापना की जाये। समस्त आयातित ई–वेस्ट मेटल रिकवरी प्रसंस्करण इकाई के माध्यम से ही की जाये।
2. वाहन के प्रस्थान एवं गन्तव्य की सम्बन्धित विभागों एवं पुलिस विभाग के द्वारा लगातार अनुश्रवण किया जाना चाहिए कि वाहन निश्चित गन्तव्य स्थान पर पहुँचा है अथवा नहीं, जिससे अवैध रूप से ई–वेस्ट को लाने ले जाने को रोका जा सकेगा।
3. स्थानीय पुलिस द्वारा सक्रिय होकर मुखबिर के माध्यम से सूचना प्राप्त कर ई–वेस्ट को यदि कहीं अवैध रूप से लाया जा रहा है तो इलेक्ट्रॉनिक कचरा लाने वाले वाहन स्वामी व भण्डारण करने वाले भवन स्वामी के विरुद्ध धारा 188 भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता के अन्तर्गत कार्यवाही की जा सकती है।
4. ई–वेस्ट नियमों का क्रियान्वयन इलेक्ट्रॉनिक सामान बनाने वाले उद्योगों से कराया जाये।
5. थाने द्वारा ई–कचरा ट्रान्सपोर्ट करने के विरूद्ध क्या कार्यवाही की गयी। यदि किसी थाना क्षेत्र में ई–कचरा जलता पाया जाये तो संबंधित थानाध्यक्ष के विरूद्ध कार्यवाही की जाये।
6. मौजूदा प्रशासन द्वारा ई–वेस्ट के सम्बन्ध में की जा रही कार्यवाही एवं प्रयासों के बारे में मीडिया के माध्यम से लगातार प्रचार प्रसार किया जाए।
7. ई–वेस्ट के अवैज्ञानिक रूप से जलाने से होने वाले नुकसान के बारे में जनजागरुकता अभियान चलाते रहना होगा।
8. यदि किसी परिवार के बच्चे ई–वेस्ट जलाते पाये जाते हैं तो उस परिवार के मुखिया के विरूद्ध दण्डात्मक कार्यवाही की जाये। श्रम विभाग को पृथक से निर्देशित किया जाये।
9. लोकल लीडर, सामाजिक कार्यकर्ता, धार्मिक नेताओं का पूर्ण सहयोग प्राप्त किया जाये, जिससे अवैध रूप से ई–वेस्ट को जलाने वालों को किसी तरह का उन्हें सहयोग प्राप्त न हो और वह अवैध रूप से कार्य करना बन्द कर दें।
10. मुख्य सचिव उ0 प्र0 भासन द्वारा उत्तर प्रदेश में ई–वेस्ट के अवैध रुप से हथालन और प्रबंधन को रोकने के सम्बन्ध में निर्देश शासनादेश संख्या–3714/55–पर्या0/2013 दिनांक–10.09.2013 को जारी किये गये हैं, जिनका पालन किया जाये।

ई–वेस्ट का सुरक्षित उपचार एवं निस्तारण की विधियां

ई–वेस्ट का सुरक्षित उपचार एवं निस्तारण मुख्यतः 5 प्रकार से किया जाता है।

1. सिक्योर्ड लैण्डफिलिंग (सुरक्षित विधि से भूमि में दबाना)
2. इन्सिनेरेशन(भस्मीकरण)
3. रिसाइकिलिंग(पुनः चक्रण)
4. एसिड के द्वारा मेटल की रिकवरी
5. री–यूज (पुनः उपयोग)

1. सिक्योर्ड लैण्डफिलिंग(सुरक्षित विधि से भूमि में दबाना)

❖ ई–वेस्ट को समतल जमीन में गड्ढों का निर्माण कर उसमें ई–वेस्ट को डालकर मिटटी से दबा दिया जाता है।

- ❖ परन्तु ई–वेस्ट के सुरक्षित निस्तारण हेतु गड्ढों को प्लास्टिक (एचडीपीई) की मोटी शीट से लाईनिंग करके सतह को सुरक्षित रखते हुए दबाया जाना चाहिये।

2. इन्सिनेरेशन (भस्मीकरण)

- ❖ इस प्रक्रिया में ई–वेस्ट को 900 से 1000 डिग्री सेन्टीग्रेट तापमान पर इन्सिनेरेटर के अन्दर पूर्णतः बन्द चैम्बर में जलाया जाता है।
- ❖ जिससे ई–वेस्ट की मात्रा काफी कम हो जाती है तथा उसमें उपस्थित ऑर्गेनिक पदार्थ की विषाक्तता काफी कम हो जाती है।
- ❖ इन्सिनेरेटर में लगी हुई चिमनी से निकलने वाले धुएं एवं गैस को वायु प्रदूषण नियंत्रण व्यवस्था (ए0पी0सी0एस0) के माध्यम से गुजारा जाता है एवं धुएं में उपस्थित विभिन्न प्रकार की धातुओं को रासायनिक क्रिया से पृथक कर लिया जाता है तथा गैसों को उपचारित किया जाता है।

3 रिसाइकिलिंग

- ❖ इलेक्ट्रानिक वेस्ट जैसे मॉनिटर, पिक्चर ट्यूब, लैपटॉप, कीबोर्ड, टेलीफोन, हार्ड ड्राइव, सी0डी0 ड्राइव, फैक्स मशीन, प्रिंटर, सी0पी0यू0, मोडेम केबिल आदि उपकरणों का पुनः चक्रण किया जा सकता है।
- ❖ इस प्रक्रिया में विभिन्न धातुओं एवं प्लास्टिक को तोड़फोड़ कर अलग–अलग करके उसको पुनः उपयोग हेतु संरक्षित कर लिया जाता है।

4. एसिड के द्वारा मेटल की रिकवरी

- ❖ इलेक्ट्रॉनिक वेस्ट से विभिन्न प्रकार के पार्टस जैसे फेरस व नॉन फेरस मेटल एवं प्रिंटेड सर्किट बोर्ड को पृथक–पृथक कर लेते हैं।
- ❖ इसमें से विभिन्न प्रकार के मेटल जैसे लेड, कॉपर, ऐल्युमिनियम, सिल्वर, गोल्ड, प्लेटिनम आदि धातुओं की रिकवरी के लिये सान्द्र एसिड का प्रयोग करके पृथक कर लेते हैं।
- ❖ अवशेष प्लास्टिक वेस्ट को पुनः प्रयोग करने हेतु रिसाइकिल कर लिया जाता है।

5. री–यूज (पुनः उपयोग)

- ❖ पुराने इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों की मरम्मत करके पुनः उपयोग हेतु बनाया जाता है।
- ❖ जैसे कम्प्यूटर, मोबाइल, लैपटाप, इंकजेट कार्टेज, इन्वर्टर, टेलीविजन/एलसीडी, यूपीएस, प्रिंटर आदि उपकरणों को ठीक कर पुनः उपयोग किया जा सकता है।

संदर्भ

1. ई–वेस्ट प्रबन्धन हेतु गाइड लाइन, केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, नई दिल्ली।
2. उ0प्र0 प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, की वेब साइट www.uppcb.com
3. वाथ, एस0 बी0, दत्त, पी0 एस0 एवं चक्रवर्ती, टी0 (2011) ई–वेस्ट सेनारियो इन इण्डिया इट्स मैनेजमेंट एण्ड इम्प्लीकेशन्स, इनवायरनमेंट मॉनीटरिंग एण्ड एसेसमेंट, पृ0 172, 249–262।

पर्यावरण प्रदूषण

महेन्द्र प्रताप सिंह
उप वन संरक्षक, कार्यायल प्रमुख वन संरक्षक,
17, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ–226001, उत्तर प्रदेश, भारत
mahendrapratapsingh_60@yahoo.com

प्राचीन काल में प्रकृति और मानव के बीच भावनात्मक सम्बन्ध था। मानव अत्यन्त कृतज्ञ भाव से प्रकृति के उपहारों को ग्रहण करता था। प्रकृति के किसी भी अवयव को क्षति पहुँचाना पाप समझा जाता था। बढ़ती जनसंख्या एवं भौतिक विकास के फलस्वरूप प्रकृति का असीमित दोहन प्रारम्भ हुआ। भूमि से हमने अपार खनिज सम्पदा, डीजल, पेट्रोल आदि निकाल कर धरती की कोख को उजाड़ दिया। वृक्षों को काट–काट कर मानव समाज ने धरती को नग्न कर दिया। वन्य जीवों के प्राकृतवास वनों के कटने के कारण वन्यजीव बेघर होते गए। असीमित औद्योगीकरण के कारण लगातार जहर उगलती चिमनियों ने वायुमण्डल को विषाक्त एवं निष्प्राण बना दिया। हमारी पावन नदियाँ अब गन्दे नाले का रूप ले चुकी हैं। नदियों का जल विशाक्त होने के कारण उसमें रहने वाली मछलियाँ एवं अन्य जलीय जीव तड़प–तड़प कर मर रहे हैं। बढ़ते ध्वनि प्रदूषण से कानों के परदों पर लगातार घातक प्रभाव पड़ रहा है। लगातार घातक रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग भूमि को उसरीला बनाता जा रहा है। पृथ्वी पर अम्लीय वर्षा का प्रकोप धीरे–धीरे बढ़ता जा रहा है तथा लगातार तापक्रम बढ़ने से पहाड़ों की बर्फ पिघल रही है जिससे पृथ्वी का अस्तित्व संकटग्रस्त होता जा रहा है।

पर्यावरण प्रदूषण आज विभिन्न घातक स्वरूपों में विद्यमान है जो मानव सभ्यता के अस्तित्व को चुनौती दे रहा है। स्थिति यहाँ तक आ गयी है कि सृष्टि का भविष्य संकटग्रस्त है। पर्यावरण प्रदूषण के प्रमुख स्वरूप निम्न प्रकार हैं–

1.वायु प्रदूषण

मानव को प्रकृति प्रदत्त एक निःशुल्क उपहार मिला है और वह है– वायु। यह उपहार सभी जीवों का आधार है। मानव बिना भोजन एवं बिना जल के कुछ समय भले ही व्यतीत कर ले, बिना वायु के वह दस मिनट भी जीवित नहीं रह सकता। यह अत्यन्त चिन्ता का विषय है कि प्रकृति प्रदत्त जीवनदायिनी वायु लगातार जहरीली होती जा रही है। शहरों का असीमित विस्तार, बढ़ता औद्योगीकरण, परिवहन के साधनों में लगातार वृद्धि तथा विलासिता की वस्तुएं (जैसे–एयरकन्डीशनर, रेफ्रिजरेटर आदि) वायु प्रदूषण को लगातार बढ़ावा दे रही हैं।

मानव 24 घण्टे में लगभग 22,000 बार साँस लेता है तथा इसमें प्रयुक्त वायु की मात्रा लगभग 35 गैलन या 16 कि0ग्रा0 है। ऐसी वायु जो हानिकारक अवयवों से मुक्त हो, उसे शुद्ध वायु कहते हैं। वायु के मुख्य संघटकों में नाइट्रोजन, आक्सीजन एवं कार्बन डाई आक्साइड हैं। उक्त के अतिरिक्त वायुमण्डल में थोड़ी मात्रा में आर्गन या नियॉन जैसी विरल गैसें भी पाई जाती हैं। वायुमण्डल में प्रमुख गैसों की सान्द्रता निम्न प्रकार है–

1.	नाइट्रोजन	79.20	प्रतिशत
2.	ऑक्सीजन	20.60	प्रतिशत
3.	कार्बन डाई ऑक्साइड	0.20	प्रतिशत
4.	अन्य	अति सूक्ष्म रूप में	

आधुनिक युग में उद्योगों की चिमनियों, बढ़ते वाहनों एवं अन्य कारणों से वायुमण्डल में अनेक हानिकारक गैसें मिश्रित हो रही हैं जिनमें सल्फर डाई ऑक्साइड, कार्बन मोनो ऑक्साइड, नाइट्रोजन के विभिन्न ऑक्साइड, क्लोरो फ्लोरो कार्बन एवं फार्मेल्डिहाइड मुख्य हैं। इसके अतिरिक्त सड़कों पर चल रहे वाहनों से निकला सीसा(लेड), अधजले हाइड्रोकार्बन और विषैला धुँआ भी वायुमण्डल को लगातार प्रदूषित कर रहे हैं। वायुमण्डलीय वातावरण के इस असन्तुलन को '**वायु प्रदूषण**' कहते हैं।

अत्यधिक वायु प्रदूषण के कारण आसमान अब भूरा दिखाई देता है। विषाक्त वायु को अवशोषित करने वाले वृक्षों के कटान से वायुमण्डल में प्राणवायु ऑक्सीजन की लगातार कमी हो रही है तथा दूषित गैसों का दबाव बढ़ रहा है।

विभिन्न वायु प्रदूषक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। वायुमण्डल में इन विषाक्त गैसों की उपस्थिति के कारण स्मॉग(स्मोक + फॉग) का निर्माण होता है। लन्दन एवं लॉस एंजेल्स में स्मॉग निर्माण से अनेक लोगों की मृत्यु हो चुकी है। हमारे देश में मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल में मिथाइल आइसो सायनाइड गैस से वायु इतनी प्रदूषित हुई जिससे हजारों लोग मौत एवं विकलांगता का शिकार हो गए। प्रदूषित वायु मानव के श्वसन–तन्त्र को कुप्रभावित करती है। विभिन्न गैसों का घातक प्रभाव निम्न प्रकार है–

क्र0 सं0	प्रदूषक	प्रभाव
1.	कार्बन मोनो ऑक्साइड	रक्त के हीमोग्लोबिन से मिलकर विषैला पदार्थ कार्बाक्सीहीमोग्लोबिन बनता है तथा अनेक व्याधियां पैदा करता है।
2.	क्लोरीन	आँख, नाक, गले में जलन, आँखों में सूजन तथा खांसी की बीमारी
3.	धूल कण	एलर्जी, साँस के रोग, रेत की अधिकता से सिलकोसिस नामक रोग
4.	एसबेस्टस कण	एस्बेस्टॉसिस नामक रोग
5.	लेड कण	लेड विषाक्तता तथा कैन्सर।
6.	मैंगनीज कण	निमोनिया व साँस की बीमारी
7.	हाइड्रोजन सल्फाईड	नाक, कान, गले में जलन, लकवा
8.	हाइड्रोजन फ्लोराईड	बच्चों की शारीरिक संरचना में विकृति तथा फलुओरेसिस
9.	हाइड्रोजन के ऑक्साइड	श्वसन क्रिया अवरुद्ध होने से फेफड़ों में धूलकण व कजली का अधिक प्रवेश
10.	फास्जीन	खाँसी, क्षोभ को प्रेरित करती है।
11.	पारे की वाष्प	अत्यन्त विषैला होने की वजह से पारे की विषाक्तता हो जाती है।
12.	नाइट्रोजन डाई ऑक्साइड	जलन, फेफड़ों के रोग तथा दृष्टि की समस्या होती है।
13.	ओजोन	आँख, नाक, गले में जलन, दमे की बीमारी तथा वातावरण में स्मॉग बनाना।
14.	सल्फर डाई ऑक्साइड	सिरदर्द, उल्टी, साँस लेने में तकलीफ तथा मृत्यु दर में वृद्धि।
15.	रेडियोधर्मी कण	मुख्यतः कैन्सर तथा आगे की पीढ़ी में संतानों में विकृति होना तथा आयु भी घटती है।

उक्त के अतिरिक्त प्रदूषित वायुमण्डल के कारण धातु की बनी वस्तुओं में अनेक बार रंगाई करनी पड़ती है। वायु प्रदूषण से ऐतिहासिक धरोहरों को भी क्षति पहुँचती है। ताजमहल का 'पत्थर कैंसर' वायु प्रदूषण का ही परिणाम है। धुँआ तथा धूल के सूक्ष्म कणों के कारण सूर्य का प्रकाश भूमि तक ठीक से नहीं पहुँच पाता जिससे आकाश की निर्मलता घटती है। इससे वायुयानों के चालन में कठिनाई होती है और दुर्घटना की आशंका बनी रहती है।

वायु प्रदूषण से होने वाले असन्तुलन का परिणाम हमें चातुर्दिक दिखाई दे रहा है। इस समस्या के समाधान के लिए भारत सरकार ने इस दिशा में वायु (प्रदूषण, निवारण एवं नियन्त्रण) अधिनियम– 1981 पारित किया। केन्द्र में केन्द्रीय प्रदूषण बोर्ड तथा विभिन्न प्रदेशों में विभिन्न प्रदूषण नियन्त्रण केन्द्रों की स्थापना की गई। जिन उद्योगों द्वारा प्रदूषण बोर्ड के निर्देशों के बावजूद प्रदूषण नियन्त्रण के सम्बन्ध में यथोचित कार्यवाही नहीं की जाती उनके विरुद्ध अभियोजनात्मक कार्यवाही की जाती है।

केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड द्वारा परिवेशीय वायु की गुणवत्ता का मानक बनाया गया है, जो निम्न प्रकार है–

(सांद्रता– माइक्रोग्राम/घन मीटर)

क्र0 सं0	परिक्षेत्र	निलंबित सल्फर डाई आक्साइड	सूक्ष्म	कार्बन मोनो ऑक्साइड	नाइट्रोजन के ऑक्साइ
1	औद्योगिक और मिश्रित वातावरण	120	500	5000	120
2	आवासीय और शहरी	80	200	2000	80
3	संवेदनशील क्षेत्र (ऐतिहासिक इमारतें, पर्यटन स्थल एवं अभयारण्य आदि)	30	100	1000	30

वायु प्रदूषण को रोकने हेतु प्रमुख उपाय निम्न प्रकार हैं–

1. वायु प्रदूषण रोकने में वृक्षों का सबसे बड़ा योगदान है। पौधे वायुमण्डलीय कार्बन डाई ऑक्साइड अवशोषित कर हमें प्राणवायु ऑक्सीजन प्रदान करते हैं। अतः सड़कों, नहर पटरियों तथा रेल लाइन के किनारे तथा उपलब्ध रिक्त भू–भाग पर व्यापक रूप से वृक्ष लगाए जाने चाहिए ताकि हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ–साथ वायुमण्डल भी शुद्ध हो सके। औद्योगिक क्षेत्रों के निकट हरित पट्टियाँ विकसित की जानी चाहिए जिसमें ऐसे वृक्ष लगाए जायें जो चिमनियों के धुएँ से आसानी से नष्ट न हों तथा घातक गैसों को अवशोषित करने की क्षमता रखते हों। पीपल एवं बरगद आदि का रोपण इस दृष्टि से उपयोगी है।
2. औद्योगिक इकाइयों को प्रयास करना चाहिए कि वायुमण्डल में फैलने वाली घातक गैसों की मात्रा निर्धारित मानकों के अनुसार रखें जिसके लिए प्रत्येक उद्योग में वायु शुद्धिकरण यन्त्र अवश्य लगाए जाएं।
3. उद्योगों में चिमनियों की ऊँचाई पर्याप्त होनी चाहिए ताकि आस–पास कम से कम प्रदूषण हो।
4. पेट्रोल कारों में कैटेलिटिक कनवर्टर लगाने से वायु प्रदूषण को बहुत हद तक कम किया जा सकता है। इस प्रकार की कारों में सीसा रहित पेट्रोल का प्रयोग किया जाना चाहिये।
5. घरों में धुआँ रहित ईंधनों को बढ़ावा देना चाहिये।
6. जीवाश्म ईंधनों (पेट्रोलियम, कोयला), जो वायुमण्डल को प्रदूषित करते हैं, का प्रयोग कुछ कम करके सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा जैसी वैकल्पिक ऊर्जाओं का प्रयोग किया जा सकता है।

हमारा वायुमण्डल हमारे स्वास्थ्य को सर्वाधिक प्रभावित करता है, इस तथ्य के विपरीत हमने विभिन्न पर्यावरणीय तन्त्रों को इस सीमा तक परिवर्तित कर दिया है जिसका परोक्ष दुष्परिणाम हमें स्पष्ट दिखाई देता है। इस स्थिति पर ध्यान न देना आत्महत्या सिद्ध होगा। अतः हम सबको मिलकर इस धरती पर प्रलयकारी परिस्थिति पैदा होने की आशंका को टालने के लिये निरंतर संघर्ष करना होगा। वायु प्रदूषण से उत्पन्न समस्याओं को हम भले ही रोक तो नहीं सकते, परन्तु कुछ विशिष्ट सुरक्षा उपायों से कुछ हद तक पर्यावरण संरक्षण, संतुलन व विकास में योगदान कर सकते हैं।

2. जल प्रदूषण

जल में ठोस कार्बनिक, अकार्बनिक पदार्थ, रेडियोएक्टिव तत्व, उद्योगों का कचरा एवं सीवेज से निकला हुआ पानी मिलने से जल प्रदूषित हो जाता है।

जल प्रदूषण के कारण

जल प्रदूषण के मुख्य कारण निम्न प्रकार हैं–

1. उद्योगों से निकलने वाला कचरा–कई धातुयें जैसे–मरकरी, कैडमियम एवं लेड आदि अपने साथ निकालता है।
2. सीवेज का जल मानव तथा पशुओं के मल को अपने साथ ले जाता है जिसमें कई जीवाणु, हानिकारक पदार्थ जैसे यूरिया एवं यूरिक एसिड आदि मिले रहते हैं।
3. बहुत से साबुनों से निकलने वाला पानी भी जल को प्रदूषित करता है।

4. निर्माण कार्य में प्रयुक्त पदार्थ, इमारतों में प्रयोग होने वाले पदार्थ जैसे फास्फोरिक एसिड, कार्बोनिक एसिड, सल्फ्यूरिक एसिड आदि नदी में मिलकर जल प्रदूषण फैलाते हैं।

5. कुछ कीटनाशक पदार्थ जैसे डी0डी0टी0, बी0एच0सी0 आदि के छिड़काव से जल प्रदूषित हो जाता है तथा समुद्री जानवरों एवं मछलियों आदि को हानि पहुँचाता है। अंततः खाद्य श्रृंखला को प्रभावित करते हैं।

6. नाइट्रेट तथा फॉस्फेट लवण ही साधारणतया उर्वरक के रूप में प्रयोग किये जाते हैं। यह लवण वर्षा में मिट्टी के साथ मिलकर जल को प्रदूषित कर देते हैं।

7. कच्चा पेट्रोल, कुओं से निकालते समय समुद्र में मिल जाता है जिससे जल प्रदूषित होता है।

जल प्रदूषण के प्रभाव

1. भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में होने वाली बीमारियों का एक मुख्य कारण प्रदूषित जल है। अतिसार, पेचिश, हैजा एवं टॉयफायड आदि दूषित जल के प्रयोग से ही होते हैं। जल में पाए जाने वाले विभिन्न प्रदूषकों से उत्पन्न होने वाली बीमारियाँ निम्न प्रकार हैं–

क्र0 सं0	प्रदूषक	प्रभाव
1	आर्सेनिक	कैंसर, ब्लैक फुट रोग
2	कैडमियम	उच्च रक्तचाप, रक्तकणिकाओं का क्षय, मिचली, दस्त, हृदय रोग
3	बेरेलियम	कैंसर
4	फ्लोराइड	दाँतों का फ्लोरोसिस रोग, हड्डियों का क्षय
5	सीसा	कैंसर, एनिमिया, उग्र शरीर विष, तन्त्रिका तन्त्र पर कुप्रभाव, गर्भवती महिलाओं में रोग
6	पारा	अत्यधिक विषैला, मस्तिष्क पर कुप्रभाव, केन्द्रीय तन्त्रिका तन्त्र पर कुप्रभाव
7	क्रोमियम	चर्म रोग, खुजली, कैंसर
8	सिलेनियम	बालों का झड़ना, त्वचा सम्बन्धी रोग
9	मल जल (सीवेज)	कुपोषण, पेचिस, आन्त्र रोग
10	कार्बनिक रसायन डिटरजेन्ट आदि	जलीय जीवों पर कुप्रभाव, कृमि रोग, पेट सम्बन्धी रोग
11	नाइट्रेट	मेटहीमोग्लोबेमिया
12	मैंगनीज	श्वाँस रोग, निमोनिया, त्वचा रोग

2. सूक्ष्म–जीव जल में घुले हुये ऑक्सीजन के एक बड़े भाग को अपने उपयोग के लिये अवशोषित कर लेते हैं। जब जल में जैविक द्रव्य बहुत अधिक होते हैं तब जल में ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है। जिसके कारण जल में रहने वाले जीव–जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है।

3. औद्योगिक प्रक्रियाओं से उत्पन्न रासायनिक पदार्थ प्रायः क्लोरीन, अमोनिया, हाइड्रोजन सल्फाइड, जस्ता, सीसा, निकिल एवं पारा आदि विषैले पदार्थों से युक्त होते हैं। यदि यह जल पीने के माध्यम से अथवा इस जल में पलने वाली मछलियों को खाने के माध्यम से शरीर में पहुँच जायें तो गंभीर बीमारियों का कारण बन जाता है जिसमें अन्धापन, शरीर के अंगों को लकवा मार जाना और श्वसन क्रिया आदि का विकार शामिल है। जब यह जल, कपड़ा धोने अथवा नहाने के लिये नियमित प्रयोग में लाया जाता है तो त्वचा रोग उत्पन्न हो जाता है।

4. प्रदूषित जल से खेतों में सिंचाई करने पर प्रदूषक तत्व पौधों में प्रवेश कर जाते हैं। इन पौधों अथवा इनके फलों को खाने से अनेक भयंकर बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

5. आज हजारों जलयान एवं पेट्रोलियम टैंकर समुद्र में चल रहे हैं। ये लाखों टन पेट्रोलियम का विसरण समुद्र की सतह पर करते हैं, जो इनके लीकेज अथवा छोटी–मोटी दुर्घटनाओं से होते हैं। यह तेल मछलियों के लिए विष है और समुद्री पर्यावरण के लिए अभिशाप है। इस तेल की कुछ हानिकारक धातुएँ जैसे– सीसा, निकिल अथवा कोबाल्ट आदि वनस्पतियों अथवा जीवों के माध्यम से मनुष्य तक पहुँच जाती हैं।

मनुष्य द्वारा पृथ्वी का कूड़ा–कचरा समुद्र में डाला जा रहा है। नदियाँ भी अपना प्रदूषित जल समुद्र में मिलाकर उसे लगातार प्रदूषित कर रही हैं। वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि यदि भू–मध्य सागर में कूड़ा–कचरा डालना बन्द न किया गया तो डालफिन और टूना जैसी सुन्दर मछलियों का यह सागर शीघ्र ही इनका कब्रगाह बन जाएगा।

जल प्रदूषण रोकने के उपाय

1. अत्यधिक रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग को रोका जाना चाहिए तथा उसके स्थान पर गोबर की खाद का प्रयोग किया जाना चाहिए।
2. रासायनिक साबुनों के बढ़ते प्रयोग को कम किया जाना चाहिए।
3. उद्योगों के कचरे को नदियों में मिलाने से पूर्व उसमें उपस्थित कार्बनिक तथा अकार्बनिक पदार्थों को नष्ट कर देना चाहिए।
4. रेडियो एक्टिव पदार्थ, अस्पतालों एवं रासायनिक प्रयोगशालाओं के कूड़े को जल में मिलाने के स्थान पर उसे जमीन में गाड़ना चाहिए।

जल संकट की ओर विश्व जनमत का ध्यान आकृष्ट करने हेतु प्रति वर्ष 22 मार्च को विश्व जल दिवस मनाया जाता है।

3. ध्वनि प्रदूषण

अनियंत्रित, अत्यधिक तीव्र एवं असहनीय ध्वनि को ध्वनि प्रदूषण कहते हैं। ध्वनि प्रदूषण की तीव्रता को '**डेसिबल इकाई**' में मापा जाता है। शून्य डेसिबल, ध्वनि की तीव्रता का वह स्तर है जहाँ से ध्वनि सुनाई देने लगती है। खुसफुसाहट में बोलने पर ध्वनि की तीव्रता 30 डेसिबल होती है। वैज्ञानिकों के अनुसार 40 से 50 डेसिबिल तक की ध्वनि मनुष्य के सहने लायक होती है। उससे अधिक की तीव्रता की ध्वनि मनुष्य के लिये हानिकारक होती है। मानव के परिप्रेक्ष्य में ध्वनि का स्तर निम्न प्रकार है–

क्र0 सं0	क्रिया	ध्वनि का स्तर(डेसिबल में)
1.	सामान्य श्रवण की सीमा	20
2.	सामान्य वार्तालाप	50.60
3.	सुनने की क्षमता में गिरावट	75
4.	चिड़चिड़ाहट	80
5.	मांस–पेशियों में उत्तेजना	90
6.	दर्द की सीमा	120

ध्वनि प्रदूषण का कारण

1. औद्योगिक क्षेत्रों में उच्च ध्वनि क्षमता के पावर सायरन, हॉर्न तथा मशीनों के द्वारा होने वाले शोर।
2. शहरों एवं गाँवों में किसी भी त्योहार व उत्सव में, राजनैतिक दलों के चुनाव प्रचार व रैली में लाउडस्पीकरों का अनियंत्रित इस्तेमाल/प्रयोग।
3. अनियंत्रित वाहनों के विस्तार के कारण उनके इंजन एवं हॉर्न के कारण।
4. जनरेटरों एवं डीजल पम्पों आदि से ध्वनि प्रदूषण।

ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव

पर्यावरण प्रदूषण के अन्य स्वरूपों के साथ ध्वनि प्रदूषण भी हमारे लिये बड़े खतरे का कारण है। अधिक शोर से हमारे मस्तिष्क पर घातक प्रभाव पड़ता है तथा सुनने की शक्ति लगातार घटती जाती है जिससे धीरे–धीरे बहरापन आ जाता है। ध्वनि प्रदूषण से हृदय गति बढ़ जाती है जिससे रक्तचाप, सिरदर्द एवं अनिद्रा जैसे अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। नवजात शिशुओं के स्वास्थ्य पर ध्वनि प्रदूषण का बुरा प्रभाव पड़ता है तथा इससे

कई प्रकार की शारीरिक विकृतियां उत्पन्न हो जाती हैं। गैस्ट्रिक, अल्सर और दमा जैसे शारीरिक रोगों तथा थकान एवं चिड़चिड़ापन जैसे मनोविकारों का कारण भी ध्वनि प्रदूषण ही है।

ध्वनि प्रदूषण का नियंत्रण

1. यथासंभव लाउडस्पीकरों का प्रयोग प्रतिबन्धित कर देना चाहिये। जब तक अत्यन्त आवश्यक न हो इनके प्रयोग की अनुमति नहीं देनी चाहिये। लाउडस्पीकरों का प्रयोग चिकित्सालयों एवं शिक्षण संस्थानों आदि से 500 मी0 से अधिक दूरी पर ही किया जाना चाहिये।
2. घरों में रेडियो, टेप, टेलीविज़न का प्रयोग कम आवाज में करना चाहिये।
3. वाहनों के हार्न का प्रयोग कम से कम करना चाहिये।
4. वाहनों के सायलेंसरों एवं इंजन की देखभाल समय से करनी चाहिये।
5. हवाई जहाजों एवं जेट विमानों को निर्धारित ऊँचाई पर ही उड़ना चाहिये।
6. पटाखों का प्रयोग कम से कम करना चाहिये।
7. सड़कों के किनारे वृक्ष लगाकर ध्वनि प्रदूषण को कम किया जा सकता है।
8. ध्वनि प्रदूषण से बचाव के साधन जैसे–ईयर प्लग, ईयर पफ आदि का प्रयोग करके ध्वनि प्रदूषण को कम किया जा सकता है।
9. रेलगाड़ी से उत्पन्न शोर को बैलास्ट विहीन रेल पथों के निर्माण द्वारा दूर किया जा सकता है।
10. ध्वनि प्रदूषण से ग्रसित सड़कों एवं मकानों को ध्वनि निरोधी बनाना चाहिये।

4. मृदा–प्रदूषण

वर्षा से भूमि की संरचना का बिगड़ना, दिन–प्रतिदिन उर्वरकों का प्रयोग, चूहे मारने की दवा आदि का प्रयोग तथा फसलों को बीमारी से बचाने के लिये दवा का छिड़काव भूमि की उर्वरकता को नष्ट कर देता है तथा ऐसा प्रदूषण मृदा प्रदूषण कहलाता है।

मृदा प्रदूषण का कारण

1. सल्फर डाई ऑक्साईड एवं नाईट्रोजन डाई ऑक्साइड वर्षा से क्रिया करके अम्ल बनाती हैं जिसे अम्लीय वर्षा कहते हैं। अम्लीय वर्षा भूमि की उर्वरकता को नष्ट करती है।
2. कई उर्वरक जैसे–अमोनियम सल्फेट, यूरिया, कैल्शियम सायनामाइड, अमोनियम नाईट्रेट एवं कैल्शियम सुपर फॉस्फेट आदि का लगातार प्रयोग मृदा की उर्वरकता को नष्ट करता है।
3. सब्जी, फलों तथा फूलों पर लगने वाले कीड़ों को मारने के लिये किया जाने वाला रासायनिक छिड़काव मृदा को प्रदूषित करता है।

मृदा प्रदूषण का प्रभाव

मृदा प्रदूषण से भूमि की उत्पादकता घटती है तथा उसमें कोई भी फसल एवं पेड़–पौधे आदि नहीं तैयार हो पाते हैं। धीरे–धीरे भूमि उसरीली हो जाती है। नग्न भूमि मृदाक्षरण को बढ़ावा देती है जिससे बाढ़ की विकराल समस्या आती है।

मृदा प्रदूषण का नियंत्रण

1. कृषि कार्य में रासायनिक खादों के स्थान पर गोबर, घास, कूड़े आदि से निर्मित कम्पोस्ट खाद एवं हरी खाद का प्रयोग करने से मृदा प्रदूषण को रोकने में सहायता मिलती है।
2. एक खेत में एक ही फसल उगाने के स्थान पर अलग–अलग फसल को उगाने से मृदा प्रदूषण को रोकने में सहायत मिलती है।
3. वृक्षारोपण मृदा प्रदूषण को रोकने का एक प्रभावी उपाय है।

5. ओजोन परत में छेद

पृथ्वी के वायुमण्डल की विभिन्न परतें निम्न प्रकार हैं–

क्र0 सं0	ऊँचाई	परत	तापमान
1.	0 से 11 किलोमीटर	ट्रोपोस्फेयर	15 से .56 डिग्री सेन्टीग्रेड
2.	11 से 50 किलोमीटर	स्ट्रेटोस्फेयर	.56 से .02 डिग्री सेन्टीग्रेड
3.	50 से 85 किलोमीटर	मेजोस्फेयर	.02 से 92 डिग्री सेन्टीग्रेड
4.	85 से 500 किलोमीटर	थर्मोस्फेयर	92 से 1200 डिग्री सेन्टीग्रेड

हमारे वायुमण्डल के भीतर ओजोन स्ट्रेटोस्फेयर स्तर में 11 से 35 किलो मीटर उँचाई तक घने आवरण के रूप में (प्रति क्यूबिक सेन्टीमीटर हवा में 3,000 बिलियन अणु) पाई जाती है। कम सान्द्रण में यह गैस 10 से 15 किलोमीटर एवं 30 से 50 किलोमीटर उँचाई तक पाई जाती है। ओजोन गैस ऑक्सीजन के तीन परमाणुओं से मिलकर बनती है एवं इसका अणुसूत्र O_3 है।

ओजोन की यह परत सूर्य से आने वाली घातक पराबैगनी किरणों को अवशोषित एवं परावर्तित कर पृथ्वी की रक्षा करती है। इसी आवरण को ओजोन सुरक्षा कवच कहते हैं। यहाँ पर ओजोन का निर्माण ऑक्सीजन पर पराबैगनी किरणों के प्रभाव से होता है। पराबैगनी किरणों के ट्रोपोस्फेयर में पहुंचने से प्रमुख घातक प्रभाव निम्नानुसार हैं–

1 मनुष्य की प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास होता है जिससे रोगों से लड़ने की क्षमता कम हो जाती है।
2 आनुवांशिक गुणों के वाहक डी0एन0ए0 की क्षति होती है।
3 त्वचा कैंसर एवं मोतियाबिन्द जैसे रोग बढ़ते हैं।
4 पौधों मे होने वाली प्रकाश सश्लेषण की क्रिया पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।
5 फसल उत्पादन में कमी आती है।
6 समुद्री जीवों को हानि पहुँचती है।
7 अनेक पेड़–पौधों व जीवों की प्रजातियाँ धीरे–धीरे लुप्त हो जाती हैं।

ओजोन परत के बावजूद लगभग एक प्रतिशत पराबैगनी किरणें धरती पर आती हैं। यदि ओजोन परत न होती तो धरती पर जीवन न होता। वायुमण्डल में बढ़ते प्रदूषण के कारण ऑक्सीजन एवं ओजोन का सन्तुलन बिगड़ रहा है। ओजोन परत को हानि पहुँचाने वाली प्रमुख गैसें निम्न हैं–

1 क्लारोफ्लोरो कार्बन
2 क्लोरो ब्रोमो कार्बन
3 कार्बन टेट्रा क्लोराइड
4 मेथिल क्लोरोफार्म हैलोजन

प्रयोगों द्वारा यह सत्यापित है कि C.F.C. का एक अणु स्ट्रेटोस्फेयर में एक लाख ओजोन अणुओं को नष्ट कर सकता है। ओजोन की सबसे कमी वाला क्षेत्र अण्टार्कटिका है। अण्टार्कटिका एवं दक्षिणी ध्रुव पर पाया जाने वाला ओजोन छिद्र किसी क्षेत्र विशेष को नहीं बल्कि पूरे विश्व को प्रभावित करता है। ओजोन परत की क्षति के भयंकर कुपरिणाम हैं। अनुमान है कि ओजोन परत में एक प्रतिशत की क्षति से हुए पराबैगनी विकिरण की वृद्धि से एक वर्ष में स्किन कैंसर के मरीजों में 6 प्रतिशत की वृद्धि होती है। ओजोन परत को हानि पहुँचाने वाले पदार्थों का प्रयोग मुख्यतः रेफ्रिजरेटर, एयर कन्डीशनर, प्लास्टिक फोम, स्प्रे के द्रवों, अग्निशमन एवं इलेक्ट्रॉनिक के साल्वेंट क्लीनर के रूप में हो रहा है। क्लोरोफ्लोरो कार्बन निम्न सतह पर बहुत स्थिर होते हैं। जैसे– ये स्ट्रेटोस्फेयर में ओजोन परत तक पहुँचते हैं, पराबैगनी किरणों से क्रिया करके हैलोजन बनाते हैं। ये मुक्त मूलक ओजोन का तीव्र क्षरण करते हैं।

लुप्त हो रही ओजोन परत की रक्षा हेतु प्रभावी कदम उठाने के लिए 2 मई 1989 में विश्व के 80 राष्ट्रों ने अपनी सहमति दी थी। 1990 में एक अन्तर्राष्ट्रीय बैठक में तय हुआ कि विकसित देश 2000 तक 'क्लारो फ्लोरो कार्बन' का उत्पादन पूर्णतः बन्द कर देंगे। विकासशील देशों को इस

लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु 10 वर्ष की छूट दी गई। ओजोन परत में छिद्र के व्यास की बढ़त को देखते हुए शीघ्रातिशीघ्र सम्पूर्ण विश्व में सी0एफ0सी0 के उत्पादन पर रोक लगाना आवश्यक हो गया है। माण्ट्रियल प्रोटोकॉल दिनांक 16 सितम्बर 1987 को लागू हुआ ओजोन परत में बढ़ते छिद्र की ओर विश्व जनमत का ध्यान आकृष्ट करने के लिए प्रतिवर्ष **16 सितम्बर** को '**अन्तर्राष्ट्रीय ओजोन परत संरक्षण दिवस**' मनाया जाता है। इन प्रयासों से अब ओजोन छिद्र के आकार में निरन्तर कमी देखी जा रही है।

6. रेडियो एक्टिव प्रदूषण

नाभिकीय परमाणु परीक्षणों के फलस्वरूप कई रेडियो एक्टिव तत्व जैसे–यूरेनियम, थोरियम, प्लूटोनियम तथा रेडियो एक्टिव किरणें जैसे– एल्फा, बीटा व गामा किरणें वातावरण में प्रवेश करके रेडियो धर्मी प्रदूषण उत्पन्न करते हैं।

रेडियो एक्टिव प्रदूषण का कारण

नाभिकीय भट्टियाँ तथा युद्ध में प्रयोग हो रहे नाभिकीय बम तथा अन्य सामग्री तथा नाभिकीय परीक्षण आदि रेडियोधर्मी प्रदूषण को बढ़ावा देते हैं। इन सब के द्वारा हानिकारक रेडियोएक्टिव तत्व, किरणें आदि निकलकर वातावरण में प्रवेश कर वायु, जल तथा मृदा को हानि पहुँचाती हैं।

रेडियो एक्टिव प्रदूषण का प्रभाव

1. रेडियोएक्टिव पदार्थ वातावरण में इतनी अधिक मात्रा में उर्जा उत्सर्जित करते हैं कि इससे पौधों की कोशिकाएं तथा जानवरों एवं मनुष्यों की कोशिकाएं भी नष्ट हो जाती हैं।
2. रेडियो धर्मी प्रदूषण के आस पास रहने से ट्यूमर हो जाता है तथा समय से पूर्व ही गाल सफेद हो जाते हैं।
3. नाभिकीय विस्फोट से नदियों तथा समुद्र का जल प्रदूषित हो जाता है जिससे समुद्री जीव जन्तु नष्ट हो जाते हैं।
4. रेडियोएक्टिव तत्व स्ट्रान्शियम मृदा को नष्ट कर देता है।
5. गामा रेडियो एक्टिव किरणें अत्यधिक खतरनाक होती हैं। अत्यधिक भेदन क्षमता होने के कारण इनसे उत्सर्जित उर्जा से जीवित कोशिकाएं आदि नष्ट हो जाती हैं।
6. नाभिकीय रिएक्टरों में यू–235 ईंधन के रूप में प्रयोग किया जाता है। इस नाभिकीय विखंडन से अत्यधिक उर्जा अवमुक्त होती है जो मनुष्य एवं पेड़ पौधों के लिए हानिकारक होती है।

रेडियो एक्टिव प्रदूषण का निदान– परमाणु एवं नाभिकीय परीक्षणों को सीमित करना।

7. जलवायु परिवर्तन

पृथ्वी के उद्भव से लेकर आज तक इसमें निरन्तर परिवर्तन हो रहा है। इसकी गति कभी तीव्र होती है तो कभी मन्द। पर्यावरण के प्रमुख भौगोलिक घटक जैसे– ताप, वायुदाब, आर्द्रता, वायु वेग, वर्षा आदि जलवायु का निर्माण करते हैं।

विगत वर्षों में जनसंख्या वृद्धि, औद्योगीकरण, वन विनाश, स्वचालित वाहनों में वृद्धि तथा रासायनिक कीटनाशकों के प्रयोग से पर्यावरण को क्षति पहुँची है तथा जलवायु के विभिन्न तत्वों जैसे– ताप, वायुदाब, आर्द्रता, वायु वेग, वर्षा आदि में व्यापक परिवर्तन हुआ है। इन परिवर्तनों के कारण मानव अस्तित्व खतरे में है। जलवायु परिवर्तन के मुख्य कारण निम्न प्रकार हैं–

प्राकृतिक कारण– मृदा क्षरण, बाढ़, तूफान, चक्रवात, भूस्खलन, ज्वालामुखी, दावाग्नि, सूखा, आँधी, तड़ित एवं भूकम्प आदि।

मानवीय कारण– जनसंख्या वृद्धि, औद्योगीकरण, वन विनाश, यातायात के साधन, अनियोजित नगरीकरण, संसाधनों का असीमित विदोहन आदि।

जलवायु परिवर्तन के मुख्य प्रभाव निम्न प्रकार हैं–

1. ग्रीन हाउस प्रभाव तथा वैश्विक ताप में वृद्धि, 2. अम्लीय वर्षा, 3. ओजोन परत का क्षरण, 4. नाभिकीय दुर्घटनाएं, 5. प्रचण्ड अग्निकाण्ड, 6. भू–स्खलन, 7. मरुस्थलीकरण, 8. मृदाक्षरण, 9. पर्यावरण प्रदूषण, 10. बाढ़, 11. अकाल, 12. भूकम्प, 13. तूफान।

8. वैश्विक ताप वृद्धि

सामान्य परिस्थितियों में पृथ्वी का ताप इससे टकराने वाले सूर्य विकिरणों तथा अंतरिक्ष में वापस लौट जाने वाली किरणों द्वारा नियन्त्रित होता है। जब वायुमण्डल में कार्बन डाई आक्साइड की सान्द्रता बढ़ जाती है तो इस गैस की मोटी परत किरणों को परावर्तित होने से रोकती है। यह मोटी ग्रीन हाउस की कांच की दीवार तथा कार की खिड़की के कांच की भांति होती है। यह दोनों ही गर्मी को बाहर विकिरित होने से रोकती हैं। इसे **'ग्रीन हाउस प्रभाव'** कहते हैं। यही क्रिया प्रकृति में भी होती है। यहाँ कार्बन डाई ऑक्साइड, हाइड्रोजन, ओजोन, जलवाष्प, मीथेन, नाइट्रोजन ऑक्साइड तथा क्लोरोफ्लोरोकार्बन गैसें एक मोटी परत पृथ्वी के वातावरण में बना लेती हैं जो गलास हाउस के कांच की भांति ही कार्य करती है अर्थात् सूर्य उष्मा जो भीतर आती है पूरी की पूरी वापस नहीं जाने पाती जिससे विश्व स्तर पर वातावरण की निचली परत में वायु का ताप बढ़ जाता है। बढ़ी हुई कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा को समुद्रों द्वारा अवशोषित किया जा सकता है परन्तु औद्योगीकरण तथा उर्जा के अत्यधिक उपयोग से समुद्री अवशोषण क्षमता की तुलना में वायु मण्डल में अधिक कार्बन डाई ऑक्साइड उत्सर्जित हो रही है। इस प्रकार वायुमण्डल में कार्बन डाई ऑक्साइड की सान्द्रता निरन्तर बढ़ रही है। कार्बन डाई ऑक्साइड पृथ्वी के ताप में 50 प्रतिशत एवं क्लोरोफ्लोरोकार्बन में 20 प्रतिशत तक की वृद्धि करती है।

कुछ अन्य गैसें जैसे सल्फर डाई ऑक्साइड, नाइट्रोजन के ऑक्साइड तथा क्लोरोफ्लोरो कार्बन भी ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करते हैं। विशेषज्ञों के अनुसार 2050 में पृथ्वी का ताप 1 से 5 डिग्री तक बढ़ जाएगा। ताप बढ़ने से ध्रुवों पर अधिक प्रभाव पड़ेगा। ग्रीनलैंड, आइसलैंड, नार्वे, साइबेरिया एवं अलास्का इससे सर्वाधिक प्रभावित होंगे। ध्रुवीय बर्फ पिघल जायेगी। 5 डिग्री ताप वृद्धि से समुद्र स्तर में 5 मीटर की वृद्धि होगी जो सेनफ्रांसिस्को एवं शंघाई जैसे उच्च जनसंख्या वाले तटीय शहरों पर प्रभाव डालेगा।

वैश्विक तापवृद्धि से उत्पन्न प्रमुख समस्याएं निम्न प्रकार हैं–

1. जैविक विविधता में तेजी से कमी आएगी तथा महत्वपूर्ण प्राकृतिक स्रोतों का ह्रास होगा।
2. 1 डिग्री तापवृद्धि अक्षांश के 100 किमी परिवर्तन के बराबर होगा।
3. बढ़े हुए ताप से विश्व के अनेक भागों में तीव्र तूफान आएंगे। उन क्षेत्रों में भी तूफान आ सकते हैं जहाँ पहले कभी ऐसा नहीं होता था।
4. ताप बढ़ने से वर्षा एवं मानसून के स्वरूप में परिवर्तन होगा। कहीं पर सूखा होगा तथा कहीं अत्यधिक वर्षा होगी। इससे मृदा क्षरण बढ़ेगा।
5. पर्वत शिखरों एवं ग्लेशियरों की बर्फ पिघलने से समुद्र का स्तर बढ़ेगा।
6. ताप वृद्धि से समुद्र गर्म होगा जिससे बांग्लादेश, भारत, मिश्र, इण्डोनेशिया आदि में बाढ़ आ सकती है।
7. वैश्विक ताप वृद्धि से समुद्री पारिस्थिकी तन्त्र अत्यधिक बिगड़ जाएगा।
8. तटीय शहरों की बाढ़ वहाँ संक्रामक रोग फैला सकती है।

वैश्विक ताप वृद्धि को नियन्त्रित करने के उपाय

1. उर्जा उत्पादन व उपयोग में सुधार करना।
2. कार्बनिक ईंधन का प्रयोग कम करके उसके स्थान पर हाइड्रोजन ईंधन का प्रयोग किया जाय।
3. कार्बन मुक्त उर्जा स्रोत जैसे सूर्य, वायु एवं नाभिकीय उर्जा का विकास किया जाय।
4. वन क्षेत्रों को कटने से रोकना एवं वनावरण में वृद्धि का प्रयास करना।

9. अम्लीय वर्षा

वायुमण्डल में विद्यमान कार्बन डाई ऑक्साइड गैस पानी में घुलकर कार्बोनिक अम्ल बनाती है। वर्षा के जल में कार्बोनिक अम्ल मिले होने के कारण वर्षा के जल का पी–एच सामान्य से कुछ कम (लगभग 6.5) होता है। घातक गैसें जैसे सल्फर डाई ऑक्साइड, सल्फर ट्राई ऑक्साइड तथा

नाइट्रोजन ऑक्साइड आदि, जो वायु प्रदूषण के कारण वायुमण्डल में विद्यमान रहती हैं, वर्षा जल को अवशोषित कर उसका पी–एच और कम कर देती हैं। यही अम्लीय वर्षा कहलाती है। भारत के कुछ प्रमुख महानगरों में वर्षा का पी–एच निम्न प्रकार पाया गया–

1. कोलकाता–5.8, 2. चेन्नई–5.85, 3. दिल्ली–6.21, 4. मुंबई–4.8।

प्रमुख गैसें जो अम्लीय वर्षा हेतु उत्तरदायी हैं, निम्न प्रकार हैं–

1.सल्फर डाई ऑक्साइड– यह पानी के साथ घुलकर सल्फ्यूरिक अम्ल बनाती है।
2.सल्फर ट्राई ऑक्साइड– यह पानी के साथ घुलकर सल्फ्यूरस अम्ल बनाती है।
3.हाइड्रोजन सल्फाइड– यह वायुमण्डल में हाड्रोजन मूलकों के साथ सल्फर डाइ आक्साइड बनाती है।
4.नाइट्रोजन के ऑक्साइड– यह प्रकाश आक्सीकरण द्वारा नाइट्रस एवं नाइट्रिक अम्ल बनाती है।
5.कार्बन डाई ऑक्साइड– यह पानी के साथ घुलकर कार्बोनिक अम्ल बनाती है।

अम्लीय वर्षा के प्रमुख स्रोत

सल्फर डाइ ऑक्साइड कोयले के जलने, विद्युत शक्ति संयन्त्रों एवं पेट्रोलियम शोधन से सल्फर डाई ऑक्साइड गैस निकलती है। इसी के साथ कुछ मात्रा में सल्फर ट्राइ ऑक्साइड भी निकलती है। प्राकृतिक स्रोतों में ज्वालामुखी प्रमुख है। हाइड्रोजन सल्फाइड गैस प्राकृतिक रूप से सल्फर को अपचयित करने वाले जीवाणुओं से प्राप्त होती है तथा दलदली भूमि से निकलती रहती है। यह गैस जीवाश्म ईंधनों के आंशिक रूप से जलने एवं अनेक उद्योगों में द्वितीयक उत्पाद के रूप में प्रकट होती है। नाइट्रोजन की विभिन्न ऑक्साइड गैसें अनेक जीवाश्म ईंधनों के ज्वलन तथा विस्फोटक उद्योगों से निकलकर वायुमण्डल में मिल जाती हैं।

आजकल होने वाली 60 से 70 प्रतिशत अम्लीय वर्षा सल्फर के विभिन्न ऑक्साइड से होती है। 30 से 40 प्रतिशत अम्लीय वर्षा नाइट्रोजन के ऑक्साइड एवं अन्य कारणें से होती है।

अम्लीय वर्षा के कुप्रभाव

अम्लीय वर्षा के अत्यन्त घातक परिणाम होते हैं जिनमें प्रमुख निम्न प्रकार हैं–

1. यह जल, स्थल, वायु, वनस्पतियों, जीव जन्तुओं एवं इमारतों सभी को क्षति पहुँचाती है।

2. झीलों, तालाबों नदियों आदि का जल अत्यधिक अम्लीय हो जाता है जिसे अम्ल सदमा कहते है। इससे पानी में रहने वाले जीव प्रभावित होते हैं।
3. झीलों, तालाबों आदि से पानी रिस कर भू–गर्भ में स्थित विभिन्न धातुओं जैसे तांबा, एल्युमिनियम, कैडमियम आदि से क्रिया करके विभिन्न जहरीले यौगिक बनाता है जो प्राणियों को प्रभावित करते हैं।
4. अम्लीय वर्षा से त्वचा रोग तथा एलर्जी होती है।
5. अम्लीय जल जब घरों में जस्ता, सीसा या तांबे के पाइपों से गुजरता है तो इस जल में धातुओं की अधिकता हो जाती है जिससे अतिसार व पेचिश जैसे रोगों की सम्भावना बढ़ती है।
6. इससे दमा तथा कैंसर का भय होता है।
7. इससे मृदा की उर्वरता में कमी आती है।
8. इससे पौधों की वृद्धि में कमी आती है।
9. पौधों की पत्तियों में उपस्थित पर्णहरित का विघटन हो जाता है जिससे पत्तियों का रंग परिवर्तित हो जाता है।
10. पौधों की पत्तियां, पुष्प एवं फल असमय झड़ जाते हैं।
11. प्राचीन इमारतों का क्षरण होता है जिसे **'स्टोन कैन्सर'** कहते हैं।

आगरा से 40 किमी दूर मथुरा का तेल शोधक कारखाना है जो प्रतिदिन 25 से 30 टन सल्फर डाइ ऑक्साइड गैस वायुमण्डल को देता है। इसी कारण आगरा के वायुमण्डल में सल्फर डाइ ऑक्साइड की मात्रा 1.75 माइक्रोग्राम प्रति घन मीटर है। इसके कारण ताजमहल पर कहीं–कहीं संक्षारक धब्बे दिखाई देते हैं।

अम्लीय वर्षा से स्वीडन की बीस हजार झीलों की मछलियां मर गईं। जर्मनी के जंगलों को अम्लीय वर्षा से अपार क्षति पहुँची है। अम्लीय वर्षा को नियन्त्रित करने के लिये सल्फर एवं नाइट्रोजन के ऑक्साइडों के प्रयोग में कमी लाना आवश्यक है।

10. **पालीथीन प्रदूषण**

प्राथमिक रूप से प्लास्टिक थैलों, प्लास्टिक फिल्म व बोतल आदि जैसे वाहकों में प्रयुक्त होने वाली पॉलीथीन सर्वप्रथम संयोगवश संश्लेषित हुई। वर्ष 1898 में जर्मन रसायनशास्त्री हास वॉन पेचमान द्वारा डाइ एजोमीथेन को गर्म करते समय पॉलीएथीलीन या पॉलीथीन सर्वप्रथम संयोगवश संश्लेषित हुई। सर्वाधिक प्रयोग होने वाली प्लास्टिक उनके सहयोगियों यूजेन बामबर्गर व फ्रेडिक शीरनर ने इस वेत पदार्थ जो - CH_2 - की लम्बी श्रृंखला धारित करती है, को पॉलीमेथीलीन नाम दिया। पॉलीएथीलीन या पॉलीथीन का वैज्ञानिक(आईयू0पी0ए0सी0) नाम पॉली ईथीन या पॉलीमेथीलीन है। इसका वार्षिक वैश्विक उत्पादन लगभग 8 करोड़ टन है। विभिन्न प्रकार के ज्ञात पॉलीएथीलीन का रासायनिक सूत्र ¼C_2H_4½$_n$$H_2$ है। इस प्रकार सामान्यतया पॉलीएथीलीन समान कार्बनिक यौगिकों का मिश्रण है जो n के मान के साथ परिवर्तित होता है। उद्योगों में व्यावहारिक रूप से प्रयुक्त होने वाली संश्लेषित पॉलीएथीलीन का अविष्कार वर्ष 1933 में एरिक फॉसेट व रेनाल्ड गिडसन ने संयोगवश किया था।

पॉलीथीन के भौतिक गुण– सामान्य रूप से व्यापारिक कार्यों में प्रयुक्त होने वाले मध्यम व उच्च घनत्व वाले पॉलीथीन 120° सेंटीग्रेड से 180° सेंटीग्रेड तापमान के मध्य पिघलता है। अतः प्रयुक्त होने के उपरान्त जहाँ फेंका जाता है– वहीं अत्यन्त लम्बे समय तक बने रहकर सामान्य क्रियाकलाप बाधित करता है।

रासायनिक गुण– अधिकांश एलडीपीई (लो डेंसिटी पॉलीथीन, मिडिल डेंसिटी पॉलीथीन एवं हाई डेंसिटी पॉलीथीन) अत्यन्त उत्कृष्ट कोटि के रासायनिक प्रतिरोधक होते हैं, अर्थात् तीव्र अम्लीय या तीव्र क्षारीय पदार्थ से अभिक्रिया नही करते हैं। पॉलीथीन, नीली ज्वाला देते हुए धीरे–धीरे जलता है। जलने पर पॉलीथीन से पैराफीन की गन्ध आती है। लगातार जलाने पर ज्वाला समाप्त होने पर बूंद के रूप में हो जाता है। कमरे के तापमान पर क्रिस्टल नहीं घुलते हैं। सामान्यतया टॉलूईन या जाईलीन जैसे ऐरोमेटिक हाइड्रोकार्बन एवं ट्राई क्लोरोइथेन या ट्राई क्लोरोबेंजीन जैसे क्लोरीनेट विलायक में पॉलीथीन उच्च तापमान पर घुलता है।

कम मूल्य, सहज रूप से सुलभ होने व अत्यन्त उपयोगी होने के कारण पॉलीथीन का प्रयोग अत्यन्त तेजी से बढ़ रहा है। कागज के थैलों, कुल्हड़ों, कागज की प्लेटों का चलन पॉलीथीन का बढ़ते प्रयोग के कारण समाप्त होता जा रहा है। आसानी से उपलब्ध होने के कारण सामान क्रय करने जाते समय कपड़े का थैला ले जाने की प्रवृत्ति समाप्त होती जा रही है। पॉलीथीन की बढ़ती लोकप्रियता व प्रयोग के कारण समाज व पर्यावरण के समक्ष नई समस्याएं व चुनौतियाँ उत्पन्न हो रही हैं, इसका मुख्य कारण पॉलीथीन का अपघटन न होना है। पॉलीथीन के अपघटन न होने से शहरों, गाँवों व यहाँ तक कि दुर्गम वन क्षेत्रों में भी प्रयोग के पश्चात् फेंके गये पॉलीथीन का ढेर बहुत लम्बे समय तक पड़ा रहता है। इस कारण उत्पन्न होने वाली समस्याएं एक दृष्टि में–

पॉलीथीन थैली के प्रयोग से होने वाली हानि–

1. प्लास्टिक थैले में मुख्यतः जाइलीन, एथीलीन ऑक्साइड एवं बेंजीन का प्रयोग होता है। यह सभी टॉक्सिक रसायन हैं जो मानव स्वास्थ्य के लिये घातक हैं।
2. भूमि पर प्लास्टिक इकट्ठा होने पर वह लम्बे समय तक गलती नही है। प्लास्टिक से भरे स्थान पर पौधे नहीं उगते हैं तथा यह भूमि की उर्वरा शक्ति को धीरे–धीरे समाप्त करती है।
3. प्लास्टिक के थैले में फेंकी हुई खाद्य सामग्री को खाकर गाय, बन्दर एवं अन्य जीव तड़प–तड़प कर मर जाते हैं। नदियों या समुद्र के किनारे फेंकी गई पॉलीथीन थैली को खाकर मछलियां, डॉल्फिन, कछुए एवं अन्य समुद्री जीव मर जाते हैं।

4. पॉलीथीन थैली या प्लास्टिक को जलाने पर जहरीली गैस निकलती है, जो वायुमण्डल के लिये हानिकारक है।
5. पॉलीथीन या प्लास्टिक भूमि, जल एवं वायु तीनों के लिये अभिशाप है। धरती पर इसके गलने में 400 वर्ष से भी अधिक का समय लगता है।

पॉलीथीन या प्लास्टिक का प्रयोग रोकने या कम करने की दिशा में मात्र राजकीय प्रयास पर्याप्त नहीं है। पॉलीथीन/प्लास्टिक का प्रयोग कम करने की दिशा में हम निम्न प्रकार से सहयोग कर सकते हैं–

1. पॉलीथीन के थैले का प्रयोग न करें। सब्जी लेने या अन्य किसी कार्य के लिये बाजार जाते समय कपड़े का थैला लेकर जाएं।
2. प्लास्टिक के कप में चाय बिलकुल न ग्रहण करें। यह स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त खतरनाक है। इसके स्थान पर मिट्टी के कुल्हड़ या गिलास आदि का प्रयोग करें।
3. पॉलीथीन के थैले में भरकर कूड़ा या खाद्य पदार्थ कदापि इधर–उधर न फेंके। यदि अपरिहार्य परिस्थिति वश पॉलीथीन या प्लास्टिक फेंकना आवश्यक हो तो ऐसे स्थान पर फेंके, जहाँ से रिसाइकिल हेतु उसे एकत्रित किया जा सके।
4. जहाँ अत्यन्त आवश्यक न हो, पानी हेतु प्लास्टिक की बोतल का प्रयोग न करें।
5. विवाह समारोह व अन्य पर्वों पर प्लास्टिक की प्लेट तथा कप के स्थान पर पत्तल, दोना तथा मिट्टी के कुल्हड़ के प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाये।
6. जहाँ अत्यन्त आवश्यक हो, प्लास्टिक के विकल्प के रूप बॉयोडेग्रेडेबल पदार्थों से बने बैग, कप आदि का प्रयोग किया जाय, जो मिट्टी में आसानी से गल जाते हैं।

संदर्भ

1. सिंह, केदार नाथ(2002) 21वीं सदी की वानिकी, वितरक–नटराज पब्लिशर्स।
2. श्रीवास्तव, मनोज (2010) पर्यावरण प्रदूषण के खतरे, ग्लोबल ग्रीन्स, इलाहाबाद।
3. चौधरी, बी0 एल0 एवं प्रसाद, जीतेन्द्र (2013) पर्यावरण अध्ययन, एस0 एफ0 पब्लिकेशन्स हाउस, दरियागंज, नई दिल्ली।
4. जोसेफ, बेनी (2005) इनवायरनमेंटल स्टडीज, टाटा मैक्ग्रॉ हिल।

फ्रैक्टल ज्यामिति-एक संक्षिप्त टिप्पणी

मोहम्मद साजिद
कॉलेज ऑफ इंजीनियरिंग, कस्सीम विश्वविद्यालय
बूरैदा, अलकस्सीम, सऊदी अरबिया
msajid@qec.edu.sa, msajidiit@yahoo.com

हम यूक्लीडियन ज्यामिति के बारे में पढ़ते आये हैं लेकिन पिछली शताब्दी (20वीं सदी) के अंत में एक नई ज्यामिति का विकास हुआ। जिसे फ्रैक्टल ज्यामिति कहा जाता है। इस ज्यामिति में बनी आकृति को फ्रैक्टल्स कहते हैं। फ्रैक्टल्स बनाने की कई विधियाँ हैं इनमें से एक विधि इस प्रकार है। किसी आकृति का कोई हिस्सा अलग करें तो वह भी अपनी मूल आकृति के समान होता है। विभिन्न फ्रैक्टल्स निम्नलिखित कुछ उदाहरणों में समझाये गये हैं।

उदाहरण–1

सबसे पहले एक रेखा को लेकर उसके तीन भाग कीजिए। उसके बाद बीच वाले भाग की जगह पर उसी भाग के बराबर कुछ कोण पर दो रेखाएं निरुपित कीजिए जिससे एक नई आकृति मिलती है। यही प्रक्रिया फिर बार–बार प्रत्येक भाग पर दोहराने पर, हमको एक अद्भुत आकृति मिलती है, जिसको **कोच वक्र** (फ्रैक्टल, चित्र–1) कहते हैं।

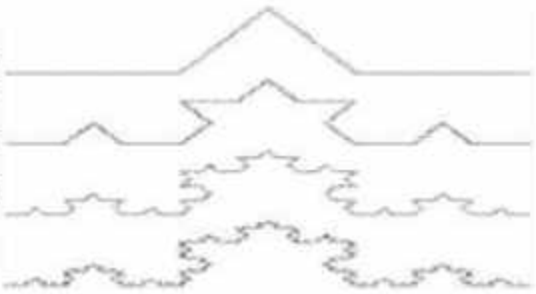

चित्र–1– कोच वक्र(फ्रैक्टल)

उदाहरण–2

सबसे पहले एक त्रिभुज लेकर उसकी प्रत्येक भुजा के मध्य बिन्दु को उसकी सामने वाली भुजा से मिलाने पर एक नई आकृति प्राप्त होती है। जिसमें छोटे त्रिभुज समान आकार के होते हैं। यही प्रक्रिया फिर बार–बार छोटे–छोटे त्रिभुजों पर दोहराने पर, हमको जो आकृति प्राप्त होती है उसे **कोसीरपिनस्कि त्रिभुज**(फ्रैक्टल, चित्र–2) कहते हैं।

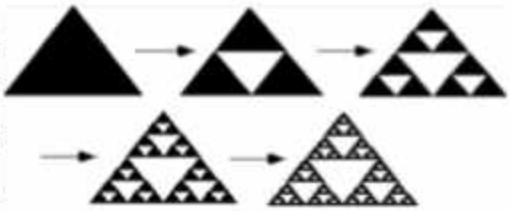

चित्र–2– कोसीरपिनस्कि त्रिभुज(फ्रैक्टल)

उदाहरण–3

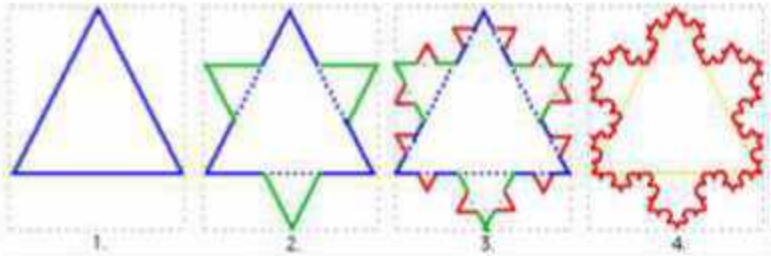

चित्र–3– स्नोफ्लेक वक्र

सबसे पहले एक त्रिभुज लेकर उसकी प्रत्येक भुजा के तीन भाग कीजिए। उसके बाद बीच वाले भाग की जगह पर उसी भाग के बराबर कुछ कोण पर दो रेखाएं निरुपित कीजिए जिससे एक नयी आकृति प्राप्त होती है। यही प्रक्रिया पुनः बार–बार दोहराने पर, जो आकृति प्राप्त होती है उसे **स्नोफ्लेक वक्र** (फ्रैक्टल, चित्र–3) कहते हैं।

उदाहरण–3 की इस आकृति से जो फ्रैक्टल प्राप्त होता है इसका सबसे पहले उपयोग शेयर बाजार के उतार–चढ़ाव और इंग्लैंड के समुद्री किनारे की नाप में किया गया। तभी से फ्रैक्टल ज्यामिति की बुनियाद पड़ी । इन उदाहरणों से हमें गणित की खूबसूरती का पता चलता है। फ्रैक्टल को हाथ से बनाना बहुत कठिन होता है क्योंकि हाथ से प्रक्रिया को दोहराने में बहुत अधिक समय लगता है। परन्तु कम्प्यूटर का प्रयोग करके फ्रैक्टल को आसानी से बनाया जा सकता है।

संदर्भ

1. मंडलबरौट, बिनोएट बी0(1982) "द फ्रैक्टल ज्योमैट्री ऑफ नेचर", फ्रीमैन, सैनफ्रांसिस्को।
2. पेटजिन, एच0 ओ0 एवं रिक्टर, पी0 एच0 (1986) "द ब्यूटी ऑफ फ्रैक्टल्स", स्प्रिंगर।
3. पेटजिन, एच0 ओ0; सोप, डी0 एवं जर्जिन्स, एच0 (1992) "कयोस तथा फ्रैक्टल्स", न्यूफ्रंटियर्स ऑफ साइंस, स्प्रिंगर।
4. दीवानी, क्योटे एवं फौसटर (1999) "फ्रैक्टल्स–ए टोलकिट ऑफ डायनामिक्स एक्टिविटीज", की करीकुलम प्रेस।
5. फालकोनर, किन्निथ (2014) "फ्रैक्टल ज्योमैट्री–मैथेमैटिकल फाउंडेशन एण्ड एप्लीकेशन्स", वाइली, तृतीय संस्करण।

लिलियमः लाहुल घाटी का व्यवसायिक पुष्प

मस्त राम धीमान, राम सिंह सुमन, राज कुमार, चन्द्र प्रकाश एवं महेश गुलेरिया
भारतीय कृषि अनुसन्धान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, कटराईं,
कुल्लू घाटी–175129, हि0प्र0, भारत
mrarjun01@yahoo.co.in



फूलों का संबंध मानव के साथ आदिकाल से रहा है। फूल सौंदर्य, प्रेम, अनुराग की सघन अभिव्यक्ति एवं प्रकृति का सुन्दरतम रूप है। फूल का स्मरण आते ही हमारी कोमल भावनाएं प्रफुल्लित हो जाती हैं। मनुष्य चाहे कितने भी दुख या तनाव में क्यों न हो, फूलों की चमक, खुशबू व ताजगी मन को स्वतः ही मोह लेती है। इन्हें श्रृंगार, धार्मिक अनुष्ठानों, त्योहारों व प्रतिदिन के उत्सवों में प्रयोग किया जाता है, वर्तमान में फूलों की खेती आर्थिक रूप में लाभकारी व्यवसाय के रूप में विकसित हो गई है। फूलों की व्यवसायिक खेती को मुख्यतः तीन उद्देश्यों के लिए किया जाता है। पहली प्रकार की खेती में उत्पादक का उद्देश्य फूलों की खुदरा बिक्री के लिए धार्मिक कार्यों अथवा श्रृंगार के रुप में प्रयुक्त होने वाले गजरा, माला इत्यादि के लिए आपूर्ति करना है जिसमें बेला, गेंदा, गुलाब, तथा चमेली इत्यादि की खेती सम्मिलित है। दूसरी श्रेणी के फूलों की खेती गुलदस्ते, बटनहोल, कर्तित फूलों इत्यादि के लिए की जाती है जिसमें लिलियम, ग्लेडियोलस, कारनेशन, गुलाब, जरबेरा व गुलदाउदी इत्यादि उगाये जाते हैं। तीसरे प्रकार की खेती सुगंधित फूलों से इत्र तथा अन्य प्रकार के उत्पाद तैयार करने के लिए की जाती है जिनका प्रयोग खाद्य और प्रसाधन सामग्री के निर्माण में किया जाता है। इसमें गुलाब, खस, चमेली, लैवेन्डर तथा जिरेनियम आदि प्रमुख है।

हिमालय की गोद में बसा हिमाचल प्रदेश प्रकृति द्वारा वर–प्रदत्त उन पर्वतीय राज्यों में से एक है जहाँ की जलवायु फूलों की व्यवसायिक खेती के लिए सर्वथा उत्तम है। इसी कारण प्रदेश के किसान/बागवान फूलों की खेती में अधिक रुचि लेने लगे हैं, जिसके परिणाम स्वरुप पुष्प व्यवसाय के अंतर्गत क्षेत्रफल निरन्तर बढता जा रहा है। वर्ष 1990 में फूलों के अन्तर्गत केवल 5 हैक्टेयर क्षेत्र था जो वर्ष 2012–13 में बढ़कर 910.0 हैक्टेयर हो गया है। फूलों के व्यवसाय से किसानों को लगभग 28.0 करोड रुपए की आमदनी प्रतिवर्ष हो रही है। हिमाचल प्रदेश में ग्लेडियोलस 143.60, कारनेशन 39.72, लिलियम 20.0, गेंदा 263.15, गुलाब 12.42, गुलदाउदी 82.75, मौसमी पुष्प 30.0, बीजीय पुष्प 1.00, गमलों में लगने वाले पुष्पीय पौधे 5.80 व अन्य 18.00 हैक्टेयर भूमि पर उगाये जा रहे हैं। हिमाचल प्रदेश को मुख्यतः चार कृषि जलवायु क्षेत्रों में विभाजित किया जा सकता है, जो निम्नलिखित हैं :–

1. निम्न पर्वतीय उष्ण कटिबंधिय क्षेत्र (240 से 1000 मीटर)
2. मध्य पर्वतीय आर्द्रता क्षेत्र (1000 से 1500 मीटर)
3. उच्च सम शीतोष्ण एवं नम क्षेत्र (1500 से 3250 मीटर)
4. उच्च सम शीतोष्ण शुष्क क्षेत्र (3250 से 4250 मीटर)

हिमाचल प्रदेश की लाहुल घाटी उच्च सम शीतोष्ण शुष्क कृषि जलवायु क्षेत्र में आती है। समुद्रतल से इसकी अधिक उंचाई; 3340 मीटर), गर्मियों में अधिकतम (26.8 डिग्री सें) व न्यूनतम (1.38 डिग्री सें0) तापमान तथा सर्दियों में अधिकतम तापमान (6.1 डिग्री सें0) व न्यूनतम तापमान(–19.28 डिग्री सें0), कम आर्द्रता(30–40:), अधिक हिमपात, कम वर्षा और तेज बर्फीली हवाऐं इस क्षेत्र की प्रमुख समस्याऐं हैं। जिसके कारण इस क्षेत्र में पेड़ पौधों की कमी है। नवम्बर से अप्रैल तक प्रतिवर्ष यहाँ भीषण ठंड पड़ती है और सड़क

मार्ग अवरूद्ध रहता है। किन्तु इस क्षेत्र में किए गये शोध से लिलियम की व्यावसायिक खेती व उत्पादन की व्यापक संभावनाएं सामने आई है जिससे इस क्षेत्र में लोग फूल की खेती में काफी रूचि ले रहे हैं।

लिलियम अपनी विशिष्टताओं के कारण लोकप्रिय होता जा रहा है। आसानी से उगाये जाने, लम्बे समय तक सुरक्षित रखने तथा आकार, सुगन्ध एवं रंगों में विविधताएं इसके प्रमुख गुण है। मैदानी क्षेत्रों में जाड़े के महीनों में लिलियम प्रमुख आकर्षक पुष्प होता है किन्तु गर्मी व बरसात के महीनों में मैदानी क्षेत्रों में लिलियम ही नहीं बल्कि सभी फूलों की कमी हो जाती है क्योंकि अधिक गर्मी व वर्षा के कारण इसे मैदानी क्षेत्रों में सफलतापूर्वक नही उगाया जा सकता है तथा हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के पर्वतीय क्षेत्रों से आने वाले उत्पाद मध्य जुलाई के पहले ही समाप्त हो जाते हैं। अतः मध्य जुलाई से अक्टूबर अंत तक बाजार में फूलों की कमी होती है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केन्द्र, कटराईं द्वारा किऐ गये अनुसंधान कार्य से पता चला है कि लाहुल घाटी में लिलियम की खेती व इसके बल्ब उत्पादन की व्यापक संभावनाएं हैं क्योंकि यहाँ उत्पादित लिलियम के पुष्प अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा अधिक आकर्षक एवं उच्च कोटि के होते हैं। साथ ही इनकी उपलब्धता मध्य जुलाई से अक्टूबर अंत तक की जा सकती है, जिससे इस समय में बाजार की मांग को पूरा करने के साथ–2 अधिक आय भी प्राप्त की जा सकती है।

व्यवसायिक प्रजातियां: पुष्प आकार के आधार पर लिलियम की प्रजाति को मुख्यतः तीन भागों में बांटा गया है:

(क) एसियाटिक हाइब्रिडः– अलास्का (सफेद), एमस्टरडम (नारंगी लाल), इलाइट (नारंगी), ग्रैन्ड पैराडिसों (नारंगी लाल), स्टारगेटर (पीला), जेसिका (सुर्ख नारंगी), क्विकस (नारंगी), लंदन (पीला), पोलियाना (पीला), पैसाडिना (सुर्ख पीला), येलो जायन्ट (पीला), कनेक्टीकट किंग (पीला), रोमा (सफेद), मोटीरोजा (गुलाबी), ब्रुनेलरो (संतरी), नवोना (सफेद) इत्यादि।

(ख) ओरियन्टल हाइब्रिडः– एवरेस्ट (सफेद), मोनोलिसा (गुलाबी सफेद), स्टार–गेजर (गुलाबी), एकापुलको (गुलाबी), टिवर (सफेद), सान्स–सॉसी (गुलाबी सफेद), रूवाटो (गुलाबी), रियालटो (गुलाबी), साईवेरिया (सफेद), सोरबोनी (हल्का गुलाबी), मदरच्वाईस (सफेद) इत्यादि।

(ग) लौन्गीफलोरम–एसियाटिक हाइब्रिडः– बेस्ट–सेलर, केव–डेजल, इरकोलिनो, फेगियों, समुर, कैलिफोरनिया, क्लब–हाउस, केट्री–स्टार, सलिस्टा, पाविया, आईलाइनर, ब्राईट डाईमन्ड इत्यादि।



स्थान का चुनाव

लिलियम को आंशिक रूप से छायादार, कोहरा रहित स्थानों पर उगाया जाना चाहिए। जलभराव की संभावना और वायु के तेज झोंकों वाले स्थान लिलियम की खेती के लिए उपयुक्त नहीं होते हैं। खुले में 50–75 प्रतिशत वाली छायादार जाली लगाकर प्रकाश की तीव्रता को कम किया जा सकता है।

मृदा व खेत की तैयारी

लिलियम की खेती के लिए अच्छी उर्वरक शक्ति वाली बलुई दोमट मिटटी जिसका पी0एच0 मान 5.5 से 7.0 हो और क्यारियों में पानी निकासी की ठीक व्यवस्था हो, इसके लिए उपयुक्त होती है और इसमें पत्थर आदि नहीं होने चाहिए। खेत की कम से कम 15.20 से0मी0 गहरी दो तीन जुताई करने के बाद मिटटी को कुछ दिनों के लिए खुला छोड़ देते हैं, साथ ही मृदा तैयार करते समय खेत में सड़ी गोबर की खाद 5–8 कि0ग्रा0 प्रति वर्गमीटर के हिसाब से जुताई के समय डाल कर अच्छी तरह से मिला देते हैं। बीमारी तथा अन्य अवांछित जीवों को मृदा से दूर रखने के लिए कन्द लगाने से 15 दिन पहले 2 प्रतिशत फोरमेलिन घोल द्वारा उपचारित कर देना लाभदायक होता है।

बसंतीकरण की आवश्यकता

लिलियम के कन्दों को लगाने से पहले कम से कम 6 से 8 सप्ताह तक 2 से 4 डिग्री सें तापमान की आवश्यकता होती है जिससे कन्द जल्दी अंकुरित होते हैं तथा पौधे में जल्दी फूल आते हैं। बसंतीकरण की आवश्यकता को कन्दों के अंकुरित होने के बाद लम्बे दीप्तिकाल (18 घंन्टे या 8 घंन्टे जमा 4 घन्टे रात में 10 बजे से 2 बजे तक) देने से भी पूरा किया जा सकता है। बसंतीकरण की आवश्यकता को जिबेरेलिन (500 पी0पी0एम0) जैसे वृद्धि कारक घोल में 48 घण्टों तक रखने से भी पूरा किया जा सकता है।

तापमान

अच्छी गुणवत्ता के फूल प्राप्त करने के लिए रात का तापमान 10–15 डिग्री सें0ग्रे0 तथा दिन का तापमान 20–25 डिग्री सें0ग्रे0 बहुत ही उपयुक्त है। उच्च तापमान से डण्डी की लम्बाई कम हो जाती है तथा प्रति डण्डी कलियाँ कम रह जाती हैं। शीत गृह व ग्रीन हाउस में ताजी हवा बहुत ही आवश्यक है। शीत गृह में कार्बन डाइऑक्साइड 200–300 पी0पी0एम0 व आर्द्रता 75 प्रतिशत फूल की गुणवत्ता के लिए उपयुक्त है।

प्रकाश

लिलियम में उच्च कोटि के पुष्प प्राप्त करने के लिए प्रकाश की तीव्रता, प्रकाश की अवधि से अधिक महत्वपूर्ण होती है। लिलियम की खेती को लगभग 2000 से 3000 फुट कैंडल प्रकाश की आवश्यकता होती है। गर्मियों के दिनों में 50–75 प्रतिशत वाली काली या हरी छायादार जाली लगाकर प्रकाश की तीव्रता को कम किया जा सकता है।

कन्दों का चुनाव

लिलियम की व्यवसायिक खेती के लिए कन्दों का चुनाव अति आवश्यक होता है। कन्दों के आकार पर ही फूलों की गुणवत्ता निर्भर करती है। अगर कन्दों का आकार छोटा हो तो केवल एक या दो ही फूल डन्डी पर लगते हैं और पुष्प डन्डी भी लचीली रह जाती है। कन्द स्वस्थ व बीमारी रहित होने चाहिए। लिलियम की व्यवसायिक खेती के लिए मुख्यतः मध्यम आकार (10–12 सें0मी0 या 12–14 सें0मी0) के कन्दों को लगाना चाहिए। कन्दों को इनकी बसंतीकरण समाप्त हो जाने और उनमें अंकुरण प्रारम्भ होने पर ही लगाना चाहिए। लिलियम साधारणतः कंद लगाने से फूल आने तक में 90–120 दिन का समय लेता है।

कंदों की बुआई

कंदों को मुख्यतः उठी हुई क्यारियों (जमीन की सतह से 15 सें0मी0) उँचाई में बोया जाता है। कन्दों को बोने से पहले बैविस्टीन (0.1 प्रतिशत) के घोल द्वारा 10–15 मिनट तक उपचारित करके छाया में सुखाकर रोपित करना अच्छा रहता है। कंदों को ज्यादा गहरा रोपित नहीं करना चाहिए। ऐसा करने से कन्द अंकुरित होने में ज्यादा समय लेते हैं अतः कंदों को 10–15 सें0मी0 गहराई पर रोपित करना चाहिए तथा एशियाटिक लिलियम में 45–75 कंद/वर्गमीटर व ओरियन्टल लिलियम में 30–40 कंद/वर्गमीटर के हिसाब से बोने चाहिए यह घनत्व कन्दों के आकार पर भी निर्भर करता है। कन्दों की बुआई का समय विभिन्न क्षेत्रों में भिन्न–2 होता है।

क्षेत्र	बुआई का समय
निचले पर्वतीय क्षेत्र (मैदानी क्षेत्र)	अक्तूबर–दिसम्बर
मध्यम पर्वतीय क्षेत्र	फरवरी–अप्रैल
उच्च पर्वतीय क्षेत्र	मई–जून

अन्य देखभाल (खाद व उर्वरक)

कन्दों को लगाते समय भूमि में पर्याप्त नमी का होना अति आवयश्क है। कन्द लगाने के बाद खेत की प्रति सप्ताह 1–2 हल्की सिंचाई करते रहें ताकि भूमि की उपरी 30 सें0मी0 सतह में नमी बनी रहे। पत्तियों या गोबर की गली–सड़ी खाद 5 कि0ग्रा0 प्रति वर्गमीटर के अतिरिक्त रासायनिक उर्वरक 2 कि0ग्रा0 प्रति वर्गमीटर नाइट्रोजन, 2 कि0ग्रा0 प्रति वर्गमीटर फास्फोरस व 2 कि0ग्रा0 प्रति वर्गमीटर

पोटेशियम कन्दों की रोपाई से पहले जमीन में अच्छी तरह से मिला लें। कन्दों की रोपाई के 20–25 दिन बाद 1.0 कि0ग्रा0 कैन प्रति 100 वर्गमीटर की दर से डालें। यदि फिर भी नाइट्रोजन की कमी महसूस हो तो 1.0 कि0ग्रा0 यूरिया खाद प्रति 100 वर्गमीटर के हिसाब से डालनी चाहिए। नाइट्रोजन को कैल्सियम नाईट्रेट की अवस्था में डालना लिलियम के लिए अधिक लाभदायक रहता है। पौधों को सीधा खड़ा रखने के लिए लिलियम के पौधों को सहारे की आवश्यकता होती है। यह काम स्थानीय रूप से उपलब्ध विलो या बांस की डंडियों से या फिर कारनेशन में उपयोग की जाने वाली जाली के द्वारा भी किया जा सकता है। लिलियम को प्रायः सहारे की ज्यादा जरूरत नहीं पड़ती है। इन जालों को उपर या नीचे खिसका कर आवश्यकतानुसार उँचाई पर रखा जा सकता है।

फसल सुरक्षा

लिलियम में कन्द सड़न रोग, राइजोक्टोनिया, पादप जड़ सड़न रोग, बोटराईटिस प्रमुख हैं। डायथेन एम–45 (0.2 प्रतिशत) या बैविस्टीन (0.1 प्रतिशत) घोल के साथ कन्दों को उपचारित करके या पौधों की जडों में सिंचाई करके भी इन रोगों का निवारण किया जा सकता है। तेला, थ्रिप्स व कन्द माईट लिलियम की प्रमुख कीट हैं। इनकी रोकथाम के लिए मेटासिस्टोक्स या रोगर 1 मि0ली0/प्रति लीटर पानी का घोल बना कर छिड़काव करके किया जा सकता है।

फूलों की कटाई व विपणन

पुष्प वृतों को सुबह या शाम के ठण्डे समय में तेज चाकू की सहायता से तब काटते हैं जब प्रथम पुष्प कली अपना रंग बदलने लगे। परन्तु समीपस्थ बाजारों के लिए फूलों को तब काटना चाहिए जब निचली कली खिलने लगे। पुष्प डंडियों को जमीन से 15 सें0मी0 उपर से काटते हैं ताकि मिटटी में कन्दों का विकास ठीक प्रकार से हो सके। फूलों को काटने के बाद तुरन्त ही पानी में डुबोकर किसी छायादार स्थान पर रख देते हैं ताकि ये सीधे सूर्य के प्रकाश के संपर्क मे न आने पायें। पुष्प डंडियों पर नीचे से 10 सें0मी0 लंबाई तक लगी पत्तियों को हटा देते हैं जो कि पैकिजिंग के समय सहायक होता हैं। दूर तक पुष्प विपणन के लिए पुष्प डंडियों को 200 पी0पी0एम0 8–हाइड्रॉक्सी क्विनोलिन सिटरेट और 20 प्रतिशत शर्करा में 24 घण्टे तक उपचारित करने से फूलों को अधिक दिनों तक सुरक्षित रखा जा सकता है। फूलों को 10 या 15 के गुच्छों में बांध कर 35X35X70 घन सें0मी0 गत्ते के डिब्बों में अखबार या सेलोफेन की चादर में लपेट कर तथा 4–6 डिग्री सें0 तापमान तथा 80 प्रतिशत आर्द्रता पर भण्डारण कर और बिक्री के लिए मंडी में भेजें।

कन्दों को निकालना

कंद उस समय परिपक्व होते हैं जब पौधों में पुष्पन समाप्त हो जाता है। और उनकी वृद्धि रूक जाती है। इस समय पर पुरानी पत्तियाँ सूख जाती हैं व कन्द सुसुप्तावस्था को प्राप्त कर लेता है। कटाई के 8–10 दिनों पूर्व सिंचाई बंद कर पत्तियों को जमीन की सतह से काटने के बाद कंदों को खोद कर निकाल लेते हैं। खुदाई करते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि कंद क्षतिग्रस्त न हो। खुदाई के बाद कंदों को साफ कर के छाया में सुखाकर पीटमोस में 2–4 डिग्री सें0 तापमान व 60–70 प्रतिशत आर्द्रता पर शीत भण्डार मे 6–8 सप्ताह के लिए रखते हैं।

आर्थिक लाभः वैज्ञानिक ढंग से खेती करने पर लिलियम से प्रति एकड़ दो से ढ़ाई लाख रूपये तक आमदनी आसानी से ली जा सकती है, जो कि द्वितीय तथा तृतीय वर्ष में 50 प्रतिशत तक बढ़ सकती है।

संदर्भ

1. धीमान, मस्त राम एवं सिंह, शेर (2010) "हिमालयी क्षेत्रों में व्यवसायिक स्तर पर लिलियम की खेती", विज्ञान गरिमा सिंधु, अंक 75, मु0पृ0 52–54।
2. पन्त, सी0 सी0 एवं वर्मा, बी0 एल0(2013) "उतराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों का पुष्प–लिलियम", फल फूल, सितम्बर–अक्टूबर, 2013, मु0पृ0 25–27।

लखनऊ मेट्रो रेल परियोजना–एक भूविज्ञानी आंकलन

एस0 के0 कुलश्रेष्ठ[1] एवं संजय शुक्ल[2]
[1]सेवानिवृत्त प्रोफेसर–भूविज्ञान विभाग
पंजाब विश्वविद्यालय, चंडीगढ़, पंजाब
[2]एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, भूविज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज
स्टेशन रोड, चारबाग, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
drsanjaygeo@gmail.com

महानगरों में आज के समय मेट्रो रेल यातायात का एक सुरक्षित एवं त्वरित साधन बनता जा रहा है। लखनऊ का चहुमुखी विकास लगभग 240 वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैला हुआ है और इसकी जनसंख्या 48 लाख के लगभग पहुँच चुकी है। स्वतंत्रता के बाद जनसंख्या में हुई तीन गुनी बढ़ोतरी एवं नगर के अनियोजत विकास के कारण अवध सांस्कृति के केन्द्र रहे लखनऊ शहर में अंधाधुंध बढ़ते हुए यातायात तंत्र के अनुरूप सड़कों को और अधिक चौड़ा करना असंभव सा हो गया है। इन परिस्थितियों में उत्तर प्रदेश शासन के आवास एवं नगरीय विकास विभाग ने लखनऊ मेट्रो रेल परियोजना का बीड़ा उठाया है। प्रस्तावित मेट्रो रेल (भूमिगत एवं उपरिगामी) की कुल लम्बाई 36 कि0मी0 होगी। उत्तर–दक्षिण कॉरीडोर अमौसी से मुंशी पुलिया तक है। इसकी दूरी 23 कि0मी0 (उपरिगामी–14.87 कि0मी0, रैम्प–1.0 कि0मी0, व भूमिगत–7.2 कि0मी0) है, तथा अनुमानित लागत रू0 7,413 करोड़ है। इसी प्रकार पूर्व–पश्चिम कॉरीडोर चारबाग से वसंत कुन्ज (हरदोई रोड) तक है। इसकी दूरी 11 कि0मी0 (उपरिगामी–4.29 कि0मी0, रैम्प–0.5 कि0मी0, व भूमिगत–6.3 कि0मी0) होगी, तथा अनुमानित लागत रू0 4,879 करोड़ है। इस प्रस्तावित परियोजना के निर्माण में दिल्ली मेट्रो रेल कार्पोरेशन का सहयोग भी लिया जा रहा है। इसका लक्ष्य वर्ष 2014 से करने का रखा गया है।

भू–आकृतिक व्यवस्थापन(जियोमॉर्फिक सेटिंग)

भौगोलिक दृष्टिकोण से लखनऊ क्षेत्र, गंगा–जमुना के मैदानी भाग का हिस्सा है। लखनऊ का धरातलीय भूभाग उच्चावचन एवं भू–आकृति संरचना के अनुसार अधिक ध्यानाकर्षी नहीं है। अधिकांशतः समतल भूभाग की एकाग्रता, नदियों और नालों के समीपवर्ती क्षेत्रों में जल भराव के कारण कुछ भू–ऐतिहासिक द्रोणियों और तालाबों के रूप में दृष्टिगोचर होती है।

लखनऊ जिले के कुल क्षेत्रफल(2,528 वर्ग किमी) को भू–आकृतिक अध्ययन के आधार पर तीन इकाइयों (यूनिटों) में बांटा जा सकता है। यथा–

1. प्राचीन जलोढीय मैदान(टी–2, समुद्र तल से ऊँचाई 110–123 मीटर तक) – इसके अंतर्गत सई एवं बेहेटा नदियों के किनारे के ऊँचे टीलेनुमा धरातलीय भूभाग आते हैं जिन पर किलों का निर्माण किया गया था।
2. गोमती नदी का प्राचीन बाढ़ का जलोढीय मैदानी भाग(टी–1, समुद्र तल से ऊँचाई 105–110 मीटर तक)
3. गोमती नदी का सक्रिय बाढ़ का मैदानी भाग(टी–0, समुद्र तल से ऊँचाई 105 मीटर से कम)

गोमती नदी समुद्र तल से लगभग 95 मीटर की ऊँचाई पर बहती है।

यूनिट संख्या 1 में भू–ऐतिहासिक अपवाह समूह(पेलेओड्रेनेज सिस्टम) के अवशेष दिखते हैं जिनमें प्रमुख हैं अरहर झील, कुरदहा ताल तथा चांद झील, जिनके आसपास कुछ आवासीय बस्तियाँ विकसित हो गई हैं।

यूनिट संख्या 2 का निर्माण अपरदन(एरोजनल) एवं निक्षेपण वेदिकाओं(डिपॉजीशनल टेरेशेज) से हुआ है। जो कृषि की दृष्टि से विशेष उपयोगी है। गोमती नदी के इस पार का आवासीय क्षेत्र 110 मीटर की ऊँचाई तक सीमित है। जो कि अपरदन तल की अधिकतम

ऊँचाई को चिन्हित करता है।(बाढ़ की स्थिति में) गोमती नदी का अधिकतम जलस्तर एच0एफ0एल0 111.65 मीटर है, 1960 की बाढ़ के आधार पर। इस भूभाग में परित्यागित जलीय धाराएं, विसर्जित(meander) कट ऑफ, चाप झील(ऑक्सबो लेक), अवनालिकाएं (Gulleys) तथा उत्खात भूमि(बैड लैंड टोपोग्राफी) आदि विशिष्ट भू–आकृतिक संरचनाएं सम्मिलित हैं।

यूनिट संख्या 3 गोमती नदी का सक्रिय बाढ़ का मैदान(फ्लड प्लेन) है जो कि 105 मीटर से नीचे तक सीमित है और इसका निर्माण गोमती नदी द्वारा लाई गई बालू/मिट्टी से हुआ है।

भू–विज्ञानी व्यवस्था (जियोलॉजिकल सेट अप)

लखनऊ मेट्रो रेल का प्रस्तावित मार्ग सामान्य से लेकर घने बसे आवासीय क्षेत्रों से होकर जायेगा। इस भूभाग की संरचना/निर्माण गंगा के प्राचीन अपवाह समूह के द्वारा लाई गई जलोढीय मिट्टी से लगभग पिछले 0.01 मिलियन वर्षों में निर्मित हुआ है। मेट्रो रेल मार्ग में आने वाले प्राचीन जलोढीय मैदानी भाग(वेदिका टी–2) मुख्यतः बालू, सिल्ट तथा क्ले की कई पर्तों से निर्मित है। जिसमें कंकड़ भी प्रचुरता से मिलते हैं। नवीन जलोढीय भूभाग जिसमें गोमती नदी की जलोढीय वेदिका टी–1 का निर्माण हुआ है, इसमें भूरे रंग के अनाक्सीकृत अभ्रक युक्त बालू, सिल्ट और क्ले(भृत्तिका) की अंतस्तरित परतें मिलती हैं। गोमती नदी के सक्रिय जलोढीय भूभाग या वेदिका टी–0 का संगठन पॉइट बार/चैनल बार बालू स्तरों से तथा ओवर बैंक सिल्ट कणों से हुआ है।

आधारतलीय चट्टानी भाग, ऊपरी सतह से लगभग 630 मीटर से भी अधिक गहराई पर मिलता है। सेंट्रल ग्राउंड वाटर बोर्ड (सी0जी0डब्ल्यू0बी0) की आरम्भिक रिपोर्ट से प्राप्त जानकारी से यह ज्ञात होता है कि अंतर्निहित विभिन्न स्तरों का शैल संगठन में ऊर्ध्व एवं क्षैतिजीय विविधता देखने को मिलती है।

मिट्टी की गुणवत्ता(सॉयल कैरेक्टरिस्टिक्स)

लखनऊ क्षेत्र में पाई जाने वाली मिट्टी को मुख्यतः दो प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है–

1. अवशिष्ट मृदा (रेजिडुअल सॉयल)
2. नदी द्वारा लाई गई मिट्टी (रिवर बोर्न सॉयल)

इस क्षेत्र में अवशिष्ट मिट्टी धरातलीय स्तरों से काफी गहराई में मिलती है। अवशिष्ट मृदा से ऊपर मिलने वाले स्तरों का संगठन अनेकानेक बालू और क्ले पर्तों से हुआ है जो कि गहराई में धीरे–धीरे कठोर होते जाते हैं। मोहनलालगंज, मलिहाबाद और गोसाईगंज संभाग में 4–5 मीटर ऊँचाई के टीले देखे जा सकते हैं। इनका निर्माण नदी द्वारा लाई गई मिट्टी से हुआ है जो अधिकांशतः पूर्ववर्ती नालिकाओं और उपनालिकाओं तक सीमित हैं। भू–रासायनिक अध्ययन से ज्ञात हुआ है कि सई नदी के जल ग्रहण क्षेत्र में पाई जाने वाली मिट्टी नॉन–प्लास्टिक प्रकार की है। जबकि गोमती नदी के जलग्रहण क्षेत्र की मिट्टी नॉन–प्लास्टिक तथा प्लास्टिक दोनों ही प्रकार की मिट्टी है। इस आधार पर यह विशेष ध्यान देने योग्य बात है कि इस प्रकार की मिट्टी सूखने पर अत्याधिक संकुचित या सिकुड़ जाती है।(**चन्द्रा एवं कुमार, 2003**)

शौमिक जल क्षमता (ग्राउंड वाटर पोटैंशियल)

सेंट्रल ग्राउंड वाटर बोर्ड तथा राज्य भूविज्ञान एवं खनन विभाग की रिपोर्टों के आंकड़ों के आधार पर लखनऊ में गोमती नदी के जलग्रहण क्षेत्र में पाँच जलभ त(एक्वीफर्स) तल 636.37 मीटर की गहराई तक मिलते हैं जो कि इस प्रकार हैं–

1. 110 मीटर की गहराई तक
2. 116 मीटर से 174 मीटर तक

3. 150 मीटर से 270 मीटर तक
4. 257 मीटर से 356 मीटर तक
5. 305 मीटर से अधिक गहराई तक

ये सभी जलभृत तल परस्पर क्ले स्तरों से अलग होते हैं। लखनऊ नगर में पीने के पानी के रूप में प्रयुक्त होने वाला जलभृत तल 8 मी0 से 147 मी0 तथा 214 मी0 से 251 मी0 तक परिसरित होते हैं। इन दोनों ही जलभृत तलों में अधिकांशतः सूक्ष्म बालू के कण पाये जाते हैं। कहीं–कहीं पर बजरी या गुटिका म(ग्रेवेल्स) कण भी मिलते हैं। भौमिक जल स्तर में 0.21 मी0 से 18.40 मी0 तक उतार–चढ़ाव देखा जा सकता है। अधिकतम जलस्तर पूर्वी तथा उत्तरी सीमावर्ती क्षेत्रों में देखा गया है। जो कि 1.5 मी0 से 3.8 मी0 तक मिलता है। जलस्तर की निमृताक्रम 0.5 से 1.0 मी0 तक मिलता है। जिसके उदाहरण के रूप में अमीनाबाद, ऐशबाग, महानगर, सरोजनीनगर तथा लखनऊ कैंट के क्षेत्र हैं।(**चंद्रा एवं कुमार, 2003**)

मेट्रो रेल मार्ग का भू–तकनीकी आंकलन

लखनऊ संभाग में धरातल लगभग सपाट है। अमौसी और मुंशी पुलिया के बीच उच्चावचन का अधिकतम अंतर 28–30 मी0 तक है। सामान्य धरातल की ऊँचाई 123 मी0 है तथा गोमती नदी के सक्रिय अधःतल की समुद्र तल से ऊँचाई लगभग 95 मी0 है। लखनऊ नगर का विकास अधिकांशतः उत्तर–पूर्व/दक्षिण–पश्चिम दिशा में हुआ है। इसी कारण से मेट्रो रेल मार्ग बनाने के लिए प्रशासन ने अमौसी से मुंशी पुलिया मार्ग को बनाने के लिए प्राथमिकता दी है। यह मेट्रो रेल मार्ग अमौसी को मुंशी पुलिया से जोड़ेगा, जिसका प्रस्तावित पथ चारबाग रेलवे स्टेशन से होकर निर्धारित किया गया है। जिसकी लम्बाई लगभग 23 किमी है। इस मार्ग को बनाने के लिए गोमती नदी की जलोढीय वेदिकाओं टी–2, टी–1 तथा टी–0 का भूविज्ञानी आंकलन आवश्यक होगा। इन वेदिकाओं में खुदाई करते समय टी–2 जलोढीय वेदिका में आने वाली पूर्ववर्ती नालिकाओं और उपनालिकाओं झील और तालों से रिसने वाला भौमिक जल एक विषम समस्या उत्पन्न करेगा। साथ ही सक्रिय वेदिका में प्रवाहित होने वाला जल एवं टी–1 और टी–2 वेदिकाओं में उपस्थित क्ले(मृदा) के सूखने पर सिकुड़ने की प्रवृत्ति भी खुदाई में अवरोध उत्पन्न कर सकती है।

अमौसी हवाई अड्डा–मुंशी पुलिया मार्ग

इस मार्ग में आने वाले स्थानों में हिन्द नगर कॉलोनी, बाराबिरवा (शारदा नहर के समीप), श्रंगार नगर, आलमबाग, दुर्गापुरी, चारबाग प्रमुख स्थान होंगे। ये सभी स्थान टी–1 जलोढीय वेदिका में सीमित हैं। ट्रांसपोर्टनगर, शहीद स्मारक, नदवात–एस–उलेमां, टी–0 वेदिका के प्रभावित क्षेत्र हैं, तत्पश्चात् विवेकानंद पॉलीक्लीनिक, कपूरथला, आई0 टी0 आई0, अलीगंज, हनुमान मंदिर और अंत में कुर्सी, गोमती नदी के टी–1 जलोढीय वेदिका में आने वाले क्षेत्र हैं। इस मार्ग को निर्मित करने के लिए सम्भवतः शील्ड विधि को अपनाया जायेगा। इस मार्ग में आने वाले प्रमुख ताल यथा अरहर ताल, चांद झील एवं शारदा नहर आदि ऐसे धरातलीय भूभाग है जो कि प्रायः आवासीय विकास के कारण लगभग सूख गये हैं। अतः जल रिसाव के प्रमुख स्त्रोत पूर्ववर्ती नालिकाएं एवं उनन्नालिकाएं ही अवरोधी समस्या बन सकती हैं विशेषकर वर्षाकाल के समय। एक और पथ जो कि एस0जी0पी0जी0आई0 से चारबाग होकर राजाजीपुरम् तक लगभग 9.6 किमी तक का प्रस्तावित है। यह पथ अम्बेडकर विश्वविद्यालय, वी0आई0पी0 रोड, तेली बाग, कुबेर बैंक, रेलवे हॉस्पिटल, चारबाग, मवैया, मोती नगर, मालवीय नगर, ऐवरेडी से होता हुआ तालकटोरा तक ये सभी स्थान गोमती नदी के टी–2 जलोढीय वेदिका में स्थित हैं। इस मार्ग के निर्माण में भी अमौसी–मुंशी पुलिया मार्ग के समान ही भू–आकृतिक संरचनाओं का सामना करना पड़ेगा।

पूर्व–पश्चिम पथ(ई0–डब्ल्यू0 कॉरीडोर) जिसकी अनुमानित लम्बाई 11 किमी है जो कि मूसाबाग, बालागंज, ठाकुरगंज, बड़ा इमामबाड़ा, मेडिकल कॉलेज (ऊँचाई 105 मीटर) तक निर्धारित है। इस मार्ग में आने वाले प्रमुख स्थान रेजीडेंसी, हजरतगंज आदि हैं। ये स्थान भी भू–आकृति संदर्भ में टी–1 तथा टी–2 जलोढीय वेदिकाओं में सीमित हैं। इस मार्ग की खुदाई के समय भौमिक जल का प्रवाह तथा वर्षा जल का रिसाव ही प्रमुख कठिनाई उत्पन्न करेगा।

चारबाग से फैजाबाद रोड (मुंशी पुलिया) मार्ग में आने वाले मुख्य स्थान हुसैनगंज, विधान सभा मार्ग, हजरतगंज, के0डी0 सिंह बाबू स्टेडियम, लखनऊ वि0वि0, महानगर तथा तथा इंदिरा नगर हैं। इस मार्ग की अनुमानित लम्बाई 17 किमी है। यह मार्ग व्यस्ततम एवं घने आवासीय क्षेत्रों से होकर गुजरेगा। ये सभी भूभाग टी–2 प्राचीन जलोढीय वेदिका तथा टी–1 निक्षेपण वेदिका के भाग हैं। इस मार्ग के निर्माण में भी लगभग उसी प्रकार की समस्याएं आयेंगी जिनका वर्णन पूर्व में किया गया है।

उत्तर प्रदेश शासन द्वारा प्रस्तावित मेट्रो रेल मार्ग का निर्माण उत्तर–दक्षिण तथा पूर्व–पश्चिम कॉरीडोर गंगा नदी द्वारा संचित की हुई मिट्टी के भूभाग से होकर बनाये जायेंगे जो टी–2 तथा टी–1 जलोढीय वेदिकाओं से निर्मित भूभाग है तथा कुछ स्थान टी–0 गोमती नदी के सक्रिय वेदिका टी–0 का भाग है। इस प्रकार के धरातलीय क्षेत्रों में भौमिक जल का प्रवाह, वर्षा जल का रिसाव तथा क्ले स्तरों का सूखने पर सिकुड़ जाने का गुण एक बड़ी समस्या का कारण हो सकते हैं। इस प्रकार के भूभागीय क्षेत्रों में सामान्यतः शील्ड विधि से विशिष्ट रूप से अपनाई जाती है। इसके साथ ही टी–2, टी–1 तथा टी–0 वेदिकाओं में पाई जाने वाली मिट्टी का भूविज्ञानी विश्लेषण आवश्यक है। क्योंकि मृदा की गुणवत्ता के अनुरूप ही सावधानी अपनाई जानी चाहिए।

अभिस्वीकृति

इस लेख को समुचित प्रारूप देने में भारतीय भू–सर्वेक्षण निदेशालय द्वारा प्रकाशित विभिन्न निबंधों एवं शोध पत्रों का सहारा लिया गया है, जिनका उल्लेख किया गया है। इसके साथ ही श्री आर0 पी0 एस0 चौहान, डी0डी0जी0 (अवकाश प्राप्त) जी0एस0आई0 से विशेष सहयोग एवं व्यक्तिगत परामर्श के लिए भी लेखक विशेष आभारी हैं।

संदर्भ

चन्द्रा, प्रकाश एवं सुशील कुमार(2000) ए रिपोर्ट ऑफ जियोइनवायरनमेंटल एप्राइजल ऑफ लखनऊ डिस्ट्रिक्ट, यू0पी0–जी0एस0आई0 रिपोर्ट, 1997–1998।

कुमार, सुशील एवं बिसारिया, बी0के0(2008) ए जियोटेक्निकल इवेल्यूएशन ऑफ द प्रपोजल ऑफ लखनऊ मेट्रो रेल प्रोजेक्ट, जर्नल ऑफ इंजी0 जियो0, खण्ड 35, अंक 1–4, मु0पृ0 279–284।

चन्द्रा, प्रकाश एवं सुशील कुमार(2003) क्वाटरनरी रिसोर्सेज ऑफ गोमती बेसिन, लखनऊ डिस्ट्रिक्ट, यू0पी0, इण्डिया, प्रोसीडिंग्स, जियोसैस–4, 2।

टाइम्स ऑफ इण्डिया(लखनऊ संस्करण) "लखनऊ मेट्रो राइट ऑन ट्रैक", फरवरी 22, 2008, न्यू आइटम।

www.lmrcl.com, लखनऊ मेट्रो वेबसाइट।

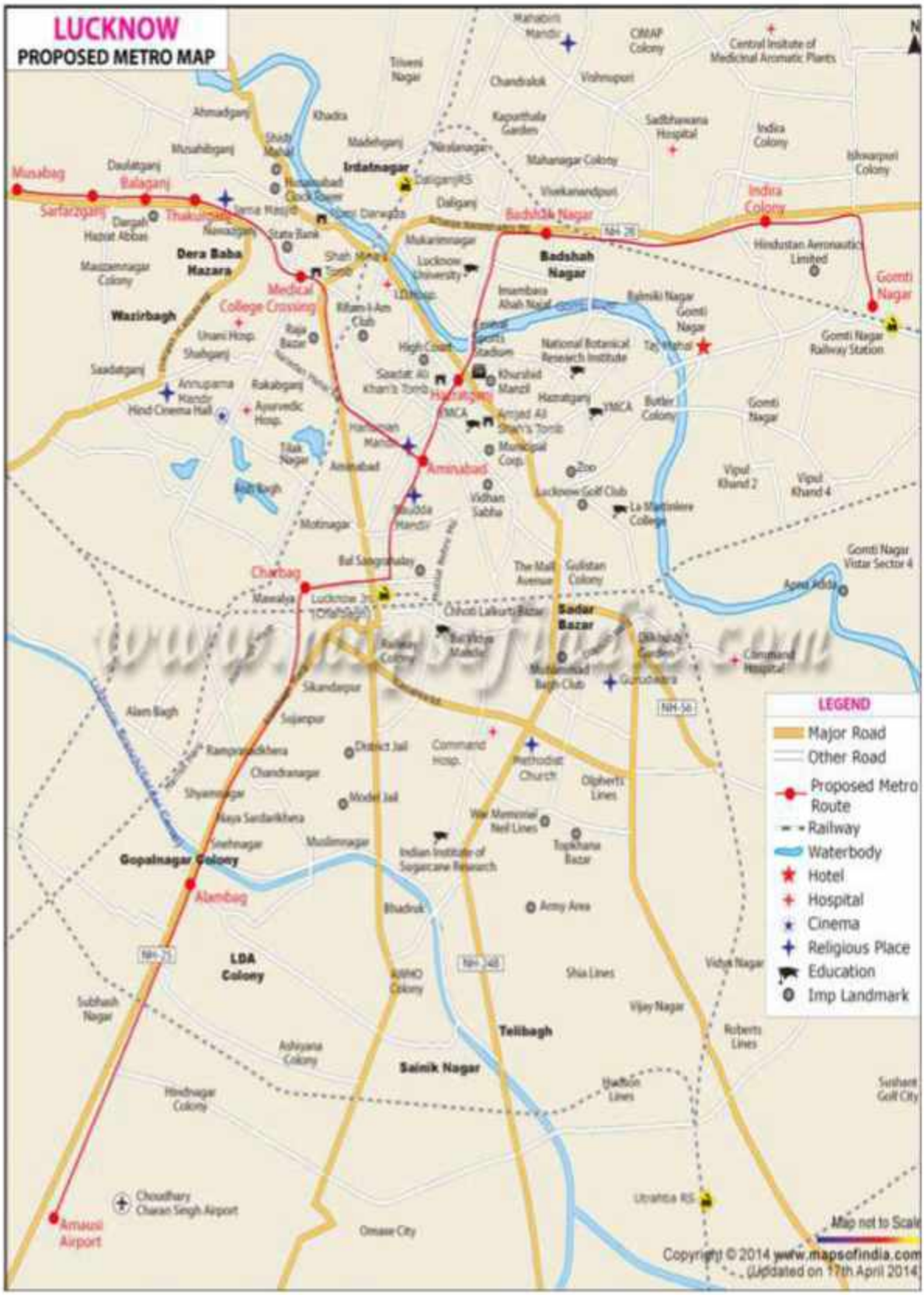

Copyright © 2014 www.mapsofindia.com
(Updated on 17th April 2014)

आधुनिक युग में संख्याओं का अद्वितीय रूप तथा उनका महत्व

प्रीति बाजपेई
प्रोफेसर एवं डीन, स्टूडेंट वेलफेयर
बी0 आई0 टी0 पिलानी परिसर, दुबई, यू0 ए0 ई0
dr.priti.bajpai@gmail.com

संख्याओं की उत्पत्ति और प्रयोग कब और कैसे शुरू हुआ यह कह पाना बहुत कठिन है। यह तो कल्पना ही की जा सकती है कि मनुष्य जब आदिवासी जीवन से उन्नत हो, संपन्न हुआ और उसे अपने मवेशी, धन, संपत्ति, पेड़, पौधे आदि की गणना करने की आवश्यकता महसूस हुई तभी से संख्याओं का जन्म हुआ होगा। इतिहास से हमें ज्ञात होता है कि शुरू के दौर में अंकों का आकार व प्रकार आज उपयोग होने वाले अंकों से बहुत भिन्न था। यह बड़े गर्व का विषय है कि शून्य का आविष्कार भारत में हुआ और इस उत्पत्ति ने संख्याओं की एक नई प्रणाली को जन्म दिया[1]। आज हम जिस प्रणाली का प्रयोग कर रहें हैं वह उसी की देन है। आधुनिक दशमलव अंक प्रणाली की उत्पत्ति का श्रेय भारतीय गणितज्ञ आर्यभट्ट (498 सी0ई0) को जाता है। आर्यभट्ट ने अंकों के लिए संस्कृत शब्दों का प्रयोग किया था। आर्यभट्ट ने लिखा है–"स्थान से स्थान मूल्य दस गुना है"।

अंकों व संख्याओं का मनुष्य के जीवन में जो महत्व है उसे शब्दों में वर्णित नहीं किया जा सकता। अंकों का हमारे जीवन से बड़ा गहरा संबंध है। यदि शून्य का अविष्कार नहीं हुआ होता तो आज कम्प्यूटर भी नहीं होते। अंकों से मनुष्य का लगाव नया नहीं है। हम सभी जानते हैं कि पाइथागोरस व उनके अनुयायी अंकों को भगवान की तरह पूजते थे। अनेक गणितज्ञों ने वर्षों से अंकों के शोध, प्रयोग व उनके असाधारण व्यवहार को समझने एवं उनकी उपासना में अपना जीवन अर्पित कर दिया। कुछ गणितज्ञ सभी शब्दों को एक समान नहीं मानते जैसे– रेने डेसकार्टेस ने कहा है, "परफेक्ट नंबर्स परफेक्ट लोगों की तरह बहुत कम हैं"।

इस लेख में अंकों का वर्तमान युग में किस प्रकार प्रयोग हो रहा है और उनके इस रूप का क्या महत्व है, यह जानने का प्रयास किया गया है। सर्वप्रथम 0 व 1 इन दो अंकों को देखें। 0 और 1 से संख्यात्मक प्रणाली का जन्म हुआ जिसके फलस्वरूप कम्प्यूटर का अविष्कार हुआ। आज हमारा पूरा जीवन कम्प्यूटर पर निर्भर है।

दूसरा महत्वपूर्ण प्रयोग अभाज्य संख्याओं का है, जिन्हें हम प्राइम नंबर के नाम से जानते हैं। कम्प्यूटर से आज हम अपनी दिन–प्रतिदिन की खरीदारी, इंटरनेट पर मेल, सोशल मीडिया जैसे फेसबुक, ट्विटर पर वार्तालाप, बैंक के खाते से पैसे का लेन–देन आदि करते हैं पर यह सब कहाँ तक सुरक्षित है, यह विवादास्पद है। कम्प्यूटर विशेषज्ञ, पासवर्ड को दो बड़ी अभाज्य संख्याओं के गुणक के रूप में जब अभिव्यक्त करते हैं तो वह पूर्ण रूप से सुरक्षित हो जाता है। अगर कोई घुसपैठिया आपके कृत खाते को खोलने की कोशिश भी करे तो यह इतना आसान नहीं है। आज के सबसे तेज रफ्तार से चलने वाले कम्प्यूटर को यह पता लगाने में कि कोई संख्या अभाज्य है कि नहीं, कुछ ही क्षण लगते हैं, पर किसी बड़ी संख्या को खण्डों में व्यक्त करने में बहुत कम समय लगता है। यही कारण है कि पासवर्ड को डिकोड करना इतना आसान नहीं होता है[2]।

बहुत से मुहावरे तो संख्याओं के बिना अधूरे हैं जैसे– "नौ सौ चूहे खाके बिल्ली हज को चली", "एक गुण समस्त दोषों को ढक लेता है", "एक तीर दो निशाने", "सौ सुनार की एक लोहार की", "एक झूठ छिपाने के लिए दस झूठ बोलने पड़ते हैं", और "नौ दो ग्यारह" कुछ उदाहरण हैं।

संख्याओं का एक और बड़ा ही दिलचस्प प्रयोग देखने को मिलता है, और वह है, संख्याओं का वाक्यों के स्थान पर प्रयोग किया जाना। कुछ तो हमारे रोजमर्रा की भाषा में इतने घुल–मिल गये हैं कि उन्होंने अपनी जगह हमारे शब्दकोश में बना ली है। जैसे नंबर 1 वह है जो सर्वश्रेष्ठ है और जो पूरी तरह परिपूर्ण है, वह नंबर 10 है, पर कुछ संख्याएं आम नहीं है। नीचे दी गई अलग–अलग देशों में प्रचलित शब्दों का संग्रह है। यह सूची संख्याओं के किसी क्रमांक में नहीं दी जा रही है।

73 का प्रयोग शुभकामनाओं की जगह पर होता है। यह सिलसिला तब से शुरू हुआ जब मोर्स कोड के जरिये संक्षिप्त में संदेश दिये जाते थे। सन् 1859 में वेस्टर्न यूनियन ने 92 स्टैंडर्ड कोड्स दिये जो कि वाक्यों और वाक्यांशों के लिए थे। मान लीजिए एक तरफ ऑपरेटर ने 73 दबाया दूसरी तरफ के ऑपरेटर ने उसे डिकोड किया– "शुभकामनाओं के साथ"। 73 का प्रयोग रेडियो पर अलविदा के लिए भी होता है। उद्घोषक या एनाउंसर अपनी वार्ता समाप्त करते समय "अलविदा" या "फिर मिलेंगे" कहते हैं जो 73 का मोर्स कोड है।

101 का प्रयोग आरम्भिक शिक्षा या ज्ञान के लिए होता है, जैसे– मैं गणित में 101 लेना चाहता हूँ। इसका एक और प्रयोग है। जॉर्ज ओरवेल के एक उपन्यास 1984 में 101 उस कमरे का नंबर था, जहाँ लोगों को यातनाएं दी जाती थीं, अर्थात् उस कमरे को 101 बुलाते हैं, जहाँ लोगों को सताया जा रहा हो। 101 के कुछ बदले हुए रूप देखिये।

1.01 का प्रयोग बाजी लगाने में होता है। उदाहरण के तौर पर, 1.01 कि भारत जीत जायेगा। 10–1 और 10–2 रेडियो कोड है, जो बताते हैं कि सिग्नल ठीक नहीं है या अच्छा है। अमरीका की पुलिस विभिन्न अंकों का प्रयोग कोड के रूप में करती है, जैसे 187 कत्ल, 211 चोरी और 5150, कि कोई पागल आदमी छुट्टल घूम रहा है, कुछ उदाहरण हैं।

नाइजीरिया में 419 और भारत में 420 कहते हैं, जो धोखाधड़ी करता है। यह संख्या दोनों देशों के कानून में धोखाधड़ी के सेक्शन 4 और सबसेक्शन 19 व 20 की हैं। हम कहते हैं कि अरे वह आदमी तो चार सौ बीस निकला।

411, खबर के लिए प्रयोग में आता है, जैसे मैं सीता की 411 लेने जा रहा हूँ।

86 का प्रयोग छुटकारा पाने के लिए होता है। उदाहरण के लिए– आज मैं अपनी जीन्स को 86 कर दूंगा।

88, नफरत के लिए या दगाबाजी के लिए प्रयोग होता है। यह संख्या नाजी सम्प्रदाय के साथ जुड़ी है। वर्णमाला में आठवाँ अक्षर "एच" है। आठ दो बार आने का मतलब "एच एच" है, जो कि नाजी सम्प्रदाय सम्बोधन के लिए इस्तेमाल करता था।

59 का प्रयोग अगर आप कुछ जाँच कर रहे हों, तब होता है, जैसे सामान लेने के पहले उसे 59 कर लो।

कैच 22 ऐसी परिस्थिति है जिसका कोई समाधान न हो।

कभी–कभी संख्या के स्थान पर वाक्य का भी उपयोग किया जाता है, जैसे– "बेकर्स डजेन" का प्रयोग 13 के लिए होता है।

आज की व्यस्त जिंदगी में लोग चैटिंग के जरिये जुड़े हैं, पर समय का बड़ा अभाव है। लोग थोड़े में बहुत कहना चाहते हैं। चैटिंग में "ग्रेट" के स्थान पर "जी आर 8", "फाइन" के स्थान पर "फ9" तो "टू" के स्थान पर "2" और "फॉर" के स्थान पर "4" लिखना आम बात है। जितने लोग उतनी ही कल्पनायें और उतने ही तरीके दिन–प्रतिदिन जन्म लेते चले जा रहे हैं। आज के जीवन में अंकों का प्रयोग मनोरंजन के क्षेत्र में भी किया जाता है। बहुत से खेल जैसे सुडोकू व उसके विभिन्न स्वरूप घर–घर में लोकप्रिय हैं। ये मनोरंजन के साथ–साथ बुद्धि भी तीव्र करते हैं। बहुत से अखबार इन्हें रोज प्रकाशित करते हैं। तम्बोला, बिंगो आदि प्रचलित खेल भी पूर्ण रूप से अंकों पर आधारित हैं।

संख्याओं के सभी रूपों का व्याख्यान एक लेख में कर पाना संभव नहीं है। एक तरफ अंक, समय का आभास कराते हैं तो दूसरी ओर मनोरंजन करते हैं, पर यह तो तय है कि हम उन पर पूरी तरह से निर्भर हैं। यह सोचने की बात है कि आज किसी से बात करने के लिए टेलीफोन का नंबर हो या किसी जगह का पता, पैसे का लेनदेन या वैज्ञानिक अविष्कार जैसे– अंतरिक्ष की उड़ान क्या अंकों के बिना संभव है? अंत में बस यही कहा जा सकता है कि संख्याओं के और कितने रूप छिपे हैं उन्हें समय ही बतायेगा।

आभार

लेखिका, सुश्री सौम्या अवस्थी व श्री अक्षांश चौधरी, जो कि बिट्स पिलानी, दुबई में अभियांत्रिकी के छात्र हैं, के सुझावों और उनके सहयोग के लिए अत्यन्त आभारी है।

संदर्भ

1. दत्ता, बी0 बी0 तथा सिंह, ए0 एन0(2004) हिस्ट्री ऑफ हिन्दू मैथमेटिक्स, भारतीय कला प्रकाशन, दिल्ली, भारत, खण्ड 1 व 2, संस्करण 2004।
2. बरटन, डेविड एम0 (2010) एलीमेंट्री नंबर थ्योरी, टाटा मैक्ग्रॉ हिल, छठा संस्करण, वर्ष 2010।

पौष्टिक एवं संतुलित आहार और स्वास्थ्य

ए0 के0 चतुर्वेदी
26, कावेरी एन्कलेव फेज 2, समीप स्वर्ण जयंती नगर
रामघाट रोड, अलीगढ़–202001, उ0प्र0, भारत

मानव शरीर दो प्रकार का कार्य करता है। एक शरीर में होने वाली जैविक क्रियाएं जैसे नियमित हृदय गति, रक्त संचार, पाचन क्रिया, अन्तःश्रावी ग्रंथियों से श्रावण, उत्सर्जन क्रिया, श्रवण, गन्ध, स्वाद के प्रति संवेदना, विभिन्न मस्तिष्कीय कार्य, उपापचय प्रक्रिया आदि तथा दूसरा शारीरिक श्रम करना। इन सब कार्यों को प्रतिपादित करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा आहार से प्राप्त होती है। ऊर्जा उचित समय एवं समुचित मात्रा में प्राप्त हो इसके लिए आवश्यक है कि आहार पौष्टिक एवं संतुलित होना चाहिए।

राष्ट्रीय इंस्टीट्यूट ऑफ न्यूट्रीशन, हैदराबाद के अनुसार जिस आहार में संतुलित मात्रा में पोषक तत्व पाये जाते हैं उस आहार को पौष्टिक आहार कहते हैं। पोषक तत्वों की मात्रा भी निश्चित होती है। अतः जिस आहार में निश्चित मात्रा में पोषक तत्व हों, उस आहार को पौष्टिक एवं संतुलित आहार कहते हैं। पोषक तत्वों की आवश्यक मात्रा व्यक्ति की आयु शारीरिक रचना, शारीरिक और मानसिक सक्रियता पर निर्भर करती है। सामान्यतया पौष्टिक आहार में पोषक तत्व कार्बोहाइड्रट, प्रोटीन, वसा, लवण, फाइबर, विटामिन्स, जल होते हैं। मात्रा के अनुसार कार्बोहाइड्रेट 40 प्रतिशत, प्रोटीन 30 प्रतिशत, लवण 12 प्रतिशत, वसा 2 प्रतिशत, जल 15 प्रतिशत, विटामिन्स 0.5 प्रतिशत, रेशे 0.5 प्रतिशत होना चाहिए। ऐसा होने पर ही आहार पौष्टिक एवं संतुलित होता है।

आहार का बड़ा भाग कार्बोहाइड्रेट(40 प्रतिशत) होता है। दैनिक कार्यों को करने के लिए ऊर्जा यही प्रदान करता है। यह कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन तत्वों से मिलकर बनने वाला जटिल कार्बनिक यौगिक होता है। यह अनाजों, चावल, आलू, चीनी आदि में पाया जाता है। समुचित मात्रा में सेवन करने से लाभ मिलता है। शरीर में इसकी अधिक मात्रा होने पर मोटापा बढ़ता है तथा कम मात्रा होने पर कमजोरी महसूस होती है। आहार का दूसरा बड़ा भाग प्रोटीन (30 प्रतिशत) है। शरीर का विकास प्रोटीन की सहायता से होता है। साथ ही क्षतिग्रस्त ऊतकों की मरम्मत भी प्रोटीन के द्वारा होती है। यह कार्बन, हाइड्रोजन तथा नाइट्रोजन से मिलकर बनने वाला जटिल कार्बनिक यौगिक होता है। प्रोटीन मुख्यतः दालों, दूध, पनीर, सूखी मेवा, अण्डा, मांस आदि में प्रचुर मात्रा में उपस्थित होता है। प्रोटीन की कमी से शारीरिक विकास रूक जाता है, जो तरह–तरह के रोगों को जन्म देता है। प्रोटीन की मात्रा अधिक होने पर उपापचय क्रियाएं असंतुलित हो जाती हैं। जिससे शरीर का विकास नहीं हो पाता है तथा सामान्य जीवन क्रियाओं में समस्या उत्पन्न होती है। अतः प्रोटीन उचित मात्रा में ही लेना चाहिए। बच्चो के लिए प्रोटीन अत्यन्त ही आवश्यक है।

आहार का तीसरा महत्वपूर्ण भाग लवण (12 प्रतिशत) होता है। लवण शरीर को आकार प्रदान करने में सहायक होता है तथा मांसपेशियों व स्नायु तंत्र को सुचारु रूप से कार्य करने में सहायता करते हैं। लवण शरीर को मजबूती प्रदान करते हैं। रक्त निर्माण में भी लवण महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। कैल्शियम, फास्फोरस हड्डियों के निर्माण में, आकार देने में, दांतों व हड्डियों को मजबूती प्रदान करते हैं। आयरन रक्त निर्माण में सहायक है। कैल्शियम दूध, पनीर, चीकू, मखाने में पाया जाता है। आयरन हरी सब्जियों, पालक, खजूर, सेब आदि में पाया जाता है। सोडियम, पोटेशियम मांसपेशियों व स्नायुतंत्र की कार्यकुशलता को बनाये रखती है। रक्त के दबाव (रक्तचाप) को बनाये रखने में सोडियम, पोटैशियम महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पौष्टिक तथा संतुलित आहार में जल (15 प्रतिशत) का महत्वपूर्ण स्थान है। जल उष्मा संवहन तथा विषैले पदार्थों को शरीर से बाहर करने में महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करता है। पूरे शरीर में एक जैसा तापमान जल ही बनाये रखता है। शरीर में अम्ल की सान्द्रता को भी जल कम करता है। शरीर की कोशिकाओं में भी जल का अपना विशेष महत्व है।

पौष्टिक तथा आहार का महत्वपूर्ण भाग वसा (2 प्रतिशत) है। वसा कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन से मिलकर बनने वाला जटिल कार्बनिक यौगिक है। वसा चिकना पदार्थ होने के साथ–साथ ऊर्जा का प्रबल स्रोत है। वसा से भारीर को ऊर्जा धीरे–धीरे प्राप्त होती है तथा शरीर को आपातकाल में आवश्यकता पड़ने पर ऊर्जा की प्राप्ति इसी के द्वारा होती है। कुछ विटामिन वसा में घुलनशील होते हैं जो शरीर के लिए आवश्यक है। इनमें विटामिन "ए" तथा "ई" प्रमुख हैं। विटामिन "ए" आँखों के लिए तथा विटामिन "ई" त्वचा के लिए आवश्यक है। वसा का सेवन करना भी आवश्यक है परन्तु यह ध्यान रहे कि शरीर में इसकी मात्रा अधिक न होने पाये। इसके

अधिक सेवन से मोटापा बढ़ता है तथा हृदय रोग की संभावना भी बढ़ जाती है। अतः वसा का सेवन समुचित मात्रा में ही करना चाहिए। वसा घी, तेल, तिल, अलसी, मूंगफली में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। पौष्टिक एवं संतुलित आहार में रेशों (0.5 प्रतिशत) का होना भी आवश्यक है। रेशे पाचन क्रिया को सही रूप में चलाते हैं, जिससे पेट साफ रहता है तथा आँतों की सोखने की क्रिया बढ़ जाती है। रेशा फलियों, भिन्डी, पत्तेदार सब्जियों, छिलकेदार फलों में पाया जाता है। रेशे से शरीर में पाचन क्रिया सामान्य रूप से चलती है तथा अन्य क्रियाओं को भी इससे मदद मिलती है। जिसके चलते पोषक तत्व शरीर को बराबर मिलते रहते हैं। पौष्टिक एवं संतुलित आहार में विटामिन्स का उल्लेखनीय योगदान है। विटामिन्स (0.5 प्रतिशत) कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रेजन से मिलकर जटिल कार्बनिक यौगिक होते हैं जो कि अल्प मात्रा में ही लाभकारी होते हैं। यह शरीर में उत्प्रेरकों की तरह कार्य करते हैं। इनकी उपस्थिति से क्रियाएं सुचारु रूप से सम्पन्न होती हैं, जिससे स्वास्थ्य निरंतर अच्छा बना रहता है। विटामिन्स प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में सहायक होते हैं तथा शरीर को रोगों से बचाकर स्वस्थ रखने में प्रमुख भूमिका निभाते हैं। शरीर के लिए विटामिन "ए", बी कॉम्प्लेक्स, विटामिन "सी", विटामिन "डी" तथा विटामिन "ई" अत्यन्त आवश्यक हैं। विटामिन्स हरी सब्जियों, फलों, सूखी मेवा में अत्यधिक रूप से पाये जाते हैं।

विभिन्न आयुवर्ग, कार्यप्रणाली तथा लिंग के अनुसार एक शाकाहारी भारतीय का संतुलित आहार निम्नानुसार बताया गया है–

क्र.सं.	खाद्य पदार्थ	वयस्क पुरुष			वयस्क स्त्री			बालक	बालिका
	(ग्राम में)	सामान्य कार्य	अल्प कार्य	अधिक कार्य	सामान्य कार्य	अल्प कार्य	अधिक कार्य	10–12 वर्ष	10–12 वर्ष
1.	अनाज	460	520	670	410	440	475	420	410
2.	दालें	70	80	90	60	70	80	45	40
3.	सब्जियां	300	350	400	250	275	300	200	200
4.	फल	30	40	50	30	40	50	30	30
5.	दूध	200	225	250	200	225	250	250	200
6.	वसीय पदार्थ	35	45	55	30	40	50	25	25
7.	शर्करा	30	40	50	25	35	45	25	25

सामान्यतया यह धारणा कि महंगे खाद्य पदार्थ ही पौष्टिक होते हैं, सत्य नहीं है। यदि ऐसा होता तो धनवान ही स्वस्थ होते। वास्तविकता ऐसी नहीं है। गरीब व्यक्ति भी स्वस्थ होते हैं। मौसम के फल व सब्जी पौष्टिकता से परिपूर्ण होते हैं। अतः इनका सेवन अवश्य ही करना चाहिए। अंकुरित अनाजों का सेवन करना भी स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होता है। भोजन में पौष्टिकता से परिपूर्ण सलाद पर अधिक ध्यान देना चाहिए और इसे आहार का नियमित भाग बना लेना चाहिए। समुचित मात्रा में पोषक तत्वों के न मिलने से शरीर के अंगों की कार्यप्रणाली पर प्रतिकूल असर पड़ता है तथा कई रोग उत्पन्न हो जाते हैं। बच्चों में पोषकता की कमी से सूखा रोग, पेट का बड़ा होना, हाथ पैरों का पतले होना रोग के लक्षण है। आयरन की कमी से रक्त अल्पकता, विटामिन "ए" की कमी से रतौंधी, विटामिन "सी" की कमी से बेरी–बेरी रोग हो जाते हैं। कैल्शियम की कमी से हड्डियाँ कमजोर होकर भुरभुरी हो जाती हैं। ऑस्टियोपोरोसिस नामक रोग भी कैल्शियम की कमी से ही शरीर में होता है। पोषक तत्वों के अभाव में गर्भवती महिलाओं के गर्भस्थ शिशु के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। गर्भ का विकास भी सही रूप में नहीं हो पाता और इसके चलते गर्भवती महिला का स्वास्थ्य गिर जाता है। पौष्टिक तत्वों के अभाव में स्नायु तंत्र एवं प्रतिरोधक तंत्र कमजोर हो जाते हैं। जिससे हाथ पैरों में कम्पन होने लगता हैं मानसिक क्षमता भी क्षीण हो जाती है। प्रतिरोधक क्षमता कम होने पर शरीर अनेक प्रकार के संक्रमण रोगों से प्रभावित हो जाता है और स्वास्थ्य धीरे–धीरे गिर जाता है।

यह कहा जाता है कि **"पहला सुख निरोगी काया"**। इसे चरितार्थ करने के लिए अच्छे स्वास्थ्य का होना आवश्यक है। अच्छा स्वास्थ्य पौष्टिक एवं संतुलित आहार से प्राप्त होता है। अतः मानव आहार पौष्टिक एवं संतुलित होना आवश्यक है। अच्छा स्वास्थ्य ही जीवन में उमंग, उत्साह, उल्लास, स्फूर्ति प्रदान करता है। जिससे जीवन में कुछ करने की लालसा बनी रहती है। स्वास्थ्य गिर जाने पर जीवन में नीरसता आ जाती है, जीवन का सौन्दर्य समाप्त हो जाता है और जीवन अभिशाप बन जाता है।

प्रकृति की अनमोल देन वृक्ष

उदय शंकर अवस्थी
वनस्पति विज्ञान विभाग
बप्पा श्री नारायण वोकशनल महाविद्यालय, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत

वृक्ष प्रकृति की एक अनमोल देन है और यही वजह है कि भारत में वृक्षों को प्राचीन काल से ही पूजा जाता रहा है। आज भी यह प्रथा कायम है। वृक्ष हमारे परम हितैसी निस्वार्थ सहायक अभिन्न मित्र हैं। आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली में वृक्षों का अत्याधिक महत्व है। वृक्षों के बिना अधिकांश जीवों की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वृक्षों से ढके पहाड़, फल और फूलों से लदे वृक्ष, बाग, बगीचे मनोहारी दृश्य उपस्थित करते हैं और मन को शांति प्रदान करते हैं। वृक्षों से अनेकों लाभ हैं जैसे वृक्ष अपनी भोजन प्रक्रिया के दौरान वातावरण से कार्बन डाई ऑक्साइड लेते हैं और ऑक्सीजन छोड़ते हैं जिससे अनेक जीवों का जीवन संभव हो पाता है। वृक्षों से हमे लकड़ी, घास, गोंद, रेजिन, रबर, फाइबर, सिल्क, टैनिन, लैटेक्स, हड्डी, बांस, केन, कत्था, सुपारी, तेल, रंग, फल, फूल, बीज तथा औषधियाँ प्राप्त होती हैं। वृक्ष पर्यावरण को शुद्ध करने का कार्य करते हैं और प्रदूषण को दूर करते हैं। ध्वनि प्रदूषण को दूर करते हैं। वायु अवरोधक की तरह काम करते हैं और इस तरह आंधी तूफान से होने वाली क्षति को कम करते हैं। वृक्ष की जड़ मिट्टी को मजबूती से पकड़ कर रखती है जिससे भूमि कटान रूकता है। अन्यथा पहाड़ों पर से मिट्टी बह कर मैदानी क्षेत्रों मे आती है और वहाँ वह नदियों के धरातल में जमा हो कर नदियों की गहराई को कम कर देती है परिणाम स्वरूप मैदानी इलाकों मे अधिक वर्षा होने पर जल्दी बाढ़ आती है। वृक्ष वर्षा जल को धरा पर रोकते हैं और वातावरण को नम रखते हैं। वृक्ष वर्षा जल को तेजी से बहने से रोकते हैं जिससे जल पृथ्वी में नीचे तक पहुंच पाता है और भूमिगत जल स्तर बढ़ाता है। वृक्ष सूर्य के ताप से जीवों को बचाते हैं। अनेकों जीव इसकी गोद मे शरण पाते हैं और इसके फल, फूल, जड़, तना तथा पत्तों से अपना पोषण करते हैं। इस बात को यूं भी समझ सकते हैं–

वृक्षों को नहि काटिये रहे सदा ये ध्यान। निर्जीव नहीं ये बसते इनमें प्राण।।
शुद्ध वायु को करते जीव अनेक हैं पलते। पाकर आश्रय इन पर फूलते फलते।।
वृक्ष सदा ही देते क्या बदले में कुछ लेते। भूस्खलन को रोक रहे ये वृक्ष हमारे।।
वर्षा है निर्भर इन पर इतना सब जान रहे। फिर भी आँखे मूंदे इनको काट रहे।।
आव यकता जितनी हो उतना ही लेना। नियम प्रकृति का शाश्वत वेद सिखाते।।

वृक्षों की सुरक्षा के साथ पर्यावरण की रक्षा तो हो ही जाती है उसका आव यक संतुलन भी बना रहता है। आज के आधुनिक युग में शहरीकरण तथा औद्योगीकरण के फलस्वरूप वृक्षों का उपयोग बढा है। आज वृक्षों का उपयोग कृषि जगत में उर्जा एवं ईधन के श्रोत में भवन, पुल, रेल तथा साज सजावट इत्यादि के निर्माण में किया जाता है। जैसे–जैसे आधुनिक सभ्यता का विकास होता गया उसके साथ–साथ आदमी की इच्छायें, लोभ, लालच विस्तार पाते गये। अपने लोभ, लालच और स्वार्थों की पूर्ति एवं धन लिप्सा ने मनुष्य का ध्यान वनों की ओर आकर्षित किया और स्वार्थी मनुष्य ने अपने परम हितैशी वृक्षों का सफाया करना आरम्भ कर दिया। फलस्वरूप वन कटते चले गये और हरे–भरे घने पहाड़ नग्न हो गये। परिणाम स्वरूप अनेकों वनस्पतियां, औषधीय पौधे मुरझाकर जड़ मूल से समाप्त होने लगे। साथ ही अनेकों पशु–पक्षियों की जातियाँ, प्रजातियाँ रहने का ठौर ठिकाना न पाकर विलुप्त होते गये।

जब एक वृक्ष कटता है तो वह केवल वृक्ष ही नहीं कटता उससे मिलने वाली सभी चीजें तथा उस पर उगने वाली वनस्पतियाँ, जड़ी बूटियां, औषधीय तत्व, पेड़ों पर रहने वाले पशु पक्षी, कीड़े मकोड़े सभी का ह्रास होता है। वृक्षों की अंधाधुंध कटाई का मूल कारण बढती जनसंख्या, शहरीकरण तथा औद्योगीकरण है। उपरोक्त समस्याओं की वजह से मनुष्य की आवश्यकतायें बढी हैं। स्वार्थी मनुष्य के कृत्यों से आज पर्यावरण को खतरा पैदा हो गया है। यदि समय रहते इस ओर विशेष ध्यान न दिया गया तो आने वाले समय में

1 पेड़ों से प्राप्त होने वाली समस्त चीजों की कमी
2 बाढ़
3 मृदानाश
4 प्रदूषण
5 तापमान में वृद्धि
6 सूखा
7 तमाम भूमि का मरूस्थल में बदलना
8 अनियंत्रित वर्षा
9 जल संकट
10 ध्रुवीय बर्फ के पिघलने से समुद्र तटीय क्षेत्रों का जलमग्न होना
11 जीवन संकट
12 बीमारियां

तथा अन्य अनेकों समस्यायें सामने आयेंगी। अत: यह कहना उचित ही होगा–

वृक्ष
दाता
मौन
जड़
असहाय नहीं
किंचित
भ्रम था
मानव का टूटा!

वृक्ष पर्यावरण का अति महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। असुरक्षित पर्यावरण धरती पर रहने वाले सभी जीवों के लिये प्राणलेवा साबित हो सकता है। अत: आवश्यक है कि पर्यावरण को संतुलित और सुरक्षित बनाया जाय। हरे–भरे जंगल इस बात का प्रमाण हैं कि वहाँ जलवायु मिट्टी तथा वहाँ के सभी जीव जंतुओं में आपसी तालमेल है तथा वे स्वाभाविक जीवन यापन कर रहे हैं। इसी ताल को बिगाड़ने का कार्य इंसान करता आया है। उसने न केवल जीव जंतुओं के साथ अन्याय किया बल्कि जाने अनजाने स्वयं का भी अहित किया है।

प्रसन्नता की बात यह है कि आज वन संरक्षण का कार्य वैज्ञानिकों, सरकार तथा स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा किया जा रहा है। अतः आशा की जाती है कि हालात और बिगड़ने से पहले ही उन पर काबू पा लिया जायेगा।

संदर्भ

फतेअली, लइक (2004) "अवर एनवायरनमेंट", पृष्ठ सं 1–137, डाइरेक्टर, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, न्यू देहली।
दास, आर0 आर0 (2005) "कन्सेप्टस ऑफ एनवायरनमेंटल साइंस", पैरागॉन इंटर नेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृ0 1–227।
अंजनेयूलू, वाई0 (2005) "इन्ट्रोडक्शन टू एनवायरनमेंटल सांइस", बी0 एस0 पब्लीकेशन, हैदराबाद, पृ0 1–745।

प्रोबायोटिक्स

सुधीर मेहरोत्रा एवं अल्पना माथुर
जैव रसायन विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ–226007, उ0प्र0, भारत
sudhirankush@yahoo.com, a4math8@gmail.com

प्रोबायोटिक्स क्या हैं ?

प्रोबायोटिक्स वह जीवाणु है जो मानव भारीर के स्वास्थ के लिए लाभदायक है। अनुसंधान के अनुसार प्रोबायोटिक्स अगर पर्याप्त मात्रा में प्रयोग किए जाए तो वह स्वास्थ को लाभ प्रदान करते हैं। इसमें दो प्रकार के बैक्टीरिया का ज्यादा प्रयोग किया जाता है– लेक्टिक एसिड बैक्टीरिया एवं बिफिडोबैक्टीरिया। हालांकि कुछ प्रोबायोटिक्स में ईस्ट और अन्य प्रकार के बैसिलस का भी प्रयोग होता है।

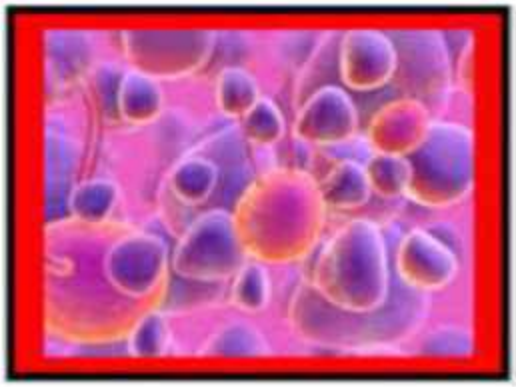

Supplement Facts

Serving Size 1 Capsule Servings Per Container 60

	Amount Per Serving	% DV
Probiotic Blend	10 Billion Organisms	*
L. acidophilus LA-02	*L. rhamnosus* LR-04	
L. paracasei LPC-00	*B. lactis* BS-01	
L. plantarum LP-01	*B. breve* BR-03	

* Daily Value not established.

"प्रोबायोटिक्स" शब्द पहली बार सन् 1953 में कोलात द्वारा प्रयोग किया गया था। एक रूसी वैज्ञानिक ने 20 वीं शताब्दी में पहली बार यह बताया था कि बैक्टीरिया से हमारे शरीर को लाभ मिलता है। इसके लिए बाद में उन्हें नोबल पुरस्कार भी मिला। यह जीवाणु हमारी आतों के स्वास्थ में विकास लाते हैं अथवा हमारे शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं। यही नहीं अनुसंधान द्वारा यह भी पता चला है कि "प्रोबायोटिक्स" कैंसर जैसी बड़ी बीमारी के रोकथाम में भी लाभदायक है। लैक्टोबैसिलस की 80 से भी ज्यादा प्रजातियाँ हैं। इन्हीं में से एक है एसिडोबैसिलस जिसका सर्वाधिक प्रयोग "प्रोबायोटिक्स" में किया जाता है। यह बैक्टीरिया हमारी आंतों मे रहते हैं जिससे हमारी पाचन प्रकिया को सहायता मिलती है। दही, चीज़, सोया सॉस, शहद, ओट, बाजरा, ज्वार आदि में यह बैक्टीरिया प्रचुर रूप से पाये जाते हैं। अलसर के रोगियों में हैलिकोबैक्टीरिया की प्रजाति पायी जाति है जो पेट के लिए हानिकारक होते हैं। अतः प्रोबायोटिक्स जिसमें **बिफिडियो बैक्टीरिया** उपस्थित हों वह इन रोगियों के लिए बहुत लाभदायक है। स्ट्रेप्टोकोक्कस की प्रजातियों का प्रयोग बच्चों में होने वाली पेट की बीमारियों में होता है। यह बैक्टीरिया दही में अधिकतम पाया जाता है।

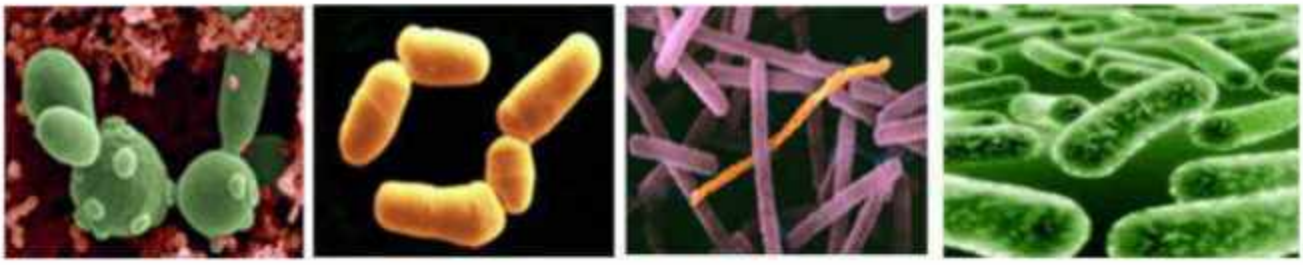

लेक्टोस इनटोलरेन्स में उपयोगी

बच्चों एवं बड़ों में अक्सर दूध या उससे बनने वाले पदार्थों को हजम करने की शक्ति कम हो जाती है जिसकी वजह से उन्हें दूध का सेवन करना मना होता है। इसमें प्रोबायोटिक्स कारगर सिद्ध किये गये हैं। प्रोबायोटिक्स में पाये जाने वाले बैक्टीरिया ऐसे एनजाइम्स बनाते हैं जो दूध को हजम करने में मददगार साबित होते हैं।

ओबेसिटी में लाभदायक

अनुसंधान के अनुसार प्रोबायोटिक्स ओबेसिटी जैसी बड़ी बीमारी को भी रोकने में सक्षम है। लैक्टोबैसीलस गसेरी, लैक्टोबैसीलस रेमनोसस एवं बाइफाइडोबैक्टीरियम लैक्टिस बैक्टीरिया, एडीपोसिटी और वजन को नियंत्रित करतें हैं। इसमें पाये जाने वाले सूक्ष्म जीवी बैक्टीरिया फैटी एसिड और उत्तेजन को भी कम करते हैं।

कोलन कैंसर में प्रोबायोटिक्स

अनुसंधानों के अनुसार कोलन कैंसर का ईलाज प्रोबायोटिक्स में पाया गया है। कई ऐसे बैक्टीरिया होते हैं जो कि ऐसे प्रोटीन्स पैदा करते हैं जिनमें कारसीनोजिन्स से जुड़कर उन्हें नष्ट करने की शक्ति होती है।

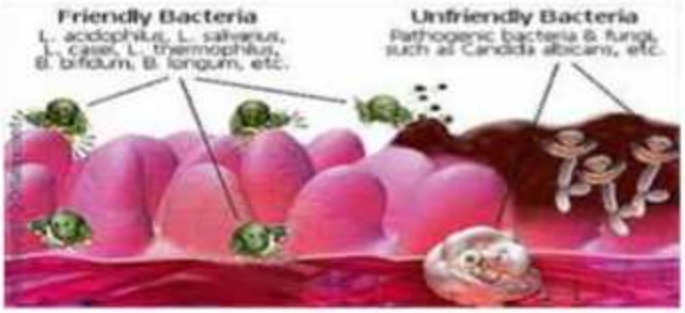

लीवर कैंसर

एफलाटोक्जिन्स फंगस द्वारा पैदा किये जाते हैं। यही एफलाटोक्जिन्स हेपटाईटिस बी जैसी बीमारी को जन्म देते हैं जिससे लीवर कैंसर हो जाता है। ऐसे में लैक्टोबेसिलस रैमनोसस की खुराख एफलाटोक्जिन्स के असर को बहुत कम कर देती है और लीवर के डी0एन0ए0 को म्यूटेट होने से बचाती है।

डायरिया एवं कोलाईटिस में उपयोगी है प्रोबायोटिक्स

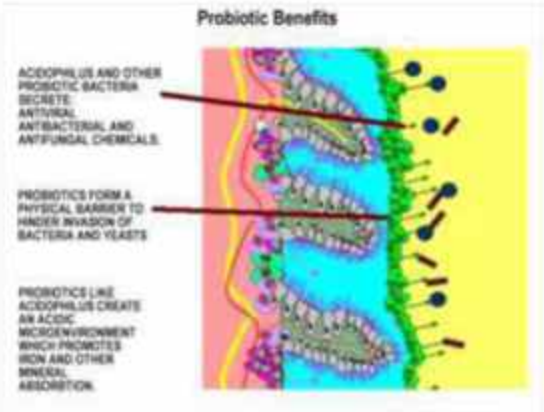

अध्ययनों द्वारा यह पता लगा है कि लैक्टोबेसिलस प्रोबायोटिक्स के उपयोग से डायरिया एवं कोलाईटिस होने का संयोग कम हो जाता है। अतः प्रोबायोटिक्स अतिसार को कम करने का आसान, सस्ता और सुरक्षित उपाय है।

प्रोबायोटिक्स से कई लाभ हैं, जैसे आंतों के दर्द, दस्त, पेट में जलन, आंतों की मांसपेशियों में दर्द आदि में आराम देता हैं। यही नहीं मूत्रीय स्वास्थ्य में भी प्रोबायोटिक्स लाभ देते हैं। एलर्जी इत्यादि को भी प्रोबायोटिक्स सक्रिय रूप से मिटा देते हैं। लगभग 50 प्रतिशत से ज्यादा अनुसंधानों में यह पाया गया है कि प्रोबायोटिक्स बच्चों में होने वाली एलर्जी से बचाव करते हैं। साथ ही ये शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को भी बढा देता है।

मधुमेह या डायबिटीज का नियंत्रण

ऐसा देखा गया है कि आंतों का माईक्रोबायोटा एडिपोसिटी, हाईपरग्लायसीमिया और आंतों की सूजन का कारक होता है। मधुमेह के ईलाज के लिए प्रोबायोटिक्स का उपयोग बढता जा रहा है। लैक्टोबैसिली और बाइफाइडोबैक्टीरिया आंतों का स्वास्थ्य बेहतर कर देते हैं जिसकी वजह से मधुमेह में सुधार पाया गया है।

प्रोबायोटिक्स के दुष्प्रभाव

देखा जाये तो प्रोबायोटिक्स के बहुत ही कम दुष्प्रभाव हैं। गंभीर रूप से बीमार लोगों में प्रोबायोटिक्स कभी–कभी हानिकारक हो जाते है। ऐसे में पेट के विकार बढ़ जाते हैं और रोग अत्यंत ही गंभीर हो जाते है।

प्रोबायोटिक्स की उपलब्धता

बाजार में प्रोबायोटिक्स कई रूप में उपलब्ध होते हैं, जैसे पाउडर, पेय एवं टेबलेट के रूप में। अतः व्यक्ति जिस तरह से भी चाहें इसका प्रयोग कर सकता है।





प्रोजेरिया कारक लेमिन-ए-प्रोटीन

देवेन्द्र कुमार अवस्थी[1] एवं सरिता चौहान[2]
[1,2]एसोसिएट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
श्री जे0 एन0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0 प्र0, भारत
dkawasthi5@gmail.com

प्रोजेरिया एक ऐसी आनुवांशिक स्थिति है जिसमें मनुष्य का शरीर समय से पहले बूढ़ा हो जाता है। **'प्रोजेरिया'** शब्द दो ग्रीक शब्दों से बना है। ग्रीक भाषा में "प्रो" का अर्थ है पहले और "गेरोस" का मतलब है बुढ़ापा इस प्रकार प्रोजेरिया का अर्थ हुआ समय से पहले बूढ़ा होना। इस सिंड्रोम के कारण आयु समय से पहले सात गुनी बढ़ जाती है। मनुष्य में प्रोजेरिया दो प्रकार से प्रकट होता है। वर्नर सिंड्रोम तथा हचिंसम गिलफोर्ड सिंड्रोम(एच0पी0जी0एस0), वर्नर सिंड्रोम तथा हचिंसन गिलफोर्ड सिंड्रोम को कभी–कभी मिलाकर प्रोजेराईड सिंड्रोम भी कहा जाता है। एच0जी0पी0एस0 में रोगी बूढ़ा तो नजर आता है पर उसे न तो गठिया, जो वास्तव में शरीर के ऊतकों में टूट–फूट से जुड़ा रोग है, और न ही मोतियाबिन्द होता है। लेकिन उसकी त्वचा और हृदय पर आयु का प्रभाव नजर आता है। अतः इन रूपों को प्रायः आंशिक सिग्मेंटल प्रोजेरिया भी कहा जाता है।[1]

प्रोजेरिया के बारे में पहली बार लगभग एक ही समय पर डॉ0 जोनाथन हचिंसन ने सन् 1886 में और डॉ0 हंस्टिंग्स गिलफोर्ड ने सन् 1897 में जानकारी दी। इसलिए इसे हचिंसन–गिलफोर्ड सिंड्रोम कहा जाता है। सन् 1990 के दशक तक इस क्षेत्र में बहुत कम अनुसंधान किया गया। पूरी दुनिया में 40 से 80 लाख लोगों में मात्र एक नवजात शिशु में ये लक्षण पाये जाने की जानकारी मिली। सिंड्रोम की जानकारी मिलने से अब तक वैज्ञानिक परिप्रेक्ष में मात्र 150 मामलों का पता लगा है और इसकी जानकारी विश्व स्वास्थ संगठन (डब्लू0 एच0 ओ0) द्वारा दी गई। इस विकृति के बारे में जनचेतना अति आवश्यक है और यह बीमारी कतिपय लोगों को होती है। प्रोजेरिया के बारे में यह चेतना सन् 1981 में तब आई जब पुलिट्जर पुरस्कार विजेता फोटोग्राफर ए0 डी0 एडम्स ने दक्षिण अफ्रीका के फैंसी गौरिंजर और टेक्सास (अमेरिका) के मिशीगेन का फोटो खींचा, ये दोनो बच्चे डिजीलैण्ड में मिले थे। एसोसिएटेड प्रेस समाचार एजेन्सी के जरिए यह फोटो वाशिंगटन पोस्ट अखबार के स्टाइल खंड के पहले पृष्ठ पर छपा था। इसका शीर्षक था **ग्रोइंग अप ओल्ड**। भारत में पिछले दिनों इसकी जानकारी फिल्म **'पा'** के द्वारा फैलाई गई। अभी एक रोगी के0जी0एम0सी0 लखनऊ में भी संज्ञान में आया है।[2]

प्रोजेरिया के फलस्वरूप तेजी से आयु ढलने के लक्षण नजर आने लगते हैं, कुछ और भी लक्षण दृष्टिगत होते हैं जैसे– बच्चे की शारीरिक वृद्धि रूक जाना, शरीर की चर्बी घटना, जोड़ों में जकड़न, बूढ़े लोगों जैसी त्वचा, दिल का दौरा पड़ना, रक्त–वाहिनियों का कड़ा होना, कूल्हों का हार्स राइडिंग स्टान्स (घोंड़े पर चढ़ने जैसी स्थिति) में जकड़ जाना, बालों का झड़ना, चेहरे का बूढ़ा प्रतीत होना इत्यादि।[3] प्रोजेरिया ग्रस्त बच्चे के सिर के आकार की तुलना में उनका चेहरा और जबड़ा छोटा होता है। वे गंजे होते हैं, उनकी नाक छोटी होती है, जिसका सिर चोंच नुमा होता है। उनकी बड़ी–बड़ी आंखे, पतले ओठ और लंबे–लंबे कान होते हैं। 6 से 12 महीने में बाल उड़ने और खाल चिमड़ने से उनके **"उखड़े पंखो वाली चिड़िया"** जैसी शक्ल हो जाती है। माथे और भौहों के बाल धीरे–धीरे उड़ते चले जाते है। कपाल की शिराएं फूली हुई नजर आती हैं। दातों का देर से निकलना और टेढ़ा–मेढ़ा होना भी आम लक्षण हैं। लेकिन बैठने, खड़े होने और चलने की क्रियायें सामान्य रहती हैं। बुद्धि भी सामान्य रहती है। लेकिन वह स्थिति और भी दुखदायी होती है जब उन्हें यह पता चलता है कि वे प्रोजेरिया जैसी बीमारी से ग्रस्त हैं।[4]

इनकी मृत्यु का सबसे बड़ा कारण दिल का दौरा ही होता है। ऐसे बच्चे उच्च रक्तचाप, सीने में दर्द तथा दिल बढ़ जाने के भी शिकार हो जाते हैं। प्रायः करीब 13 साल की उम्र में ज्यादातर की दिल के दौरे से मृत्यु हो जाती है। कुछ मामले ऐसे भी सामने आये हैं जिनमें मृत्यु 3 साल पूर्व हो गई और कुछ में 21 साल के बाद भी रोगी बच गया है।[5] अप्रैल 2003 में प्रोजेरिया रिसर्च फाउंडेशन तथा अमेरिका

के नेशनल इंस्टीट्यूट आफ हैल्थ ने यह बताया कि पी0आर0एफ0 जेनेटिक्स फाउन्डेशन ने हचिंसन–गिलफोर्ड प्रोजेरिया सिंड्रोम (एच0जी0पी0एस0) के लिये जिम्मेदार प्रमुख जीन की खोज कर ली गई है।

आनुवांशिक कारणों का पता लगाते हुए प्रोजेरिया पहले क्रोमोसेम की लम्बी भुजा में स्थित लेमिन–ए में उपस्थित उत्परिवर्तन की वजह से होता है। क्रोमोसेम–1 के एक स्थान पर डी0एन0ए0 श्रृंखला के सी (C) न्युक्लिओटाइड के एक स्थान पर प्रोजेरिया के रोगियों में असमान्य टी (T) न्युक्लिओटाइड पाया गया। एक अन्य मामले में इसी कोडोन में सी न्युक्लिओटाइड के स्थान पर टी (T) न्यूक्लिओटाइड नहीं बल्कि कोई अन्य न्युक्लिओटाइड लगा था। इन दोनों ही परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप एक प्रोटीन के निर्माण कार्य में रुकावट आ जाती है। इस प्रोटीन के बनते–बनते इसमें 50 ऐमीनों अम्लों की कमी आ गई थी। इस उत्परिवर्तित अध बने प्रोटीन का नाम **प्रोजेरिन** रखा गया।

लेमिन–ए में विभिन्न उत्परिवर्तनों की वजह से कुछ अमानवीय विकृति संभव है लेमिन से जुड़ी हुई 11 विकृतियों का पता चला है। उनमें से एक उम्र का जल्दी ढलना है।

उत्परिवर्तित एल0एम0एन0ए0जी0 के निर्देश पर एक असमान्य लेमिन–ए–प्रोटीन (प्रोजेरिन) बनती है जो कोशिका के केन्द्रक की झिल्ली को तोड़ देता है। ऐसा सोंचा जाता है कि विकृत लेमिन–ए प्रोटीन केन्द्रक की झिल्ली को अस्थाई बना देता है। यह केन्द्रक को भी धीरे–धीरे नुकसान पहुंचाता है जिससे असमय ही कोशिकाओं की मृत्यु हो जाती है। सूक्ष्मदर्शी के द्वारा यह ज्ञात हुआ है कि प्रोजेरिया ग्रस्त रोगियों की कोशिकाओं के केन्द्रकों की संरचना स्वस्थ व्यक्तियों की कोशिकाओ के केन्द्रकों की एक समान संरचनाओं से भिन्न होती है। नेशनल जीनोम रिसर्च इंस्टीट्यूट के निदेशक का कहना है कि चिकित्सा अनुसंधान से जुड़े लोगों के लिए प्रोजरिया जीन की पहचान एक बड़ी उपलब्धि है इस खोज से न केवल प्रोजेरिया ग्रस्त बच्चों और उनके माता पिता के लिए उम्मीद की नई किरण सामने आई है बल्कि इससे उम्र बढ़ने तथा हृदयघात तथा रक्त वाहिनियों से जुड़ी बीमारियों के बारे में भी नई जानकारी प्राप्त की जा सकती हैं।[6]

भारत में हचिंसन–गिलफोर्ड प्रोजेरिया 40 करोड़ में से एक बच्चे को हो सकता है यह एक बहुत दुर्लभ बीमारी है। प्रायः यह सिंड्रोम कभी भी माता–पिता से संतान में नहीं फैलता है परन्तु यह कहना बहुत मुश्किल है। यह सिंड्रोम माता–पिता से बच्चों में भी आ सकता है। ऐसे में विकसित होते शिशु के प्रारम्भिक कोशिका विभाजन के दौरान एक नया, अत्यन्त विरल उत्परिवर्तन होता है। कभी–कभी असाधारण तरीके से एक ही परिवार को कई बार विपत्ति झेलनी पड़ती है। बिगुल और रजिया खान के साथ ऐसा ही हुआ। उनकी सात सन्तानों में से पांच प्रोजेरिया ग्रस्त थीं। यह भारत का एकदम साधारण परिवार है। जिसके 5 सदस्य प्रोजेरिया ग्रस्त थे। दिलचस्प बात यह है कि कम से कम एक अन्य रिपोर्ट ऐसी और भी है जिसके अनुसार अलिंग सूत्री अप्रभावी विकृति पायी जाती है। यह लक्षण इंडियन जर्नल आफ आर्थोपेडिक्स में प्रोजेरिया के किसी दुर्लभ मामले में एक विकिरण चिकित्सा वैज्ञानिक द्वारा अपनी रिपोर्ट में प्रस्तुत किए हैं।[7]

बोस्टन, अमेरिका में 7 मई, 2007 को प्रोजेरिया की औषधि का नैदानिक परीक्षण शुरू किया गया है। 7 मई 2007, तथा 14 अगस्त 2009 में प्रोजेरिया की औषधि का पहला नैदानिक परीक्षण शुरू किया गया, प्रोजेरिया ग्रस्त बच्चों के लिए किये गये दूसरे परीक्षण में प्रोजेरिया रिसर्च फाउण्डेशन और बोस्टन के चिल्ड्रेन हॉस्पिटल ने 19 देशों के 45 बच्चों को शामिल किया[8]। पिछले 19 सालों में अल्जीरिया, अफगानिस्तान, ऑस्ट्रेलिया, ऑस्ट्रिया, कनाडा, क्यूबा, इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, भारत, दक्षिण अफ्रीका, इजराईल, इटली, मैक्सिको, नीदरलैण्ड, दक्षिण कोरिया, संयुक्त राज्य अमेरिका, वेनेजुएला, वियतनाम और यूगोस्लाविया में इसके रोगियों के मामले सामने आये हैं। इसलिए विश्व के किसी भी भाग के लोग यह नहीं सोच सकते कि वे इस रोग की चपेट से पूरी तरह मुक्त हैं, अतः प्रोजेरिया का अध्ययन हम सभी के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है। क्योंकि इससे हो सकने वाले रोग जैसे हृदय रोग और हम सभी को प्रभावित करने वाली बूढ़े होने वाली प्रक्रिया की उपयोगी जानकारी मिल सकेगी।[9]

प्रोजेरिया के उपचार के लिए एक औषधि की पहचान की गयी है। इसमें एफ0टी0आई0 (फोर्नेशिल–ट्रान्सफेरज इनहिबिटर) समूह शामिल हैं। पहली बार प्रोजेरिया से पीड़ित बच्चों के उपचार की आशा जगी है। इसके अलावा शोध कर्ताओं ने दो अन्य औषधियों– प्रवास्टेटिन और जोलेड्रोनर की भी पहचान की है। यह सभी औषधियाँ अलग–अलग स्तर पर प्रोजेरिया के कारक प्रोजेरीन प्रोटीन को बनने से रोकने में प्रभावी हो सकेंगी।

सन्दर्भ

1. प्रोजेरिया रिसर्च फाउण्डेशन अमेरिका–रिपोर्ट– वर्ष 2010।
2. नेशनल इंस्टीट्यूट आन एजिंग अमेरिका– रिपोर्ट– वर्ष 2010।
3. आफिस ऑफ रेयर डिजीजेज अमेरिका– रिपोर्ट– वर्ष 2010।
4. पी0आर0एफ0 जेनेटिक्स फाउण्डेशन अमेरिका–रिपोर्ट– वर्ष 2003।
5. नेचर पत्रिका, वर्ष 2010।
6. नेशनल जीनोम रिसर्च इंस्टीट्यूट–अमेरिका– वर्ष 2010।
7. इंडियन जर्नल ऑफ आर्थोपेडिक्स– वर्ष 2008।
8. प्रोजेरिया रिसर्च फाउण्डेशन वैज्ञानिक गोष्ठी रिपोर्ट– वर्ष 2012।
9. विश्व स्वास्थ संगठन (डब्ल्यू0 एच0 ओ0) रिपोर्ट– वर्ष 2012।

रसायन और मानव जीवन

गोविन्द कृष्ण मिश्र
असिस्टेंट प्रोफेसर, रसायन विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0 प्र0, भारत
gkmishra73@gmail.com

मानव जीवन में रसायनों की सदा से महत्वपूर्ण भूमिका रही है तथा सभ्यता की विकास यात्रा के साथ यह भूमिका और भी बढ़ती जा रही है। वस्तुतः पृथ्वी पर उपस्थित प्रत्येक ठोस, द्रव अथवा गैस पदार्थ का सम्बन्ध रसायनों से ही है। हमारे आसपास का वातावरण तथा वायुमण्डल भी विविध रसायनों से ही निर्मित है। वैसे तो रसायनों का क्षेत्र बहुत व्यापक है किन्तु अध्ययन की सुविधा के लिए हम इसे कई शाखाओं में विभाजित करते हैं, जिनमें से कुछ मुख्य शाखायें निम्न हैं–

1. अकार्बनिक रसायन
2. कार्बनिक रसायन
3. भौतिक रसायन
4. जैव रसायन
5. औषधि रसायन
6. कृषि रसायन
7. नाभिकीय रसायन
8. औद्योगिक रसायन

उपरोक्त शाखाओं के अन्तर्गत ही हम चाहे धातुकर्म हो, विभिन्न जैविक गतिविधियाँ हों, दैनिक उपयोग की वस्तुओं का निर्माण हो, औषधि निर्माण हो या फिर रासायनिक उद्योग धन्धे हों सभी का अध्ययन करते हैं। प्रकारान्तर से देखा जाये तो जीवन की समस्त प्रक्रियायें रासायनिक प्रक्रियाओं की ही देन हैं। पृथ्वी पर पेड़ पौधों का उगना, जीव जन्तुओं का चलना, बादलों की उमड़–घुमड़, भूकम्प तथा ज्वालामुखी आदि सभी भौगोलिक प्रक्रियाओं में विभिन्न रसायन अपने–अपने ढंग से अपना काम करते हैं। जीवों में श्वसन, पाचन, उत्सर्जन, पोषण, वृद्धि, प्रजनन एवं तंत्रिका तंत्र की प्रक्रियायें, विभिन्न रासायनिक अभिक्रियायों की ही देन हैं। मानव के संवेदी अनुभवों जैसे शब्द, रस, रूप, गंध तथा स्पर्श, सभी के पीछे रासायनिक क्रियायें ही उत्तरदायी हैं।

रोटी, कपड़ा और मकान जैसी आधारभूत आवश्यकताएं पूरा करने में भी रसायनों की महत्वपूर्ण भूमिका है। दैनिक प्रयोग की वस्तुएं जैसे साबुन, तेल, ब्रुश, मंजन, कंघी, शीशा, कागज, कलम, दवात, स्याही, दवाइयाँ तथा प्लास्टिक आदि सभी रसायन विज्ञान की देन हैं। धर्म–कर्म, पूजा–पाठ, ध्यान, धूप दीप, नैवेद्य, अगरबत्ती, रोली, रक्षा तथा कपूर इत्यादि सभी में रसायन व्याप्त हैं। ऊर्जा के विविध स्रोत जैसे कोयला, पेट्रोल, डीजल, मिट्टी का तेल, नेप्था तथा एल0पी0जी0 गैस आदि विविध रासायनिक यौगिकों के उदाहरण हैं। इक्कीसवीं सदी में वस्तुतः रसायनों की पहुँच कल–कारखानों, उद्योग धंधों से लेकर हमारे चूल्हे चौके तथा ग्रामीण भारत के खेत खलिहानों तक जीवन के हर क्षेत्र में हो चुकी है। रसोईघर में प्रयुक्त होने वाले बर्तन, उपकरण हों अथवा खाद्य पदार्थों का निर्माण यथा केक बनाना हो, पेस्ट्री, डबल रोटी, नानखटाई या सिरका बनाना हो, अचार, फल अथवा फलों के रस को संरक्षित करना हो सब में किसी न किसी रसायन की भूमिका होती है। चाहे हम दियासलाई इस्तेमाल करें या लाइटर, नहाने के लिये साधारण साबुन प्रयोग करें या खुशबूदार, कपड़े धोने के लिये साबुन इस्तेमाल करें या अपमार्जक(डिटर्जेंट)। महिलाओं की प्रसाधन सामग्री हो या श्रृंगार की अन्य वस्तुओं के निर्माण सभी में रसायनों का ही प्रयोग होता है। अच्छी फसल प्राप्त करना हो, उसे कीड़े मकोड़ों से बचाना हो अथवा उर्वरकों का प्रयोग करना हो, सभी में समुचित रसायनों का ही योगदान होता है। सुंदर तथा टिकाऊ कपड़ों के लिए हमें कृत्रिम रेशे के कपड़े नायलॉन, पॉलिस्टर, डेक्रान आदि भी हमें रसायनों से ही प्राप्त होते हैं। घरों में सजावट करने, दीवारों को पेण्ट करने, फर्नीचर पर पॉलिश और वार्निश करने के लिए प्रयुक्त सामग्री में हम किसी न किसी रसायन का ही उपयोग करते हैं। आरोग्य के लिए हम औषधियों (रासायनिक यौगिकों) की मदद लेते हैं। रोग के निदान हेतु पैथोलाजी जाँच में भी विभिन्न प्रकार के रसायनों का ही प्रयोग होता है।

रासायनिक बहुलकों की भी वर्तमान में मानव सभ्यता को उन्नत करने में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। सामान्यतया प्लास्टिक तथा रबड़ जैसे पदार्थ रासायनिक बहुलक ही होते हैं जिनका उपयोग आज विभिन्न प्रकार के घरेलू सामानों, फर्नीचर तथा मानव उपयोग की अनेकों आवश्यक वस्तुयें बनाने में अधिकाधिक किया जा रहा है। आज हमारा लगभग सम्पूर्ण यातायात कृत्रिम रबड़ पर आधरित है, विभिन्न प्रकार के कृत्रिम रबड़ विभिन्न रासायनिक प्रक्रियाओं द्वारा प्राप्त किये जा सकते हैं जिनकी गुणवत्ता भी भिन्न भिन्न होती है। गुणवत्ता के आधार पर इनका मुख्य उपयोग दो पहिया वाहनों, कारों, भारी वाहनों तथा वायुयानों के टायर बनाने में किया जाता है, जिसके बिना शायद आज हमारी यातायात व्यवस्था इतनी सुगम न होती।

हमारा आहार भी रासायनिक घटकों का सम्मिश्रण है। हमारे आहार के मुख्यतया छः रासायनिक घटक हैं। ये हैं– कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन, लिपिड, विटामिन्स, खनिज लवण एवं जल। कार्बोहाइड्रेट्स, कार्बन, ऑक्सीजन और हाइड्रोजन से बने हुए यौगिक होते हैं। चावल, आलू, रोटी, चीनी आदि कार्बोहाइड्रेट्स के मुख्य स्रोत हैं। प्रोटीन्स हमारे शरीर के अंगों, उपांगों तथा ऊतकों का निर्माण करते हैं अतः शारीरिक विकास एवं वृद्धि के लिए आवश्यक होते हैं। प्रोटीन के मुख्य स्रोत दूध, पनीर, अंडा, मांस, मछली, सोयाबीन तथा दालें हैं। प्रोटीन कार्बन, हाइड्रोजन और नाइट्रोजन से बने जटिल यौगिक होते हैं। कुछ प्रोटीनों में सल्फर और फास्फोरस भी होता है। प्रोटीन्स कोशिकाओं में एन्जाइम्स तथा हार्मोन्स का विनिर्माण भी करते हैं, जो हमारी जैविक गतिविधियों के लिये परम आवश्यक होते हैं। लिपिड एक वृहत् घटक है जो अनेकों तरह की वसाओं का मिश्रण होता है। ये शरीर में ऊर्जा के मुख्य स्रोत होते हैं। पेशियों के निर्माण में वसा की अहम् भूमिका होती है। मक्खन, घी, तेल, मछली और मांस वसा के प्रमुख स्रोत हैं। खनिज लवण जिसमें मुख्यतः सोडियम, पोटैशियम, मैग्नीशियम आदि हैं, हमारे शरीर में जैविक प्रक्रियाओं के लिए अत्यंत आवश्यक होते हैं। खनिज लवण हमें वनस्पतियों, फलों, सब्जियों आदि से मिलते हैं। जैसा कि शास्त्रों में वर्णित है 'जल ही जीवन है', पानी जीवन के लिये एक प्रमुख घटक है। हमारे शरीर का लगभग 65 से 70 प्रतिशत भाग जल होता है तथा जीवन की सभी क्रियायें जल में ही सम्पादित होती हैं। इसीलिए कहा जाता है कि जीवन, कार्बन के कुछ निश्चित यौगिकों का जलीय रसायन होता है।

दैनिक जीवन में हम जाने अनजाने अनेकों रसायनों का प्रयोग प्रतिदिन करते रहते हैं, उदाहरणतः फूलों की सुगन्ध में फ्लेवोन्स तथा फ्लेवोनायड्स, रास्पबेरी की गंध में आयोनिन, केले की गंध के पीछे आइसोएमाइल एसीटेट तथा नींबू की ताजगी के पीछे लिमोनिन यौगिक की भूमिका होती है जबकि इसके खट्टेपन के लिए साइट्रिक अम्ल जिम्मेदार होता है। एसिडिटी होने पर हम एन्टासिड लेते हैं जो मैग्नीशियम हाइड्राक्साइड होता है, यह आमाशय में मौजूद हाइड्रोक्लोरिक अम्ल से अभिक्रिया करके मैग्नीशियम क्लोराइड तथा जल बनाता है और हमें एसिडिटी से राहत मिल जाती है। इसी प्रकार कीटाणुओं से बचने के लिये हम प्रायः कीटाणुनाशक रसायनों का प्रयोग करते हैं जैसे कि फिनॉल, क्लोरोजाइनॉल/4–क्लोरो, 3,5–डाईमिथाइल फिनॉल (डिटॉल), एल्कोहल, बोरिक एसिड, हाइड्रोजन परॉक्साइड आयोडीन टिंक्चर आदि रसायनों में जीवाणुनाशक तथा सूक्ष्मजीवरोधी गुण होते हैं।

अतः यह स्पष्ट होता है कि मानव जीवन के हर क्षेत्र में जन्म से लेकर जीवन पर्यन्त रसायनों की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण एवं व्यापक है तथा यह कहना शायद अतिशयोक्ति नहीं होगा कि वर्तमान में हम रसायनों के बिना स्वच्छ, स्वस्थ एवं सुगम मानव जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकते।

सन्दर्भ

1. हाज़रा, अनिर्बान (2007) "कहानी रसायन विज्ञान की", विज्ञान प्रसार।
2. मेहरोत्रा, रामचरण एवं राय, रमाशंकर (1989) "तत्व नये पुराने", राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान तथा प्रशिक्षण परिषद, नयी दिल्ली।
3. राव, इंदुमती एवं राव, सी0 एन0 आर0 (2005) "लर्निंग साइन्स", दि वर्ड ऑफ केमिस्ट्री, जवाहर लाल नेहरू सेंटर फार एडवांस्ड साइंटिफिक रिसर्च, बैंगलोर।
4. विकीपीडिया मुक्त ज्ञानकोश।

स्वस्थ जीवन जीने में निद्रा का महत्व

अनुराधा विनायक
एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं पुरातत्व विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत

प्रकृति के अनुरूप जीवनक्रम स्वस्थ जीवन के परिपालन का मूल आधार है। आयुर्वेद में तीन उपस्तम्भ बताये गये हैं–

त्रयः उपस्तम्भा इति–आहारः स्वप्नो ब्रह्मचर्यमिति।[1]

जब तक ये तीन उपस्तम्भ–आहार, निद्रा तथा ब्रह्मचर्य संस्कारित रहते हैं तब तक बल तथा वर्ण एवं उपचय द्वारा मनुष्य स्वस्थ रहता है–

एभिस्त्रिभिर्युक्तियुक्तैः रूपस्तब्धमुपम्भयः स्तम्भैः
शरीरं बलवर्णोपचयोपचितमनुवर्तते यावदायुः संस्कारात्।[2]

तीनों उपस्तम्भों में निद्रा का स्थान अति महत्वपूर्ण है–

यदा तु मनसि क्लान्ते कर्मात्मानः क्लमान्वितः।
विषयेभ्यो निवर्तन्ते तदा स्वपिति मानवः।।[3]

अर्थात् मन जब कार्य करते–करते थक जाता है तथा इन्द्रियाँ भी थक कर अपने विषयों से निवृत्त हो जाती हैं, तब मनुष्य को निद्रा आती है। इस निद्रा को आचार्य सुश्रुत ने वैष्णवी भी कहा है क्योंकि जिस प्रकार विष्णु जगत् का धारण–पोषण करते हैं उसी प्रकार निद्रा शरीर का धारण पोषण करने वाली होती है। यह निद्रा समस्त प्राणियों को अपने वश में करने वाली होती है।

सा स्वभावतः एव सर्वप्राणिनोऽभिस्पृशति।[4]

आयुर्वेद के अनुसार निद्रा को निम्नरूप में प्रस्तुत किया जा सकता है–

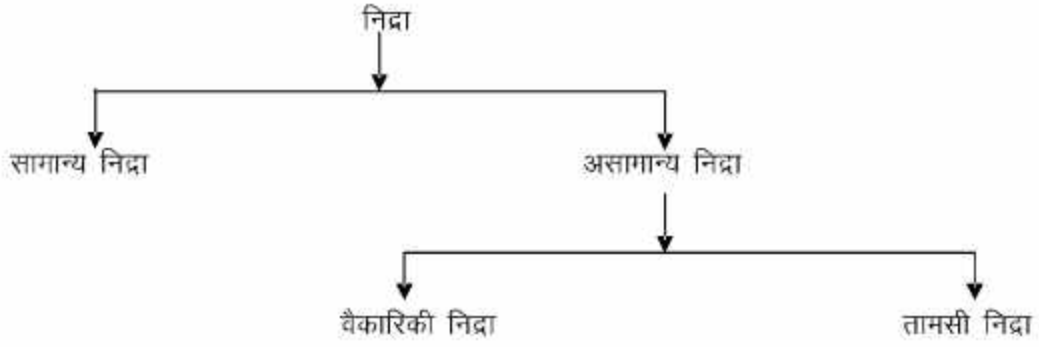

वैचारिकी निद्रा चार प्रकार की होती है–

(1) श्लेश्मसमुद्रवा निद्रा (कफ की वृद्धि होने से उत्पन्न)
(2) मनः शरीर श्रमसम्भवा निद्रा (थकावट होने से उत्पन्न)
(3) आगन्तुकी निद्रा (बिना किसी कारण के)
(4) व्याध्यनुवर्तिनी निद्रा (रोग ग्रसित निद्रा)

यथोचित काल में स्वाभाविक निद्रा का सेवन करना दीर्घ जीवन की प्राप्ति है। जिस प्रकार सत्या बुद्धि जब योगी पुरूष के पास आ जाती है तो उसे सिद्धि से युक्त करती है उसी प्रकार आजीवन स्वास्थ्य हेतु निद्रा एक आवश्यक और महत्वपूर्ण घटक है।

सैव युक्ता पुनर्युङ्क्ते निद्रा देहं सुखायुषा।
पुरूषं योगिनं सिद्धया सत्या बुद्धिरिवागता।।[5]

आचार्य चरक ने स्वाभाविक रूप में तथा उचित मात्रा में सेवन की गई निद्रा का जीवन पर पड़ने वाले प्रभावों का निम्न रूप में वर्णन किया है–

निद्रायत्तं सुखं दुःखं पुष्टि कार्यं बलाबलम्।
वृषता क्लीयता ज्ञानमज्ञानं जीवितं न च।।
अकालेऽति प्रसङ्गाच्च न च निद्रा निषेविता।
सुखायुषी पराकुर्यात् कालरात्रिरिवापरा।।[6]

अर्थात स्वाभाविक निद्रा मनुष्य के सुखी होने की सूचक है, इसके विपरीत अकाल या अनुचित रूप में सेवन की गई निद्रा दुःखों का कारण बनती है। पुष्टि कार्श्य का तात्पर्य आहार आदि का पाचन सुचारू रूप से होना बताया गया है। अनुचितरूप में निद्रा सेवन करने से शरीर में स्थित धातुओं का क्षय होता है। सम्यक निद्रा सेवन करने से शरीर और मन में रोगों के प्रति लड़ने की क्षमता बढ़ती है। सामान्य निद्रा सेवन करने से धातुओं की पुष्टि होती है जिससे शुक्रधातु की वृद्धि होती है मानसिक प्रसन्नता होती है। जब इन्द्रियाँ और मन दोनों कार्य करते–करते थक जाते हैं तो निद्रा आती है।

आजकल अनिद्रा एक जटिल समस्या बन चुकी है। भारत में भी नींद लाने वाली औषधियों का चलन तेजी से बढ़ रहा है जो भयावह स्थिति उत्पन्न करने की सूचना एवं चेतावनी दे रहा है। एक अध्ययन से यह तथ्य भी सामने आया है कि कम सोना या अच्छी नींद नहीं आने का असर निर्णय लेने की क्षमता पर भी प्रभाव डालता है।

अमेरिकन एकेडमी ऑफ स्लीप मेडिसिन द्वारा 2,822 लोगों से एकत्र किये गये आंकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है जो स्लीप नामक पत्रिका में प्रकाशित हुआ है। कम नींद का हमारे मस्तिष्क पर प्रभाव पड़ता है।

अतएव एक वयस्क को छः घंटे सोने चाहिए। शिशुओं, बालकों के निद्राकाल का निर्धारण आयु तथा अवस्था के अनुसार किया जाना चाहिये जो चिकित्सकों के परामर्श के साथ निश्चित होता है। इसी क्रम में रोगी एवं वृद्ध आते हैं। शोध कार्य द्वारा निरन्तर इस क्षेत्र में कार्य हो रहा है। कुछ आंकड़े निम्नवत् हैं–

नींद जरूर लें [7]–

नींद जरूर लें

ठीक से नींद न लेने वाले लोगों को सकारात्मक विचार सोचने में कठिनाई महसूस होती है।

ठीक से न सोने वाले विद्यार्थियों ने

81% नकारात्मक शब्द याद रखें
31% सकारात्मक शब्द याद रखें।

दुनिया में सबसे ज्यादा खुश बच्चे





1. मैक्सिको
2. स्पेन
3. ब्राजील
4. जर्मनी
5. अमेरिका



दुनिया में खुश रहने के दो सबसे बड़े कारण है–

1. समुदाय की भावना होना यानी लोग समुदाय में एक साथ रहने की भावना रखते हैं।



2. लगातार होने वाले सामुदायिक कार्यक्रम।



एक सर्वे के अनुसार, महीने में एक बार चर्च जाने वाले 31 प्रतिशत लोगों ने कहा कि वे बहुत खुश हैं, सप्ताह में केवल एक बार चर्च जाने वाले 43 फीसदी लोगों ने कहा कि वे बहुत खुश हैं, 26 फीसदी कभी चर्च न जाने वाले लोगों ने कहा कि वे बहुत खुश हैं।

सन्दर्भ

(1) चरक सूक्त–11/35
(2) च0सू0–11/35
(3) च0सू0–21/35
(4) सुश्रुत शास्त्र–4/33
(5) च0सू0–21/38
(6) च0सू0–21/36–37
(7) हिन्दुस्तान, हिन्दी दैनिक समाचार पत्र, रविवार 30 मार्च 2014।

वैश्विक तापनः वास्तविक संकट कम, मानसिक संकट अधिक

प्रेम चन्द्र श्रीवास्तव
पूर्व संपादक, "विज्ञान", विज्ञान परिषद प्रयाग
महर्षि दयानंद मार्ग, इलाहाबाद–211002, उ0प्र0, भारत
पताः अनुकम्पा, वाई 2 सी, 115/6, त्रिवेणीपुरम्, झूँसी, इलाहाबाद–211019, उ0प्र0, भारत

यदि हम आज से 60–70 वर्ष पूर्व की दुनिया की तुलना आज की दुनिया से करें तो ऐसा लगता है जैसे हम आज अनेक प्रकार के संकटों से घिरे हुए हैं। कभी–कभी तो ऐसा लगने लगता है जैसे हम किसी अनजान दुनिया में चले आये हों। जनसंख्या के बढ़ने के साथ ही समस्याएं बढ़ने लगती हैं। शुद्ध पेयजल की समस्या, वायु में विषैली गैसों का विसर्जन, रासायनिक उर्वरकों से मिट्टी की गुणवत्ता का नष्ट होना, आवास और जलाने के लिए लकड़ी की जरूरतों में वृद्धि से जंगलों का लगातार काटा जाना, परिणामस्वरूप बाढ़ और सूखे की समस्याएं, मोटर वाहनों, हवाई जहाजों, लाउडस्पीकरों का शोर आदि आदि। इन दिनों वैश्विक तापन(ग्लोबल वार्मिंग) अर्थात् पृथ्वी के बढ़ते ताप की समस्या से भारत सहित सभी देश भयाक्रांत हैं। एक अनुमान के अनुसार पृथ्वी के बढ़ते ताप से उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों की बर्फ की टोपियों के पिघलने से समुद्र तटीय नगरों पर खतरा मंडरा रहा है। समुद्र के जल स्तर के बढ़ने से सागर तटीय क्षेत्र जलमग्न हो जायेंगे और मुम्बई जैसे महानगर जो समुद्र तटों पर बसे हैं उनके जलमग्न होने का खतरा बना हुआ है।

हम यदि थोड़ा ठंडे दिमाग से सोचें तो हमें ग्लोबल वार्मिंग से भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है। किन्तु आइये पहले मौसम परिवर्तन पर अंतर्राष्ट्रीय पैनल की रिपोर्ट की चर्चा कर लें। इस रिपोर्ट में मुख्य चार मुद्दे हैं, जिन पर बहस हो सकती है।

1. प्रश्न है कि क्या पृथ्वी इस प्रकार गर्म होती जा रही है जिसकी कोई मिसाल नहीं है, जिसका इसके पूर्व के इतिहास में कोई उल्लेख नहीं मिलता है ?
2. क्या औद्योगिकीकरण और जीवन यापन करने का उच्चस्तर "ग्लोबल वार्मिंग" के लिए जिम्मेदार है ?
3. वे कौन से देश अथवा क्षेत्र हैं जो अत्यधिक मात्रा में हरित पौधगृह गैसों का वातावरण में विसर्जन करते हैं ?
4. क्या विज्ञान और प्रौद्योगिकी की बड़ी उपलब्धियों के माध्यम से हम विषैली गैसों के विसर्जन को कम करते हुए स्वीकृत सीमा तक ला सकते हैं ?

वैसे होना तो यह चाहिए था कि वैश्विक तापन पर निष्पक्ष बहस होती, किन्तु बिना तटस्थ बहस के ही अचानक भय फैलाने वाला कोलाहल हो गया है। यदि किसी ने किसी और तरह का विचार प्रकट किया तो उसे शंका की नजरों से देखा जाता है। इतिहास साक्षी है कि संसार में "कयामत के दिन"(डूम्स डे) की भविष्यवाणी करने वालों की कमी नहीं रही है। वर्षों पूर्व 1768 में थॉमस माल्थस ने अपना पूर्वानुमान प्रस्तुत किया था, जिसके अनुसार बढ़ती जनसंख्या भोजन की आपूर्ति को पीछे छोड़ देगी और इसका परिणाम होगा दुर्भिक्ष, महामारी और मानव–सभ्यता के एक बड़े हिस्से का काल के गाल में समा जाना। किन्तु बाद में माल्थस गलत सिद्ध हुए क्योंकि मॉल्थस ने एक स्रोत की पटुता पर ध्यान नहीं दिया था और वह स्रोत है– मानव मस्तिष्क। मानव मस्तिष्क प्रारंभ से ही समस्याओं के समाधान ढूँढ़ता रहा है। इतिहास में इसी प्रकार का एक और उदाहरण मिलता है। शीर्ष के वैज्ञानिक और समाज के नेताओं ने मिलकर "क्लब ऑफ रोम" नामक एक संस्था का रोम में गठन किया और 60 के दशक की समाप्ति के निकट एक अध्ययन किया। इस अध्ययन को डेनिस मीडोज ने प्रायोजित किया था। अध्ययन के परिणाम "लिमिट्स टू ग्रोथ"(विकास की सीमा) नाम से प्रकाशित हुई। इसमें भविष्यवाणी की गई थी कि आर्थिक वृद्धि तेजी से हमारे प्राकृतिक स्रोतों को ग्रास बना लेगी और परिणामस्वरूप महाविपत्ति की स्थितियों का निर्माण होगा। किन्तु ऐसा तो अब तक घटित नहीं हुआ और एक सच्चाई यह है कि बहुत पहले ही "क्लब ऑफ रोम" ने माल्थस के कथन को अस्वीकार कर दिया था।

हमें यह ध्यान रखना है कि हम कहीं अतिवादी दृष्टिकोण के शिकार न हो जायें। वैज्ञानिकों की एक बड़ी संख्या इस विचार को नहीं मानती है कि मौसम की महाविपत्ति हमारे ऊपर मंडरा रही है और आर्थिक प्रगति एवं औद्योगिकीकरण इसका कारण है। यहाँ इस तथ्य का उल्लेख करना समीचीन होगा कि विश्व के 60 अग्रणी मौसम विज्ञानियों ने कनाडा के प्रधानमंत्री को एक पत्र में लिखा– "विश्व के मौसम परिवर्तनों का प्रायः कारण प्राकृतिक रहा है और मानव प्रभाव को प्रकृति के शोरगुल से अलग करना असंभव है।" सैली बैलीयुनस और विली सून जो हार्वर्ड स्मिथसोनियन सेण्टर फॉर एस्ट्रोफिजिक्स से जुड़े हुए हैं, ने सभी लेखों से परिणाम निकालते हुए यह सुझाव प्रस्तुत किया कि बीसवीं सदी संभवतः अपने आप में उग्र मौसम का समय रहा है।

वैसे वास्तविकता तो यह है कि उग्र मौसम 800–1300 बीसीई के बीच मध्ययुगीन ताप काल रहा है और सम्पूर्ण विश्व में 1300–1900 के बीच नन्हा हिम युग आया, उद्योगों द्वारा हरित पौधगृह गैसों के वातावरण में विसर्जन के बहुत पहले ही अनेक वैज्ञानिक इस परिणाम पर पहुँचे कि उत्तरी ध्रुव में बर्फ का जमाव 1979 से अपरिवर्तित रहा है, जबकि दक्षिणी ध्रुव क्षेत्रों (अंटार्कटिका) में बर्फ का जमाव वास्तव में बढ़ा है। रिचर्ड एस0 लिण्डजेन और एल्फ्रेड पी0 स्लोअैन जो मीटीयोरोलॉजी एट मिट के प्रोफेसर हैं के अनुसार हमारे पास ऐसा कोई प्रमाण नहीं है, जिसके अनुसार यह कहा जा सके कि ग्लोबल वार्मिंग गंभीर समस्या है। उपरोक्त वैज्ञानिकों के विचार के विरूद्ध नओमी ओरस्कीज, जिन्होंने 928 लेखों का अध्ययन किया और इस परिणाम पर पहुँचे कि पिछली शताब्दी के उत्तरार्ध में ग्लोबल वार्मिंग का कारण हरित पौध गृह गैसों द्वारा प्रदूषण रहा है। बेनी पेईसर ने 12,000 लेखों का अध्ययन किया जो मुख्य रूप से मौसम परिवर्तन से संबंधित थे। वे इस परिणाम पर पहुँचे कि 12,000 लेखों में से अधिकांश लेखों में मौसम परिवर्तन का कारण मानव गतिविधियां हैं, इस प्रकार का उल्लेख लेखों में नहीं मिलता है।

किन्तु हम सभी के लिए यह जानना बहुत आवश्यक है कि वातावरण में कौन देश सबसे अधिक विषैले कार्बन डाईऑक्साइड गैस का विसर्जन करता है। अमेरिका इस सूची में सबसे आगे है। एक पुरानी सूचना के अनुसार अमेरिका ने 1999 में प्रति व्यक्ति 5.60 टन कार्बन का विसर्जन किया, रूस ने 2.72 टन प्रति व्यक्ति, ई यू ने 2.40 टन, जापान ने 2.40 टन, चीन ने 0.53 टन और भारत ने लगभग 0. 25 टन प्रति व्यक्ति कार्बन विसर्जित किया था। उपरोक्त आँकड़ो से सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि वास्तव में दोषी कौन है। उन्नत और साधन सम्पन्न देश निश्चित रूप से अधिक दोषी हैं अतएव उन्हें स्वयं आकर वातावरण में कार्बन डाई ऑक्साइड के विसर्जन को कम करना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि थोड़ा उत्तरदायित्व प्रगतिशील देशों का भी है अतएव उन्हें भी इस ओर ध्यान देना होगा। सम्पन्न देशों को चाहिए कि वे तकनीक और धन दोनों ही प्रगतिशील और निर्धन देशों को उपलब्ध कराएं क्योंकि विकसित देश तकनीक और व्यय होने वाले धन दोनों से सम्पन्न हैं। इस संबंध में "इण्टरनेशनल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (अंतर्राष्ट्रीय मौसम परिवर्तन समिति)" की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण हो सकती है।

विकसित की जाने वाली तकनीकों में प्रदूषण–मुक्त ऊर्जा के लिए नई प्रौद्योगिकियों की खोज, आवागमन के साधनों–मोटर वाहनों आदि में जैव–ऊर्जा के प्रयोग को प्रोत्साहन, धरती पर चलने वाले वाहनों को हाइड्रोजन गैस और जलवाष्प (स्टीम) से चलाये जाने को प्राथमिकता प्रदान करना। सोलर थर्मल पॉवर का प्रयोग, सौर कुकर, सौर चूल्हों का प्रयोग, जलाने के लिए लकड़ी और कोयले के स्थान पर गैस का प्रयोग, पवन ऊर्जा और सागर ऊर्जा का प्रयोग, यह ध्यान रखते हुए कि किस स्थान विशेष के लिए कौन सी ऊर्जा उपयुक्त है और साथ ही साथ सुलभ भी है। न्यूक्लियर ऊर्जा भी प्रदूशणमुक्त ऊर्जा है किन्तु इसके उत्पादन और प्रयोग दोनों में ही विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है। भारत इस दिशा में कदम बढ़ा रहा है जो शुभ लक्षण है।

इस प्रकार हम अपनी आवश्यकताओं में कटौती कर सकते हैं और जहाँ तक संभव हो मानवीय गतिविधियों पर किसी सीमा तक अंकुश लगा कार्बन डाई ऑक्साइड की मात्रा में कमी कर सकते हैं। ऐसा हमें अविलम्ब करना होगा। इस प्रकार कुल मिलाकर हमें घबराने की कोई आवश्यकता नहीं है। वास्तविक संकट कम और मानसिक संकट अधिक प्रतीत होता है। मुझे मनुष्य की बुद्धि और उसके विवेक पर आस्था है। हम समस्याओं से निपटने में सक्षम हैं, बस विवेक से काम लेने की आवश्यकता है। इसलिए बिना भयभीत हुए समस्या के समाधान में जुट जाना है। आवश्यकता है मानव मस्तिष्क की क्षमता पर दृढ़ विश्वास की।

विज्ञान के लिए चुनौती बने सायबर अपराध

योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
एसोसिएट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ लॉ
जागरण लेकसिटी यूनिवर्सिटी, भोपाल–462044, मध्य प्रदेश, भारत
yksnliu@gmail.com

विज्ञान के विकास के साथ–साथ संचार के माध्यमों का भी उतनी ही तेजी से विकास हुआ है। आज इक्कीसवीं सदी में विश्व को विज्ञान एवं सूचना प्रौद्योगिकी ने एक वैश्विक गाँव का रूप दे दिया है और विश्व की सभी सभ्यताओं को करीब से इसके माध्यम से न केवल जाना जा सकता है बल्कि उसी भाषा में संवाद भी किया जा सकता है। कम्प्यूटर, इंटरनेट, सोशल मीडिया, फेसबुक, ट्विटर आदि के माध्यम से लोगों के बीच की दूरी समाप्त हो चुकी है। एक तरफ जहाँ पर इन नये संचार के माध्यमों का उपयोग नयी जनक्रांति एवं जन आंदोलनों को खड़े करने में किया जा रहा है तो दूसरी ओर इन्हीं माध्यमों से लोगों को वित्तीय नुकसान पहुँचाने, सामाजिक प्रतिष्ठा को क्षति पहुँचाने और सरकारों के महत्वपूर्ण संस्थानों की वेबसाइट को नुकसान पहुँचाने का कुछ समूह योजनाबद्ध तरीके से काम कर रहे हैं। इसीलिए वैश्विक स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों के माध्यम से एक समान विधि बनाने का आरम्भ संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने सन् 1966 में की थी जिसके आधार पर बाद में विश्व के देशों ने कानून बनाकर इसके दुरूपयोग को नियन्त्रित करने का सार्थक प्रयास किया है। इसके लिए संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने ई–व्यापार एवं इससे जुड़े विभिन्न विषयों को नियन्त्रित करने के लिए 30 जनवरी, 1997 को एक मॉडल कानून बनाया।

जब हम बात करते हैं कि सायबर अपराध हमारे देश में बढ़ रहे हैं तो हमें इसको व्यापार स्तर पर देखकर विश्लेषण करने की आवश्यकता है। मूलतः सायबर अपराध व्यक्तियों के विरुद्ध, संस्थाओं या संगठनों के विरुद्ध या समाज के विरुद्ध होते हैं। प्रथम श्रेणी में जो सायबर अपराध आते हैं उनमें– ई–मेल के माध्यम से लोगों को परेशान करना, अश्लील साहित्य का प्रसारण, सायबर स्टॉकिंग, मानहानि, दूसरों के कम्प्यूटर में अवैध तरीके से घुसकर उपयोग करना, कम्प्यूटर के माध्यम से धोखा–धड़ी आदि आते हैं। दूसरी श्रेणी में किसी संस्था या संगठन के कम्प्यूटर नेटवर्क में घुसकर दुरुपयोग, कम्प्यूटर में प्रविष्ट जानकारियों को अपने कब्जे में लेकर दुरुपयोग, सायबर आतंकवाद, बड़े स्तर पर पाइरेटेड सॉफ्टवेयर का वितरण आदि इसमें आते हैं। तीसरी श्रेणी में ऐसे अपराध आते हैं जो बड़े स्तर पर किये जाते हैं और पूरे समाज के विरुद्ध गम्भीर अपराध की श्रेणी में आते हैं जैसे– वित्तीय अपराध, ऑनलाइन गैंबलिंग, अवैध वस्तुओं की बिक्री, बच्चों से जुड़ी हुई अश्लील वेबसाइट आदि।

भारत सरकार ने सूचना प्रौद्योगिकी के बढ़ते उपयोग एवं दुरुपयोग को देखते हुए वर्ष 2000 में सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 को अधिनियमित किया और वर्ष 2008 में इसकी कमियों को दूर करने का व्यापक स्तर पर प्रयास किया। इसके अस्तित्व में आने के बाद सायबर अपराधों से सख्ती से निपटने के लिए भारतीय दण्ड संहिता 1860, दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973 एवं भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872 में आवश्यकतानुसार विभिन्न धाराओं में व्यापक परिवर्तन किये गये जिससे वर्तमान सूचना प्रौद्योगिकी के युग में इन अधिनियमों को माध्यम से सायबर अपराध से न केवल कठोरता से निपटा जा सके अपितु पर्याप्त अंकुश भी लगाया जा सके।

सूचना प्रौद्योगिकी 2000 की महत्वपूर्ण धाराओं पर सूक्ष्म दृष्टि डालने के पूर्व यह जानना भी आवश्यक है कि सायबर अपराध के कारण और उद्देश्य क्या हैं ? सामान्य रूप से कम जगह में एक साथ संवेदनशील जानकारियों की उपलब्धता, आसानी से पहुँच, पर्याप्त रूप से सतर्कता न बरतना और सबूतों का आसानी से न मिलना कुछ ऐसे विशिष्ट कारण हैं जिससे लगातार सायबर अपराधों में बढ़ोत्तरी देखी जा रही है। सायबर अपराध घटित होने के बाद उसके लिए उत्तरदायी व्यक्ति को पकड़ना एवं उसे दण्डित करवाने के लिए पर्याप्त सबूतों के साथ न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत करना एक लम्बी प्रक्रिया है विशेषकर भारत में जहाँ आज भी थानों में कम्प्यूटर का सतही ज्ञान रखने वालों की कमी है। इस स्थिति में सायबर अपराध की समझ और उसकी जाँच करना एक कठिन व दुरूह कार्य है।

यदि इसके उद्देश्यों पर गौर करें तो आज हर देश के पास सायबर सेना है और कोई भी युद्ध आने वाले समय में इसके माध्यम से ही लड़ा जायेगा। इसलिए कुछ देश विश्व में सायबर आतंकवाद को बढ़ावा देकर सरकारों को अस्थिर करने का काम कर रहे हैं। किसी भी समुदाय, भाषा समूह, क्षेत्रीय समूह आदि के बीच दूरियाँ पैदा करने के लिए देश–विरोधी तत्व इसका व्यापक पैमाने पर उपयोग कर रहे हैं। कुछ समय पहले असम में हुई घटनाओं को बड़े पैमाने पर फेसबुक न अन्य इन्टरनेट के माध्यमों से फैलाकर हिंसा को बढ़ावा देने का प्रयास किया गया और इसके बाद केन्द्र सरकार ने सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 की धारा 69ए के अंतर्गत कई वेबसाइट, फेसबुक आदि पर बड़े पैमाने पर रोक लगाई गयी जो कि विधि सम्मत थी। इसी अधिनियम की धारा 69बी केन्द्र सरकार को एक विशिष्ट अधिकार देती है कि वह ऐसा डाटा जो कि ट्रांजिट में है या किसी कम्प्यूटर पर संरक्षित है उसको अपने अधिकार में ले सकती है, जिसका उद्देश्य हिंसा को बढ़ाकर देश की एकता व अखण्डता के लिए खतरा पैदा करना है।

इसी प्रकार अधिनियम की धारा 66एफ सायबर आतंकवाद से जुड़े अपराधों को दण्डित करने के बारे में प्रावधान करती है। धारा 66ए जो कि वर्तमान समय में सबसे ज्यादा चर्चा में है क्योंकि पुलिस द्वारा राजनीतिक दबाव के चलते इसका सबसे ज्यादा दुरुपयोग किया गया है जो कि भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सीधे–सीधे चुनौती है। सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000 का मूल उद्देश्य सायबर अपराध को नियन्त्रित करना और साथ–साथ ही दण्डित करना है। धारा 66ए के अंतर्गत कोई भी व्यक्ति कम्प्यूटर का उपयोग कर ऐसे संदेशों को प्रसारित करता है जिससे किसी व्यक्ति, समूह, समुदाय, संगठन या राज्य को क्षति पहुँचती है तो इस धारा के अंतर्गत उस पर केस दर्ज कर कार्यवाही की जायेगी। विशेषकर पिछले कुछ समय से इस विशिष्ट अधिनियम की कुछ धाराओं के दुरुपयोग पर चर्चा हो रही है। इसी अधिनियम की धारा 66सी, 66डी, 66ई, 43ए आदि जो कि चोरी, धोखाधड़ी, निजता, कॉरपोरेट द्वारा नुकसान की भरपाई करना यदि वो संवेदनशील या निजी जानकारी की सुरक्षा नहीं कर पाती है आदि प्रमुख प्रावधानों से संबंधित है। इस अधिनियम के बारे में न केवल लोगों को जागरूक किया जाये बल्कि पुलिस के लोगों को व्यापक ट्रेनिंग के माध्यम से जागरूक करना अत्यन्त आवश्यक है। विज्ञान के विकास के साथ–साथ इसके दुरुपयोग की चुनौतियों के बीच केवल कड़े कानून व नियम बनाकर ही इनसे निपटा जा सकता है। आज आवश्यकता इस बात की है कि देश के प्रत्येक जनपद में सायबर थानों की स्थापना की जाय और सायबर पुलिस की संख्या को बढ़ाया जाए। प्रत्येक थाने का आधुनिकीकरण करके उसे एक–दूसरे से नेटवर्किंग के माध्यम से जोड़ा जाए। खासतौर पर कई बार सायबर अपराध दूसरे देशों से किये जाते हैं लेकिन भारतीय कानून, विशेषकर सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000, इससे निपटने में पूर्णतया सक्षम है। बस आवश्यकता इस बात की है कि इस कानून का उपयोग सरकार एवं राजनीतिक दलों के लोगों के द्वारा अपने निजी स्वार्थ एवं उद्देश्यों की पूर्ति के लिए न हो। आज विश्व का प्रत्येक देश सायबर अपराध से जूझ रहा है इसलिए सरकार व जाँच एजेन्सियों को मिलकर इसका सामना करने का प्रयास करना पड़ेगा।

संदर्भ

1. सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम, 2000, बेयर एक्ट/मूल अधिनियम।
2. हिन्दी समाचार पत्रों में छपे लेख।

आधुनिक मेडिकल उपकरण

कौशल कुमार बाजपेई[1] एवं प्रेक्षा राजन[2]
[1]एसोसिएट प्रोफेसर व अध्यक्ष, गणित विभाग
बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
[2]बी0टेक0 छात्रा, एस0आर0एम0 यूनिवर्सिटी, गाजियाबाद, उ0प्र0

मेला फाईड ऑप्टिकल स्कैनर

मिलानोमा, त्वचा के कैंसरो में सबसे दुर्गम होता है। इसके कारण त्वचा पर बहुत से तिल उभर आते हैं। परन्तु मनुष्य के शरीर पर मौजूद अधिकांश तिलों से मिलोनोमा को कोई खतरा नहीं होता लेकिन इसका पता बिना बायोप्सी के नहीं लगाया जा सकता अतः मेला साईसेज द्वारा विकसित मेला फाईड ऑप्टिकल स्कैनर इसमें मदद करता है।

यह स्कैनर मिसाईल नैवीगेशन टेक्नोलॉजी पर आधारित है। यह हर तिल को 10 इलैक्ट्रोमैग्नेटिक तरंगदैर्ध्य (वेवलैंथ) पर मॉपने के पश्चात डाक्टर को यह निर्धारित करने में सहायता करता है कि बायोप्सी जरूरी है या नहीं। यह उपकरण एफ0डी0ए0 द्वारा प्रमाणित है।

आटोमेशन टेक्नोलॉजीस इन्कॉर्पोरेशन

आजकल की भाग दौड भरी जिन्दगी में तनाव व थकावट के कारण होने वाला सिर दर्द या माईग्रेन आम बात है। यह मूलतः स्फीनोपैलेटीन गैंगलिओन या एसपीजी नर्व से संबधित विकार है।

इसके निर्वाण हेतु आटोमेशन टेक्नोलॉजीस इन्कॉर्पोरेशन द्वारा एक ऐसे उपकरण का निर्माण किया गया है जो कि माईग्रेन पैदा करने वाले न्यूरोट्रांस्मिटर्स का स्त्राव रोक देता है। इसके लिए दो इंप्लाट लगाये जाते हैं। एक मसूडों में तथा दूसरा एसपीजी नर्व में। जैसे ही मनुष्य को दर्द का आभास होता है वो एक रिमोट की सहायता से एसपीजी नर्वस को स्टीमुलेट करके पीड़ा को रोक सकता है।

कोलोनोस्कोपीः पिलकैम कोलोन द्वारा

कोलोनोस्कोपी एक ऐसी चिकित्सीय प्रक्रिया है, जिसके माध्यम से मनुष्य की आंतो तथा गुदामार्ग में विभिन्न विकारों जैसे ट्यूमर कैन्सर, क्रोन्स डिसीज जैसी बीमारियों का पता लगाने के लिए किया जाता है। पुरानी तकनीक में इस प्रक्रिया में एक सूक्ष्म ऑप्टिक तन्तु के भीतर डालकर जाँच चार फुट लम्बे तार के माध्यम से मनुष्य की आंतों के भीतर डालकर जाँच की जाती थी, जिसे इण्डोस्कोपी कहा जाता है। यह एक कष्टपूर्ण प्रक्रिया है तथा इसके माध्यम से सूक्ष्म ट्यूमर नहीं देखे जा सकते हैं।

इस समस्या के समाधान हेतु इजराइल की कम्पनी **गिवेन इमेनीन्में** ने एक कैप्सूल कैमरे का निर्माण किया है। बडी आँत की सूक्ष्मतम इमेजिंग करने की क्षमता वाले इस कैमरे का नाम पिजकैम कोलोन है। यह 11.6x31.5 मि0मी0 आकार का कैमरा है जो कि अपने दोनो की सिरों से रंगीन वीडियों कैद कर सकता है। इसके द्वारा अंकित किये गये वीडियो को दोबारा संशोधित किया जा सकता है। इस कैमरे में 4–6 एल0ई0डी0 बल्ब रोशनी प्रदान करते हैं। कैप्सूल के अन्दर 3 वोल्ट की सिल्वर ऑक्साईड की बैटरी आर0 एफ0 ट्रान्समीटर ऐन्टीना, 2 सेन्सर तथा एलईडी युक्त 2 सर्किट बोर्ड होते हैं। इस उपकरण की सहायता से 0.07 मि0मी0 से छोटी वस्तुओं को देखा जा सकता है। अतः छोटे ट्यूमर आदि आसानी से पहचाने जा सकते हैं। इस उपकरण से जाँच हेतु रोगी को इस कैप्सूल कैमरे को मुख द्वारा निगलना पड़ता है। आँत में पहुँचने पर इसके कैमरे काम करना शुरू कर देते हैं। इस उपकरण में खीची गयी फोटो व आंकड़ों को सुरक्षित रखने की कोई आन्तरिक व्यवस्था नहीं है। अतः रोगी को एक डाटा संकलन शरीर में 8–10 घण्टे के लिए पहनना पड़ता है जिसमें यंत्र द्वारा भेजी गयी सूचनाएँ एकत्रित होती रहती हैं।

इस उपकरण द्वारा जाँच की अनुमति विश्व की सभी संस्थाओं द्वारा प्रदान कर दी गयी है।

आणविक अंकित बहुलक

रमेश कुमार प्रजापति[1] एवं मुहम्मद अयूब अन्सारी[2]
[1]वरिष्ठ प्रवक्ता, रसायन विज्ञान, दिगम्बर जैन कॉलेज, बड़ौत, बागपत–250611, उ0 प्र0, भारत
[2]रीडर, रसायन विज्ञान, बिपिन बिहारी पी0 जी0 कॉलेज, झांसी–284001, उ0 प्र0, भारत

आणविक अंकित बहुलक(आ0अं0ब0) एक विशिष्ट प्रकार का बहुलक है, जिसकी विशेषता कृत्रिम सामग्री के साथ पूरक आकार, आकृति और लक्ष्य अणु (टेम्प्लेट) के इलैक्ट्रॉनिक गुण अंकित बाइंडिंग साइटों द्वारा प्राप्त कर विशिष्ट लक्ष्य अणुओं के पहचान में प्रयुक्त होता हैं। इस कारण से आ0अं0ब0 बहुलक के पास चाभी एवं ताले के सदृभय विशिष्ट क्षमता समाहित होती है और आ0अं0ब0 लक्ष्य अणु से बाइन्ड करके जैविक तरल पदार्थ, अपशिष्ट जल, जटिल मिश्रण, औषधि आदि में उपस्थित लक्ष्य अणु की पहचान सूक्ष्म से सूक्ष्मतम मात्रा में ज्ञात करता है।

आ0अं0ब0 का निर्माण, तैयारी विधि आणविक अंकण तकनीकी के द्वारा होता है। इस तकनीकी में लक्ष्य अणु कार्यात्मक मोनोमर, क्रासलिंकर, सर्जक एवं पोरोजन(विलायक) की उपस्थिति में बहुलीकरण से बनते हैं। इसके उपरान्त विलायक में लक्ष्य अणु घुलकर या रासायनिक अभिक्रिया कर बहुलक मैट्रिक्स से निकलकर आ0अं0ब0 में लक्ष्य अणु के पूरक आकार, आकृति एवं इलेक्ट्रॉनिक गुण समाहित होता है। आ0अं0ब0 जब लक्ष्य अणु के मिश्रण से क्रिया कराया जाता है तो चाभी ताले की तरह से पहचान कर लेता है।

आ0अं0ब0 की खोज 1972 में हुई, इसके पश्चात वैज्ञानिकों ने अतिरूचि दर्शाते हुए क्रोमैटोग्राफिक एडजार्बेन्ट, झिल्ली सेंसर, केशिका वैद्युत कण संजलन, एंजाइम एवं रिसेप्टर के विकास में आ0अं0ब0 का आविश्कार कर प्रयोग किया। आ0अं0ब0 का सेंसर के संयोजन के साथ बहुत उपयोगी होते हैं, क्योंकि यहाँ पर आ0अं0ब0 अन्य बाकी को अनदेखी करते हुये केवल लक्ष्य अणु से क्रिया करता है। आज आ0अं0ब0 का प्रयोग पर्यावरण, कीटनाशकों, भारी धातुओं अपशिष्ट और स्वच्छ पानी के गुणवत्ता के साथ–2 रेडियो आइसोटोप से दुलर्भ धातुओं के निकालने में किया जाता है। तेजी एवं किफायती तकनीकी गुणों से सम्पन्न होने के कारण आ0अं0ब0 का प्रयोग रासायनिक एवं जैव विस्फोटकों, विशाक्त पदार्थ की पहचान, रसायन विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में, जीवविज्ञान, अभियांत्रिकी, ठोस के निष्कर्षण, कृत्रिम एन्टीबॉडी के निर्माण में किया जाता है।

आ0अं0ब0 में उच्च आत्मीयता एवं सेलेक्टिविटी की क्षमता प्राकृतिक रिसेप्टरों के समान होती है। इसके अतिरिक्त इनमें असामान्य यांत्रिक स्थिरता होती है, जो कि प्राकृतिक रिसेप्टर में नही होती है। इन गुणों के कारण इनका प्रयोग विभिन्न व्यवहारिक अनुप्रयोगों में किया जाता है। विभिन्न प्रकार के रासायनिक यौगिकों का अंकण(इम्प्रिन्टिंग) सफलतापूर्वक किया जा चुका है।

लक्ष्य अणु से निर्मित आ0अं0ब0 में पहचान करने का गुण एंटीबॉडीज द्वारा पहचान करने के सिद्धांत के समान होता है। यह कोआपरेटिव गैर संयोजक सम्बन्ध जैसे कि हाइड्रोफोबिक, ध्रुवी एवं हाइड्रोजन बन्ध के द्वारा इंटरऐक्शन से होता है। यद्यपि आ0अंब0 में एंटीबॉडीज की तुलना में आत्मीयता का गुण कम होता है लेकिन इनकी उपयोगिता इसलिए ज्यादा होती है क्योंकि आ0अं0ब0 का निर्माण विशिष्टता के साथ कम अणुभार(1000 से कम) वाले लक्ष्य अणु के लिए भी किया जा सकता है। जबकि एंटीबॉडीज उन्हीं लक्ष्य अणुओं या एंटीजेन के साथ अभिक्रिया करके पहचान करता है जिसका अणुभार(6000) से ज्यादा होता है। इसके अतिरिक्त आ0अं0ब0 एंटीबॉडीज की तुलना में इस संदर्भ में उच्च होते हैं कि इनका निर्माण एवं उत्पादन विभिन्न प्रकार के विलायकों के साथ किया जा सकता है, जबकि एंटीबॉडीज फिजियोलॉजिकल कंडीशन में ही क्रिया करते हैं।

आ0अं0ब0 एफिनिटी क्रोमैटोग्राफी में भी अत्यधिक लोकप्रिय है। स्वतः आकर्षण गुण के कारण आ0अं0ब0 क्रोमैटोग्राफी में विशिष्ट पदार्थ से बाइन्ड कर उन्हें मिश्रण से पृथक करने का कार्य करते हैं। खादय पदार्थों के परीक्षण में भी आ0अं0ब0 द्वारा एफिनिटी क्रोमैटोग्राफी तकनीकी में उपयोग किया जाता है।

आ0अं0ब0 का निर्माण सामान्यतः दो मुख्य प्रकार से होता है–

1. गैर संयोजक अंकण एवं अर्ध संयोजक अंकण– इस विधि द्वारा आ0अं0ब0 का निर्माण व्यापक पैमाने पर किया जाता है। इसमें बहुलक का निर्माण आ0अं0ब0 में सम्मिलित सभी अवयवों के संयोजन से होता है। इस विधि द्वारा बनाये गये आ0अं0ब0 कई प्रकार से उपयोगी होते हैं, क्योंकि इसमें प्राकृतिक बाईडिंग करने के लिए अतिरिक्त लचीलापन उत्पन्न होता है।

2. संयोजक (पूर्व संगठित दृश्टिकोण) अंकण– यह आ0अं0ब0 तैयार करने की दूसरी विधि है। जिसमें संयोजक बन्ध का गठन होता है। इसमें लक्ष्य अणु कार्यात्मक मोनोमर के बीच संयोजक बन्ध से मैक्रो झरझरा बहुलक टेम्प्लेटिंग के परिणाम से बनता है। इससे लक्ष्य अणु के आ0अं0ब0 में अपने पूरक आकार एवं आकृति, इलेक्ट्रॉनिक गुण से समान गुहा बनाकर निकल जाता है। संयोजक बन्ध से आ0अं0ब0 में उच्च स्थिरता उत्पन्न होती है और बाइंडिंग साइट निर्दिष्ट तथा अधिक समान लक्ष्य समानताओं के साथ बनता हैं।

सन्दर्भ

1. मॉसवेक, हापट (2000) "आणविक अंकित बहुलक और बायोमिमिटिक सेंसर में उनका अनुप्रयोग", कैमि0 रिव्यू , खण्ड 100, मु0 पृ0 2495–2504।
2. सेलर्गन, बोर्ज, बुसेल एवं गन्टर (1999) "एक झरझरा आ0अ0ब0 और तैयारी", पी0सी0टी0 इन्टरनेशनल एप्लाईड।
3. वुल्फ, जी0; ए0 सरहान(1972) एन्ज्यू0 केम0, खण्ड 84, 364। एन्ज्यू0 केम0 इण्टन0, इडि0 इन्गली0, खण्ड 1, 341।
4. वुल्फ, जी0; ए0 सरहान; जब्रोकी, के0 एवं टेट्राहेड्रन लेटर(1973) खण्ड 44, मु0 पृ0 4329– 4322।

16वीं सदी में हुए यूरोपीय वैज्ञानिक आविष्कार

नीलिमा गुप्ता
रीडर, इतिहास विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत

14वीं–15वीं सदी में यूरोप में हुए रेनेसा[1](बुद्ध स्वातन्त्र्य आन्दोलन) के परिणामस्वरूप यूरोप में अनेक विचारकों ने सत्य की खोज के लिये तर्क और परीक्षण की पद्धति को अपनाया। वास्तव में मध्ययुगीन समाज की रूढ़िवादिता, धार्मिक कट्टरता, अन्धवि वास तथा विज्ञान के प्रति अतिउदासीनता ने वैज्ञानिक अन्वेषण एवं प्रगति के मार्ग को रोक दिया था। किन्तु आधुनिक युग[2] के आरम्भ के साथ ही मध्ययुगीन विचार धारायें व संस्थाएं नष्ट होने लगीं फलतः मध्ययुग के अन्त तथा आधुनिक युग[3] के आरम्भ में अनेक अनुसन्धान एवं अन्वेषण हुये।

प्रारम्भिक आविष्कारों में कागज, बारूद, और कम्पास के अविष्कारों ने मानव–जीवन को सर्वाधिक रूप से प्रभावित किया। मध्यकाल में यूरोपीय लिखने के लिये बकरी के खाल का प्रयोग करते थे। 15 वीं सदी तक वे कागज से अपरिचत रहे। यद्यपि कागज का आविष्कार सबसे पहले चीन ने किया। दूसरी सदीं में चीन के लोग रेशम से कागज बनाने लगे थे। चीन से कागज बनाना मंगोलों ने सीखा। मंगोलों से अरबों ने और अरबों द्वारा कागज का प्रयोग यूरोप पहुँचा। अरब कागज को बनाने के लिये कपास का प्रयोग करते थे। मध्यकाल में स्पेन, अरब साम्राज्य का अंग था, अतः सबसे पहले स्पेन में कागज का निर्माण होने लगा। स्पेन से फ्रान्स, फिर शेष यूरोप में कागज का निर्माण होने लगा। कागज का आविष्कार होने के बावजूद कागज के कीमती होने तथा अनुपलब्धता के कारण यूरोप में 15 वीं सदी तक अधिकतर खालों का प्रयोग होता रहा, साथ ही हाथों से लिखे जाने के कारण पुस्तकें मंहगी होती थी। सर्वसाधारण के लिये पुस्तकें दुर्लभ थी। जर्मनी के मेंज भाहर के निवासी गुटेनबर्ग ने गतिशील अक्षरों का आविष्कार किया।[3] इस तरह से छापेखाना का आविष्कार हुआ। 1454 में बाइबिल का प्रथम लैटिन संस्करण प्रकाशित हुआ। यद्यपि चीनी पहली सदी ईसा पूर्व में लकड़ी के ब्लॉक बनाकर उनसे छापने का कार्य लेने लगे थे। यूरोपीयों ने कागज की भाँति मंगोलों से मुद्रण करना सीखा था।

दिशा सूचक यन्त्र (कम्पास) के आविष्कार ने यूरोपी मल्लाहों की समुद्री यात्राओं को सुलभ बना दिया। कम्पास का आविष्कार चीन में हुआ था। पाँचवीं सदी में चीनी, कम्पास का प्रयोग करने लगे थे। कम्पास का प्रयोग चीनियों से अरबों ने, अरबों से यूरोप में पहुँचा। 12वीं सदी तक यूरोपीय इस यन्त्र के प्रयोग से परिचित हो गये थे।[4] कम्पास के प्रयोग ने यूरोपीयों को पृथ्वी की अन्य संस्कृतियों से परिचित कराया, तो सामुद्रिक व्यापार में विशेष सफलता दिलायी। मध्यकाल में यूरोपीय बारूद से अपरिचित थे। बारूद का आविष्कार चीन में हुआ था, जिसे अपनाकर मंगोलों ने दूर–दूर तक विजय–यात्रा की । 13 वीं सदी में यूरोप में बारूद का प्रवेश हुआ। 14वीं सदी तक यूरोपीय शासक बारूद का प्रयोग करने लगे।[5] साम्राज्य विस्तार में बारूद की भूमिका महत्वपूर्ण रही। इसने युद्ध की तकनीकी को ही बदल दिया।

कागज, कम्पास, छापाखाना तथा बारूद ने मानवजीवन को विशेष रूप से प्रभावित किया। रेनेसां के परिणामस्वरूप अनेक यूरोपीय– विचारकों ने सत्य की खोज के लिये तर्क तथा परिक्षण की पद्धति अपनायी। सर्वप्रथम 13वीं सदी में प्रायोगीय विज्ञान के जन्मदाता रोजर बेकन ने इस बात पर बल दिया कि सत्य के निर्धारण के लिये हमें प्रमाणवाद का परित्याग कर, अपनी बुद्धि से काम लेना चाहिए। उन्होनें प्रचलित मूर्खता एवं अन्धकार को दूर करने के लिये अनेक लेख व पुस्तकें लिखीं। यद्यपि रोजर बेकन की शिक्षा और प्रयत्न के तीन शताब्दी बाद ही मनुष्य ने स्वतन्त्र रूप से प्रकृति के गुप्त रहस्यों को खोजने और समझने का प्रयास किया। फ्रान्सिस बेकन(1561–1626) ने विज्ञान पर आधारित नवीन दार्शनिक विचारधारा को स्थापित करने का प्रयास किया । फ्रान्सिस बेकन का कथन था 'कि मध्यकालीन दर्शन के स्थान पर प्रकृति एवं भौतिकविज्ञान का अध्ययन करना चाहिए।' इसी कारण फ्रान्सिस बेकन को 'आधुनिक विज्ञान का पिता' कहा गया।

विद्वानों को वैज्ञानिक प्रयोग और खोजों के लिये सबसे ज्यादा संघर्ष चर्च से करना पड़ा। क्योकि श्रद्धा और विश्वास प्रधान धर्म वैचारिक–स्वतन्त्रता और प्रयोगों का प्रबल विरोधी था। 15वीं सदी तक यूरोपीय लोगों को विश्वास था कि पृथ्वी स्थिर है और सूर्य व विभिन्न ग्रह पृथ्वी के चारो घूमते हैं। इस सिद्धान्त का प्रतिपादन मिश्र देश के निवासी ग्रीक ज्योतिषी टॉलमी ने किया था।[6] इस मत को ईसाई धर्माचार्यों ने धार्मिक सिद्धान्त के समान सत्य मान लिया था। 16वीं सदी में पोलिश विद्वान कोपरनिकस (1473–1543) ने इस विचार धारा के विरूद्ध आवाज उठाई। ग्रीकसाहित्य का अध्ययन करते हुये उसने अरिस्टार्कस[7] द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धान्त का पता लगाया कि सूर्य पृथ्वी की अपेक्षा बड़ा है। सूर्य स्थिर है, पृथ्वी

उसके चारों ओर चक्कर लगाती है। कापरनिकस ने अरिस्टार्कस के मत का समर्थन करते हुये ग्रन्थों के अध्ययन एवं साधारण यंत्रों की सहायता से यह सिद्ध किया कि अन्य ग्रहों की भाँति पृथ्वी भी एक ग्रह है। जो सूर्य के चारो ओर परिक्रमा करती है। वह अपनी कीली पर घूमती है, जिससे दिन रात होता है। परन्तु दण्ड के भय से वह अपने विचारों को प्रकाशित न कर सका। उसकी मृत्यु के बाद 1543 में उसका क्रान्तिकारी ग्रन्थ "कनसर्निंग द रिवोल्यूशन ऑफ द हेवनली बॉडीज" प्रकाशित हुआ।[8] यूरोप में उसके सिद्धान्त का स्वागत बहुत धीमी गति से हुआ। 1600 ई0 में जार्डेन ब्रूनों नामक इटली विद्वान को इस सिद्धान्त के समर्थन के कारण जीवित जला दिया गया, तो वहीं, गैलीलियो ने चर्च के भय से अपना विचार वापस ले लिया। जर्मन विद्वान केपलर (1571–1640), कापरनिकस के सिद्धान्त से अत्यधिक प्रभावित हुआ। इस दिशा में उसने कार्य करना आरम्भ किया और अपने प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध किया कि सूर्य स्थिर है, पृथ्वी व अन्य ग्रह निश्चित पथ पर सूर्य की परिक्रमा करते हैं।[9] केपलर विश्व का पहला वैज्ञानिक था जिसने सौर मण्डल की गति के तीन[10] आधार भूत सिद्धान्त का प्रतिपादन किया।

इटली निवासी गैलीलियो (1564–1642) को बचपन से विज्ञान में विशेष अभिरूचि थी। 17 वर्ष की अवस्था में पीसा के गिरजाघर में लटकते हुये, लैम्प के बड़े छोटे झोंपों की समान गति की गणना करके, पैण्डूलम वाली घड़ियों का आविष्कार किया। लोगों का विश्वास था कि विभिन्न भार की वस्तुओं को एक साथ गिराया जाय तो, भारी वस्तु हल्की वस्तु से पहले पहले जमीन पर गिरेगी, इस धारणा को गैलीलियो ने गलत प्रमाणित किया। सिद्ध किया कि वस्तु के गिरने पर भार का गति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। गैलीलियो ने दूरबीन का भी आविष्कार किया। उन्होंने बृहस्पति के उपग्रहों तथा आकाश गंगा का अध्ययन किया।[11] गैलीलियो को अपने आविष्कारों के कारण जीवन भर अपमान व कष्टों को सहना पड़ा।

डॉ0 गिलबर्ट (1540–1603) ने चुम्बक का पता लगाया और इस तथ्य का प्रतिपादन किया कि वस्तुओं में एक दूसरे को खीचनें की तथा अपनी ओर आकर्षित करने की शक्ति विद्यमान है। रोजर बेकर ने सूक्ष्मदर्शी यन्त्र का आविष्कार किया। जिससे विज्ञान के अन्य आविष्कारों में महत्वपूर्ण सफलता मिली। 16वीं सदी में गणित के क्षेत्र में महत्वपूर्ण खोजें हुई। देकार्त नामक फ्रान्सीसी ने बीजगणित के ज्यामिति में प्रयोग करने का तरीका खोजा। स्टेविन ने दशमलव तथा नेपियर ने प्रतिफल पर नई खोजें की। सबसे पहले नेपियर ने दशमलव का प्रयोग किया। तरतग्लिया ने घन समीकरण के नियमों का प्रतिपादन कर गणित को नई दिशा प्रदान की ।[12] चिकित्सा के क्षेत्र में अनेक आविष्कार हुये। यूनानी चिकित्सा शास्त्र का प्रकाण्ड पण्डित गेलन ने यूरोपीय चिकित्सा– प्रणाली का उन्नयन किया था। लेकिन उसके सिद्धान्तों को आगे बढ़ाने का कोई प्रयास नहीं किया गया। 16 वीं सदी में एंड्रीयन वैसालियस नामक विद्वान ने रसायनशास्त्र की सहायता से अनेक औषधियों की खोज की। उसने शरीरविज्ञान के सम्बन्ध में 'मनुष्य के शरीर की बनावट' नामक ग्रन्थ की सन् 1546 में रचना की। इस तथ्य का प्रतिपादन किया कि कुशल चिकित्सक द्वारा चीर–फाड़ गृह में मनुष्य के शरीर सम्बन्धी प्राप्त ज्ञान, पुस्तकीय ज्ञान से अधिक महत्पूर्ण है इसके पहले यूरोप में सर्जरी का कार्य नाई द्वारा लिया जाता था।[13] 16वीं सदी में ही हार्वे नामक मानव वैज्ञानिक ने यह सिद्ध किया कि शरीर में रक्त–प्रवाह होता है। इस आविष्कार के कारण रक्त चढ़ाने व हृदय रोग की चिकित्सा सम्भव हो सकी। 16 वीं सदी में ही केमिस्ट्री, बायलॉजी तथा जूलॉजी जैसे विषयों को पहचान मिली।[14]

इस प्रकार 16वीं सदी में विद्वानों एवं वैज्ञानिकों के साहसपूर्ण प्रयासों के कारण विज्ञान चर्च के चंगुल से मुक्त होने का प्रयास कर रहा था। अनेक वैज्ञानिक विश्व की समस्याओं व प्रकृति के रहस्यों को सुलझाने के लिये यूनानी विचारधारा का नवीन ढंग से प्रयोग कर रहे थे। कागज व छापेखाने के आविष्कार ने सरल तरीके से ज्ञान मानव तक पहुँचाने का आधार तैयार किया। यद्यपि प्रारंभिक आविष्कारों का ईसाई धर्माचार्यों ने न केवल उनका उपहास किया बल्कि उन्हें काफिर व देशद्रोही समझते रहे, उन्हें जीते जी जलाया। अत्याचारों के बावजूद वैज्ञानिक खोजों की प्रवत्ति रूकी नहीं, बल्कि यह प्रवृति आधुनिक युग के सूत्रपात में अत्यधिक सहायक हुई।

सन्दर्भ

1. यूरोपीय इतिहास में मध्यकाल के अन्त और आधुनिक युग के सन्धिकाल में जो प्राचीन विद्या साहित्य और कला का पुनरोद्धार हुआ उसे रेनेसां कहा गया।
2. सामान्यतः यूरोप में आधुनिक युग का आरम्भ 1453 ई0 से माना जाता है।
3. सिंह, हीरा एवं सिंह, वृक्ष (2008–2009) "आधुनिक यूरोप का इतिहास" इलाहाबाद संशोधित संस्करण, पृष्ठ 18।
4. विद्यालंकार, सत्यकेतु (1947) "यूरोप का आधुनिक इतिहास", नई दिल्ली, 11वां संस्करण, पृष्ठ 46–47।
5. वही, पृष्ठ 48।
6. हेज, सी0 जे0 एच0 (1982) "मॉडर्न यूरोप टू 1870", दिल्ली, तृतीय भारतीय संस्करण, पृ0 117।

7. अरिस्टार्कस का जन्म टॉलमी से कई सदी पहले हुआ था।
8. लैटिन भाषा में पुस्तक का नाम–"ऑन द रेवल्यूशन ऑफ द सेलेस्टियल बॉडीज" था।
9. हेज, सी0 जे0 एच0(1982) "मॉडर्न यूरोप टू 1870", दिल्ली, तृतीय भारतीय संस्करण, पृ0 117, मित्तल, ए0 के0 (2013) "यूरोप का इतिहास", आगरा, पृ0 731–32।
10. केपलर ने तीन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया– 1–कक्षा का सिद्धांत– के अनुसार सभी ग्रह सूर्य के चारो ओर अण्डाकार रूप से घूमते हैं, 2–लॉ ऑफ एरियाज– के अनुसार किसी भी ग्रह की गति सूर्य की दूरी पर निर्भर करती है, 3–लॉ ऑफ पीरियड्स– के अनुसार ग्रह द्वारा सूर्य की परिक्रमा करने में लगे समय का वर्ग उसकी सूर्य से औसत दूरी के त्रीघात के अनुपात में होता है।
11. मित्तल, ए0 के0, "यूरोप का इतिहास", पृ0 30–31।
12. हेज, सी0 जे0 एच0(1982) "मॉडर्न यूरोप टू 1870", दिल्ली, तृतीय भारतीय संस्करण, पृ0 120, 121। मित्तल, ए0 के0, "यूरोप का इतिहास", पृ0 21।
13. सिंह, हीरा एवं सिंह, वृक्ष (2008–2009) "आधुनिक यूरोप का इतिहास" इलाहाबाद संशोधित संस्करण, पृष्ठ 20। हेज, सी0 जे0 एच0(1982) "मॉडर्न यूरोप टू 1870", दिल्ली, तृतीय भारतीय संस्करण, पृ0 123।
14. हेज, सी0 जे0 एच0 (1982) "मॉडर्न यूरोप टू 1870", दिल्ली, तृतीय भारतीय संस्करण, पृ0 124।

पोषण और स्वास्थ्य के लिए फलों का महत्व

रश्मि गुप्ता
एसोसिएट प्रोफेसर, वनस्पति विज्ञान विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
rashmi_bsnv@rediffmail.com

स्वास्थ्य के लिए फलों का महत्व सर्वमान्य है। शरीर में पोषक तत्वों की कमी को पूरा करने के लिए फलों से बेहतर कोई विकल्प नहीं है। यदि हम कौन से फल कब खाते हैं, कितनी मात्रा में खाते हैं जैसी कुछ जरूरी बातों का ध्यान रखेंगे तो फलों के सेवन से हमको अधिकाधिक लाभ मिलेगा। वैसे तो फल जितने भी खाएं स्वास्थ्य के लिए अच्छा ही है पर स्वस्थ रहने के लिए दिन में अलग–अलग रंग के कम से कम चार फल अवश्य खाने चाहिये। जैसे संतरा, सेब, अंगूर और केला। विभिन्न रंगों के फलों में अलग–अलग तरह के एंटीऑक्सीडेंट्स होते हैं जो शरीर को पुष्ट बनाते हैं और रोगों से लड़ने की क्षमता देते हैं। प्रायः लोग रात में फल खाने से हिचकिचाते हैं लेकिन फाइबर की अधिकता वाले फल जैसे पपीता, चीकू, अमरूद आदि का सेवन रात में भी लाभप्रद है। ये शरीर की पाचन क्रिया को ठीक रखने में मदद करते हैं। रात में पानी की अधिकता वाले फलों से बचना चाहिए। तरबूज, अंगूर, संतरा जैसे फल जिनमें पानी की मात्रा अधिक होती है, के सेवन से बार–बार मूत्र त्यागने की समस्या होती है। फलों को खाने का सबसे अच्छा समय है नाश्ते या खाने के बीच में या फिर दोपहर के खाने और रात के खाने के बीच। गर्मियों के मौसम में तरबूज, खरबूज, अंगूर, सेब जैसे फल खाना बहुत उपयोगी होता है। इससे शरीर में पानी की कमी नहीं होती और गर्मियों में स्वास्थ्य से संबंधित छोटी–छोटी समस्याओं से दूर रहते हैं। फल हमें जीवन के दैनिक आहार में प्रयोग करना चाहिए। इससे कई प्रकार की बीमारियों से राहत मिलेगी।

फल हमारे स्वास्थ्य के लिए गुणकारी और आवश्यक हैं। चिकित्सा विज्ञान भी फलों के महत्व को एकमत से मानता है। लेकिन अपने भोजन में फलों को प्रमुखता से जगह देना हमारे लिए आसान नहीं होता। फल हमारी सेहत तो बना देते हैं लेकिन उनकी ऊँची कीमतें हमारे बजट का समीकरण बिगाड़ देती हैं। फिर भी स्वास्थ्य के लिए अपने बजट में फल को शामिल किया ही जाना चाहिए। पौष्टिकता से भरपूर फल तंदुरुस्ती तो बढ़ाते ही हैं, खूबसूरती में भी चार चांद लगा सकते हैं। मौसमी फलों में उस मौसम विशेष में स्वास्थ्य के लिए आवश्यक लाभप्रद विटामिन आदि पाये जाते हैं। गहरे रंग वाले फलों में विटामिन–ए काफी मात्रा में पाया जाता है। जबकि खट्टे फलों में विटामिन–सी भरपूर होता है। ये सभी शरीर के लिए बहुत आवश्यक हैं। नाश्ते में नियमित रूप से फल खाने चाहिए। चिकित्सा विज्ञान के मानकों के अनुसार, एक सामान्य वयस्क व्यक्ति को प्रतिदिन फल के रूप में 2000 कैलोरी लेनी चाहिए। एक छोटा सेब, एक सामान्य आकार का केला, आधा कप अनार और 30 अंगूर से इतनी कैलोरी प्राप्त हो जाती है। कई शोधों में यह साबित हो चुका है कि फल के बगैर स्वस्थ मानव शरीर की कल्पना करना बेमानी है। फल खाने से वजन सामान्य रहता है, आंतों का कैंसर नहीं होता, हार्ट की समस्या नहीं होती है, स्ट्रोक्स नहीं आते और तमाम तरह की बीमारियों से बचाव होता है। फलों में कई तरह के विटामिन और प्रोटीन पाए जाते हैं जो शरीर को रोग–प्रतिरोधक क्षमता प्रदान करते हैं और बीमारियों से लड़ने में मदद करते हैं। फलों में सबसे अधिक पोषक तत्व पाए जाते हैं। जितनी अधिक मात्रा में विटामिन, मिनरल्स, एंटीऑक्सिडेंट और पोषक तत्व फलों में पाए जाते हैं, उतनी अधिक मात्रा में अन्य खाद्य पदार्थ में नहीं मिलते। अधिकांश लोगों का ऐसा मानना है कि फलों में मिठास (चीनी) होती है। इस वजह से यह वजन बढ़ाने का काम करते हैं। लेकिन यह बिल्कुल गलत है। फलों में पायी जाने वाली मिठास आमतौर पर प्रयोग की जाने वाली साधारण सफेद चीनी से बिल्कुल अलग है। फलों में कई तरह के उपयोगी फाइबर पाए जाते हैं, जो कैलोरी को कम करने और शरीर के लिए उत्तम पोषक तत्वों को बढ़ाने का काम करते हैं। फलों में कम कैलोरी होती है और इसमें किसी भी तरह की अस्वास्थ्यकर वसा नहीं पायी जाती है, जिससे वजन बढ़ नहीं पाता और हम चुस्त रहते हैं। यह प्रतिरक्षी तंत्र (इम्यून सिस्टम) को मजबूत कर रोग–प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ता है। डायबिटीज के मरीजों को मीठा फल नहीं खाना चाहिए, यह आम धारणा है जबकि सामान्य चयनित फलों की मिठास से डायबिटीज के मरीजों को कोई नुकसान नहीं होता बल्कि ये डायबिटीज मरीजों के लिए भी काफी लाभप्रद हैं। फलों में पाया जाने वाला फाइबर और विटामिन, डायबिटीज मरीज के प्रतिरक्षी तंत्र (इम्यून सिस्टम) को काफी मजबूत बनाता है। आजकल अधिकाधिक फल उत्पादन एवं इनके संग्रह एवं आकर्षक बनाने हेतु प्रायः विभिन्न प्रकार के रसायनों का प्रयोग किया जा रहा है। अतः फलों के प्रयोग के पूर्व इन्हें अच्छी प्रकार से धोकर ही प्रयोग करना उचित है।

हमारे स्वास्थ्य के लिए गुणकारी प्रमुख फल

पपीता

पपीता स्वास्थ्य के लिए बहुत ही फायदेमंद होता है। जहाँ इससे पेट संबंधी परेशानियां दूर होती हैं, वहीं त्वचा भी काफी अच्छी हो जाती है। यही नहीं, इसके और भी कई लाभ हैं। जिन लोगों को गुर्दा की तकलीफ होती है उन्हें रोज पपीता खाना चाहिए। दांत संबंधी तकलीफें भी पपीता खाने से दूर होती हैं। दांत हिलने, दांतों से खून आने जैसी परेशानियों में राहत मिलती है। पपीता खाने से आंखों की रोशनी भी अच्छी बनी रहती है। अगर पेट में कीड़े हों, तो कच्चे पपीते का रस फायदा करता है। इसे दिन में दो बार पीने से कीड़े खत्म होने लगेंगे। खाली पेट पपीता खाने से बवासीर की शिकायत दूर होती है। सेंधा नमक, जीरा पाउडर और नींबू के साथ खाने पर कब्ज दूर होती है। महिलाओं के लिए पपीते का रस बहुत लाभकारी होता है। पपीते की पत्तियां भी रामबाण की तरह काम करती हैं, यह कैंसर को दूर करने में बहुत सहायक होती हैं। पपीता वजन कम करने में भी काम आता है। पपीते को मसल कर चेहरे पर लगाने से त्वचा चमकने लगती है, मुलायम हो जाती है तथा चेहरे की झुर्रियाँ भी खत्म हो जाती हैं।

सेब

सेब का फलों में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। सेब पौष्टिक तत्वों से भरा है। ये न केवल रोगों से लड़ने में सहायता करता है बल्कि शरीर को भी स्वस्थ रखता है। वैज्ञानिक अध्ययनों से पता चला है कि सेब के सेवन से ह्रदय रोग, कैंसर, मधुमेह के साथ ही दिमागी बीमारियों जैसे पार्किंसन और अल्जाइमर आदि में भी आराम मिलता है। सेब रेशे वाला फल है इसीलिए सेब खाने से पाचन तंत्र भी सही रहता है। यह एक अच्छा एंटीऑक्सिडेंट भी है जो मधुमेह, कैंसर, और दिमाग से सम्बन्धित बीमारियों को दूर करने में भी मदद करता है। सेब शरीर में ग्लूकोज की मात्रा को सामान्य करता है। जिससे मधुमेह के रोगियों को लाभ होता है। सेब में जो विशेष अम्ल होता है, उसे 'मैलिक एसिड' कहते हैं। यह अम्ल विशेष रूप से आंतों, यकृत और मस्तिष्क के लिए बहुत उपयोगी माना जाता है। सेब में कार्बोहाइड्रेट की विशेष मात्रा के साथ–साथ कैल्शियम और फॉस्फोरस की भी मात्रा रहती है। इसमें विशेष रूप से विटामिन 'ए', 'बी' काम्पलेक्स तथा विटामिन 'सी' की मात्रा भी पाई जाती है। भोजन में विद्यमान फॉस्फोरस सामान्य रूप से जलन पैदा करने वाला पदार्थ माना जाता है। भोजन के साथ, उसे उचित मात्रा में खायें तो पदार्थ जल्दी पचते हैं। पेट नियम से साफ होने लगता है। इस प्रकार सेब के खाने से आमाशय पुष्ट होने लगता है। सेब बहुत–सी बीमारियों को दूर करके स्वास्थ्य ठीक रखने में सहायक होता है। सेब में विशिष्ट औषधियुक्त गुण पाए जाते हैं। इसका कारण इसमें विद्यमान पैक्टीन नामक पोषक तत्व है। इसका विशिष्ट कार्य यह है कि यह भोजन वाली नली में प्रोटीन को सड़ने से रोकता है तथा 'मैलिक एसिड' नामक अम्ल आंतों, जिगर और मस्तिष्क के लिए लाभदायक सिद्ध होता है। इससे कब्ज अपने–आप समाप्त हो जाती है। सेब में विद्यमान औषधीय गुणों की विशेषता यह है कि इससे जहाँ कब्ज समाप्त होती है, वहाँ अतिसार भी बंद होते हैं। अतिसार की स्थिति में सेब को भाप पर पकाकर खाना चाहिए। सेब में विद्यमान औषधीय गुण निम्नवत हैं–

- सेब एनीमिया जैसी बीमारी में लाभदायक है क्योंकि सेब में लौह तत्व (आयरन) बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है।
- लाल सेब में मौजूद क्वरसिटिन रसायन, मानव कोशिकओं को नुकसान पहुँचाने से बचाता है और रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। इससे कैंसर का खतरा कम हो जाता है।
- सेब मधुमेह से बचाता है। सेब में पाए जाने वाला पेक्टिन जो की ग्लाक्ट्रोनिक एसिड की कमी शरीर में पूरी करता है और इन्सुलिन के उपयोग को कम करता है।
- सेब में घुलनशील फाइबर पाया जाता है जो कोलेस्ट्रोल को कम करता है।
- कई स्वास्थ्य समस्याओं की वजह मोटापा माना जाता है। जैसे ह्रदय रोग, उच्च रक्तचाप, मधुमेह जैसी बिमारियाँ ज्यादा वजन के कारण ही होती हैं। सेब में फाइबर उच्च स्तर में पाया जाता है जो वजन कम करने में मदद करता है।

- सेब में पाये जाने वाले एंटीऑक्सिडेंट यकृत को मजबूत करते हैं।
- सेब फाइबर का भंडार माना जाता है। जिसके कारण यह कब्ज और दस्त से बचाता है।
- इसमें बैक्टीरिया और वायरस को मारने की क्षमता होती है। और मुँह में थूक की मात्रा को को भी बढ़ाता है।
- सेब गुर्दे की पथरी को बनने से रोकने में सहायता है चूंकि इसमें साइडर सिरका अच्छी मात्रा में होता है।
- सेब मस्तिष्क की बिमारियों जैसे कि अल्जाइमर की रोकथाम करने में भी उपयोगी है क्योंकि यह मुक्त रेडिकल डैमेज से मस्तिष्क कोशिकाओं की रक्षा करता है जो अल्जाइमर का कारण बनती है।
- सेब उर्जा का एक बहुत अच्छा स्रोत है चूँकि यह फेफड़ों के लिए ऑक्सीजन की आपूर्ति में मदद करता है। इसलिए, वर्कआउट करने से पहले सेब खाने की सलाह दी जाती है। यह क्षमता को बढ़ाता है और उर्जा के स्तर में भी वृद्धि करता है।
- सेब में फ्लावनोईड पाया जाता है जो की औरतों को आस्टियोपोरेसिस से बचाता है क्योंकि यह हड्डियों का घनत्व बढ़ाता है।

केला

पूजा–पाठ से लेकर सौन्दर्य उत्पाद तक में केले का प्रयोग किया जाता है। इसके भी एक नहीं, अनेक लाभ हैं। खाना खाने के बाद केला खाने से भोजन आसानी से पच जाता है। रोज सुबह एक केला और एक गिलास दूध पीने से वजन नियन्त्रण में रहता है और बार–बार भूख भी नहीं लगती। केला खाने से हाई ब्लड प्रेशर और मूत्र रोगों की समस्या को दूर करने में मदद मिलती है। कच्चे केले को दूध में मिलाकर लगाने से त्वचा निखर जाती है और चेहरे पर भी चमक आ जाती है। गर्भावस्था में महिलाओं के लिए केला बहुत अच्छा होता है क्योंकि यह विटामिन से भरपूर होता है। केले को मैश करके बालों में लगाने से बाल नर्म, मुलायम और चमकदार हो जाते हैं। केला बच्चों के लिए बहुत अच्छा होता है क्योंकि यह अपने आप में ही पूर्ण आहार होता है।

अंगूर

अंगूर एक ऐसा फल है जो विश्व के लगभग सभी क्षेत्रों में उपलब्ध है और बहुत से लोग इसे अत्याधिक पसन्द करते हैं। इस का 79 प्रतिशत भाग पानी होता है तथा इसमें विभिन्न प्रकार की शर्करा, लवण और लाभदायक तत्व होते हैं। अंगूर एक सुगंधित लता वाला फल है। अंगूर में भस्म, अम्ल, शर्करा, गौंद, ग्लूकोज, कशाय द्रव्य, साइट्रिक, हाइट्रिक, रैसेमिक और मैलिक एसिड, सोडियम और पोटेशियम और क्लोराइड मैग्नीशियम आदि होता है। अंगूर एक बलवर्धक एवं सौन्दर्यवर्धक फल है। अंगूर फल, माँ के दूध के समान पोषक है। फलों में अंगूर सर्वोत्तम माना जाता है। यह निर्बल–सबल, स्वस्थ–अस्वस्थ आदि सभी के लिए समान उपयोगी होता है। बहुत से रोग जिसमें रोगी को कोई पदार्थ नहीं दिया जाता है उसमें भी अंगूर फल दिया जा सकता है। पका हुआ अंगूर तासीर में ठंडा, मीठा और दस्तावर होता है। यह आँखों के लिए हितकर होता है। अंगूर रक्त साफ करने वाला, रक्त बढाने वाला तथा तरावट देने वाला फल है। अंगूर हृदय की दुर्बलता को दूर करने के लिए बहुत गुणकारी है। हृदय रोगी को नियमित रूप से अंगूर खाने चाहिए। अंगूर के सेवन से फेफड़ों में जमा कफ निकल जाता है, इससे खाँसी में भी आराम आता है। अंगूर, जी मिचलाना, घबराहट, चक्कर आने वाली बीमारियों में भी लाभदायक है। श्वांस रोग व वायु रोगों में भी अंगूर का प्रयोग हितकर है। नकसीर एवं पेशाब में होने वाली रूकावट में भी हितकर है। शरीर के किसी भी भाग से रक्त स्राव होने पर अंगूर के एक गिलास रस में दो चम्मच शहद घोलकर पिलाने पर रक्त की कमी को पूरा किया जा सकता है जिसकी कि रक्तस्त्राव के समय क्षति हुई है। अंगूर का गूदा, ग्लूकोज व शर्करा युक्त होता है। विटामिन–ए पर्याप्त मात्रा में होने से अंगूर का सेवन भूख बढाता है, पाचन शक्ति ठीक रखता है, आँखों, बालों एवं त्वचा को चमकदार बनाता है। हार्ट–अटैक से बचने के लिए बैंगनी (काले) अंगूर का रस लाभप्रद है। बैंगनी (काले) अंगूर के रस में फलोवोनाइड्स नामक तत्व होता है जो कि खून के थक्के नहीं बनने देता है। पोटेशियम की कमी से बाल बहुत टूटते हैं, दाँत हिलने लगते हैं, त्वचा ढीली व निस्तेज हो जाती है, जोडों में दर्द व जकड़न होने लगती है। इन सभी रोगों को अंगूर दूर रखता है। अंगूर फोड़े–फुन्सियों एवं मुहासों को सुखाने में सहायता करता है। अंगूर के रस के गरारे करने से मुँह के घावों एवं छालों में राहत मिलती है। एनीमिया में अंगूर अत्यन्त उपयोगी है। उल्टी आने व जी मिचलाने पर अंगूर पर थोडा नमक व काली मिर्च डालकर सेवन करें।

पेट की गर्मी शांत करने के लिए 20–25 अंगूर रात को पानी में भिगों दे तथा सुबह मसल कर निचोडें तथा इस रस में थोडी शक्कर मिलाकर पीना चाहिए। गठिया रोग में अंगूर का सेवन शरीर में से उन तत्वों को बाहर निकालता है जिसके कारण गठिया होता है। अंगूर के सेवन से अस्थियाँ मजबूत होती हैं। अंगूर के पत्तों का रस पानी में उबालकर काला नमक मिलाकर पीने से गुर्दो के दर्द में भी बहुत लाभ होता है। भोजन के आधा घंटे बाद अंगूर का रस पीने से खून बढता है और कुछ ही दिनों में पेट फूलना, बदहजमी आदि बीमारियों से छुटकारा मिलता है। अंगूर के रस की दो–तीन बूंद नाक में डालने से नकसीर बंद हो जाती है।

चीकू

कच्चे चीकू बिना स्वाद के और पके चीकू बहुत मीठे और स्वादिष्ट होते हैं। गोल चीकू की अपेक्षा लम्बे गोल चीकू श्रेष्ठ माने जाते हैं। पके चीकू का नाश्ते और फलाहार में उपयोग होता है। कुछ लोग पके चीकू का हलुवा बनाकर खाते हैं जो बहुत ही स्वादिष्ट होता है। चीकू खाने से शरीर में विशेष प्रकार की ताजगी और स्फूर्ती आती है। इसमें शर्करा की मात्रा अधिक होती है। यह खून में घुलकर ताजगी देती है। चीकू खाने से आंतों की शक्ति बढ़ती है। चीकू के पेड़ की छाल से चिकना दूधिया रस चिकल नामक गोंद निकाला जाता है। यह छोटी–छोटी वस्तुओं को जोड़ने के काम आता है। उससे चबाने का गोंद (च्युंइगम) बनता है। चीकू की छाल शक्तिवर्धक और ज्वरनाशक होती है। इस छाल में टैनिन होता है। चीकू के फल शीतल, पित्तनाशक, पौष्टिक, मीठे और रूचिकारक हैं। इसमें शर्करा का अंश ज्यादा होता है। चीकू ज्वर के रोगियों के लिए पथ्यकारक है। भोजन के बाद यदि चीकू का सेवन किया जाए तो यह निश्चित रूप से लाभ प्रदान करता है।

लीची

लीची दक्षिण पूर्व एशिया का फल है और इसे अपेक्षाकृत अधिक गर्मी और नमी की आवश्यकता होती है। अन्य फलों की तरह लीची भी पौष्टिक तत्वों का भंडार है। इसमें विटामिन सी, पोटैशियम और नैसर्गिक शक्कर की प्रचुरता होती है। साथ ही पानी की मात्रा भी पर्याप्त होती है। गरमी में खाने से यह शरीर में पानी के अनुपात को संतुलित रखते हुए ठंडक भी पहुँचाता है। दस लीचियों से हमें लगभग 65 कैलोरी ऊर्जा मिलती है। इसका स्वाद थोड़ा गुलाब और अंगूर से मिलता जुलता पर अनोखा जरूर है। लीची समस्त भारत में मुख्यतयः उत्तरी भारत, बिहार, आसाम, पश्चिम बंगाल, उत्तराखंड, आंध्र प्रदेश एवं नीलगिरि क्षेत्रों में गघरों व बगीचों में लगाया जाता है। इसके फल गोल, कच्ची अवस्था में हरे रंग के, पकने पर मखमली लाल रंग के होते हैं। फल के अंदर का गूदा सफेद रंग का व मीठा होता है। फल के अंदर एक भूरे रंग का बड़ा सा बीज होता है। इसका पुष्पकाल एवं फलकाल फरवरी से जून तक होता है। इसके फल में शर्करा, मैलिक अम्ल, साइट्रिक अम्ल, टार्टरिक अम्ल, विटामिन, तथा खनिज पदार्थ पाये जाते हैं। गर्मियों में जब शरीर में पानी व खनिज लवणों की कमी हो जाती है तब लीची का रस बहुत फायदेमंद रहता है। लीची के औषधीय उपयोग– लीची के फल का सेवन करने से आँतों की बीमारी तथा पेट दर्द में लाभ होता है। लीची का सेवन करने से कमजोरी दूर होती है तथा शरीर पुष्ट होता है। लीची खाने से पित्त की अधिकता कम होती है तथा कब्ज भी समाप्त होती है। गर्मी के मौसम में आधा कप लीची का रस प्रतिदिन पीने से हृदय को बल मिलता है। बवासीर के रोगियों के लिए लीची का सेवन बहुत लाभकारी है। लीची जल्दी पच जाती है यह पाचन क्रिया को मजबूत बनाने वाली तथा यकृत के रोगों में लाभकारी है।

आलूबुखारा

यह मूलतः यूरोप तथा पश्चिमी एशिया में प्राप्त होता है। भारत में विशेषतः पश्चिमी शीतोष्ण हिमालय के जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड तथा दक्षिण भारत में नीलगिरि के पहाड़ी क्षेत्रों में 1500–2100 मीटर की ऊँचाई पर उत्पन्न होता है। इसके फल गोलाकार तथा चमकदार होते हैं। इसके कच्चे फल खट्टे तथा पके फल खट्टे–मीठे होते हैं। फलों के भीतर पीला गूदा तथा एक बड़ा बीज होता है। इसके वृक्ष से एक प्रकार का पीले रंग का गोंद निकलता है, जो बबूल के गोंद के सामान दिखाई देता है। इसका पुष्पकाल तथा फलकाल फरवरी से जुलाई तक होता है। इसके फल में प्रोटीन, कार्बोहायड्रेट, वसा, कैल्शियम, मैग्नीशियम, लौह,

पोटैशियम, विटामिन सी तथा आर्गेनिक अम्ल भी पाया जाता है। बीज में तेल, प्रोटीन, कार्बोहायड्रेट, खनिज एवं एमीग्लैडीन पाया जाता है। आलूबुखारे के औषधीय उपयोग– आलूबुखारे के पत्तों का रस निकालकर 1–2 बूँद नाक में डालने से नकसीर में लाभ होता है। भोजन से पूर्व आलूबुखारे के मीठे फल का सेवन करने से यह पित्त विकारों का शमन करता है। आलूबुखारे के पत्तों को पीसकर पेट पर लेप करने से पेट के कीड़े निकल जाते हैं। आलूबुखारे का सेवन करने से प्यास व अरुचि का शमन होता है। इसके बीजों को बादाम की तरह शुष्क फल के रूप में खाने से अजीर्ण में लाभ होता है। आलूबुखारे के बीज की गिरी का सेवन करने से धीरे–धीरे स्मरण शक्ति बढ़ती है।

आम

आम ग्रीष्म ऋतु का प्रमुख फल है। यह पौष्टिक गुणों से भरा होता है। आम के रासायनिक घटकों में अनेक अमीनों एसिड्स, विटामिन ए, सी और ई, नियासिन और बिटाकेरोटिन, आयरन, कैल्शियम, मैग्नीशियम, पोटेशियम, विभिन्न प्रकार के एन्जाइम, आदि प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। आम में पाये जाने वाले रासायनिक घटकों के कारण ही यह औषधीय गुणों में किसी अन्य फल से कमतर नहीं है। पका हुआ आम मीठा, स्निग्ध, बलवर्धक, सुखदायक, भारी, वातनाशक, हृदय को बल देने वाला, वर्ण (रंग) को अच्छा करने वाला, शीतल और पित्त को न बढ़ाने वाला, कसैले रस वाला तथा अग्नि, कफ तथा वीर्य बढ़ाने वाला है। आम के गुण, स्थिति के अनुसार अलग–अलग होते हैं। पेड़ पर पका आम भारी, वात का शमन करने वाला मीठा तथा अम्ल व तनिक पित्त शामक होता है। पाल से पकाया हुआ आम पित्तनाशक, अम्ल रस रहित और विशेष रूप से मीठा होता है। कच्चे आम को कैरी या अमिया कहते हैं। कच्चा आम स्वाद में कसैला, तीनों दोषों को कुपित करने वाला तथा रक्तविकार उत्पन्न करने वाला होता है। आम के कुछ औषधीय गुण निम्नलिखित हैं–

- रक्त शर्करा नियंत्रण– आम के पेड़ के पत्तों का काढ़ा मरीज के रक्त में इंसुलिन की मात्रा को नियंत्रित कर डायबिटीज के रोगियों को फायदा पहुंचाने में मदद करता है।
- नेत्रदोष– इसके उपयोग से आँख संबंधी विकार दूर होते हैं जैसे रतौंधी नेत्रदो I, आंखों की जलन, खुजली, आँखों में सूखापन, आँखों से पानी आना, आदि रोगों में उपयोगी है।
- कैंसर निरोधक– आम में अनेक स्वास्थ्य उपयोगी फिनोल्स होते हैं, जैसे क्वारसेटीन, आइसोक्वारसेटिन, एस्ट्रोगेलिन, फिसेटिन, गैलिक एसिड, मिथाइल गैलेट विटामिन सी, घुलनशील पेक्टिन आदि जो आहार नली के कैंसर की संभावनाओं को काफी हद तक कम करने की क्षमता रखता है और कैंसर सेल्स निर्माण की संभावना को कम करता हैं। कैंसर निरोधक प्रक्रिया में विटामिन–सी एक प्रभावी एंटिऑक्सिडेंट का काम करता है।
- भार वृद्धि– आम में प्रचुर मात्रा में आवश्यक पोषक तत्व होने के कारण एवं रुचिकर स्वाद होने से इसके सेवन से शरीर को पर्याप्त पोषण तत्व प्राप्त होते हैं। जिसके कारण शरीर के भार में वृद्धि होना स्वाभाविक है। आम के 40 ग्राम गूदे में 100 कैलोरी होते हैं। आम रस में शर्करा, प्रोटीन और थोड़ी मात्रा में वसा के होने के कारण शरीर को पर्याप्त ऊर्जा प्राप्त होती है।
- पाचक क्रिया में सहायक– आम में प्रचुर मात्रा में एन्जाइम होते हैं जो पाचन तंत्र को शक्ति प्रदान करता है। प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट को पचाकर शरीर के लिए आवश्यक तत्वों की कमी की पूर्ति करता है। आम के फलों में कब्जियत दूर करने का विशेष गुण होता है। इसका सेवन नमक और शहद के साथ किया जाना चाहिए।
- स्मरण शक्ति वर्धक– आम में ग्लूटामिक एसिड नामक एमिनो एसिड पाया जाता है जो मस्तिष्क को सुदृढ़ कर एकाग्रता और स्मरण शक्ति में वृद्धि करता है। इससे आत्मविश्वास में भी वृद्धि होती है।
- शारीरिक कमजोरी नाशक– सामान्य और गर्भवती महिलाओं में रक्त की कमी और कमजोरी आम में पाये जाने वाले आयरन और विटामिन सी से दूर की जा सकती है। यह लाल रक्त कणों में वृद्धि करता है। आम में मौजूद विटामिन–सी एक आदर्श एन्टीऑक्सिडेंट का काम करता है।

- चर्म रोग नाशक– आम के रस के लेप में त्वचा के छिद्र खोलने की विलक्षण क्षमता होती है इससे चर्म रोग मांसपेशीय दर्द चमड़ी का रुखापन दूर होकर निखार आता है।
- ग्रीष्म ऋतु की गर्मी से बचाव– कच्चे आम यानी कैरी उबालकर उसके रस में शक्कर, जीरा (सिका हुआ) तीनों नमक का मिश्रण मिलकार लू लगने की समस्या के निवारण के लिए उपयोग करें। यह शरीर में आवश्यक नमक की कमी की पूर्ति का उत्तम माध्यम है।

संतरा

संतरा एक स्वास्थ्यवर्धक और विटामिनों से भरपूर फल है। संतरा ठंडा, शक्तिवर्धक, अम्ल, मीठा, स्वादिष्ट, खट्टा–मीठा, क्षुधावर्धक है। गर्मी से रक्षा के लिए संतरा एक लोकप्रिय फल है। संतरे के सेवन से शरीर स्वस्थ रहता है, चुस्ती–फुर्ती बढ़ती है, त्वचा में निखार आता है तथा सौंदर्य में वृद्धि होती है। यह पाचन में अत्यंत लाभकारी होता है। संतरा खून को साफ करता है। संतरा तन और मन को प्रसन्नता देने वाला फल है। संतरे में प्रचुर मात्रा में विटामिन सी होता है तथा विटामिन ए, बी के अतिरिक्त फॉस्फोरस, कैल्सियम, प्रोटीन और ग्लूकोज भी पाया जाता है। लोहा और पोटेशियम भी काफी होता है। संतरे की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें विद्यमान फ्रक्टोज, डेक्स्ट्रोज, खनिज एवं विटामिन शरीर में पहुंचते ही ऊर्जा देना प्रारंग कर देते हैं। रोग निरोधक शक्ति को बढ़ाता है। इसमें ग्लूकोज व डेक्सटोल 2 ऐसे तत्त्व होते हैं, जो जीवनदायिनी शक्ति से परिपूर्ण होते हैं। इसलिए संतरा न केवल रोगी के शरीर में ताजगी लाता है बल्कि अनेक रोगों के लिए लाभदायक भी होता है। संतरे का एक गिलास रस तन–मन को शीतलता प्रदान कर थकान एवं तनाव दूर करता है, ह्रदय तथा मस्तिष्क को नई शक्ति व ताजगी से भर देता है। बुखार के रोगी को संतरे का रस देने से शांति और ताकत मिलती है। तेज बुखार में संतरे के रस का सेवन करने से तापमान कम हो जाता है। मुँह सूखने व प्यास लगने की शिकायत दूर होती है। शरीर में खुश्की नहीं बढ़ पाती है। इसके रस को दिन में बार–बार भी पी सकते हैं। संतरा गर्भवती महिलाओं की उल्टी को रोकने में सहायता करता है।

रोगी के लिए संतरे का रस पानी, दवा और आहार का काम करता है। यह पेट की बढ़ती गर्मी को रोकता है और मुंह के स्वाद को सुधारता है। संतरे में मौजूद विटामिन सी जहाँ शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है, वहीं कैल्सियम और खनिज लवण दांतों व हड्डियों को मजबूत बनाते हैं। संतरे के सेवन से दाँतों और मसूड़ों के रोग भी दूर होते हैं। यह अनेक रोगों के लिए लाभदायक है, संतरा केवल स्वास्थ्यवर्धक ही नहीं, खूबसूरती को संवारने वाला फल भी है। संतरा ठंडा, तन और मन को चुस्ती–फुर्ती प्रदान करता है। जिनकी पाचन शक्ति खराब है उनको नारंगी का रस तीन गुने पानी में मिलाकर सेवन करना चाहिए। इसके सेवन से भूख खुलकर लगती है, खाना जल्दी हजम होता है। कब्ज होने पर इसका रस पीने से कब्ज की समस्या से मुक्ति मिलती है। पेट में दर्द होने से संतेरे के रस में थोड़ी सी भुनी हुई हींग मिलाकर देने से लाभ मिलता है, उलटी होने या जी मिचलाने पर संतेरे के रस में शहद मिलाकर सेवन करें। पेचिस की शिकायत होने पर संतेरे के रस में बकरी का दूध मिलाकर लेने से फायदा होता है । संतरे का नियमित सेवन करने से बवासीर में लाभ होता है । पेट में गैस, अपच, जोड़ों का दर्द, उच्च रक्तचाप, गठिया, बेरी–बेरी रोग में भी संतरे का सेवन बहुत कुछ लाभकारी होता है। संतरे का सेवन जहाँ जुकाम में राहत पहुँचाता है, वहीं सूखी खाँसी में भी फायदा करता है। यह कफ को पतला करके बाहर निकालता है। बच्चों के लिए तो संतरा अमृततुल्य है गर्भवती महिलाओं को इसका रस देने से बच्चा तंदुरुस्त होता है। बच्चों को स्वास्थ्य व ह्रष्ट–पुष्ट बनाने के लिए दूध में चौथाई भाग मीठे संतरे का रस मिलाकर पिलाने से यह टॉनिक का काम करता है। बच्चों को बुखार या खांसी होने पर एक गिलास गर्म पानी में एक चम्मच संतरे के छिलकों का पाउडर और नमक या चीनी मिलाकर देने से बुखार में राहत मिलती है। इसमें उपस्थित साइट्रिक अम्ल मूत्र रोगों और गुर्दा रोगों को दूर करता है। दिल के मरीज को संतरे के रस में शहद मिलाकर देने से आश्चर्यजनक लाभ मिलता है । इसका एक गिलास रस तन–मन को शीतलता प्रदान कर थकान व तनाव दूर कर मस्तिष्क को नई शक्ति व ताजगी से भर देता है। जब बच्चों के दाँत निकलते हैं, तब उन्हें उल्टी होती है और हरे–पीले दस्त लगते हैं। उस समय संतरे का रस देने से उनकी बेचैनी दूर होती है तथा पाचन शक्ति भी बढ़ जाती है। संतरे का नियमित सेवन

करने से बवासीर की बीमारी में लाभ मिलता है। रक्तस्राव को रोकने की इसमें अद्भुत क्षमता है। संतरे के छिलकों और रेशों में भी विटामिन और कैल्सियम होता है। इनका पतला आवरण और रेशे में जो पल्प है वह आँतों में चिपके मल की सफाई करता है। संतरे के मौसम में इसका नियमित सेवन करते रहने से मोटापा कम होता है और बिना डायटिंग किए ही आप अपना वजन कम कर सकते हैं। बच्चे, बूढ़े, रोगी और दुर्बल लोगों को अपनी दुर्बलता दूर करने के लिए संतरे का सेवन अवश्य करना चाहिए।

संतरे के सूखे छिलकों का महीन चूर्ण गुलाब जल या कच्चे दूध में मिलाकर पीसकर लेप लगाने से कुछ ही दिनों में चेहरा साफ और कांतिवान हो जाता है। कील–मुंहासे से छुटकारा मिलता है और झाईयाँ व सांवलापन दूर होता है। संतरे के ताजे फूल को पीसकर उसका रस सिर में लगाने से बालों की चमक बढ़ती है। बाल जल्दी बढ़ते हैं और उसका कालापन बढ़ता है। संतरे के छिलकों से तेल निकाला जाता है। शरीर पर इस तेल की मालिश करने से मच्छर आदि नहीं काटते।

अमरुद

यह एक बहुत नर्म फल है पर इसके बीज बहुत सख्त होते हैं। पर यह बीज पेट के लिए बहुत उपयोगी, पाचन में सहायक होते हैं। यह ह्रदय को बल देने वाला और घबराहट दूर करने वाला है। यह मस्तिष्क की ताकत बढ़ाता है। यह शरीर की कमजोरी दूर कर, ऊर्जा देता है। यह फल, दाह को कम करता है। इसकी पत्तियाँ ज्वर नाशक, कफ नाशक और खांसी में लाभदायक है। मसूड़ों के दर्द और मुंह की के लिए इसकी पत्तियों को कूटकर उसमे थोड़ी लौंग का चूरा और सेंधा नमक मिला कर लगाएं। मुँह के छालों के लिए इसकी पत्तियाँ चबाकर थूक दें या निगल लें। इसकी पत्तियों के रस से भांग का नशा कम होता है। ज्वर में इसकी पत्तियों, गिलॉय और तुलसी को उबालकर काढ़ा लें। संग्रहणी या कोलाइटिस या लीवर की परेशानी में इसकी पत्ती, छाल का पावडर और थोड़ी सी सौंठ उबालकर लें।

अनार

अनार दुनिया के गर्म प्रदेशों में पाया जाता है। सबसे पहले अनार के बारे में रोमन भाषियों ने पता लगाया था। भारत में अनार के पेड़ अधिकतर महाराष्ट्र, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु और गुजरात में पाए जाते हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण फल है। अनार में प्रचुर मात्रा में लाभदायक प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर, विटामिन और खनिज पाए जाते हैं। अनार में एंटीऑक्सिडेंट, एंटीवायरल और एंटी–ट्यूमर जैसे तत्व पाये जाते हैं। इसमें विटामिन ए, सी और ई भरपूर मात्रा में पाया जाता है। 100 ग्राम अनार खाने पर हमारे शरीर को लगभग 65 किलो कैलोरी ऊर्जा मिलती है। अनेक आयुर्वेदिक दवाएं बनाने में भी अनार का प्रयोग किया जाता है। इसके बीजों से निकले तेल का प्रयोग औद्योगिक क्षेत्र में किया जाता है। अनार कई रोगों में गुणकारी है। अनार पर किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि अनार रक्तसंचार वाली बीमारियों से लड़ता है, उच्च रक्तचाप को घटाता है, सूजन और जलन में राहत पहुँचाता है, गठिया और वात रोग की संभावना घटाता और जोड़ों में दर्द कम करता है, महिलाओं में मातृत्व की संभावना और पुरुषों में पुंसत्व बढ़ाता है। अनार को त्वचा के कैंसर, स्तन–कैंसर, प्रोस्टेट ग्रंथि के कैंसर और पेट में अल्सर की संभावना घटाने की दृष्टि से भी विशेष उपयोगी पाया गया है। अनार का रस वृद्धावस्था में अल्साहाइमर रोग की संभावना भी घटाता है। मीठा अनार तृषा, पित्तनाशक, कृमि का नाश करने वाला, पेट रोगों के लिए हितकारी तथा घबराहट को दूर करने वाला होता है। अनार फेफड़े, यकृत, दिल, आमाशय तथा आंतों के रोगों पर काफी लाभकारी है। पाचन तंत्र के सभी समस्याओं के निदान में अनार कारगर है। अनार की पत्तियों की चाय बनाकर पीने से पाचन संबंधी समस्याओं में भी बहुत आराम मिलता है। दस्त और कॉलरा जैसी बीमारियों में अनार का जूस पीने से राहत मिलती है। मधुमेह के रोगियों को अनार खाने की सलाह दी जाती है इससे कॉरोनरी रोगों का खतरा कम होता है। अनार में लोहे की प्रचुर मात्रा होती है, जो रक्त में आयरन की कमी को पूरा करता है। सूखे अनार के छिलकों का चूर्ण दिन में 2–3 बार एक–एक चम्मच ताजा पानी के साथ लेने से बार–बार पेशाब आने की समस्या ठीक हो जाती है। अनार के छिलकों को पानी में उबालकर, उससे कुल्ला करने से सांस की बदबू समाप्त हो जाती है। अनार के छिलकों के चूर्ण का सुबह–शाम

एक–एक चम्मच सेवन करने से बवासीर ठीक हो जाता है। खांसी में अनार के छिलके को मुंह में रखकर उसे धीरे–धीरे चूसना शुरू कर दें। अनार का रस पेट पर जमी चर्बी तथा कमर पर लटकते मांस को कम करने में मददगार साबित हो सकता है। यदि अपच हो गया है तो पके अनार का रस, आधा चम्मच भुना हुआ जीरा पीसकर तथा गुड़ मिलाकर दिन में तीन बार लें। प्लीहा और यकृत की कमजोरी तथा पेटदर्द अनार खाने से ठीक हो जाते हैं। दस्त तथा पेचिश में 15 ग्राम अनार के सूखे छिलके और दो लौंग लें। दोनों को एक गिलास पानी में उबालें। फिर पानी आधा रह जाए तो दिन में तीन बार लें। इससे दस्त तथा पेचिश में आराम होता है। अनार कब्ज दूर करता है, मीठा होने पर पाचन शक्ति बढ़ाता है। इसका शर्बत एसिडिटी को दूर करता है। अत्यधिक मासिक स्राव में अनार के सूखे छिलकों का चूर्ण एक चम्मच सुबह–शाम पानी के साथ लेने से रक्त स्राव रुक जाता है।

शहतूत

यह मूलतः चीन में पाया जाता है। भारत में यह पंजाब, कश्मीर, उत्तराखंड, उत्तर प्रदेश एवं उत्तरी पश्चिमी हिमालय में पाया जाता है। इसके फल लगभग 2.5 सेंटीमीटर लम्बे, अंडाकार अथवा लगभग गोलाकार, श्वेत अथवा पक्वावस्था में लगभग हरिताभ–कृष्ण अथवा गहरे बैंगनी वर्ण के होते हैं। इसका पुष्पकाल एवं फलकाल जनवरी से जून तक होता है। इसके फल में प्रोटीन, वसा, कार्बोहायड्रेट, खनिज, कैल्शियम, फॉस्फोरस, कैरोटीन, विटामिन एवं पेक्टिन, सिट्रिक अम्ल एवं मैलिक अम्ल पाया जाता है। शहतूत के औषधीय गुण– शहतूत के पत्तों का काढ़ा बनाकर गरारे करने से गले के दर्द में आराम होता है। यदि मुँह में छाले हों तो शहतूत के पत्ते चबाने से लाभ होता है। शहतूत के फलों का सेवन करने से गले की सूजन ठीक होती है। पाँच–दस मिली० ली० शहतूत फल स्वरस का सेवन करने से जलन, अजीर्ण, कब्ज, कृमि तथा अतिसार में अत्यंत लाभ होता है। एक ग्राम शहतूत छाल के चूर्ण में शहद मिलाकर चटाने से पेट के कीड़े निकल जाते हैं। शहतूत के बीजों को पीस कर लगाने से पैरों की बिवाईयों में लाभ होता है। शहतूत के पत्तों को पीसकर लेप करने से त्वचा की बीमारियों में लाभ होता है। सूखे हुए शहतूत के फलों को पीसकर आटे में मिलाकर उसकी रोटी बनाकर खाने से शरीर पुष्ट होता है।

बेर

बेर बहुत ही उपयोगी और पोषक तत्वों से भरपूर फल है। बेर में कार्बोहाइड्रेट 20–30 प्रतिशत, प्रोटीन 2.5 प्रतिशत, वसा 0.07 प्रतिशत, थाईमिन 0.02 प्रतिशत, राईबोफ्लेविन 0.03 प्रतिशत, कैल्शियम 25.6 प्रतिशत, आयरन 1.5–1–8 प्रतिशत, फॉस्फोरस 26.8 प्रतिशत, आदि पोषक तत्व उपस्थित होते हैं। बेर खाने से होने वाले लाभ निम्नवत हैं।

- बेर में अन्य फलों की अपेक्षा विटामिन–सी और एंटीऑक्सीडेंट की मात्रा ज्यादा होती है। इसके सेवन से त्वचा लंबी उम्र तक जवां बनी रहती है।
- पेट दर्द की समस्या खत्म कर देता है– बेर को छाछ के साथ लेने से पेट दर्द की समस्या खत्म हो जाती है।
- दिल की बीमारियों का खतरा कम हो जाता है– बेर खाने से कोलेस्ट्रॉल कंट्रोल में रहता है। इस कारण दिल से जुड़ी बीमारियां होने की संभावना कम हो जाती है।
- बालों के लिए फायदेमंद– बेर की पत्तियों में 61 आवश्यक प्रोटीन पाए जाने के साथ विटामिन सी, केरिटनॉइड और बी कॉम्प्लेक्स भी अधिक मात्रा में पाया जाता है। यह बालों को घना और स्वास्थ्य वर्धक बनाता है।
- रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाता है– बेर में मैग्नीशियम, पोटैशियम, फॉस्फोरस, कॉपर, कैल्शियम, आयरन और खनिज पदार्थ भी मौजूद होते हैं। इन तत्वों से इम्यून सिस्टम मजबूत होता है। जिससे शरीर में रोगों से लड़ने की शक्ति बढ़ती है।
- घाव जल्दी भर देता है– बेर की पत्तियों को पीसकर तेल के साथ लेप बनाकर लगाने से घाव जल्दी भर जाता है। बेर का गूदा लगाने से भी घाव ठीक हो जाता है।

- खांसी और बुखार में है फायदेमंद– बेर में एंटीऑक्सीडेंट और एंटीइन्फ्लामेटरी गुण होते हैं। इसका जूस पीने से खांसी और बुखार में राहत मिलती है।
- अनिद्रा की समस्या दूर हो जाती है– बेर में 18 प्रकार के महत्वपूर्ण एमीनो एसिड मौजूद होते हैं, जो शरीर में प्रोटीन को संतुलित करते हैं। साथ ही, अनिद्रा की समस्या दूर करते हैं।

निष्कर्ष

अतः उपरोक्त परिचर्चा से हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि फलों का हमारे जीवन में एक महत्वपूर्ण स्थान है। फल न केवल हमें पोषण प्रदान करते हैं अपितु हमें स्वस्थ रखते हुए बलिष्ठ बनाते हैं।

हिन्दी में वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली के प्रयुक्ति का प्रश्न

अंजलि अस्थाना
प्रवक्ता, हिन्दी विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
anjali.asthana73@gmail.com

वैज्ञानिक उन्नति किसी भी राष्ट्र की उन्नति का आधार है। यह वह आधार है जो हमें साधन–सम्पन्न बनाकर अधिक सामर्थ्यवान बनाने का प्रयास करता है; परन्तु यह उन्नति अपने संपूर्ण अर्थों में सार्थक तभी होती है जब वह अपनी राष्ट्रीय भाषा में सर्वसुलभ हो पाती है।

उक्त संदर्भ को जब हम भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखते हैं तो पाते हैं कि आजादी के बाद से ही लगभग 'हिन्दी भाषा' को आधार बनाकर विज्ञान के प्रयोग की बात बड़े जोर–शोर से उठाई जाती रही है, जो निःसंदेह एक आवश्यक मुद्दा है; परन्तु यहाँ मूलभूत मुद्दा पहले यह है कि आज आजादी के इतने वर्षों के उपरान्त भी हम भारतीय पूरे गर्व के साथ यह नहीं कह पाये कि हिन्दी हमारी 'राष्ट्रभाषा' है। भारत के संघीय ढांचे में हिन्दी आज भी 'राजभाषा' ही है। यही कारण है कि बहुत सारे संदर्भों में–विशेषकर विज्ञान जैसे महत्वपूर्ण विषय के संदर्भ में, हिन्दी के प्रयोग की बात सफल नहीं हो पाती।

चूंकि भारत लम्बे समय तक परतंत्र रहा। जब विश्व में सभी जगह वैज्ञानिक उन्नति हो रही थी, उस समय भारत अंग्रजों के आधीन था। इस काल में संपूर्ण शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी बन जाने से भारतीयों का धीरे–धीरे अपनी प्राचीन संस्कृति एवं सबसे समृद्ध भाषा संस्कृत से संबंध लगभग टूटता गया। हमारे देश की यह बहुत बड़ी विडम्बना रही है कि स्वतंत्रता से पूर्व सारे भारतीय, शिक्षाविद, सारे समाजशास्त्री और सारे राजनीतिज्ञ इस मत में थे कि हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाकर उसी के माध्यम से शिक्षा प्रदान की जाये। सभी ने यही कहा कि देश में शिक्षा का माध्यम हिन्दी हो। जाहिर था कि वैज्ञानिक विषयों का भी हिन्दी में अनुवाद किया जाना था। परिणामस्वरूप व्यापक स्तर पर पारिभाषिक शब्दों के निर्माण की प्रक्रिया चालू हो गयी, परन्तु आजादी के बाद राजनीति के साथ धीरे–धीरे सारा परिवेश ही बदलता चला गया।

आज हम जिस 'शाषिक संस्कृति' के दौर से गुजर रहे हैं वहाँ जितना बड़ा प्रश्न 'राष्ट्रभाषा' और उसके 'अस्तित्व' को लेकर है कमोवेश उतनी ही बड़ी समस्या हिन्दी में वैज्ञानिक शब्दावली के प्रयुक्ति की है।

इस संदर्भ में डॉ0 शिवगोपाल मिश्र जी कहते हैं कि–"1900 के पूर्व बहुत कम वैज्ञानिक साहित्य रचा गया। जो कुछ रचा भी गया वह नितान्त व्यक्तिगत अभिरुचि पर आश्रित था। सर्वप्रथम गुरुकुल काँगड़ी से वैज्ञानिक शिक्षण का हिन्दीकरण प्रारम्भ हुआ तो वहीं के शिक्षकों ने कतिपय विषयों में, विशेष रूप से रसायन, भौतिकी तथा वनस्पतिशास्त्र पर पाठ्यपुस्तकें लिखीं। 1913 ई0 में प्रयाग में विज्ञान परिषद की स्थापना हो जाने पर साहित्य के सृजन में प्रगति आयी और स्वतंत्रता के पूर्व इतना वैज्ञानिक साहित्य प्रणीत हो चुका था कि स्कूल–कॉलेजों में विज्ञान की पढ़ाई हिन्दी के माध्यम से हो सके। बस एक ही व्यवधान या कठिनाई थी कि पारिभाषिक शब्दावली में एकरूपता नहीं आ पायी थी, जिससे अध्यापकों, लेखकों, पाठकों और विद्यार्थियों के समक्ष असमंजस की स्थिति थी।"[1] वस्तुतः विज्ञान का जब हम हिन्दी भाषा में अनुवाद करने बैठते हैं तो सबसे बड़ा प्रश्न वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली को हिन्दी में अनुवादित करने को लेकर उठता है। इस संदर्भ में प्रारंभ से ही दो मत हमारे सामने आते रहे हैं– एक यह कि वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दावली को ज्यों का त्यों लिप्यंतरण करके स्वीकार कर लिया जाये। तथा दूसरा यह कि वैज्ञानिक शब्दों के निर्माण के लिए नवीन शब्दों को गढ़ा जाय।

ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेने के पीछे तर्क यह है कि देश–विदेशों में अनेक पदार्थ पाश्चात्य देशों के नाम पर बिकते हैं। जैसे–मशीनें, दवाएं, रसायनिक वस्तुएं आदि, दूसरा यह कि ये शब्द समस्त भारतीय भाषाओं में एक समान व्यवहार किये जा सकते हैं। इसके साथ

ही इनमें से अनेक शब्द पाश्चात्य देशों में भी एक समान प्रचलित होते हैं। इसलिए यह कहा गया कि जो शब्द रोजमर्रा की बोलचाल में आ गये हैं, चाहे वे कहीं से भी आये हों उन्हें वैसा ही व्यवहार में लाना उचित है। परन्तु यहाँ पर यह देखना होगा कि भाषा की प्रकृति मौखिक होती है और शब्दों का उच्चारण देश की जलवायु, प्रकृति की अवस्था, मनुष्य का उच्चारण अवयव, उसकी मानसिक समझ, बलाघात आदि पर निर्भर करता है। इसके साथ ही स्वरों और व्यजनों के उच्चारण के लिए कोई एक विश्वव्यापी व्याकरणिक नियम नहीं है। इसलिए एक भाषा का शब्द दूसरी भाषा में आने पर भिन्न हो सकता है।

इसी आधार पर यह कहा गया कि जिन वैज्ञानिक भावों को प्रकट करने के लिए हमारे यहाँ कोई संकेत चिह्न नहीं हैं उनके लिए नये शब्द गढ़ने की आवश्यकता है। परन्तु यहाँ ध्यान रखना होगा कि वैज्ञानिक पारिभाषिक शब्दों का निर्माण राष्ट्रीय दृष्टि से होना चाहिए। इसके लिए समस्त भारतीय भाषाओं को आधार बनाया जा सकता है। ''पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के संदर्भ में डॉ0 रघुवीर सहाय का नाम विशेष महत्व रखता है। उन्होंने 'काम्प्रिहैन्सिव इग्लिश हिन्दी डिक्शनरी' के नाम से एक कोश ग्रन्थ की रचना की। इस कोश ग्रन्थ के निर्माण के लिए उन्होंने जिस वैज्ञानिक पद्धति का सहारा लिया वे भारतीय पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण के संदर्भ में 13 सिद्धान्तों के नाम से जाने जाते हैं। इनमें प्रमुख हैं–

1–प्रत्येक मुख्य अर्थ के लिए एक प्रथक शब्द होना चाहिए। जैसे–

'Power' के लिए 'शक्ति', 'force' के लिए 'बल' और 'energy' के लिए 'उर्जा'।

2–यूरोपीय असमस्त पदों का अनुवाद असमस्त पदों से किया जाय। अर्थात् शब्द व्याख्यात्मक नहीं होना चाहिए। जैसे– 'Signal' के लिए 'संकेत' होना चाहिए न कि 'signal' की व्याख्या करने वाला–'अग्निरथगमनागमनसूचक लौह पटिट्का'।

3–उपसर्गों का अनुवाद उपसर्गों से और प्रत्ययों का अनुवाद प्रत्ययों से होना चाहिए।

4–विदेशी शब्दों के एक रूप से बने विभिन्न रूप एक ही शब्द से व्यूत्पादित किये जायें। जैसे–

Law – विधि, Lawful –विधिवत, Legal –वैध, Illegal –अवैध, Lawless –विधिहीन

Lawlessness –विधिहीनता

5–प्रत्येक शब्द का व्याकरण व अर्थ सम्बन्धी समस्त या असमस्त सभी पदों का संग्रह करके की अनुवाद किया जाये। जैसे–

व्याकरण सम्बन्धी–

Acid –अम्ल, Acidic –अम्लिक, Acidiant –अम्लकर, Acidification –अम्लन, Acidifier –अम्लक

तथा अर्थ सम्बन्धी में–

Right –अधिकार, Authority–प्राधिकार, Prerogative –परमाधिकार, Privilege –विशेषाधिकार

Monopoly –एकाधिकार

6–वास्तविक शब्दों के संक्षिप्तीकरण के साथ नये विचारों के लिए नये प्रत्ययों का निर्माण करना चाहिए। अंग्रेजी में रसायन सम्बन्धी धातुवाची शब्दों के द्योतन के लिए 'um' प्रत्यय प्रयुक्त होता है। इनके लिए भारतीय पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण में 'धातु' प्रत्यय का प्रयोग कर सकते हैं। जैसे–

Alumin –स्फटी, Alumin+um –स्फटी + धातु = स्फट्यातु

7–प्रान्तीय भाषाओं में उपलब्ध शब्द यदि पूर्वोक्त नियमों के आधार पर अधिक उपयुक्त जँचे तो हिन्दी की अपेक्षा उन्हें प्राथमिकता दी जानी चाहिए।"[2]

इस प्रकार हम देखें तो पारिभाषिक शब्दावली के निर्माण और उसके मानकीकरण के लिए सरकार तथा अन्य हिन्दी प्रेमी संस्थाओं के द्वारा अनेक प्रयास किये गये और निरन्तर किये जा रहे हैं, परन्तु इन सभी प्रयासों के बावजूद भी इन पारिभाषिक शब्दावली के प्रयुक्ति की समस्या यथावत बनी हुई है। आज का पढ़ा–लिखा बौद्धिक मानस 'लिप्यन्तरण' की बात तो स्वीकार रहा है, किन्तु अनुवादित शब्दावली के प्रयोग की बात उसके लिए एक कठिन समस्या बन जाती है। यहीं पर लिप्यंतरण को लेकर उठाया गया यह प्रश्न भी चिंतनीय है कि लिप्यंतरण किये गये अनेकानेक शब्द जो हिन्दी भाषा में शामिल होते जा रहे हैं क्या उनकी कोई सीमा निर्धारित होगी? यदि हाँ तो कहाँ तक? यदि नहीं तो यह प्रयोग आगे चलकर 'राष्ट्रभाषा' की 'अस्मिता' को कितना सुरक्षित रख पायेगा?

इस संदर्भ में माधव सोनटक्के का कहना एकदम सही है कि–"आजादी प्रजातंत्र आदि के बावजूद हम अंग्रेजी तथा अंग्रेजी की मानसिक दासता और बौद्धिक पराधीनता को ढ़ोने में गौरव का अनुभव करते हैं। एक ओर पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण, उनका प्रयोग कर ज्ञान विज्ञान के ग्रन्थों के निर्माण में अपरमित धन फूँका जा रहा है, तो दूसरी ओर विज्ञान की विभिन्न शाखाओं तथा तकनीकी शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी बना हुआ है। चाहे केन्द्रीय हो या प्रान्तीय, सभी तरह के कार्यालयों तथा संसद, विधान भवन का लगभग संपूर्ण व्यवहार अंग्रेजी भाषा के माध्यम से होता रहा है। पारिभाषिक शब्दावली का मातृ निर्माण करना तथा कोशों के प्रकाशन से इस कार्य की सिद्धि नहीं होती, उसकी सार्थकता प्रयोग में होती है। हमारी विडम्बना यह है कि हम शब्दों का निर्माण तो कर रहे हैं, किन्तु प्रयोग नहीं के बराबर हो रहा है।"[3]

वस्तुतः किसी भी देश पर बाहरी स्थितियाँ कितना प्रभाव डालती हैं यह उस देश की आन्तरिक स्थिति पर निर्भर करता है। भारत स्वतंत्रता के पूर्व से ही जिस भाषाई विवाद में उलझा हुआ है उसका अभी तक कोई समाधान नहीं हुआ। हाल ही में दिनांक 20 जून 2014 को सरकार की ओर से जब हिन्दी में काम करने के निर्देश दिये गये कि– "ग्रह मंत्रालय से जुड़े सभी विभाग अब अपने सभी काम हिन्दी में करेंगे। सबसे ज्यादा हिन्दी में काम करने वालों को पुरस्कृत भी किया जाएगा।" तो फिर से अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में इसका विरोध शुरू हो गया और यह कहा गया कि "संवाद की भाषा अंग्रेजी हो।"[4]

यहाँ पर गम्भीरता पूर्वक भारतीय जनता को यह सोचना होगा कि यदि हम हिन्दी को 'राष्ट्रभाषा' नहीं बनाना चाहते हैं तो फिर किस भाषा को राष्ट्रीय भाषा का दर्जा दिया जाय?

गोवा से चन्द्रकांत केणी का कथन इस संदर्भ में बहुत प्रासंगिक है कि–"भाषा का प्रश्न कहीं अस्मिता से जुड़ा है। इस महादेश की पहचान कभी भी अंग्रेजी या अंग्रेजियत से नहीं होगी। सभी भारतीय भाषाओं को साथ लेकर, हम हिन्दी को राष्ट्रभाषा का ही नहीं, विश्व की अग्रणी अन्तर्राष्ट्रीय भाषा का दर्जा दिलाएँ–तभी विश्व के मंच पर हमारी अपनी पहचान बनेगी। हिन्दी नहीं पनपेगी तो शेष भारतीय भाषाएँ भी स्वतः निष्प्राण हो जाएंगी।"[5]

अर्थात इस संपूर्ण विवेचन का आशय यह है कि यदि हम सचमुच चाहते हैं कि "तकनीकी साहित्य" हिन्दी भाषा में सर्वसुलभ हो, और गर्व के साथ उसका प्रयोग हो तो इसके लिए पहले हमारे प्रबुद्ध वर्ग को 'राष्ट्रभाषा' के इस प्रश्न को सुलझाना होगा। दृढ़ इच्छाशक्ति और राष्ट्रीय भावना के साथ हिन्दी भाषा के प्रयोग के लिए अग्रसर होना होगा।

इसी दृढ़ इच्छाशक्ति और राष्ट्रीय भावना को लेकर बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ, द्वारा प्रकाशित वार्षिक शोध पत्रिका **"अनुसंधान (विज्ञान शोध पत्रिका)"** एक मील का पत्थर साबित हो रही है।

संदर्भ

1. मिश्र, शिवगोपाल (1986) "हिन्दी में विज्ञान लेखनः कुछ समस्याएं", प्रकाशक–हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, प्र0 2।
2. राव, माधव सोनटके (2011) "प्रयोजनमूलक हिन्दी", लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, मु0प्र0 33–34।
3. राव, डॉ0 माधव सोनटके (2011) "प्रयोजनमूलक हिन्दी", लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, मु0प्र0 73।
4. हिन्दुस्तान (दैनिक) :– दि0–जून–20, 21, 2014, प्र0 16, 20।
5. द्विवेदी, मुकुन्द (2001) "भारतीय भाषाएं और राष्ट्रीय अस्मिता", प्रकाशक–हिन्दी अकादमी, दिल्ली, प्र0 25।

सहस्त्राब्दी पुरस्कार समस्याएं (द मिलेनियम प्राइज प्रॉब्लेम्स)

राजीव कुमार सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, गणित विभाग
प्रताप बहादुर पी0 जी0 कॉलेज, प्रतापगढ़–230143, उ0प्र0, भारत
dr.rajeevthakur2012@gmail.com

नये सहस्त्राब्दि युग में गणित को मनाने के उद्देश्य को लेकर कैम्ब्रिज, मैसाक्यूसेट्टस के **क्ले मैथेमेटिक्स इंस्टीट्यूट(सी0 एम0 आई0)** द्वारा सात पुरस्कार समस्याओं को स्थापित किया गया। संस्था द्वारा गणित की सात सर्वाधिक कठिन समस्याओं के सम्पूर्ण हल को प्राप्त करने में जूझते हुए तथा द्वितीय सहस्त्राब्दी के मोड़ पर भी उसमें असफल रहने वाले गणितज्ञों के मनोबल को बढ़ाने के लिए हल करने वाले गणितज्ञों हेतु बड़ी पुरस्कार राशि की घोषणा दुनिया की इस श्रेष्ठ गणित संस्था द्वारा की गई। प्रस्तुत लेख में गणित की सभी सात कठिन समस्याओं, पुरस्कार प्राप्त करने के नियम व पुरस्कार आदि की विवेचना की गई है।

सहस्त्राब्दी पुरस्कार समस्याओं की घोषणा एवं प्राप्त करने के नियम

सहस्त्राब्दी पुरस्कारों की घोषणा कॉलेज डी फ्रांस में मई 24, 2000 को दुनिया भर से आये हुए 2000 गणितज्ञों की एक बैठक में की गई। बैठक में टिमोथी गोवर्स ने शीर्षक "द इम्पॉर्टेन्स ऑफ मैथेमेटिक्स" पर तथा माइकल एटियाह और जॉन टेट द्वारा गणित की इन समस्याओं पर अपने–अपने वक्तव्य दिये गये। दुनिया भर के अग्रणी गणितज्ञों से सुसज्जित क्ले मैथेमेटिक्स इंस्टीट्यूट(सी0 एम0 आई0) के संस्थापक वैज्ञानिक मण्डल द्वारा गणित की सात सर्वाधिक कठिन समस्याओं का चुनाव किया गया जिनके सम्पूर्ण हल अभी तक गणितज्ञों को प्राप्त नहीं हुए थे। समस्याओं का चयन करते समय वैज्ञानिक मण्डल के सदस्यों का ध्यान उन पुरानी व आधारभूत समस्याओं पर था जिनके हल गणितज्ञों द्वारा लगातार किये जाने वाले प्रयासों के बावजूद अभी तक प्राप्त नहीं किये जा सके हैं। पुरस्कार संबंधित वैज्ञानिक सलाहकार मण्डल की संस्तुतियों को मानते हुए क्ले मैथेमेटिक्स इंस्टीट्यूट(सी0 एम0 आई0) के निदेशक मण्डल द्वारा प्रति समस्या 1 मिलियन डॉलर(लगभग 6 करोड़ रूपये) के हिसाब से कुल 7 मिलियन डॉलर के एक कोष का गठन किया गया। यह राशि प्रत्येक उस गणितज्ञ को प्रदान की जायेगी जो सात में से किसी भी एक समस्या को वैज्ञानिक मण्डल द्वारा स्थापित नियमों के अंतर्गत हल करेंगे। इन सात समस्याओं में से एक **"रीमान परिकल्पना"** भी है, जो सन् 1859 में प्रतिपादित हुई थी, तथा अगस्त 09, 1900 में डेविड हिलबर्ट द्वारा 23 समस्याओं पर दिये गये उनके वक्तव्य में शामिल थी। बैठक में यह तय किया गया कि क्ले मैथेमेटिक्स इंस्टीट्यूट(सी0 एम0 आई0) का वैज्ञानिक मण्डल पुरस्कार विजेता की चयन प्रक्रिया का निर्वहन पूरी जिम्मेदारी, सुचिता एवं निष्पक्षता के साथ करेगा।

सात सहस्त्राब्दी पुरस्कार समस्याएं

1. **यंग–मिल्स एण्ड मास गैप**– प्रयोग तथा कम्प्यूटर सिम्यूलेशन्स, यंग–मिल्स समीकरण के क्वांटम स्वरूप में "मास गैप" के अस्तित्व को सुनिश्चित करते हैं। परन्तु इस गुण की उत्पत्ति अभी तक प्राप्त नहीं की जा सकी है।

2. **रीमान परिकल्पना**– अभाज्य संख्या प्रमेय, अभाज्य संख्याओं के औसत वितरण को सुनिश्चित करती है। रीमान परिकल्पना हमको इस औसत से विचलन के बारे में बताती है, जिसे जर्मन गणितज्ञ रीमान ने सन् 1859 के अपने एक शोध पत्र में लिखा था, जिसके अनुसार जीटा फलनों के "नॉन ऑबवियस" शून्य वह सम्मिश्र संख्याएं होंगे जिनका वास्तविक भाग 1/2 है। अभी तक गणितज्ञों द्वारा इस परिकल्पना को सिद्ध नहीं किया जा सका है। हम आज यह नहीं कह सकते हैं कि परिकल्पना देते समय महान गणितज्ञ रीमान के पास इसकी उत्पत्ति थी या नहीं।

3. **पी वर्सेज एन पी प्रॉब्लेम**– यदि किसी समस्या के हल के सही होने की जाँच करना आसान हो, तो क्या उस समस्या के हल करने का तरीका भी आसान होगा? यही **पी वर्सेज एन पी प्रॉब्लेम** का सार है। विशिष्ट एन पी समस्याओं में एक हैमिल्टोनियन

समस्या है– N शहरों की यात्रा करनी है, कोई इसे एक शहर की दो बार यात्रा किये बिना कैसे पूरा कर सकता है? अगर कोई इसका उत्तर मुझे देता है तो मैं यह जाँच सकता हूँ कि वह सही है परन्तु मैं उसका हल नहीं दे सकता।

4. **नेवियर–स्टोक्स समीकरण**– यह समीकरण पानी तथा हवा जैसे द्रवों के प्रवाह के अध्ययन के लिए प्रयोग की जाती है। परन्तु अभी तक आधारभूत नेवियर–स्टोक्स समीकरण का सम्पूर्ण हल एवं उसके अद्वितीय होने को सिद्ध नहीं किया जा सका है।

5. **हॉज कन्जेक्चर**– इस कन्जेक्चर के उत्तर से पता चलता है कि किसी बीजगणितीय समीकरणों के निकाय के हल समुच्चय के टोपोलॉजी की संख्या पुनः बीजगणितीय समीकरणों के रूप में क्या होगी। चार से कम डायमेन्शन के लिए हॉज कन्जेक्चर का हल ज्ञात है परन्तु चार व चार से अधिक डायमेन्शन के लिए इसका हल अज्ञात है।

6. **पॉयनकेयर कन्जेक्चर**– सन् 1904 में फ्रेंच गणितज्ञ हेनरी पॉयनकेयर ने पूछा कि क्या त्रिविमीय गोले को अद्वितीय रूप में सिम्पली कनेक्टेड थ्री मैनीफोल्ड के रूप में व्यक्त कर सकते हैं? इसी प्रश्न को पॉयनकेयर कन्जेक्चर के रूप में जाना जाता है। यह थर्सटन जियोमिट्राइजेशन कन्जेक्चर का एक विशेष स्वरूप है। इसका हल हमको यह बताता है कि प्रत्येक थ्री मैनीफोल्ड, मानक टुकड़ों के समुच्चय से निर्मित होता है, जबकि प्रत्येक टुकड़ा आठ जानी–पहचानी ज्यामिति हैं। इसकी उत्पत्ति अभी तक नहीं की जा सकी है।

7. **बिर्च तथा स्विन्नर्टन–डायर कन्जेक्चर**– यह कन्जेक्चर दीर्घवृत्तीय वक्र मॉड पी पर स्थित बिन्दुओं को परिमेय बिन्दुओं के ग्रुप की रैंक से जोड़ता है। दो चरों में त्रिघातीय समीकरण से परिभाषित दीर्घवृत्तीय वक्र वह आधारभूत गणितीय वस्तु हैं जिसे सतह पर आने में कई वर्ष लगे। इस कन्जेक्चर की उत्पत्ति अभी तक नहीं की जा सकी है।

अभी तक सहस्त्राब्दी पुरस्कार समस्याओं को हल करने का दावा करने वाले गणितज्ञ



ग्रिगरी पेरेलमान



मुख्तारबे ओटेलबाऐव

वर्ष 2003 में रूसी प्रोफेसर **ग्रिगरी पेरेलमान**(जन्म– 13 जून, 1966) ने **थर्सटन जियोमीट्राइजेशन कन्जेक्चर** को सिद्ध किया जो कि प्रसिद्ध सहस्त्राब्दी समस्या, **पॉयनकेयर कन्जेक्चर**, का व्यापकीकरण है। क्ले मैथेमेटिक्स इंस्टीट्यूट(सी0 एम0 आई0) द्वारा 18 मार्च, 2010 में प्रोफेसर **ग्रिगरी पेरेलमान** को औपचारिक रूप से **पॉयनकेयर कन्जेक्चर** को सिद्ध करने के लिए 1 मिलियन डॉलर का पुरस्कार दिये जाने की घोषणा की गई परन्तु 1 जुलाई 2010 को प्रोफेसर **ग्रिगरी पेरेलमान** ने पुरस्कार लेने से मना कर दिया। उनका कहना था कि वह पैसे और प्रसिद्धि के लिए कार्य करने में रूचि नहीं रखते हैं, और चिड़ियाघर में प्रदर्शित किये जाने वाले जानवर की तरह नहीं दिखना चाहते हैं। अगस्त 2006 में ग्रिगरी पेरेलमान को ज्यामिति में "रिकी फ्लो" पर किये गये उनके उत्कृष्ट कार्य के लिए प्रतिष्ठित फील्ड मेडल पुरस्कार दिया गया। पेरेलमान द्वारा दुनिया का सबसे प्रतिष्ठित यूरोपियन मैथेमेटिकल सोसायटी द्वारा गणित का पुरस्कार भी अस्वीकार कर दिया गया।

यूरेशियन मैथेमेटिकल इंस्टीट्यूट, यूरेशियन नैशनल यूनिवर्सिटी, एस्टना, कजाखिस्तान, के प्रोफेसर **मुख्तारबे ओटेलबाऐव** के द्वारा वर्ष 2013 में सहस्त्राब्दी समस्या, **नेवियर–स्टोक्स समीकरण** के प्रत्येक स्थिति में हल एवं उसकी अद्वितीयता, को हल करने का दावा पेश किया है। यह दावा उनके द्वारा रशिया के न्यू साइंटिस्ट को कजाख भाषा में दिये गये अपने साक्षात्कार में कहा गया। उन्होंने कहा

कि वह इस समस्या को हल करने पर पिछले 30 वर्षों से लगातार कार्य कर रहे थे और उन्होंने इसका हल कजाखिस्तान के मैथेमेटिकल जर्नल में प्रकाशित अपने शोध पत्र में दिया है जो कि कजाख भाषा में लिखा गया है। क्योंकि उन्हें कोई दूसरी भाषा बोलनी और लिखनी नहीं आती है। क्ले मैथेमेटिक्स इंस्टीट्यूट(सी0 एम0 आई0) का वैज्ञानिक मण्डल इस गणितज्ञ के दावे को जाँचने में जुटा है। अभी तक वैज्ञानिक मण्डल द्वारा इस पर कोई अंतिम निर्णय नहीं लिया गया है।

कुल मिलाकर अभी तक क्ले मैथेमेटिक्स इंस्टीट्यूट(सी0 एम0 आई0) के वैज्ञानिक सलाहकार मंडल द्वारा सात में एक सहस्त्राब्दी समस्या, **पॉयनकेयर कन्जेक्चर**, के रूसी प्रोफेसर **ग्रिगरी पेरेलमान** द्वारा सिद्ध किये जाने को सही माना गया है। अन्य छः समस्याओं का सिद्ध किया जाना गणितज्ञों के लिए आज तक एक पहेली बना हुआ है।

संदर्भ

1. कार्लसन, जे0; जेफ, ऐ0 एवं वाइल्स, ऐ0(संपा0)(2006) "द मिलेनियम प्राइज प्राब्लेम्स", क्ले मैथेमेटिक्स इंस्टीट्यूट(सी0 एम0 आई0), ए0एम0एस0, प्रोविडेंस रोड्स आइसलैंड, यू0एस0ए0।

2. http://www.claymath.org/millennium-problems-rules

वैकल्पिक ऊर्जा का भविष्य, उसके विकास और उत्पादन प्रयास (एक दिवसीय राजभाषा परिसंवाद)–एक आख्या

नवीन प्रकाश सिंह "नवीन"
पूर्व महाप्रबंधक (भूविज्ञान), ओ0एन0जी0सी0 तथा अध्यक्ष, भूविज्ञान परिषद, बड़ौदा, गुजरात, भारत
"सूर्यांश", ए–5, साकेत हाउसिंग कॉलोनी, सूसन–तरसाली रिंग रोड, वड़ोदरा–390010, गुजरात, भारत
naveenpsingh@hotmail.com



"वैकल्पिक ऊर्जा का भविष्य, उसके विकास एवं उत्पादन प्रयास" विषय पर हिन्दी भाषा के माध्यम में आयोजित तकनीकी सेमिनार के प्रगति अंक का विमोचन

ऑयल एण्ड नेचुरल गैस कॉरपोरेशन लिमिटेड (ओ0एन0जी0सी0), बड़ौदा तथा भूविज्ञान परिषद, बड़ौदा के संयुक्त प्रयासों से **"वैकल्पिक ऊर्जा का भविष्य, उसके विकास और उत्पादन प्रयास"** पर हिन्दी भाषा के माध्यम में 14 सितम्बर, 2013 को एक दिवसीय परिसंवाद (सेमिनार) आयोजित हुआ। इस परिसंवाद में लगभग 200 प्रतिभागियों ने भाग लिया। परिसंवाद के मुख्य अतिथि थे डॉ0 भरत भार्गव, महानिदेशक, ओ0एन0जी0सी0 ऊर्जा केन्द्र, दिल्ली तथा विशिष्ट अतिथि थे श्री एस0 के0 दास, अधिशासी निदेशक–द्रोणी प्रबंधक, ओ0एन0जी0सी0, बड़ौदा एवं डॉ0 नवीन प्रकाश सिंह "नवीन", अध्यक्ष, भूविज्ञान परिषद, बड़ौदा। श्री उमाशंकर देव पाण्डेय, महाधिप्रबंधक–प्रधान, भूभौतिकीय सेवाएं, ओ0एन0जी0सी0, ने इस परिसंवाद का संयोजन किया। उद्घाटन सत्र में उक्त चारों महानुभाव मंचस्थ थे और उन्होंने अपने–अपने विचार भी प्रकट किए। सर्वप्रथम श्री पाण्डेय ने संयोजन की व्यवस्था संबंधित गतिविधियों को रेखांकित किया और परिसंवाद के विषय के महत्व पर भी दो शब्द कहे। तत्पश्चात् डॉ0 नवीन ने ऊर्जा संबंधी उक्त ज्वलंत समस्या की प्रासंगिकता को रेखांकित किया और देश के विकास में नवीकरणीय ऊर्जा के महत्व पर प्रकाश डाला। यही नहीं वरन्, स्वभाषा हिन्दी में विज्ञान विषयक इस परिसंवाद को ऊँचाई पर ले जाने के लिए उन्होंने ओ0एन0जी0सी0 की भूमिका की भी सराहना की और इसका श्रेय ओ0एन0जी0सी0 के द्रोणी प्रबंधक श्री दास जी को दिया। इस अवसर पर श्री एस0 के0 दास ने ऊर्जा की बढ़ती मांग पर चिंता व्यक्त करते हुए कहा कि पारम्परिक स्रोतों(तेल, गैस, कोयला) पर निर्भरता कम करने के लिए आज इस सेमिनार की चर्चा अत्यन्त उपयोगी होगी। उन्होंने उक्त कार्यक्रम में भूविज्ञान परिषद के योगदान की विशेष सराहना की और उससे जुड़े सभी लोगों को बधाई दी। अंत में इस परिसंवाद के मुख्य अतिथि डॉ0 भार्गव ने अपने अभिभाषण में नवीकरणीय ऊर्जा की देश में हो रही प्रगति की नवीनतम जानकारी देते हुए कहा कि वैकल्पिक ऊर्जा के विकास और उत्पादन पर अपने देश में महत्वाकांक्षी योजनाओं पर काम चल रहा है और इससे अवश्य ही हमारी ऊर्जा सम्पन्नता बढ़ेगी। उन्होंने इस आयोजन की भी बड़ी प्रशंसा की और इसे सामयिक बताया। मुख्य

अतिथि ने परिसंवाद के सद्यः प्रकाशित प्रगति अंक(प्रोसीडिंग) का विमोचन भी किया। इस प्रगति अंक में कुल 25 प्रपत्र/तकनीकी आलेख सम्मिलित किये गये हैं यद्यपि विभिन्न कारणों से सबका प्रस्तुतीकरण नहीं किया जा सका। तदुपरांत धन्यवाद ज्ञापन के साथ उद्घाटन समारोह सम्पन्न हो गया।

उक्त एक दिवसीय परिसंवाद के उद्घाटन सत्रोपरांत, पोस्टर सत्र का उद्घाटन आयोजन के मुख्य अतिथि डॉ0 भार्गव ने किया। इस सत्र में कुल 6 पोस्टर प्रपत्र सम्मिलित किये गये थे परन्तु उनमें से चार प्रपत्रों के लेखक उपस्थित हुए। अधिकांश पोस्टर प्रपत्र परिसंवाद के शीर्षक के परिचयात्मक थे परन्तु अच्छा प्रयास किया गया था। प्रतिभागियों ने बड़े मनोयोग से पोस्टरों को देखा और पढ़ा। लेखकों ने भी अपने प्रपत्र का सार संक्षेप प्रस्तुत किया और साथ ही साथ दर्शक प्रतिभागियों के प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर भी दिया। पौन घंटे का यह सत्र निश्चित समय पर पूर्ण हो गया।

पोस्टर सत्र के पश्चात् तीन तकनीकी सत्र संचालित किये गये जिनमें कुल 15 प्रपत्र/तकनीकी आलेख प्रस्तुत किये गये। प्रथम सत्र की अध्यक्षता श्री एस0 के0 शर्मा, पूर्व अधिशासी निदेशक–परिसम्पत्ति प्रबंधक, ओ0एन0जी0सी0 तथा संरक्षक, भूविज्ञान परिषद, बड़ौदा ने की और सहसत्राध्यक्ष थे श्री अरुण कुमार, महाप्रबंधक (भूभौतिकी)–प्रधान, सी0ओ0डी0 तथा शेल गैस, ओ0एन0जी0सी0। इस सत्र के प्रथम दो प्रपत्र मूल तकनीकी आलेख(की टेक्निकल पेपर) थे जिनके शीर्षक थे वैकल्पिक ऊर्जा का भारतीय परिदृश्य और वैश्विक परिदृश्य। इन दोनों आलेखों में नवीकरणीय ऊर्जा की समस्त गतिविधियाँ समाहित हैं। अन्य प्रपत्र नवीकरणीय के विभिन्न घटकों का अलग–अलग विस्तृत विवरण प्रस्तुत करते हैं। प्रथम सत्र में उक्त उल्लिखित दो प्रपत्रों को छोड़कर सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा तथा पर्यावरण संरक्षण में वैकल्पिक ऊर्जा पर चार तकनीकी आलेख और प्रस्तुत किये गये। समस्त लेखकों ने अपने आलेख का उत्तम प्रस्तुतीकरण लगभग निर्धारित समय में पूरा किया और प्रश्नों के उत्तर भी सटीक शब्दों में दिये। सत्र की समाप्ति पर सत्राध्यक्ष ने समस्त प्रस्तुत किये गये आलेखों की समीक्षा भी की।

भोजनावकाश के उपरांत द्वितीय सत्र प्रारम्भ हुआ जिसके सत्राध्यक्ष थे श्री दयावंत, महाधिप्रबंधक (रसायन)–प्रधान, क्षेत्रीय भूवैज्ञानिक प्रयोगशालाएं तथा सहसत्राध्यक्ष थे डॉ0 कण्डपाल, महाप्रबंधक (भूभौतिकी)–प्रखंड प्रबंधक, ओ0एन0जी0सी0। इस सत्र में कुल 5 प्रपत्र/तकनीकी आलेख प्रस्तुत किये गये। जिनमें वैकल्पिक ऊर्जा के क्षेत्र में ओ0एन0जी0सी0 ऊर्जा केन्द्र का योगदान, वैकल्पिक ऊर्जा का भविष्य, सौर ऊर्जा का विकास एवं उत्पादन प्रयास, जैव पदार्थ से ऊर्जा उत्पादन एवं विकास तथा पर्यावरण संरक्षण में वैकल्पिक ऊर्जा का योगदान विषयों पर तकनीकी आलेख प्रस्तुत किये गये। यद्यपि कुछ प्रपत्रों में परस्पर द्विरावृत्ति हुई है परन्तु हिन्दी लेखकों के उत्साह वर्धन के लिए इसे स्वीकार किया गया और प्रगति अंक में उसे स्थान भी दिया गया है। इस सत्र का समापन सत्राध्यक्ष एवं सहसत्राध्यक्ष की समीक्षात्मक टिप्पणियों से हुआ।

तृतीय और अन्तिम सत्र के सत्राध्यक्ष थे श्री असीम सामंत, महाधिप्रबंधक–प्रधान, कूप संलेखन तकनीक विशिष्टता केन्द्र (सी वेल), ओ0एन0जी0सी0 तथा सहसत्राध्यक्ष थे श्री अखिलेश कुमार सिंह, महाप्रबंधक (भूविज्ञान)– प्रखंड प्रबंधक, ओ0एन0जी0सी0। इस सत्र में कुल 4 प्रपत्र/आलेख प्रस्तुत किये गये जिनके शीर्षक थे बायोमास एवं बायोगैस का वैकल्पिक ऊर्जा में योगदान, भारत में सौर ऊर्जा, कैम्बे बेसिन में भूतापीय ऊर्जा की संभावनाएं तथा समुद्र की लहरों द्वारा ऊर्जा की उत्पत्ति। सभी लेखक गणों का प्रस्तुतीकरण अच्छा था और उन्होंने इसके लिए अच्छा प्रयास भी किया परन्तु अंग्रेजी के शब्द कुछ इस तरह इस पीढ़ी की जबान पर चढ़ गये हैं कि वह चाहकर भी उनसे मुक्त नहीं हो पाते इसलिए हमारी राजभाषा हिन्दी का स्वरूप विकृत हो गया है। फिर भी यदि हम बोलते रहेंगे और हिन्दी का उपयोग करते रहेंगे तो मुझे विश्वास है कि कालान्तर में भाषा प्रांजल होती जायेगी। यह सत्र भी समय से पूरा हो गया। लेखकों ने प्रतिभागियों के प्रश्नों का स्पष्ट उत्तर भी दिया। यद्यपि सत्र देर से प्रारम्भ हुआ था परन्तु प्रपत्र कम होने के कारण समाप्त निर्धारित समय से हुआ। सत्राध्यक्ष ने प्रत्येक प्रस्तुत किये गये तकनीकी आलेख की संक्षिप्त समीक्षा भी की और सत्र का समापन कर दिया।

परम्परागत समापन सत्र भी औपचारिकताओं की पूर्ति हेतु आयोजित हुआ परन्तु इसका अधिकांश समय स्मृति चिन्ह देने और धन्यवाद ज्ञापन आदि में व्यतीत हो गया। बाहर से पधारे प्रतिभागियों की प्रतिक्रियाओं के लिए समय नहीं मिला। फिर भी चाय के अल्प विरामों में और भोजनावकाश में प्रतिभागियों ने जो आपस में बातचीत की उससे यह आभास अवश्य मिला कि अधिकांश प्रतिभागियों को सुखद आश्चर्य हो रहा था। कुछ लोगों का कहना था सब कुछ कितना सरल और ग्राह्य है जबकि कुछ लोग यह भी कह रहे थे कि अंग्रेजी में होता तो अच्छा रहता। हजारों वर्षों की पराधीन मानसिकता को तोड़ना सरल नहीं है इसके लिए सतत प्रयास करना पड़ेगा। जिस तरह अंग्रेजी का आज वातावरण है उसी के समतुल्य हिन्दी भाषा का वातावरण बनाना पड़ेगा तब सम्भवतः पराधीन मानसिकता बदलेगी।

उक्त परिसंवाद जिस विषय पर संकेन्द्रित है उस प्रसंग का सारांश निम्न पंक्तियों में दिया जा रहा है। इस परिसंवाद द्वारा यह रेखांकित करने का प्रयास किया गया है कि वैकल्पिक ऊर्जा विशेष रूप से नवीकरणीय ऊर्जा की भूमिका आज हमारे लिए कितनी महत्वपूर्ण हो गई है और इसको विकसित तथा उत्पादित करना हमारी अनिवार्य आवश्यकता है। विश्वव्यापी स्तर पर वैकल्पिक ऊर्जा को विकसित करने का प्रयास हो रहा है परन्तु हमारे देश भारत में इसकी क्या स्थिति है, इस पर परिसंवाद में प्रस्तुत किये गये अनेक आलेखों में विशेष उल्लेख किया गया है। भारत की द्रुति गति से बढ़ती हुई जनसंख्या, आर्थिक प्रगति और लोगों की बदलती जीवनशैली के कारण ऊर्जा की मांग आज तेजी से बढ़ती जा रही है। आज विश्व के ऊर्जा उपभोक्ता देशों की अग्रिम कतार में हम चौथे स्थान पर खड़े हैं फिर भी 30 करोड़ भारतवासी बिना बिजली के अपना काम चला रहे हैं और लगभग 80 करोड़ लोगों को सीमित मात्रा में बिजली उपलब्ध हो पाती है। जुलाई 2012 में उत्तरी भारत में एक दिन अचानक अँधेरा छा गया और दो दिन तक बिजली गुल रही जिससे लगभग 62 करोड़ लोग प्रभावित हुए थे। इसका मुख्य कारण था विद्युत ग्रिड का विफल हो जाना। ऐसी स्थिति इसलिए उत्पन्न हुई क्योंकि माँग और आपूर्ति में बड़ा अंतर है। इन्हीं परिस्थितियों को दृष्टि में रखकर वैकल्पिक ऊर्जा पर परिसंवाद आयोजित किया गया है। वैकल्पिक ऊर्जा की परिधि तो बड़ी है परन्तु प्रस्तुत परिसंवाद मुख्यतः नवीकरणीय ऊर्जा तक सीमित है। नवीकरणीय ऊर्जा के अंतर्गत वह प्राकृतिक ऊर्जा के स्रोत आते हैं जिनका निरंतर नवीनीकरण होता रहता है जैसे सौर ऊर्जा, लघुजल ऊर्जा, पवन ऊर्जा, बायोमास ऊर्जा, भूतापीय ऊर्जा तथा ज्वारीय तरंग ऊर्जा।

भारत में पारम्परिक जीवाश्म ईंधन (खनिज तेल, गैस तथा कोयला) से ऊर्जा उत्पादन की क्षमता लगभग 70 प्रतिशत है अतः शेष माँग को पूरा करने के लिए भारत को आयात पर निर्भर रहना पड़ता है। वर्ष 2011 के आँकड़ों के अनुसार भारत की कुल ऊर्जा खपत में वैकल्पिक ऊर्जा का उत्पादन नाभिकीय ऊर्जा सहित मात्र 5 प्रतिशत था जबकि विश्व आपूर्ति में अकेले वैकल्पिक स्रोतों से 7 प्रतिशत है यूरोप, अमेरिका, चीन तथा जापान आदि अग्रणी देश हैं। भारत के परिप्रेक्ष्य में यह अनुमान है कि वर्ष 2030 तक घरेलू आपूर्ति के लिए संभवतः 53 प्रतिशत से भी अधिक तेल/गैस का आयात करना पड़े। अतः वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों को विकसित और उत्पादित करने की अत्याधिक आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों से शुद्ध ऊर्जा प्राप्त होगी जिससे हरित ग्रह गैसों का उत्सर्जन भी नगण्य होगा अतः पर्यावरण संरक्षण में अभीष्ट योगदान होगा। हमारे देश में वैकल्पिक ऊर्जा को विकसित करने के लिए 1992 से पूरा एक मंत्रालय स्थापित किया जा चुका है। जिसे नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय(मिनिस्ट्री ऑफ न्यू एण्ड रिन्यूएबल एनर्जी–एम0एन0आर0ई0) कहते हैं।

अक्टूबर, 2012 तक भारत की नवीकरणीय ग्रिड आधारित ऊर्जा की स्थापित क्षमता 26,266.96 मेगावाट थी। जिसमें पवन ऊर्जा का योगदान 18,274.80 मेगावाट, लघुजल ऊर्जा 3451.49 मेगावाट, ईख की खोई तथा चावल की भूसी आदि के सह–उत्पादन द्वारा 2,175. 23 मेगावाट, बायोमास ऊर्जा(कृषि अपशिष्ट, पशुओं का गोबर, वनों के अवशिष्ट) का 1226.60 मेगावाट, सौर ऊर्जा (सौर फोटोवोल्टेयिक) का 1045.16 मेगावाट तथा शेष घरों के तथा औद्योगिक संस्थानों के कचरे द्वारा प्राप्त ऊर्जा का योगदान था। इसके अतिरिक्त, उक्त समय सीमा में ही ग्रिड से अलग (ऑफ ग्रिड) जो नवीकरणीय ऊर्जा उत्पादित की गई वह 787.83 मेगावाट थी।

वैकल्पिक ऊर्जा के अंतर्गत भारत में मुख्यतः पवन ऊर्जा, लघुजल ऊर्जा, सौर ऊर्जा और बायोमास ऊर्जा को विकसित तथा उत्पादित करने के लिए विशेष प्रयत्न किये जा रहे हैं। 31 जनवरी, 2012 की स्थिति के अनुसार भारत में पवन ऊर्जा की स्थापित क्षमता सबसे अधिक 16.2 गिगावाट (66%) थी। इसमें तमिलनाडु, गुजरात, महाराष्ट्र आदि की अग्रणी भूमिका है। पवन ऊर्जा के क्षेत्र में भारत का विश्व में पाँचवा स्थान है। इंटरनेशनल एनर्जी एजेन्सी(आई0ई0ए0) के अनुसार वर्ष 2030 तक विश्व मंडी में यूरोप का हिस्सा 46:, उत्तरी अमेरिका का 27%, चीन का 14% तथा भारत का 10% तक होने का अनुमान है। इसी प्रकार भारत की जल विद्युत(वृहत बांधों सहित) क्षमता की गणना विश्व के महानतम क्षमता वाले देशों में होती है। यद्यपि लघु पनबिजली परियोजनाएं (2 मेगावाट से 25 मेगावाट तक) वृहत जल ऊर्जा से अलग हैं परन्तु आजकल इन्हीं को सुरक्षित योजनाओं के अंतर्गत विकसित किया जा रहा है। इनका योगदान अप्रैल 2012 तक 3.39 गिगावाट(13%) था। विश्व में जल विद्युत योजनाएं मुख्यतः नार्वे, स्वीडन, स्विटजरलैण्ड, जर्मनी, फ्रांस, रूस एवं उत्तरी अमेरिका में हैं। चीन का थ्री जोर्ज डैम सबसे बड़ा बांध है, जिसकी स्थापित क्षमता 22.5 गिगावाट है। दूसरे स्थान पर ब्राजील, फिर वेनेजुएला तत्पश्चात् अमेरिका, रूस और कनाडा हैं। बायोमास ऊर्जा का योगदान भारत में लघुजल ऊर्जा के समकक्ष था अर्थात् अप्रैल 2012 तक यह 3.22 गिगावाट (13:) था। बायोमास ऊर्जा के क्षेत्र में विशेष रूप से खोई सह–उत्पादन और जैव गैस उत्पादन के क्षेत्र में प्रगति हुई है परन्तु द्रव जैव ईंधन अर्थात् इथेनॉल, बायोडीजल का अभी तक महत्वपूर्ण स्तर तक उत्पादन नहीं किया जा सका है। बायोमास की अनुमानित क्षमता 30,000 मेगावाट से भी अधिक है। अतः लगभग 90 प्रतिशत संभावित क्षमता का दोहन अभी शेष है। विश्व द्रव जैव ईंधन उत्पादन पर विशेष ध्यान दिया गया है परन्तु यह अधिक व्यवहार्य नहीं लगता। सौर ऊर्जा के संबंध में राज्य सरकारों तथा नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय के नेतृत्व में अनेक कार्यक्रम भारत में चलाये जा रहे हैं। यद्यपि अप्रैल 2012 तक इसकी स्थापित क्षमता मात्र 0.94 गिगावाट ही थी परन्तु सौर ऊर्जा के विकास को गति देने के लिए जवाहरलाल नेहरू नेशनल सोलर मिशन की स्थापना वर्ष 2009 में हुई थी और वर्ष 2022 तक इसको 20 गिगावाट ग्रिड आधारित और 2 गिगावाट ऑफ ग्रिड विद्युत उत्पादित करने का लक्ष्य है। विश्व में सोलर फोटो–वोल्टेयिक की स्थापित क्षमता 100 गिगावाट है। वर्ष 2012 के आँकड़ों के अनुसार 76% सौर ऊर्जा का उपयोग करने वाला यूरोप सारे विश्व में अग्रणी है। अकेले जर्मनी में 30% सौर ऊर्जा की खपत है इसके पश्चात् इटली आता है। एशिया पैसिफिक की वैश्विक खपत 17 प्रतिशत है। इसी प्रकार जापान की वैश्विक खपत 6.7% तथा चीन की 4.9% है।





भूतापीय ऊर्जा अभी तक भारत में प्रायोगिक स्तर पर है। जम्मू–कश्मीर में पुगा स्थान पर 2 से 5 मेगावाट क्षमता का प्रथम भूतापीय विद्युत संयंत्र स्थापित करने की योजना बन रही है। वर्ष 2007 के आँकड़ों के अनुसार विश्व में भूतापीय संयंत्रों से 10 गिगावाट बिजली उत्पादित की जा रही है जो वैश्विक मांग का 0.3% है। विश्व का सबसे पहला भूतापीय बिजली केन्द्र इटली में स्थापित किया गया था। विश्व में भू–तापीय ऊर्जा संयंत्रों का सबसे बड़ा समूह गीजर कैलिफोर्निया में है। भूतापीय ऊर्जा अत्यन्त विश्वसनीय तथा मापनीय है। आइसलैंड, फिलीपीन्स, इंडोनेशिया, अमेरिका, न्यूजीलैन्ड तथा मेक्सिको में विशालतम भूतापीय केन्द्र स्थापित किये गये हैं। ज्वारीय तरंग ऊर्जा भी भारत में अभी तक प्रायोगिक स्तर पर है। वर्ष 2011 में नवीन और नवीकरणीय ऊर्जा मंत्रालय, भारत सरकार तथा पश्चिमी बंगाल सरकार की नवीकरणीय ऊर्जा विकास एजेन्सी ने मिलकर 3.75 मेगावाट का गंगा डेल्टा पर बराज तकनीक से दुर्गादौनी

मिनी टाइडल प्रोजेक्ट स्थापित करने का निर्णय लिया है ताकि डेल्टा क्षेत्र के स्थानीय तथा दूरस्थ स्थानों की विद्युत ऊर्जा मांग को पूरा किया जा सके। समुद्र की सतही तरंगों द्वारा तथा समुद्र की तापीय प्रवणता(ग्रेडियेन्ट) से ऊर्जा दोहन के उपक्रम किये जा रहे हैं। इंग्लैण्ड का ओर्क्नि तरंग ऊर्जा केन्द्र तथा इसले लिंपेट तरंग ऊर्जा केन्द्र तथा स्पेन और इजरायल में तरंग ऊर्जा केन्द्र स्थापित किये जा चुके हैं। पुर्तगाल में विश्व की प्रथम तरंगों की खेती हुई है जिसे अगुकाडोरा वेव फार्म से जाना जाता है और जो वर्ष 2007 से निर्माणाधीन है। यह तकनीक लहरों पर निर्भर है अतः अनियमित है।

वैश्विक आँकड़ों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि सभी वैकल्पिक साधनों में सौर एवं पवन ऊर्जा विश्व के लिए भविष्य की प्रभावी ऊर्जा सिद्ध होने वाली है। विश्व स्तर पर सौर ऊर्जा की खपत 58% से बढ़कर 93 टेरा वाट आवर्स(टी0डब्ल्यू0एच0) तथा पवन ऊर्जा 18.1% से बढ़कर 531.3 टेरा वाट आवर्स(टी0डब्ल्यू0एच0) हो गई है।

संगोष्ठी आख्या

"रोल ऑफ मैथेमेटिक्स इन एडवांसमेंट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी" पर त्रि–दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी
एन.सी.आर.एम.ए.एस.टी.–2013(अक्टूबर 18–20, 2013)
(डी.एस.टी., भारत सरकार एवं सी.एस.आई.आर., नई दिल्ली द्वारा अनुदानित)





"विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की प्रगति में गणित की भूमिका" पर त्रिदिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी के उद्घाटन समारोह में **"स्मारिका"** एवं महाविद्यालय द्वारा हिन्दी में प्रकाशित विज्ञान शोध पत्रिका **"अनुसंधान"** का विमोचन करते लखनऊ विश्वविद्यालय के कुलपति माननीय **डॉ0 एस0बी0 निमसे** एवं अन्य मंचासीन महानुभाव

गणित विभाग, बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखनऊ, द्वारा नेशनल साइंस नेटवर्क एवं बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद के सहयोग से महाविद्यालय के नवनिर्मित सभागार में डी.एस.टी. एवं सी.एस.आई.आर., भारत सरकार द्वारा अनुदानित शीर्षक **"रोल ऑफ मैथेमेटिक्स इन एडवांसमेंट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी"** पर त्रि–दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का सफल आयोजन किया गया। इस राष्ट्रीय संगोष्ठी की दिवसवार आख्या निम्नवत है–

प्रथम दिवस (अक्टूबर 18, 2013, शुक्रवार)

प्रातःकाल ठीक 9:30 पर उद्घाटन समारोह महाविद्यालय के सभागार में प्रारम्भ हुआ। सभागार के मंच पर मुख्य अतिथि– प्रोफेसर एस0 बी0 निमसे, कुलपति, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, विशिष्ट अतिथि– प्रोफेसर एस0 दत्ता, पूर्व विभागाध्यक्ष गणित विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, श्री टी0 एन0 मिश्र, अध्यक्ष, बी0एस0एन0वी0 इंस्टीट्यूट, श्री आर0 के0 टण्डन, अध्यक्ष, बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखनऊ, डॉ0 सुधीश चन्द्र, प्राचार्य, बप्पा श्री नारायण वोकेशनल स्नातकोत्तर महाविद्यालय, लखनऊ, डॉ0 के0 के0 बाजपेई, संयोजक व अध्यक्ष, गणित विभाग एवं डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव, आयोजन सचिव व एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग, मंचासीन थे। उद्घाटन समारोह का संचालन डॉ0 संजीव शुक्ल, प्राणि विज्ञान विभाग द्वारा किया गया। सभी महानुभावों के द्वारा माँ सरस्वती की प्रतिमा पर माल्यार्पण तथा दीप प्रज्जवलित किया गया। तत्पश्चात् महाविद्यालय के छात्र–छात्राओं के द्वारा सरस्वती वन्दना का सुमधुर गायन प्रस्तुत किया गया। सरस्वती वन्दना के पश्चात् राष्ट्रीय संगोष्ठी की स्मारिका का विमोचन सभी मंचासीन महानुभावों के कर–कमलों द्वारा सुनिश्चित हुआ। इसके बाद संगोष्ठी के संयोजक डॉ0 के0 के0 बाजपेई के द्वारा मुख्य अतिथि– प्रोफेसर एस0 बी0 निमसे, कुलपति, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, एवं विशिष्ट अतिथि– प्रोफेसर एस0 दत्ता, पूर्व विभागाध्यक्ष गणित विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, का संक्षिप्त परिचय एवं शिक्षा जगत में उनके द्वारा किये गये योगदान को सभागार में उपस्थित अतिथियों, छात्र–छात्राओं व देश–विदेश से आये हुए प्रतिभागियों को परिचित कराया गया।

मुख्य अतिथि– प्रोफेसर एस0 बी0 निमसे द्वारा दिये गये अपने भाषण में राष्ट्रीय संगोष्ठी के शीर्षक की तहेदिल से सराहना की गई। गणित की बुनियादी विचारों के ऐतिहासिक विकास का हवाला देते हुए उन्होंने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की प्रगति में गणित की भूमिका पर प्रकाश डाला। उन्होंने छात्र–छात्राओं एवं युवा शोधकर्ताओं से बिना किसी झिझक के इस प्रकार आयोजित की जाने वाली संगोष्ठियों में वक्तव्य देने आये विषय विशेषज्ञों से प्रश्न पूछने को प्रेरित किया गया। उनके विचारों में प्रश्नों से परिपूर्ण मस्तिष्क ही एक मूल गणितज्ञ की निशानी होता है।

विशिष्ट अतिथि प्रोफेसर एस0 दत्ता जी द्वारा दिये गये अपने बीजीय भाषण में विज्ञान एवं तकनीकी के क्षेत्र में हो रही लगातार उन्नति में गणित किस प्रकार अपना योगदान दे रही है इसके बारे में जानकारी प्रदान की गई। उन्होंने बताया कि किस प्रकार मिसाइल प्रोजेक्शन, अंतरिक्ष विज्ञान, मौसम विज्ञान आदि क्षेत्रों में वैज्ञानिक पूरी तरह से गणित और गणितीय मॉडल पर निर्भर हैं। तत्पश्चात् राष्ट्रीय संगोष्ठी के आयोजन सचिव डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव द्वारा संगोष्ठी के विशय पर प्रकाश डाला गया।

इसी क्रम में महाविद्यालय में विज्ञान के हिन्दी माध्यम से प्रचार–प्रसार के उद्देश्य को लेकर नवगठित बी0एस0एन0वी0 विज्ञान परिषद के अध्यक्ष एवं वर्तमान प्राचार्य डॉ0 सुधीश चन्द्र जी द्वारा परिषद के लक्ष्य एवं उद्देश्यों के बारे में विस्तार से प्रकाश डाला गया। विज्ञान परिषद के द्वारा राजभाषा हिन्दी में प्रकाशित शोध पत्रिका **अनुसंधान (विज्ञान शोध पत्रिका)** के प्रथम खण्ड, अंक–1, वर्ष 2013, का विमोचन भी सम्मानित मंचासीन सदस्यों के द्वारा किया गया। प्राचार्य महोदय द्वारा सभी अतिथियों एवं देश भर से संगोष्ठी में भाग लेने आये हुए प्रतिभागियों का स्वागत किया गया।

उद्घाटन समारोह के मंच पर आसीन बी0एस0एन0वी0 इंस्टीट्यूट के अध्यक्ष, श्री टी0 एन0 मिश्र जी द्वारा अल्प समय में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार एवं वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली द्वारा अनुदान प्राप्त कर संगोष्ठी के आयोजन हेतु आयोजन कर्ताओं को बधाई दी तथा सफल आयोजन की कामना की। उनके द्वारा बाहर से भाग लेने आये प्रतिभागियों को आयोजन समिति की ओर से किसी भी प्रकार की तकलीफ न होने देने का आश्वासन भी दिया गया। उद्घाटन समारोह का अंत महाविद्यालय की प्रबंध समिति के अध्यक्ष श्री आर0 के0 टण्डन जी द्वारा धन्यवाद ज्ञापन के साथ हुआ तथा संचालनकर्ता अधिकारी डॉ0 संजीव शुक्ल जी द्वारा सभी अतिथियों को हाई–टी के लिए आमंत्रित किया गया।

हाई–टी के उपरांत आयोजित शैक्षिक सत्र में दो आमंत्रित विषय विशेषज्ञों के व्याख्यानों का आयोजन हुआ। प्रथम व्याख्यान विशिष्ट अतिथि **प्रोफेसर सुनील दत्ता** द्वारा विषय **"मैथेमेटिक्स एण्ड फ्ल्यूड मिकेनिक्स"** पर दिया गया तथा द्वितीय व्याख्यान **प्रोफेसर सत्य देव**, पूर्व कुलपति, ए0पी0एस0 विश्वविद्यालय, रीवा, म0प्र0, द्वारा विषय **"इंटरडिसिप्लिनयरी एप्रोच इन द डेवेलपमेंट ऑफ मैथेमेटिक्स"** पर दिया गया। दोनों व्याख्यानों के बाद पाँच मिनट के चर्चा–परिचर्चा सत्रों में विशेषज्ञों के द्वारा प्रतिभागियों के द्वारा पूछे गये प्रश्नों के संतोषप्रद जबाब देकर उन्हें संतुष्ट किया गया। इस शैक्षिक सत्र का संचालन **डॉ0 के0 के0 बाजपेई**, विभागाध्यक्ष, गणित

विभाग द्वारा किया गया। इस सत्र की समाप्ति पर सभी ने दिन के भोजन हेतु प्रस्थान किया।

भोजनावकाश के उपरांत शुरू हुए शैक्षिक सत्र में तीन आमंत्रित विषय विशेषज्ञों के द्वारा अपने–अपने व्याख्यान दिये गये। प्रथम आमंत्रित व्याख्यान **प्रोफेसर आर0 एस0 श्रीवास्तव**, विभागाध्यक्ष, गणित एवं सांख्यिकी विभाग, डी0 डी0 यू0 गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर, द्वारा विषय **"प्रोबेबिलिटी मेजर्स ऑन ए हिल्बर्ट स्पेस"** पर, द्वितीय आमंत्रित व्याख्यान **प्रोफेसर मंजू अग्रवाल**, विभागाध्यक्ष, गणित विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, द्वारा विशय **"रोल ऑफ मैथेमेटिकल मॉडेलिंग इन रियल लाइफ सिचुएशंस"** पर तथा तृतीय आमंत्रित व्याख्यान अंतर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त **प्रोफेसर पीयूश चन्द्रा**, गणित विभाग, आई0 आई0 टी0 कानपुर, द्वारा विषय **"रोल ऑफ मैथेमेटिक्स इन एपिडेमियोलॉजी"** पर दिये गये। सभी व्याख्यानों में गणित के व्यावहारिक महत्व एवं जीवन में उसके उपयोग को उजागर करने पर आधारित थे जिन्हें सभी छात्र–छात्राओं एवं प्रतिभागियों के द्वारा बहुत सराहा गया। इस शैक्षिक सत्र का संचालन **प्रोफेसर एस0 दत्ता**, पूर्व विभागाध्यक्ष गणित विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ द्वारा किया गया। सत्रांत पर पंद्रह मिनट के चाय अंतराल की घोषणा संचालक द्वारा की गई।

प्रथम दिवस के अंतिम सत्र में चार समानांतर पेपर प्रस्तुतिकरण युवा शोधार्थियों हेतु आयोजित किये गये। चार में से दो सत्र बायोलॉजिकल साइंसेज (स्थान–वनस्पति विज्ञान विभाग, चेयर परसन–श्रीमती सजनी मिश्रा, विभागाध्यक्ष, वनस्पति विज्ञान विभाग) व फिजिकल साइंसेज (स्थान–भूविज्ञान विभाग, चेयर परसन–डॉ0 संजय शुक्ल, विभागाध्यक्ष, भूविज्ञान विभाग) में पोस्टर प्रस्तुतिकरण पर आधारित थे। अन्य दो सत्र गणित के शुद्ध (स्थान– कला स्टाफ कक्ष, चेयर परसन–डॉ0 जे0 पी0 सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग) एवं प्रयुक्त (स्थान– सभागार कक्ष, चेयर परसन–डॉ0 प्रीति बाजपेई, डीन स्टूडेंट वेलफेयर, बी0आई0टी0 पिलानी, दुबई परिसर, यूएई) पत्रों के मौखिक प्रस्तुतिकरण पर आधारित थे। इन चारों सत्रों में कुल मिलाकर 70 पत्रों का प्रस्तुतिकरण स्नातक, स्नातकोत्तर, शोध छात्र–छात्राओं एवं युवा शिक्षकों द्वारा किया गया जो स्तरीय व सराहनीय था। इसके उपरांत प्रथम दिवस की गतिविधियों का समापन हुआ।

द्वितीय दिवस (19 अक्टूबर, 2013, शनिवार)

दूसरे दिन का प्रथम तकनीकी सत्र प्रातः 9 बजे से शुरू हुआ जिसमें शहर के बाहर से आये हुए प्रतिभागियों द्वारा मौखिक शोध पत्र प्रस्तुत किये गये, जिनमें दो सामान्तर शुद्ध और प्रयुक्त गणित के सत्र चलाए गये। जिनमे क्रमशः **प्रोफेसर कमला देवी सिंह**, निवर्तमान अध्यक्ष, गणित विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय तथा **डॉ जे0 पी0 सिंह**, एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ द्वारा शुद्ध गणित के शोध पत्रों के मूल्यांकन एवं समालोचक की भूमिका निभाई गई तथा प्रयुक्त गणित के शोध प्रपत्रों का मूल्यांकन तथा समालोचक की भूमिका **प्रोफेसर सुनील दत्ता**, निवर्तमान अध्यक्ष, गणित विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा निभाई गयी। इन सत्रों में 25 प्रयुक्त गणित के एवं 19 शुद्ध गणित के शोध पत्रों का प्रस्तुतिकरण हुआ, जो कि स्तरीय था।

दोपहर के भोजन से पूर्व, दूसरे तकनीकी सत्र में तथा दोपहर के भोजन के बाद, तृतीय सत्र में पाँच प्रतिष्ठित आचार्यों द्वारा व्याखान प्रस्तुत किये गये। जिसमें **प्रो0 के0 के0 आजाद**, अध्यक्ष, गणित विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय द्वारा **"ऑन सम वरजन्स ऑफ कम्प्लीट इंवेरियन्स प्रॉपर्टी"** पर **डॉ0 मुहम्मद साजिद**, इंजीनियरिंग कॉलेज, कासिम विश्वविद्यालय, सऊदी अरब द्वारा **"फ्रैक्टल्स इन मैथेमेटिक्स, साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी"** पर व्याख्यान दिया गया। जिसकी अध्यक्षता क्रमशः डॉ0 रमा जैन (द्वितीय सत्र), एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग, महिला महाविद्यालय तथा डॉ0 अनुपमा रस्तोगी (तृतीय सत्र) एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा की गयी।

दिन के अन्तिम एवं चतुर्थ सत्र में पूर्ण रूप से जीव विज्ञान एवं सांख्यिकी तकनीकी पर चर्चा करने के लिए जैवसूचना एवं जैव कणों के लिए समर्पित किया गया। इस सत्र की अध्यक्षता **प्रो0 एस0 के0 अग्रवाल,** विभागाध्यक्ष, जैव रसायन विज्ञान विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय द्वारा की गयी। इसी सत्र में **प्रो0 बी0 बी0 खरे**, सांख्यिकी विभाग, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी का एक आमंत्रित व्याख्यान **"अप्लीकेशन ऑफ स्टैटिस्टिक्स इन बायोमेडिकल साइंस"** पर दिया गया। इन आमन्त्रित व्याख्यानों में गणित एवं सांख्यिकी के उपयोग एवं महत्व के बारे में बताया गया तथा जैवसूचना एवं जैवकणों के विकास में गणित के योगदान को उनके द्वारा समझाया गया।

तृतीय दिवस (रविवार, 20 अक्टूबर 2013)

तृतीय दिन का प्रथम तकनीकी सत्र प्रातः 9 बजे से प्रारम्भ हुआ जिसमें स्थानीय एवं बाहरी प्रतिभागियों द्वारा मौखिक शोध पत्र प्रस्तुत हुए। जिसमें शुद्ध एवं प्रयुक्त गणित के समानान्तर सत्र चलाये गये जिसमें प्रयुक्त गणित सत्र की अध्यक्षता एवं समालोचना क्रमशः प्रोफेसर कान्ती पाण्डेय, गणित विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय, द्वारा की गयी तथा शुद्ध गणित सत्र की अध्यक्षता एवं समालोचना डॉ0 जय प्रताप सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ, द्वारा की गयी। इस सत्र में 27 प्रयुक्त गणित के तथा 18 शुद्ध गणित के शोध पत्रों का प्रस्तुतिकरण हुआ।

दूसरे तकनीकी सत्र (दोपहर के खाने से पूर्व) एवं तृतीय तकनीकी सत्र (दोपहर के खाने के पश्चात) में तीन प्रतिष्ठित आचार्यों द्वारा व्याख्यान प्रस्तुत किये गये, जिसमें **प्रोफेसर अनिल कुमार वशिष्ठ**, विभागाध्यक्ष, गणित विभाग, कुरूक्षेत्र विश्वविद्यालय द्वारा **"वेव प्रोपेगेशन इन स्मार्ट पिजियोइलेक्ट्रिक मैटीरियल्स"**, **प्रोफेसर वी0 के0 कटियार**, गणित विभाग, आई0 आई0 टी0, रूड़की द्वारा **"मॉडलिंग इन हेल्थ केयर मैनेजमेंट सिस्टम"** पर तथा **डॉ0 प्रदीप कुमार श्रीवास्तव**, प्रमुख वैज्ञानिक, सी0डी0आर0आई0 लखनऊ द्वारा **"साइन्टून्स एण्ड मैथेमैटिक्स"** पर व्याख्यान प्रस्तुत किये गये। प्रो0 वशिष्ठ द्वारा "पीजियो मैटीरियल्स" का उपयोग एवं महत्व समझाया। प्रो0 वी0 के0 कटियार द्वारा स्वास्थ्य देखभाल को गणितीय मॉडल द्वारा प्रस्तुत किया गया और उन्होंने इसको रोजगारोन्मुख पाठ्यक्रमों से सम्बन्धित किया। डॉ0 प्रदीप कुमार श्रीवास्तव ने अपने व्याख्यान में गणित को रोचक तथ्यों तथा वर्तमान युग में साइन्टून तथा विज्ञान के विकास में गणित का योगदान एवं महत्व समझाया। इस दिन के द्वितीय सत्र की अध्यक्षता **डॉ0 एन0 के0 शर्मा**, अध्यक्ष, गणित विभाग, लखनऊ क्रिश्चियन कॉलेज तथा **डॉ0 विनीता विजय**, अध्यक्षा, गणित विभाग, आई0 टी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ तथा तृतीय सत्र की अध्यक्षता **डॉ0 के0 के0 बाजपेई**, अध्यक्ष, गणित विभाग, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ के द्वारा की गयी।

इस दिन का चतुर्थ एवं अन्तिम सत्र, का समापन डॉ0 सुधीश चन्द, प्राचार्य, बी0एस0एन0वी0 पी0जी0 कॉलेज, लखनऊ तथा मुख्य अतिथि प्रदीप कुमार श्रीवास्तव, वरिष्ठ प्रमुख वैज्ञानिक, सी0डी0आर0आई0 द्वारा सत्र एवं समारोह का समापन हुआ। समापन समारोह में सात सर्वश्रेष्ठ पत्र प्रस्तुतिकरण पुरस्कार एवं दो सर्वश्रेष्ठ स्वयंसेवी पुरस्कार मुख्य अतिथि डॉ0 प्रदीप कुमार श्रीवास्तव द्वारा प्रतिभागियों को प्रदान किये गये, जिनका विवरण निम्नवत है–

(क) सर्वश्रेष्ठ पत्र प्रस्तुतिकरण

1. हिमांशु चौरसिया, एम0एससी0 विद्यार्थी, आई0एम0एस0, बी0एच0यू0 बनारस (पोस्टर प्रेजेन्टेशन) जैवविज्ञान
2. तृप्ती मिश्रा एवं अन्य, एन0बी0आर0आई0 लखनऊ (पोस्टर प्रेजेन्टेशन) भौतिक विज्ञान एवं सांख्यिकी।
3. प्रतीक्षा श्रीवास्तव, बी0एससी0–तृतीय वर्ष, नवयुग कन्या महाविद्यालय, लखनऊ, भौतिक विज्ञान एवं सांख्यिकी (पोस्टर प्रस्तुतिकरण), विद्यार्थी वर्ग में।
4. डॉ0 जाविद अली, गणित विभाग, बी0आई0टी0एस0 पिलानी (शुद्ध गणित–मौखिक)।
5. डॉ0 सईदा दरक्षण जाबीन, आई0एस0आई0 कोलकता (अनुप्रयुक्त गणित–मौखिक)
6. देवांशु शुक्ला, बी0एससी0 द्वितीय वर्ष(पी–2) स्नातक छात्र (पुरूष वर्ग)।
7. पूनम यादव, बी0एससी0 प्रथम वर्ष(एम–1) स्नातक छात्रा (महिला वर्ग)।

(ख) सर्वश्रेष्ठ स्वयं सेवी पुरस्कार

1. सुदीप कुमार द्विवेदी, बी0एससी0 प्रथमवर्ष (एम–2) (पुरूष वर्ग)।
2. चिंकी गंगवार, बी0एससी0 प्रथम वर्ष (एम–4) (महिला वर्ग)।

समारोह के तीनों दिन की सम्पूर्ण शैक्षिक आख्या डॉ0 दीपक कुमार श्रीवास्तव, आयोजन सचिव, द्वारा पढ़ी गयी। समारोह के अन्त में प्राचार्य डॉ0 सुधीश चन्द्र, विश्व में साइन्टून्स के जनक, डॉ0 प्रदीप कुमार श्रीवास्तव, तथा संगोष्ठी संयोजक डॉ0 के0 के0 बाजपेई ने सभी प्रतिभागियों की प्रशंसा कर संक्षिप्त भाषण दिया एवं त्रिदिवसीय सफल राष्ट्रीय संगोष्ठी का राष्ट्रगान के साथ समापन हुआ।

समीक्षकः– निर्मल श्रीवास्तव
शोध छात्र, गणित विभाग
लखनऊ, विश्वविद्यालय, लखनऊ
nirmalsri.25@gmail.com



डॉ0 प्रदीप कुमार श्रीवास्तव, द्वारा पुरस्कार प्राप्त करते प्रतिभागी

नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान–वर्ष 2013

दिव्यांश श्रीवास्तव
छात्र, लामार्टीनियर कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
divyansh_21@hotmail.com

1. **शांति के क्षेत्र में**



द ऑर्गेनाइजेशन फॉर द प्रॉहिबिशन ऑफ केमिकल वीपन्स

वर्ष 2013 में नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा **द ऑर्गेनाइजेशन फॉर द प्रॉहिबिशन ऑफ केमिकल वीपन्स** (स्थापना वर्ष–1997, द हेग, नीदरलैण्ड्स) को विश्व समाज में शांति स्थापित करने के उसके असाधारण प्रयासों के चलते शांति के क्षेत्र में प्रदान किया गया।

2. **साहित्य के क्षेत्र में**



ऐलिस मुनरो

वर्ष 2013 में साहित्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा कनाडा में "कैनेडियन चैखोव" के नाम से प्रसिद्ध 82 वर्षीय लेखिका ऐलिस मुनरो को **"मास्टर ऑफ द कॉन्टेम्पोरेरी शॉर्ट स्टोरी"** मानते हुए प्रदान किया गया। इनके द्वारा 1960 की सामाजिक क्रांति के पहले तथा बाद में लड़कियों एवं महिलाओं की स्थितियों से संबंधित अनेकों छोटी–छोटी कहानियों की श्रृंखला लिखी गई। जिनमें **"द मून्स ऑफ जुपिटर"**, **"द प्रोग्रेस ऑफ लव"**, तथा **"रन अवे"** प्रमुख हैं।

3. रसायन विज्ञान के क्षेत्र में





मार्टिन कार्पलस **माइकल लेविट** **एरियेह वार्शेल**

वर्ष 2013 में रसायन में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा अमेरिका में कार्यरत वैज्ञानिकों **मार्टिन कार्पलस** (स्ट्रासबर्ग विश्वविद्यालय, फ्रांस तथा हार्वर्ड विश्वविद्यालय, अमेरिका), **माइकल लेविट** (स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसिन) तथा **एरियेह वार्शेल** (यूनिवर्सिटी ऑफ सदर्न कैलिफोर्निया, लॉस ऐंजिलिस, अमेरिका) को **"जटिल रासायनिक क्रियाओं की भविष्यवाणी करने वाले कम्प्यूटर मॉडल का विकास"** करने के लिए प्रदान किया गया जिनका उपयोग नयी दवाओं को बनाने में किया जा सकेगा।

4. भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में




पीटर हिग्ज **फ्रैंकौइज एंगलर्ट**

वर्ष 2013 में भौतिक विज्ञान में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा ब्रिटेन के वैज्ञानिक **पीटर हिग्ज** तथा बैल्जियम के वैज्ञानिक **फ्रैंकौइज एंगलर्ट** को उनके सिद्धांत **"हाउ सबएटॉमिक पार्टिकल गैट देयर मास"** को वर्ष 1964 में प्रतिपादित करने के लिए प्रदान किया गया। इस सिद्धांत को वर्ष 2013 में जेनेवा, स्विट्जरलैंड, में सर्न की प्रयोगशाला में हिग्ज पार्टिकल की पुष्टि के साथ ही सत्य मान लिया गया था।

5. अर्थशास्त्र के क्षेत्र में



इयूगीन एफ0 फामा



लार्स पीटर हैन्सेन

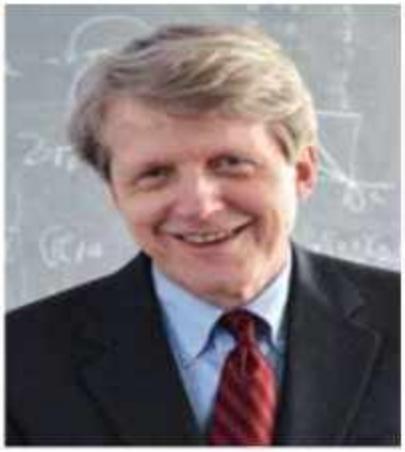

रॉबर्ट जे0 शिल्टर

वर्ष 2013 में अर्थशास्त्र के क्षेत्र में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा संयुक्त रूप से अमेरिकन अर्थशास्त्रियों इयूगीन फ्रांसिस फामा को उनके कार्य **"पोर्टफोलियो थ्योरी एण्ड ऐस्सेट प्राइजिंग"** में सैद्धांतिक और प्रायोगिक अध्ययन के लिए, सर्वाधिक प्रसिद्ध लेखक रॉबर्ट जेम्स "बॉब" शिलर को तथा प्रसिद्ध माइक्रोइकोनॉमिस्ट लार्स पीटर हैन्सेन को उनके कार्य **"जनरलाइज्ड मेथड ऑफ मूमेंट्स"** पर प्रदान किया गया। इयूगीन फ्रांसिस फामा वर्तमान में यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो बूथ स्कूल ऑफ बिजिनेस में रॉबर्ट आर0 मैक्कोर्मिक डिस्टिन्विश सर्विस प्रोफेसर के रूप में कार्यरत हैं। रॉबर्ट जेम्स "बॉब" शिलर वर्तमान में येल विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र के स्टर्लिंग प्रोफेसर के रूप में कार्यरत हैं। शिलर येल स्कूल ऑफ मैनेजमेन्ट के अतर्राष्ट्रीय सेंटर फॉर फाइनेंस के फैलो हैं, नैशनल ब्यूरो ऑफ इकोनॉमिक रिसर्च (एन0बी0ई0आर0) के वर्ष 1980 से रिसर्च एसोसिएट हैं, वर्ष 2005 में अमेरिकन इकोनॉमिक एसोसिएशन के उपाध्यक्ष रह चुके हैं, वर्ष 2006–2007 के दौरान ईस्टर्न इकोनॉमिक एसोसिएशन के अध्यक्ष भी रह चुके हैं। शिलर इंवेस्टमेंट मैनेजमेंट फर्म मैक्रो मार्केट्स (एल0एल0सी0) के सह–संस्थापक तथा प्रमुख अर्थशास्त्री भी हैं। लार्स पीटर हैन्सेन वर्तमान में शिकागो विश्वविद्यालय में डेविड रॉकफैलर डिस्टिन्विश सर्विस प्रोफेसर के रूप में कार्यरत हैं।

6. फिजियोलॉजी या चिकित्सा के क्षेत्र में



जेम्स ई0 रॉथमैन



रैन्डी डब्ल्यू शैक्मान



थॉमस सी0 सुड्हॉफ

वर्ष 2013 में चिकित्सा के क्षेत्र में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा संयुक्त रूप से येल विश्वविद्यालय के अमेरिकन **डॉ0 जेम्स ई0 रॉथमैन**, कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले के **डॉ0 रैन्डी डब्ल्यू शैक्मान**, तथा स्कूल ऑफ मेडिसिन, स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय के जर्मन–अमेरिकन **डॉ0 थॉमस सी0 सुड्हॉफ** को उनके कार्य **"फॉर देयर डिसकवरीज ऑफ मशीनरी रेग्यूलेटिंग वेसिकल ट्रैफिक, ए मेजर ट्रांसपोर्ट सिस्टेम इन अवर सेल्स"** पर प्रदान किया गया।

विज्ञान समाचार–नवीन जानकारी

दीपक कोहली
5/104, विपुल खण्ड, गोमती नगर, लखनऊ–226010, उ0प्र0, भारत
deepakkohli64@yahoo.in

त्वचा से ही बन जायेगा अब रक्त

कई बार इलाज के दौरान रक्त की आवश्यकता पड़ जाती है और संबंधित समूह (ग्रुप) का रक्त बहुत ढूंढने पर भी नहीं मिलता है। वैज्ञानिकों ने अब इस समस्या का हल खोज लिया है। वैज्ञानिकों द्वारा तैयार की गई तकनीक के अनुसार डी0एन0ए0 प्रोटीन और शरीर में पाये जाने वाले कणों (मॉलीक्यूल्स) को त्वचा की कोशिकाओं में इंजेक्शन के जरिये डालने से वह कोशिकाएं रक्त कणिकाओं में परिवर्तित हो जायेंगी। इस तकनीक से ब्लड कैंसर और ल्यूकेमिया आदि के मरीजों को बड़ी राहत मिलेगी। ऐसे मरीजों में अब रक्त समूह मिलान में न तो दिक्कत आयेगी और न ही उनमें संक्रमण का खतरा रहेगा। शोधकर्ताओं ने अलग–अलग आयु वर्ग के लोगों और नवजात शिशुओं की त्वचा की कोशिकाओं के नमूने एकत्रित कर उन्हें रक्त कोशिकाओं में परिवर्तित करके देखा और सफलता प्राप्त की। प्रयोग में उन्होंने 60 वर्ष तक के बुजुर्ग की त्वचा से रक्त कोशिकाएं बनाई थीं। उन्हें एक परीक्षण और करना है कि शरीर की ही त्वचा से बना यह रक्त सामान्य रक्त की तरह मानव शरीर में सुरक्षित ढंग से स्थानांतरित (ट्रांसफर) हो जायेगा या नहीं। हेमिल्टन की "मेकमास्टर विश्वविद्यालय" के भारतीय मूल के कनाडाई शोधकर्ता "मिक भाटिया" का इस संदर्भ में कहना है कि यदि यह परीक्षण सफल रहा तो वर्ष 2016 तक यह तकनीक अस्पतालों में भी उपलब्ध होने लग जायेगी। "डॉ0 लेसले वाकर" के अनुसार रक्त निर्माण में यह तकनीक बेहद लाभकारी साबित होगी जो दुनिया भर में रक्त के उत्तम मिलान(परफेक्ट मैच) की तलाश न हो पाने की समस्या से निजात दिला देगी। भविष्य में सही रक्त मिलान नहीं हो पाने से होने वाले संक्रमण और परेशानियों से मरीजों को छुटकारा मिल जायेगा। "लिवरपूल विश्वविद्यालय" के "प्रोफेसर जॉन हंट" का कहना है कि यह नई शोध असाधारण है।

शुगर क्यूब जितना सुपर कम्प्यूटर

आई0बी0एम0(इंटरनेशनल बिजिनेस मशीन्स कॉरपोरेशन) के वैज्ञानिक दुनिया को और भी छोटा करने की तैयारी में जुट गये हैं और यह दावा कर रहे हैं कि वे दुनिया की सबसे बड़ी जरूरत सुपरकम्प्यूटर को सबसे छोटा बना देंगे। पूरी दुनिया आज कम्प्यूटर में समाई हुई है और उसी को वैज्ञानिक और छोटा करने में जुटे हैं। आई0बी0एम0 की मानें तो आने वाले 10 से 15 वर्षों में वैज्ञानिक शुगर क्यूब साइज का सुपरकम्प्यूटर बनाने में सफलता हासिल कर लेंगे। उनकी योजनानुसार वे कम्प्यूटर को छोटा करने की जगह उसमें इस्तेमाल होने वाली ऊर्जा को कम करने की कोशिश कर रहे हैं। "डॉ0 ब्रूनो माइकल" का कहना है कि भविष्य के कम्प्यूटर उनकी स्पीड के आधार पर नहीं बल्कि उनके प्रोसेसर (ग्रीन क्रेडेंशियल) के आधार पर बिकेंगे। माइकल और उनके साथियों ने एक ऐसे कम्प्यूटर का नमूना भी तैयार कर लिया है जो वाटर कूलिंग प्रणाली पर आधारित है। इस कम्प्यूटर को "एक्वासर" का नाम दिया गया है, जिसमें एक रेफ्रिजरेटर से कई गुना अधिक ऊर्जा है। आई0बी0एम0 का अनुमान है कि एक्वासर में 50 पर्सनल कम्प्यूटर जितनी ऊर्जा समाहित होगी, जो दुनिया के अब तक के सभी सुपरकम्प्यूटर की ऊर्जा से अधिक है। पुराने दौर में कम्प्यूटर, हार्डवेयर की कीमतों के आधार पर लिए जाते थे। लेकिन आने वाले दौर में ऊर्जा की कीमत के आधार पर ही कम्प्यूटर की कीमत निश्चित होगी, क्योंकि कम्प्यूटर साइड प्रोडक्ट के रूप में ऊष्मा (हीट) पैदा करते हैं।

वैज्ञानिकों का कहना है कि "एक्वासर" का जो नमूना बनाया गया है वह कम से कम एक अरब से भी अधिक कार्यों को संपादित करता है। लेकिन अब काम को कम कर दिया गया है। शोधकर्ता "मार्क स्ट्राम्बर्ग" ने बताया कि वे "एक्वासर" को इस तरह से बना रहे हैं कि उसका एक रैक प्रोसेसर से भी पूरा हो जाए। उन्होंने बताया कि उनकी योजना है कि आने वाले दस–पंद्रह वर्षों में इस "एक्वासर"

को शुगर–क्यूब की साइज जितना बना दें और इसमें सबसे महत्वपूर्ण कार्य कम्प्यूटिंग प्रणाली से ऊष्मा(हीट) को निकालना होगा, जो कि एक चुनौती है।

नाइट लैम्प कर सकता है दिमाग की बत्ती गुल

रात में नाइट लैम्प जला कर सोने वालों के लिए बुरी खबर है। वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी है कि हल्की रोशनी वाला बल्ब जला कर सोने वाले डिप्रेशन के शिकार हो सकते हैं। उनके अनुसार नाइट लाइट की हल्की रोशनी दिमाग की बनावट को नुकसान पहुँचा सकती है जिससे डिप्रेशन से घिरने की संभावना बढ़ जाती है। वहीं टेलीविजन से निकलने वाली चमकदार रोशनी भी मानसिक स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव डालती है। गौरतलब है इस संबंध में पहले भी वैज्ञानिक चेतावनी दर्ज कर चुके थे कि शरीर की स्वाभाविक जागने और उठने की प्रक्रिया को बिगाड़ने में इसकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। रिपोर्ट के अनुसार रात्रि पाली की कामकाजी महिलाओं के लिए यह और भी घातक है, क्योंकि इससे उनमें स्तन कैंसर का जोखिम बढ़ सकता है, वहीं हाल ही में हुए एक शोध की रिपोर्ट के अनुसार नाइट लाइट से शारीरिक वजन के भी तार जुड़े हुए हैं।

विशेषज्ञों के अनुसार आधुनिक समय में पूरी तरह से अंधेरे में सोने की कल्पना तो नहीं की जा सकती है लेकिन शोध परिणाम बताते हैं कि इससे स्वास्थ्य पर गंभीर व हानिकारक प्रभाव पड़ने की पूरी गुंजाइश होती है। अमेरिकन संगोष्ठी में प्रस्तुत की गई एक ताजा रिपोर्ट में "ओहियो विश्वविद्यालय" के शोधकर्ताओं ने बताया कि उन्होंने चूहों पर किए 8 घंटे के परीक्षण के बाद पाया कि मध्यम रोशनी में सोने से वे काफी अलसाये व उनींदे थे। "सोसायटी फॉर न्यूरोसाइंस" की वार्शिक संगोष्ठी चर्चा में वैज्ञानिकों ने कहा कि एक अंधेरे कमरे में टेलीविजन से निकलने वाली हल्की रोशनी भी जानवरों के व्यवहार को प्रभावित करने में सक्षम होती है। विशेषज्ञों ने चूहे जैसे जानवर पर किये शोध में पाया कि रात्रि में मध्यम रोशनी में सोने वाले चूहे जैसे जानवरों में डिप्रेशन के लक्षण अधिक पाये गये जबकि मानक रोशनी में सोने वालों में डिप्रेशन के लक्षण औसतन कम थे। वहीं अतिरिक्त परीक्षण में देखा गया कि दोनों रोशनी में सोने वाले चूहों के दिमाग के हिप्पोकैंपस नामक हिस्से की बनावट में भी तुलनात्मक रूप से भिन्नता थी। अनुसंधानकर्ता "ट्रेसी बेड्रशेयन" कहती हैं कि हिप्पोकैंपस ही "डिप्रेशन डिसऑर्डर" के लिए उत्तरदायी होता है और रात्रिकाल की मध्यम रोशनी, डिप्रेसिव डिसऑर्डर को उकसाने के लिए काफी होती है।

पक्षाघात को मात देगी छोटी सी चिप

अब वह दिन दूर नहीं है जब पक्षाघात (यानी पैरालिसिस) से पीड़ित मरीज अपनी मांसपेशियों की कसरत कर सकेंगे। शोधरत वैज्ञानिकों ने एक नई तरह की माइक्रोचिप विकसित करने में सफलता पाई है जिसे पक्षाघात से पीड़ित मरीज के रीढ़ की हड्डी में लगाया जा सकेगा, जिससे ऐसे मरीज अपने पैरों की मांसपेशियों की कसरत करने में सक्षम हो सकेंगे। रिपोर्ट के अनुसार, एक छोटे बच्चे की उंगलियों के नाखून से भी छोटे इस थ्रीडी आकार वाले माइक्रेचिप को सरलता से स्पाइनल कैनाल यानी रीढ़ की हड्डी की नलिका में लगाया जा सकता है जो मांसपेशियों को हिलाने–डुलाने के लिए प्रोत्साहित करेगी। एक्टिव बुक नाम से पुकारे जाने वाले इस सिलीकॉन निर्मित माइक्रोचिप को इस तरह से सील किया गया है कि यह पानी की मौजूदगी में भी बेहतर काम करेगाा और जल्दी खराब भी नहीं होगा।

हालांकि इससे पहले भी पक्षाघात के शिकार हुए मरीजों के पैरों की मांसपेशियों में स्पंदन के लिए इलेक्ट्रिकल स्पंदन पद्धति का प्रयोग किया जा रहा है जिसमें पैरों के वाह्य हिस्से को इलेक्ट्रोड्स पद्धति में बहुत अधिक वक्त लगता है बावजूद इसके स्पाइनल कार्ड इंजरी से पीड़ित कुछ मरीज लगातार इस पद्धति का इस्तेमाल किए जा रहे हैं भले ही उन्हें इससे लाभ हो अथवा नहीं ? "यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ लंदन" में प्रोफेसर आंद्रेस डेमोस्थेनस के नेतृत्व में विकसित हुए इन नये माइक्रोचिप प्रोजेक्ट के बारे में बताते हुए उन्होंने कहा कि वर्तमान तकनीक की तुलना में नई तकनीक बेहतर है और इसकी सहायता से अधिक से अधिक शारीरिक मांसपेशी ग्रुप को स्पंदित किया जा सकता है, क्योंकि इस तरह की कई माइक्रोचिप डिवाइसों को रीढ़ की नलिका में रोपित किया जा सकता है, जिसका लाभ

यह होगा कि पीड़ित मरीज सायकिलिंग अथवा मूवमेंट हासिल कर पायेगा। रिपोर्ट बताती हैं कि इस डिवाइस के प्रयोग से मूत्राशय की मांसपेशियों में स्पंदन उत्पन्न किया जा सकता है। इससे स्नायु तंत्र को उत्तेजित करके आंत की क्षमता को बढ़ाया जा सकता है वहीं यह आंत के ऐंठन से निपटने में भी उपयोगी है। शोधकर्ताओं के मुताबिक इस नई तकनीक के द्वारा पहली बार इलेक्ट्रोड्स और मांसपेशी को एक यूनिट से जोड़ा जा सकता है। इसका लाभ यह होगा कि शरीर की स्नायु तंत्रिका को अब और अधिक स्पंदित किया जा सकेगा, साथ ही बेहतर परिणाम भी हासिल किया जा सकेगा।

तो लौट आयेगी आँखों की रोशनी

वैज्ञानिकों ने एक ऐसी तकनीक विकसित करने में सफलता पाई है जिसमें स्टेम सेल ट्रीटमेंट के जरिये अंधेपन की समस्या से निपटने में मदद मिल सकती है। यही नहीं इस तकनीक से उन लोगों की भी आँखों की सुरक्षा की जा सकेगी जो धीरे–धीरे अपनी आँखों की रोशनी खो रहे हैं। इससे पूर्व जानवरों पर हुए परीक्षण के परिणाम पॉजिटिव पाए गए थे। वैज्ञानिकों ने उम्मीद जताई है कि उससे मनुष्यों में अंधेपन के इलाज की पूरी संभावना है। वैज्ञानिकों के अनुसार, यह तकनीक आनुवंशिकी रूप से अंधेपन के शिकार किशोर और युवा युवक–युवतियों के लिए वरदान साबित होगी। इस तकनीक की मदद से आँखों में एम्ब्रॉयनिक स्टेम सेल इंजेक्ट किया जाता है।

शोधरत वैज्ञानिकों ने परीक्षण के लिए ऐसे बुड्ढे लोगों का चुनाव किया जो उम्र संबंधी यानि मैकुलर डीजनरेशन (ए0एम0डी0) अंधेपन के शिकार थे। इस तरह का अंधापन बढ़ी उम्र के साथ लगभग सभी बुजुर्गों में सामान्य रूप से पाया जाता है। वैज्ञानिकों ने बताया कि इस परीक्षण में मैकुलर डीजनरेशन से प्रभावित हुई बायीं आँख और स्वस्थ दायीं आँखों का तुलनात्मक अध्ययन किया जायेगा। उम्मीद है कि यह परीक्षण अगले वर्ष तक भी जारी रहेगा। हालांकि इस तकनीक का आरम्भिक परीक्षण सर्वप्रथम अमेरिका में किया गया था, जिसका अब ब्रिटेन में अनुसरण किया जा रहा है। वैज्ञानिकों ने कहा कि अगर जानवरों पर किए गए परीक्षणों के परिणाम मनुश्यों पर भी लागू होते हैं तो वह दिन दूर नहीं जब करोड़ों अंधेपन के शिकार लोग इस रंगीन दुनिया को दोबारा देख सकेंगे। अनुसंधानकर्ता "रॉबर्ट लांजा" ने बताया कि उन्हें वैश्विक रूप से भ्रूण की स्टेम सेल्स से आँखों के इलाज संबंधी प्रथम ट्रायल की अनुमति मिल चुकी है जिसकी जल्द घोषणा कर दी जायेगी।

रिपोर्ट के अनुसार मास्टर सेल के नाम से पुकारे जाने वाले स्टेम सेल को किसी भी प्रकार के सेल में बदला जा सकता है और जबरदस्त क्षमता वाला स्टेम सेल बॉडी के लिए एक रिपेयर किट जैसा सहयोगी होता है। "डॉ0 लांजा" के अनुसार उनके द्वारा तैयार किए गये मिश्रण में मौजूद विटामिन व अन्य केमिकल वृद्धावस्था या किसी अन्य कारणों से अंधे हुए लोगों के लिए रामबाण साबित हो सकता है, क्योंकि यह मिश्रण आँखों के पीछे की नष्ट हो चुकी सेल को स्वस्थ सेल में बदलने में कारगर है।

रोबो ले सकेंगे खुद अपने फैसले

वैज्ञानिक अब रोबो को पढ़ने व सीखने की ट्रेनिंग दे रहे हैं जिससे रोबो न केवल अब जरूरी चिन्ह व सूचनाओं को पढ़ सकेंगे बल्कि यह उसे समझकर व्यवहार भी कर सकेंगे। विशेषज्ञों के अनुसार रोबो को पढ़ने की ट्रेनिंग देना इसलिए सरल होगा, क्योंकि कम्प्यूटर पहले से ही बुक स्कैनिंग के जरिये शब्दों को लिखने की योग्यता रखते हैं। रिपोर्ट के अनुसार, एक रोबोटिक्स दल "मर्ज" नामक एक टेस्ट रोबो निर्माण पर कार्य कर रहे हैं जिसमें अत्याधुनिक ऑप्टिकल कैरेक्टर रिकॉग्निशन (ओ0सी0आर0) नामक रीडिंग सॉफ्टवेयर लगाया गया है। वैज्ञानिकों ने बताया कि इस तकनीक की मदद से रोबो का बचाव राहत कार्यों में लगाया जा सकेगा और ये दुर्घटना स्थल पर गन्तव्य चिन्हों के जरिये आसानी से अपना कार्य निपटा सकेंगे। रिपोर्ट के मुताबिक शोधकर्ताओं ने एक नमूना रोबो में एक डिक्शनरी और स्पैल चेकर लगाया और पाया कि रोबोट शब्दों का अनुवाद कर सकता है, हालांकि उसे पढ़ा नहीं जा सका। "ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी" में रोबोटिक्स के एक्सपर्ट "डॉ0 इंगमार पोजनर" कहते हैं कि एक रोबो मशीन का पढ़ सकना ही आगे के शोध के लिए बड़ी उपलब्धि है। क्योंकि जिस चीज को आप देख नहीं सकते उसे महसूस करने के लिए पढ़ाई काफी होती है, क्योंकि किसी चीज

के बारे में ज्ञान अर्जित होने पर ही उसकी तलाश संभव है। हालांकि रोबो को लिखावट को समझाने व पहचानने में मुश्किल हो सकती है क्योंकि रोबो किसी भी वक्रित सतह पर लिखे शब्दों को नहीं पढ़ पाते हैं। "डॉ0 पोजनर" ने बताया कि रोबो में लगा ओ0सी0आर0 सॉफ्टवेयर ऐसे सबूतों को एकत्र करने में सक्षम नहीं होता, जो टेक्स्ट में प्रायः नहीं दिखाई देते हैं। लेकिन वे टेक्स्ट के ऊपर गिरे ईट की दीवारों व चिमनियों जैसे भारी मलबे को हटाने में सक्षम है। उन्होंने बताया कि मर्ज रोबो यदि एक बार किसी टेक्स्ट को पढ़ने में सफल हो जाता है तो इसे न्यूज वेबसाइट की तरह स्कैन कर पढ़ा जा सकता है। वे "क्वींसलैंड यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्नोलॉजी" में सहयोगी "पीटर कॉर्क" के साथ इस प्रोजेक्ट पर काम कर रहे हैं। "मैकगिल यूनिवर्सिटी" के "गेजोरी डूडेक" ने बताया कि रोबोट द्वारा मशीन को पढ़ना सिखाने की प्रक्रिया पूरी तरह से वास्तविक है और मुझे उम्मीद है कि मोबाइल रोबोटिक्स के संदर्भ में ओ0सी0आर0 मेथड को छेड़ने से एक अदभुत कारनामा हो सकता है। उन्होंने कहा कि यदि एक बार यह प्रयास सफल हो गया तो इसमें संदेह नहीं कि यह बहुत ही उपयोगी साबित होगा।

विषाणु करेगा प्रोस्टेट कैंसर का इलाज

कनाडा के वैज्ञानिकों का कहना है कि प्रोस्टेट कैंसर का विषाणुओं से इलाज किया जा सकेगा। इस नई चिकित्सा विधि में कैंसर कोशिकाओं पर हमला कर नष्ट करने के पहले उनकी पहचान की जाती है। इसके लिए विषाणुओं के आम परिवार से एक रीयोवायरस का प्रयोग किया जाता है। विषाणु पहले ही गर्भाशय और स्तन कैंसर सहित कई तरह की कैंसर कोशिकाओं पर हमला कर नष्ट करने में कामयाब रहा है। "टोम बेकर कैंसर सेंटर" के "डिपार्टमेंट ऑफ आंकोलॉजी" में कैंसर विशेषज्ञ "डॉन मॉरिस" के नेतृत्व वाली वैज्ञानिक टीम ने अपने अनुसंधान के लिए पहले चरण में छह लोगों पर परीक्षण किया जो प्रोस्टेट कैंसर की आरम्भिक अवस्था में थे। वैज्ञानिकों ने रीओवायरस लिया और प्रोस्टेट के भीतर इंजेक्शन के जरिए इसे कैंसर ग्रंथिका में पहुँचा दिया। तीन हफ्ते के बाद उन्होंने मरीज के मानक उपचार के तौर पर लोगों के प्रोस्टेट हटा लिए। तब उन्होंने यह देखने के लिए ऊतक का विश्लेषण किया कि रीओ वायरस ने किस तरह काम किया। वैज्ञानिकों ने कुछ ही समय में पाया कि विषाणु कई कैंसर कोशिकाओं को नष्ट करता प्रतीत हुआ तथा और अधिक कैंसर कोशिकाओं पर हमला करने के लिए खुद के प्रतिरूप भी भेजता रहा।

एण्टीबायोटिक प्रतिरोध पर नई खोज

एण्टीबायोटिक महत्त्वपूर्ण लाइफ सेविंग मेडिसिन है, लेकिन इनका अगर ठीक से प्रयोग न किया जाये तो इनकी वजह से बैक्टीरिया व वायरस में प्रतिरोध पैदा होने लगता है। जब किसी रोगी को एण्टीबायोटिक मेडिसिन दी जाती है तो ये मेडिसिन बैक्टीरिया के डी0एन0ए0 में म्यूटेशन या उत्परिवर्तन करने लगती हैं जिनमें से कुछ एण्टीबायोटिक के प्रति प्रतिरोध का कारण बन जाते हैं। हाल में की गई खोज से यह ज्ञात हुआ है कि बैक्टीरिया में उत्परिवर्तन की दर कभी–कभी प्रतिबल(स्ट्रेस) के जवाब में बढ़ जाती है जिससे प्रतिरोध को बल मिलता है। इस अध्ययन में यह बात भी सामने आई कि निम्नस्तरीय उपचार से अनेक मामलों में प्रतिरोध केवल उस औषधि विशेष के प्रति ही नहीं होता है बल्कि एण्टीबायोटिक मेडिसिन की पूरी श्रंखला के प्रति होता है। यदि वैज्ञानिक ऐसे अणुओं का पता लगा सकें जो अतिउत्परिवर्तन को रोक दें तो उनको एण्टीबायोटिकों के साथ मिलाया जा सकता है जिससे प्रतिरोध के विकास को कम किया जा सकता है।

बनाया गया समानांतर जैनेटिक कोड

वैज्ञानिकों ने जिंदगी के आधार(बेस) डी0एन0ए0 का समानांतर रूप विकसित करने में सफलता प्राप्त की है। यह चमत्कार कर दिखाया है कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के प्रो0 जैसन चिन और उनकी टीम ने। यह समानांतर डी0एन0ए0 नई तरीके की प्रोटीन भी बना सकता है। इससे मानव शरीर को अधिक स्वस्थ और शक्तिशाली बनाने में भी मदद मिलेगी। मानव जेनेटिक कोड में चार शब्द होते हैं, जिन्हें न्यूक्लियोटाइड्स कहा जाता है। तीन न्यूक्लियोटाइड मिलकर अमीनो ऐसिड और एक कोडोन्स का निर्माण करते हैं। ऐसे 64 कोडोन्स

जेनेटिक कोड में पाये जाते हैं। कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की टीम ने ऐसे 256 कोडोन्स बनाने में सफलता प्राप्त की है। समानांतर जेनेटिक कोड के अमीनो एसिड पहले से ज्यादा मजबूत हैं। यह ज्यादा तापमान व एसिडिटी का मुकाबला करने में सक्षम है।

इम्यूनोथैरेपी से होगा कैंसर कोशिकाओं का नाश

ब्रिटेन और अमेरिका के वैज्ञानिक अब "इम्यूनोथैरेपी" से बच्चों के कैंसर का उपचार करने की तैयारी में हैं जिसमें रोगी के शरीर की रोग–निरोधक क्षमता को इतना बढ़ाया जायेगा कि स्वयं उसका शरीर ही कैंसर कोशिकाओं को ढूंढ–ढूंढ कर नष्ट कर दे। वैज्ञानिकों को आशा है कि "इम्यूनोथैरेपी" की मदद से अब वयस्कों का ही नहीं बल्कि कैंसर ग्रस्त बच्चों का भी उपचार संभव हो सकेगा। लंदन में होने वाले इस क्रांतिकारी परीक्षण में चार साल तक हर साल करीब 40 बच्चों को शामिल किया जायेगा। ये सभी बच्चे हाई रिस्क वाली श्रेणी के होंगे। इन सभी बच्चों को पहले कैंसर के सामान्य उपचार के तौर पर कीमोथैरेपी दी जायेगी और फिर बची हुई कैंसर कोशिकाओं को ढूंढ निकालने के लिए "इम्यूनोथैरेपी"। "इम्यूनोथैरेपी" में एण्टीबॉडीज कैंसर की कोशिकाओं यानि एन्टीजन की सतह पर खास मॉलीक्यूल्स के साथ खुद को जोड़ लेते हैं। कैंसर की कोशिकाओं के साथ जुड़ने के बाद एण्टीबॉडीज शरीर की रोग–प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाते हैं जो कैंसर की कोशिकाओं को चुन–चुन कर उन पर हमला करके उन्हें नष्ट कर देती हैं। इस ट्रायल का नेतृत्व कर रही लंदन के गेटऑमंड स्ट्रीट हॉस्पिटल की कैंसर रोग विशेषज्ञ "डॉ0 पेनेलोप ब्रौक" के अनुसार "इम्यूनोथैरेपी" को प्रारम्भिक इलाज के रूप में अपनाने के बजाय बच्चों का पहले कैंसर के लिए सामान्य रूप से किया जाने वाला उपचार ही किया जायेगा। उन्होंने बताया कि "इम्यूनोथैरेपी" का पहला ट्रायल ब्रिटेन के 20 बाल कैंसर संस्थानों में "न्यूरोब्लास्टोमा कैंसर" से ग्रस्त बच्चों पर किया जायेगा।

मच्छर बचाएँगे मलेरिया से

मच्छरों से फैलने वाली बीमारियों में से एक है मलेरिया। लेकिन वैज्ञानिकों ने ऐसे मच्छर विकसित किये हैं, जो मलेरिया फैलाएंगे नहीं बल्कि रोकेंगे। इसके लिए उनके जीन में बदलाव किया गया है। यानी माता–पिता के गुणों को संतानों में ले जाने वाले तत्व में ही परिवर्तन कर दिया गया है। यह जीन उत्परिवर्तित मच्छर जब किसी को काटेगा तो ठीक एक टीके की तरह ही, उस व्यक्ति के शरीर में मलेरिया के खिलाफ प्रतिरोधी क्षमता आ जायेगी। यानि ये मच्छर भविष्य में उड़ते हुए टीके बन जायेंगे। इस शोध को जापान की "जीची मेडिकल यूनिवर्सिटी" ने किया। इस तरह से मलेरिया का जैविक रोक भी किया जा सकेगा। शोध में मच्छर की लार ग्रंथियों को ही निशाना बनाया गया क्योंकि यह बीमारी उस समय फैलती है जब मच्छर खून चूसता है।

मधुमेह का होगा सटीक इलाज, नौ जीन ढूंढे

वैज्ञानिकों ने मधुमेह से जुड़े नौ जीन खोजने का दावा किया है। "टाइप टू डायबिटीज" के सटीक उपचार की दिशा में इसे बड़ी सफलता माना जा रहा है। इस बीमारी से दुनिया भर में 22 करोड़ से ज्यादा लोग प्रभावित हैं। दुनिया भर के 174 अनुसंधान केन्द्रों के एक दल ने 1,20,000 से अधिक मरीजों के जीन और रक्त शर्करा का अध्ययन किया। इसमें नौ ऐसे जीन सामने आये जो रक्त में मौजूद शर्करा के प्रति शरीर की प्रतिक्रिया को नियंत्रित करते हैं। टाइप–2 मधुमेह में शरीर के ऊतक इंसुलिन के असर के लिहाज से प्रतिरोधी हो जाते हैं और नियमित ग्लूकोज की आवश्यकता होती है। रोगी अपने भोजन और व्यायाम के माध्यम से इस बीमारी पर लगाम कस सकते हैं लेकिन अक्सर इंसुलिन लेना आवश्यक होता है। अध्ययन दल का नेतृत्व करने वाले एडिनबर्ग विश्वविद्यालय के प्रमुख शोधकर्ता "जिम विल्सन" के अनुसार यह खोज आश्चर्यजनक तरीके से महत्वपूर्ण है। रक्त शर्करा के स्तर को प्रभावित करने वाले इन नए जीन्स की खोज मधुमेह के उपचार के लिए नए तरीके विकसित करने की दिशा में बड़ा कदम है। उन्होंने कहा कि अब पता लगाया जा सकता है कि कौन से प्रोटीन को दवा की जरूरत है।

पंख का डी0एन0ए0 सैंपल खोलेगा पक्षियों के राज

पश्चिमी के मुकाबले पूर्वी हिमालय क्षेत्र में पक्षियों की ज्यादा प्रजातियाँ पाई जाती हैं। दोनों क्षेत्रों में अंतर की वजहें क्या हैं, वैज्ञानिक ठीक–ठीक नहीं जानते। लेकिन इस सवाल का जवाब अब पक्षियों के पंख के डी0एन0ए0 सैंपल से मिलेगा। देहरादून स्थित भारतीय वन्य जीव संस्थान और शिकागो यूनिवर्सिटी के विशेषज्ञों ने यह तलाश शुरू की है। पूर्वी हिमालय में जहाँ दार्जिलिंग, सिक्किम जैसे खूबसूरत इलाके शामिल हैं, वहीं पश्चिमी हिमालय में खास तौर पर गढ़वाल और कुमाऊँ आदि की पहाड़ियाँ आती हैं। पूर्व के अध्ययनों में पूर्वी–पश्चिमी हिमालय में पक्षी प्रजातियों में अंतर की जो वजहें पाई गई, उनमें पहला है–पूर्वी हिमालय में तापमान अधिक होने के चलते वह क्षेत्र ज्यादा उर्वर है। दूसरा यह कि इस क्षेत्र में वर्षा मिश्रित वन अधिक हैं। विशेषज्ञों के अनुसार यह पारिस्थितिकी विविधता पक्षी–विविधता के रूप में सामने आती है। प्रोजेक्ट से जुड़े भारतीय वन्य जीव संस्थान के वैज्ञानिकों के अनुसार पूर्वी हिमालय में यह विविधता अधिक होने के पीछे ऐतिहासिक उत्पत्ति भी एक वजह हो सकती है। इसकी जांच के लिए पक्षियों के पंख के डी0एन0ए0 सैंपल लिए गए हैं। शोधकर्ताओं के अनुसार ऐसा पहली बार किया जा रहा है। यह परियोजना वर्ष 2015 तक चलनी है। इसके पश्चात् पक्षियों की किस्मों से संबंधित सवालों के लगभग सारे जवाब सामने होंगे।

लेजर से होगा न्यूक्लियर फ्यूजन

अमेरिकी वैज्ञानिकों ने दावा किया है कि एक वर्ष के भीतर लेजर के इस्तेमाल से न्यूक्लियर फ्यूजन करवाने में सफलता मिल जायेगी जिससे बिजली पैदा की जा सकेगी। वैज्ञानिकों का कहना है कि यदि इसमें सफलता मिलती है तो विश्व में ऊर्जा की समस्या से भी छुटकारा मिल जायेगा। इससे ग्लोबल वार्मिंग से निपटने में भी मदद मिलेगी। दुनिया भर के वैज्ञानिक लंबे अर्से से प्रयोगशाला में नियंत्रित न्यूक्लियर फ्यूजन करवाने की कोशिश में लगे हुए हैं, किंतु अभी इसमें सफलता नहीं मिल सकी है। प्रयोगशाला में न्यूक्लियर फ्यूजन कराने की यक विश्वस्तरीय परियोजना फ्रांस में चल रही है। इसमें कई देशों के वैज्ञानिक भागीदारी कर रहे हैं। वैज्ञानिक वर्ष 2025 तक न्यूक्लियर फ्यूजन मिशन के पूर्ण होने की उम्मीद कर रहे हैं। यदि यह तकनीक विकसित कर ली जाती है तो बिजली का उत्पादन भारी मात्रा में आसानी से संभव हो जायेगा।

ई–कचरे से खतरा

संयुक्त राष्ट्र की एक रिपोर्ट के अनुसार मोबाइल फोन और कम्प्यूटर के कचरे से पर्यावरण और स्वास्थ्य के लिए भारी खतरा पैदा हो रहा है। यह रिपोर्ट संयुक्त राष्ट्र के पर्यावरण कार्यक्रम ने तैयार की है। रिपोर्ट में चेतावनी देते हुए कहा गया है कि इसको रोकने के लिए नये नियम व कानून तैयार किये जायें जिससे इस तरह के कचरे को फेंकने के लिए कड़े मानदंड लागू किये जा सकें। रिपोर्ट के अनुसार इलेक्ट्रॉनिक कचरा दुनिया में प्रतिवर्ष चार करोड़ टन की रफ्तार से बढ़ रहा है। विशेष रूप से भारत और चीन जैसे देशों में अगले 10 वर्षों में यह 500 फीसदी तक बढ़ जायेगा। इलेक्ट्रॉनिक कचरा विशेष रूप से विकासशील देशों में बड़ी समस्या का रूप धारण करता जा रहा है, जहाँ इसके निस्तारण का कोई पुख्ता तरीका नहीं है। दूसरी ओर विकसित देशों में इलेक्ट्रॉनिक कचरे के निस्तारण के लिए री–सायकलिंग की जाती है।

:: पुस्तक समीक्षा ::

भूस्खलन एवं पर्यावरण ह्रास

सम्पादक–डॉ0 आर0 ए0 सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर–भूगर्भ विज्ञान विभाग
एल0 एस0 एम0 राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पिथौरागढ–262502, उत्तराखण्ड
प्रकाशक–ज्ञानोदय प्रकाशन, सुमित्रा सदन, मल्लीताल, नैनीताल, उत्तराखण्ड

भारतीय सनातन परम्परा में मानव जाति का उद्भव लगभग दो अरब वर्ष पूर्व माना जाता है। हरे–भरे जंगल, झर–झर बहते झरनों, कल–कल करती नदियों, कलरव करते पक्षी, वृक्ष–वनस्पति तथा विशुद्ध प्राणवायु प्रदान करने वाले वातावरण के बीच मानव ने जब अपनी आँखें खोली होंगी तब स्थिति अतीव मनोरम रही होगी। किन्तु तत्पश्चात् जैसे–जैसे मनुष्य विकास यात्रा की ओर अग्रसर हुआ और तकनीकी विकास के प्रभाव स्वरूप पर्यावरण और प्राकृतिक संसाधनों का समुचित दोहन न कर अपितु विदोहन कर औद्योगिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ, जिसके परिणाम स्वरूप उस समय से वर्तमान तक पर्यावरण की स्थिति में अत्यधिक परिवर्तन आ गया।

वर्तमान में सम्पूर्ण विश्व इस स्थिति की भयावहता से आक्रान्त है। विकास की अन्धाधुन्ध दौड़ के कारण पर्यावरण का ह्रास तीव्र गति से हो रहा है। पर्यावरण और जीवन का परस्पर इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है, कि पर्यावरण के बिना समस्त प्राणीजगत् के जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। स्वच्छ पर्यावरण न केवल मानव जीवन के अस्तित्व के लिए आवश्यक है, अपितु देश के विकास और समृद्धि के लिए भी अति आवश्यक है।

किसी भी राष्ट्र के विकास में विभिन्न प्राकृतिक सम्पदाएँ महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। किन्तु आज जो आधुनिक मानव–समाज में इनका अति उपयोग या विदोहन हो रहा है, उससे ये सम्पदाएँ दिन–प्रतिदिन क्षीण होती जा रही हैं, जो भूस्खलन एवं भूकम्प जैसी विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं तथा पर्यावरण ह्रास जैसी समस्याओं को जन्म देती हैं। अतः यदि मानव को इन सभी समस्याओं से मुक्ति चाहिए तो प्रकृति अर्थात् पर्यावरण के साथ संवेदना पूर्वक सामंजस्य बैठाकर ऐसे सन्तुलित विकास करने की जिससे पर्यावरण भी सुरक्षित रहे और मानव सहित सभी प्राणी सुख पूर्वक जीवन यापन कर सकें। वैदिक ऋषियों की भी यही दृष्टि रही है–

"यत्ते भूमि विखानामि क्षिप्रं तदपि रोहतु ।
मा ते मर्म विमश्ग्वरि मा ते ह्रदयमर्पिपम्।।" (अथर्व0–12/1/35)

अर्थात्–हे भूमि माता! तेरा जो कोई भाग मैं खोदूँ या लूँगा, वह उतना ही होगा, जिसे तू पुनः शीघ्र उत्पन्न कर सके। हे खोजने योग्य पृथ्वी माता ! मैं न तेरे मर्मस्थल पर या तेरी जीवनशक्ति पर कभी आघात अर्थात् चोट करूँ और न ही तेरे ह्रदय को हानि पहुँचाऊँ।

सम्पादक महोदय ने **"भूस्खलन एवं पर्यावरण ह्रास"** नामक पुस्तक के माध्यम से सीमावर्ती जनपद पिथौरागढ़ सहित देश का सामान्य जन भी जागरुक हो और इसके ज्ञान एवं अनुभव से अधिकाधिक लाभान्वित हो सके, इस उद्देश्य से हिन्दी में लिखित इकतीस सारगर्भित एवं मौलिक लेखों को दो भागों में विभाजित कर इस पुस्तक का सम्पादन किया गया है।

प्रथम भाग–भूस्खलन में ग्यारह लेखों में विशेषतः हिमालयी उत्तराखण्ड राज्य एवं हिमाचल प्रदेश के परिप्रेक्ष्य में भूस्खलन एवं पर्यावरण ह्रास की समस्या, कारण एवं निवारण के उपायों की चर्चा की गयी है तथा भूस्खलन एवं पर्यावरण विषयक शब्दों को भूवैज्ञानिक दृष्टि से परिभाषित किया गया है। भूस्खलन के सुदूर–संवेदन एवं भौगोलिक सूचना प्रणाली के द्वारा अभिमुखता, ढाल, भूस्खलन संकट, आपदा, जोखिम एवं सम्भावना मानचित्र तैयार किये गये हैं।

द्वितीय भाग–पर्यावरण ह्रास में बीस लेखों का संग्रह है। जिसमें जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, खाद्य प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, आदि की वैज्ञानिक व्याख्या के साथ–साथ इनका समाज पर पड़ने वाले प्रभावों को दर्शाया गया है। भूस्खलन एवं पर्यावरण ह्रास के समाधान हेतु आधुनिक वैज्ञानिक विधि तथा प्राचीन ऋषि–मुनियों द्वारा प्रदत्त समाधानों का भी विस्तार पूर्वक उल्लेख किया है।

सम्पादक महोदय ने इस पुस्तक को भारतवर्ष के सभी हिन्दी भाषी राज्यों के उन छात्र–छात्राओं की समस्याओं को ध्यान में रखकर सम्पादन किया है जो हिन्दी माध्यम से इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त स्नातक स्तर पर किसी विश्वविद्यालय या महाविद्यालय में प्रवेश लेते हैं। जहाँ पर उन्हें हिन्दी भाषा में पुस्तकें उपलब्ध न होने के कारण विवश होकर आंग्ल भाषी पुस्तकों से पाठ्यक्रम को विवशता पूर्वक पढ़ना पड़ता है और अनावश्यक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जो कि सीधे तौर पर उनके मौलिक ज्ञान और परीक्षा परिणाम को प्रभावित करता है। स्नातक स्तर पर भौमिकी की पुस्तकें हिन्दी माध्यम में पाठकों को सुलभ कराने के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए सम्पादक की ओर से सारगर्भित लेखों का संकलन किया गया है, जो एक प्रथम एवं सराहनीय प्रयास है।

इस पुस्तक में सुधी पाठकों की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए उनके निदान सहित लेख प्रस्तुत किये गये हैं। पुस्तक में प्रयुक्त भाषा अत्यन्त सरल, प्रचलित एवं सुबोध है तथा भूवैज्ञानिक तकनीकी शब्दावली का प्रयोग किया गया है। इसमें भूस्खलन एवं पर्यावरण ह्रास से सम्बन्धित वर्तमान परिप्रेक्ष्य में तत्सम्बन्धी मानचित्रों एवं आंकड़ों का भी यथोचित उल्लेख किया गया है।

इस सन्दर्भ में मुझे आशा ही नहीं अपितु पूर्ण विश्वास है कि यह पुस्तक सभी सुधी पाठकों सहित स्नातक छात्र/छात्राओं के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

मैं एक समीक्षक के रूप में इस पुस्तक को छात्र/छात्राओं के हित में सम्पादित भौमिकी को अत्यन्त महत्त्वपूर्ण एवं उपयोगी मानता हूँ तथा शोधपत्र–लेखकों, सम्पादक एवं प्रकाशक को इस हेतु आभार ज्ञापित करता हूँ। मैं यह आशा भी करता हूँ कि सम्पादक एवं प्रकाशक अपने इस सुप्रयास को पाठकों एवं छात्र/छात्राओं के हित में निरंतर भविष्य में भी जारी रखेंगे।

समीक्षक–डॉ0 मुकेश कुमार
असिस्टेन्ट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग
एल0 एस0 एम0 राज0 स्ना0 महा0
पिथौरागढ–262502, उत्तराखण्ड

पुस्तक समीक्षा

सदिश विश्लेषण एवं सदिश कलन

लेखक–दीपक कुमार श्रीवास्तव
एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग
बी0 एस0 एन0 वी0 पी0 जी0 कॉलेज, लखनऊ
प्रकाशक–पियरसन एजुकेशन, प्रथम संस्करण, वर्ष 2014, नई दिल्ली

सदिश विश्लेषण एवं सदिश कलन, इस गणित की दो अति आवश्यक धारायें हैं। लेखक द्वारा इस पुस्तक को भारत देश के सभी हिन्दी भाषी राज्यों के उन छात्र–छात्राओं की समस्याओं को ध्यान में रख कर तैयार किया गया है जो हिन्दी माध्यम से इण्टरमीडिएट की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त स्नातक स्तर पर किसी विश्वविद्यालय या महाविद्यालय में प्रवेश लेते हैं। जहाँ पर उन्हें हिन्दी भाषा में पुस्तकें उपलब्ध न होने के कारण विवश होकर आंग्ल भाषी पुस्तकों से पाठ्यक्रम को विवशतापूर्वक पढ़ना पड़ता है और अनावश्यक समस्याओं का सामना करना पड़ता है, जो कि सीधे तौर पर उनके परीक्षा परिणाम को प्रभावित करता है। स्नातक स्तर पर गणित की पुस्तकें हिन्दी माध्यम में पाठकों को सुलभ कराने के इसी उद्देय को ध्यान में रखते हुए लेखक की तरफ से किया गया यह अत्यन्त सराहनीय प्रयास है।

सदिश विश्लेषण एवं सदिश कलन के सभी आवश्यक शीर्षकों को क्रमशः तीन–तीन अध्यायों में सुधी पाठकों की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए उनके निराकरण सहित लेखक द्वारा प्रस्तुत किया गया है। इस पुस्तक में प्रस्तुत सभी अध्याय, भारत देश के हिन्दी भाषी राज्यों के विश्वविद्यालयों में चलने वाले सदिश विश्लेषण एवं सदिश कलन आधारित नवीन पाठ्यक्रमों के अनुरूप हैं। प्रस्तुत पाठ्य–सामग्री में प्रयुक्त भाषा अत्यन्त सरल, प्रचलित, सुबोध, सुस्पष्ट तथा रेखाचित्रों से परिपूर्ण है। सदिश विश्लेषण एवं सदिश कलन के सिद्धांतों एवं नियमों को स्पष्ट करने के लिए अधिकाधिक साधित उदाहरणों का प्रयोग किया गया है। गणित के सभी तकनीकी शब्दों को वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, द्वारा प्रमाणित शब्द संग्रह एवं शब्दावली के अनुसार प्रयोग में लाया गया है। अंकों, प्रतीकों एवं चिन्हों के लिए अंतर्राष्ट्रीय अंक प्रणाली का प्रयोग किया गया है। सभी अध्यायों में महत्वपूर्ण साधित उदाहरणों के उपरांत अभ्यास (प्रश्नावली) पाठकों के अत्यधिक अभ्यास हेतु प्रस्तुत किये गये हैं। जो पाठकों के लिए अत्यंत ही उपयोगी सिद्ध होंगे।

इस संदर्भ में मुझे आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास भी है कि यह पुस्तक सभी स्नातक (बी0 ए0 एवं बी0 एस–सी0) छात्र/छात्राओं के लिए अत्यन्त ही लाभकारी सिद्ध होगी।

मैं एक समीक्षक के रूप में इस पुस्तक को छात्र/छात्राओं के हित में लिखी गई गणित विषय की महत्वपूर्ण धाराओं "सदिश विश्लेषण एवं सदिश कलन" में अत्यंत ही उपयोगी मानती हूँ तथा लेखक एवं प्रकाशक को इस हेतु आभार ज्ञापित करती हूँ। मैं यह आशा भी व्यक्त करती हूँ कि लेखक अपने इस प्रयास को सुधी पाठकों एवं छात्र/छात्राओं के हित में भविष्य में भी सतत् जारी रखेंगे।

समीक्षक– **डॉ0 कृष्णा यादव**
एसोसिएट प्रोफेसर, गणित विभाग
महिला विद्यालय डिग्री कॉलेज
लखनऊ (उ0 प्र0), भारत
drkrishnayadav2508@gmail.com

इबोला विषाणु की मानव पर कुदृष्टि

वर्तमान में इबोला विषाणु मानव के लिए एक कठिन चुनौती है। इबोला वायरस बीमारी (ई0वी0डी0) फिलोविरिडी कुल के वायरस द्वारा ग्रसित एक भयानक स्थिति है, जिसका प्रसार पशुओं से मनुष्य में हुआ। इस विषाणु का संचार संक्रमित पशु अथवा मनुष्य के शारीरिक तरल के सम्पर्क से होता है। इबोला वायरस का मानव में सर्वप्रथम संक्रमण अफ्रीकी देश सूडान में देखा गया था। इसका संक्रमण अफ्रीका से अब यूरोप तक पहुँच गया है। स्पेन में मैड्रिड के एक अस्पताल में दो संक्रमित पादरियों की मृत्यु हो चुकी है तथा एक कार्यरत नर्स में संक्रमण की पुष्टि की गयी है। वर्तमान में इसके विनाशकारी क्षमता के कारण पूरा विश्व चिन्तित है। "इबोला ग्रसित रक्त स्रावी ज्वर" निश्चित रूप से वह स्थिति है जो असंख्य व्यक्तियों को संक्रमित करने में सक्षम है। संयुक्त राष्ट्र संगठन की नवीनतम चेतावनी के अनुसार निकट भविष्य में लगभग 10,000 नये इबोला संक्रमण फैलने की आशंका है। वर्तमान में इबोला संक्रमण से होने वाली मृत्यु दर 70 प्रतिशत तक पहुंच गयी है और गत चार सप्ताह में 1000 नये संक्रमण प्रति सप्ताह की दर से बढ़े हैं। इबोला संक्रमण से अब तक 8914 संक्रमित व्यक्तियों में से 4447 रोगियों की मृत्यु हो चुकी है।



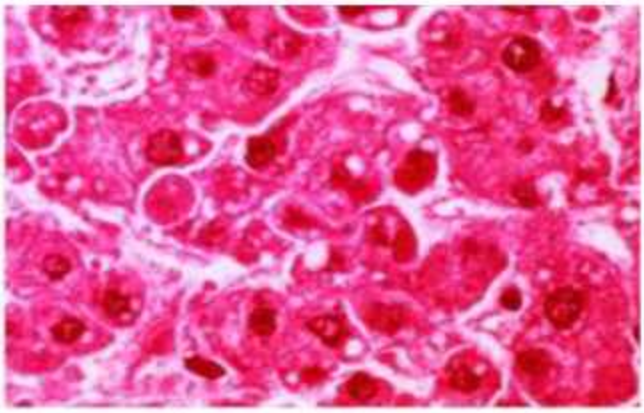

वैज्ञानिकों के अनुसार इबोला वायरस की पांच विभिन्न प्रजातियां हैं और प्रत्येक मानव को संक्रमित करने की क्षमता रखता है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के कथनानुसार यह रोग संक्रमित जीवों के रक्त, स्राव, शारीरिक तरल या ग्रसित अंगों के सम्पर्क से फैलता है। एक अध्ययन के अनुसार इबोला वायरस बीमारी प्रायः निम्नलिखित विधियों द्वारा प्रसारित पायी गई है।

1. संक्रमित पशुओं के मांस के स्पर्श व रखरखाव से।
2. मृत संक्रमित व्यक्ति के शरीर–तरल के सम्पर्क से।
3. संक्रमित रोगी के रक्त, स्राव व शारीरिक तरल के असुरक्षित संपर्क में आने से।
4. स्वास्थ्य कर्मियों के संक्रमित रोगी के सम्पर्क व विसरण द्वारा।

चिकित्सकों का मानना है कि पर्यटक व प्रवासीजन इस वायरस के संक्रमण एवं प्रसार हेतु कुछ अधिक ही ग्राह्य हैं। कभी–कभी यह स्थिति चिकित्सालय जनित संक्रमण द्वारा भी हो जाती है। जिससे परिचारक व स्टाफ कर्मी भी प्रभावित हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त मधुमेह, यकृत व वृक्क की विकृत से ग्रसित, एच.आई.वी. संक्रमित तथा प्रतिरोधक्षेपी व्यक्तियों में इबोला विषाणु के प्रसार की संभावना अधिक होती है।

इबोला वायरस संक्रमण का उद्‌भवन काल लगभग एक सप्ताह का होता है। प्रचुरोद्‌भवन उपरान्त ग्रसित व्यक्ति में संक्रमण के फलस्वरूप प्रारम्भिक लक्षण जैसे गले में खराश, सिर दर्द, उदर शूल, ज्वर आदि परिलक्षित होने लगते हैं। तदुपरान्त अतिसार, कमर दर्द एवं सन्धिवात सदृश पूरे शरीर में पीड़ा का अनुभव होने लगता है। कालान्तर में अन्य लक्षण भी दृष्टिगोचर होते हैं, यथा–

1. पूरे शरीर में दाने व चकत्ते।
2. नेत्र श्लेष्मा शोथ।
3. मुख के ऊर्ध्व भाग में अतिलालिमा।
4. त्वचा में पीड़ा की अतिग्राह्यता।
5. जननांगों में सूजन।
6. कान, नाक एवं मुख से रक्तस्राव।

प्रायः चिकित्सक लक्षणों के आधार पर ही बीमारी का आंकलन करते हैं। परन्तु इसके निश्चयन हेतु पैथोलोजिकल परीक्षण यथा– श्वेत व लाल रूधिर कणिकाओं की गणना, रक्त स्कंदन समय, वायरल एन्टीजन जांच तथा लीवर कार्य क्षमता आंकलन आदि भी कराते हैं। इबोला वायरस पर कोई भी वायरसरोधी औषधि अप्रभावी है तथा इसका कोई भी निदान उपलब्ध नहीं है। अस्तु इबोला संक्रमित रोगी का उपचार लक्षण सापेक्ष एवं द्वितीयक संक्रमणों से उत्पन्न जटिलताओं को रोकने के लिए ही किया जाता है। ग्रसित रोगी की मृत्यु का अन्तिम कारण प्रायः रक्तचाप क्षीणता व विभिन्न अंगों का क्रमशः निष्क्रिय होना पाया गया है। अद्यतन इबोला संक्रमण का कोई भी निवारक टीका उपलब्ध नहीं है। अस्तु रोगरोधन हेतु प्राथमिक स्वच्छता, समुचित सफाई, खान पान में उचित विचार एवं भीड़भाड़ वाले तथा मलिन स्थान से बचना ही उचित है। चिकित्सालय के विशिष्ट वार्ड को विषाणु मुक्त रखने हेतु टेक्सास की एक कम्पनी द्वारा इबोला किलिंग रोबोट "लिटिल मो" विकसित किया गया है जो पराबैगनी किरणें उत्पन्न कर कक्ष में वायरस के डी.एन.ए. को नष्ट कर देता है। यद्यपि भारत में इसका संक्रमण अभी नगण्य है फिर भी सावधानी अति आवश्यक है।

मंगलयान अभियान (मार्स आर्बिटर मिशन)–एक स्वर्णिम भारतीय वैज्ञानिक सफलता





24 सितम्बर, 2014(दिन–बुधवार, समय–प्रातः लगभग सात बजे) को अपने पहले ही प्रयास में मंगलयान के 68 करोड़ किमी की दूरी तय करके लाल ग्रह(मंगल) की कक्षा में प्रवेश करते ही भारतीय अंतरिक्ष शोध संगठन(इसरो) ने विज्ञान के क्षेत्र में स्वर्णिम अक्षरों में अपना नाम दर्ज कराया। इस ऐतिहासिक वैज्ञानिक सफलता का क्रमवार संक्षिप्त विवरण निम्नवत है–

22 अक्टूबर, 2008 को अंतरिक्ष में प्रक्षेपित चंद्रयान–1 की सफलता ने इसरो को मंगल ग्रह पर पहुँचने की साहसिक व महत्वाकांक्षी योजना को जन्म दिया और इसको अंजाम देने की तैयारी में जुट गया। अगस्त, 2010 में वैज्ञानिकों के दल ने निर्णय दिया कि भारत, मंगल ग्रह पर एक मानव रहित वैज्ञानिक अभियान भेजने में सक्षम व समर्थ है। 03 अगस्त, 2012 को केन्द्रीय मंत्रिमंडल ने इस अभियान को मंजूरी दी। यह अनुमति नासा के क्यूरियोसिटी रोवर के मंगल ग्रह की सतह पर सफलतापूर्वक उतरने(06 अगस्त, 2012) के 96 घंटे पहले मिली। मंगलयान अभियान का कुल बजट 450 करोड रूपये है। यह मंगल मिशन अब तक के मंगल अभियानों में सबसे किफायती मिशन है। इसकी लागत अमेरिका के मावेम(मार्स एटमोस्फियर एण्ड वोलाटाइल इवोल्यूशन मिशन) से लगभग दस गुनी कम है।

भारत में मंगलयान का निर्माण हिंदुस्तान एयरोनॉटिक्स लिमिटेड(एच0ए0एल0) ने तीन माह के भीतर वर्ष 2012 में पूरा किया। जिसमें पूरे मंगल ग्रह अभियान के पूरे खर्च की दस प्रतिशत से भी कम लागत आयी। मंगलयान पूर्णतया स्वदेशी है जिसे एल्युमिनियम और कार्बन फाइबर से बनाया गया है तथा इसमें किसी भी विदेशी उपकरण का प्रयोग नहीं किया गया है। मंगलयान का कुल वजन लगभग 1350 किग्रा है जबकि अमेरिका द्वारा प्रक्षेपित मावेम का कुल भार लगभग 2250 किग्रा था। वातावरण, कणों तथा सतह इमेजिंग का अध्ययन करने के लिए मंगलयान के साथ पाँच पेलोड भेजे गये हैं जबकि मावेम के साथ सात पेलोड भेजे गये थे।

इसरो द्वारा प्रक्षेपित मंगलयान के मुख्य वैज्ञानिक लक्ष्य निम्न हैं–

1. स्वदेशी वैज्ञानिक उपकरणों से लाल ग्रह की सतह का अन्वेषण, आकृति, जमीनी संरचना, खनिज संपदा तथा वातावरण का अध्ययन करना,

2. मंगल ग्रह के वायुमंडल में मीथेन गैस का पता लगाना, जो उस ग्रह पर जीवन की संभावना के लिए अत्यन्त आवश्यक है। साथ ही वैज्ञानिक यह भी जानने का प्रयास करेंगे कि मंगल ग्रह का वायुमंडल वर्तमान में विरल तथा शुष्क रूप में कैसे पहुँच गया।

3. धूमकेतु सी/2013 ए1 के वैज्ञानिक माप एकत्र करना, जो कि 19 अक्टूबर, 2014 को मंगल ग्रह के समीप से होकर गुजरेगा।

यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि मावेम अमेरिका का 15वां अभियान है जबकि शुरू के छह अभियान विफल रहे थे। मंगलयान मिशन की सफलता ने इस बात को सिद्ध किया है कि भारत में इसरो के वैज्ञानिकों द्वारा तैयार अंतरिक्ष उपग्रह प्रक्षेपण तकनीक अत्यन्त ही सस्ती एवं भरोसेमंद है। जिसके चलते भारत उपग्रह प्रक्षेपण के लिए अन्य विकासशील देशों की पहली पसंद बन सकता है और इसरो के लिए राजस्व के बड़े द्वार खोल सकता है।

(स्रोतः इसरो वेबसाइट, www.isro.com तथा दैनिक जागरण समाचार पत्र–दिनांकः 24–25 सितम्बर, 2014)

नोबेल पुरस्कार विजेता विद्वान–वर्ष 2014

दिव्यांश श्रीवास्तव
छात्र, लामार्टीनियर कॉलेज, लखनऊ–226001, उ0प्र0, भारत
divyansh_21@hotmail.com

1. चिकित्सा के क्षेत्र में



जॉन ओ कीफ
(जन्म–1939, यू0एस0ए0)



एडवर्ड मोजर
(जन्म–1963, नॉर्वे)



मे–ब्रिट मोजर
(जन्म–1962, नॉर्वे)

वर्ष 2013 में चिकित्सा के क्षेत्र में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा संयुक्त रूप से ब्रिटिश–अमेरिकन शोधकर्ता **जॉन ओ कीफ** तथा नार्वे के दम्पत्ति **एडवर्ड मोजर एवं मे–ब्रिट मोजर** को उनके उत्कृष्ट खोज कार्य **"सैल्स दैट कॉन्स्टीट्यूट ए पोजीशनिंग सिस्टेम इन द ब्रेन"** पर प्रदान किया गया। जिसमें उनके द्वारा मस्तिष्क में "इनर जीपीएस" नाम के पोजीशनिंग सिस्टम की खोज की गई। जॉन ओ कीफ वर्तमान में वैलकम सेंटर इन न्यूरल सरकिट्स एण्ड बिहेवियर, यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ लन्दन, लन्दन में निदेशक के पद पर कार्यरत हैं। इस पोजीशनिंग सिस्टम के पहले घटक की खोज जॉन ओ कीफ के द्वारा सन् 1971 में की गई थी। उनके अनुसार मस्तिष्क के एक भाग में विशेष प्रकार की तंत्रिका कोशिका होती है जिसे हिप्पोकैम्पस कहा गया, यह तंत्रिका कोशिका उस समय हमेशा सक्रिय रहती थी जब कमरे के किसी भाग में चूहा होता था तथा दूसरी तंत्रिका कोशिका उस समय सक्रिय रहती है जब वह चूहा किसी दूसरे स्थान पर पहुँचता है। जॉन ओ कीफ ने यह निष्कर्ष निकाला कि इन "प्लेस सैल्स" से कमरे का पूरा नक्शा बनाया जा सकता है। जॉन ओ कीफ की इस खोज के लगभग तीन दशकों बाद, वर्ष 2005 में, मे–ब्रिट मोजर एवं एडवर्ड मोजर ने इसी पोजीशनिंग सिस्टेम श्रृंखला के दूसरे घटक की खोज की। मोजर दम्पत्ति द्वारा एक नये प्रकार की तंत्रिका कोशिका की खोज की गई जिसे उन्होंने "ग्रिड सैल" का नाम दिया, जो कोऑर्डिनेट सिस्टेम का निर्माण करता है और सटीक स्थिति एवं रास्ता खोजने की अनुमति प्रदान करता है। वर्तमान में मोजर दम्पत्ति नॉर्वीजियन यूनिवर्सिटी ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, ट्रॉन्डीम, नॉर्वे, में शोधरत हैं।

2. भौतिक विज्ञान के क्षेत्र में



प्रो0 इसामू आकासाकी
(जन्म–1929, जापान)

प्रो0 हिरोशी अमानो
(जन्म–1959, जापान)

प्रो0 शूजी नाकामूरा
(जन्म–1954, जापान)

वर्ष 2014 में भौतिक विज्ञान में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा संयुक्त रूप से तीन जापानी वैज्ञानिकों **प्रो0 इसामू आकासाकी**, **प्रो0 हिरोशी अमानो**, नगोया यूनिवर्सिटी, जापान तथा **प्रो0 शूजी नाकामूरा**, यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया, सांता बारबरा, यू0एस0ए0, को उनके द्वारा 1990 के दशक में **"ब्ल्यू लाइट एमिटिंग डायोड्स(एल0ई0डी0)"** की उत्कृष्ट खोज के लिए प्रदान किया गया। वर्तमान में प्रयोग में लाये जाने वाले चमकदार सफेद ऊर्जा फेंकने वाले एल0ई0डी0 बल्ब्स इसी नीले रंग को लाल तथा हरे रंग की एल0ई0डी0 के साथ मिलाकर प्राप्त किये जा सके हैं। जापानी वैज्ञानिकों की यह खोज पर्यावरण को सुरक्षित रखने में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने में सक्षम है। वैज्ञानिकों का यह दावा है कि दुनिया भर में प्रयोग में लाई जाने वाली 20 प्रतिशत ऊर्जा की खपत को एल0ई0डी0 के पूर्ण प्रयोग के जरिये 4 प्रतिशत तक घटा कर लाया जा सकता है।

3. रसायन विज्ञान के क्षेत्र में



एरिक बेत्जिक
(जन्म–1960, आन आर्बर, एम. आई., यू.एस.ए.)

स्टीफन डब्ल्यू0 हैल
(जन्म–1962, अरद, रोमानिया)

विलियम, ई0 मोएर्नर
(जन्म–1953, , यू.एस.ए.)

वर्ष 2014 में रसायन विज्ञान में उत्कृष्ट शोध कार्य के लिए नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा संयुक्त रूप से तीन भौतिक रसायन वैज्ञानिकों **एरिक बेत्जिक**, जनेलिया फॉर्म रिसर्च कैम्पस, हॉवर्ड ह्यूज मेडिकल इंस्टीट्यूट, एशबर्न, वी0ए0, यू0एस0ए0, **स्टीफन डब्ल्यू0 हैल**, **निदेशक**, मैक्स प्लांक इंस्टीट्यूट फॉर बायोफिजिकल केमिस्ट्री, गोटिंजेन, जर्मनी, जर्मन कैंसर रिसर्च सेंटर, हेइडलबर्ग, जर्मनी, **प्रो0 विलियम, ई0 मोएर्नर**, स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी, सी0ए0, यू0एस0ए0, को भौतिक रसायन में "**फॉर द डेवेलपमेंट ऑफ सुपर–रिजॉल्व्ड फ्ल्यूरोसेंस माइक्रोस्कोपी**" की खोज के लिए प्रदान किया गया। इन तीनों वैज्ञानिकों की खोज ने माइक्रोस्कोपी(सूक्ष्मदर्शी तकनीक) को नये आयाम पर पहुँचा अणुओं में जीवित कोशिकाओं को देखना मुमकिन किया है। इस उपलब्धि से पारंपरिक ऑप्टिकल माइक्रोस्कोप पहले से कहीं बेहतर हो गया है।

4. **साहित्य के क्षेत्र में**



पैट्रिक मोदियानों
(जन्म–1945, फ्रांस)

वर्ष 2014 में साहित्य के लिए 111वां नोबेल पुरस्कार रॉयल स्वीडिश एकेडमी ऑफ साइंस द्वारा नाजी प्रभाव की लेखनी वाले फ्रांस के प्रसिद्ध उपन्यासकार **पैट्रिक मोदियानो** को उनके लेखन कार्य "**फॉर द आर्ट ऑफ मेमोरी विद व्हिच ही एवोक्ड द मोस्ट अनग्रैस्पेबल ह्यूमन डेन्सिटीज एण्ड अनकवर्ड द लाइफ–वर्ल्ड ऑफ द ऑक्यूपेशन**" पर प्रदान किया गया। मोदियानों ने अब तक 30 उपन्यास लिखे हैं। उनके प्रमुख उपन्यासों में "मिसिंग पर्सन", "ए ट्रेस ऑफ मेलाइस", "हनीमून", "विला ट्रिस्ट" शामिल हैं। "मिसिंग पर्सन" के लिए उन्हें प्रतिष्ठित "**प्रिक्स गोनकोर्ट**" पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। उनके द्वारा बच्चों पर किताबें तथा कई फिल्म पटकथायें लिखी गई हैं। मोदियानों 120–130 पृष्ठों वाले छोटे उपन्यास लिखते हैं जो अधिकतर पुरानी बातों, यादों तथा समय जैसे विषयों पर आधारित हैं। पैट्रिक मोदियानो साहित्य में नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाले 11वें फ्रांसीसी लेखक हैं।

5. **शांति के क्षेत्र में**



कैलाश सत्यार्थी
(जन्म–1954, भारत)



मलाला यूसुफजई
(जन्म–1997, पाकिस्तान)

वर्ष 2014 में शांति का नोबेल पुरस्कार नॉर्वीजियन नोबेल एकेडेमी, ओस्लो, नॉर्वे, द्वारा संयुक्त रूप से **"बचपन बचाओ आन्दोलन"** नामक एन0जी0ओ0 के अंतर्गत कार्य करते हुए बच्चों की शिक्षा के अधिकारों व बाल मजदूरी के खिलाफ आवाज उठाने के लिए भारत के समाज सेवी **श्री कैलाश सत्यार्थी** एवं लड़कियों की शिक्षा के अधिकारों की लड़ाई लड़ने के लिए पाकिस्तान में जन्मी 17 वर्षीय साहसी लड़की **मलाला यूसुफजई** को शांति के क्षेत्र में प्रदान किया गया। श्री कैलाश सत्यार्थी भारत में जन्मे आठवें नोबेल पुरस्कार प्राप्त कर्ता हैं। कैलाश सत्यार्थी ने बाल मजदूरी के खिलाफ वैश्विक मंच बनाया है, जो कई देशों में सक्रिय है। उन्हें पहले भी कई बार नोबेल शांति पुरस्कार के लिए नामित किया गया है। बाल अधिकारों के लिए अपनी लड़ाई प्रारम्भ करने से पूर्व सन् 1980 में इलेक्ट्रिकल इंजीनियरिंग की नौकरी छोड़ दी थी। अभी तक उन्होंने 80 हजार बाल मजदूरों को मुक्त कराया है। मलाला को वर्ष 2012 में पाकिस्तान में महिलाओं के लिए शिक्षा को अनिवार्य बनाए जाने की मांग के बाद तालिबान की गोली का शिकार होना पड़ा था। सन् 1901 से 2014 तक 47 बार महिलाओं को नोबेल पुरस्कार प्रदान किया गया है। शांति के क्षेत्र में मलाला यूसुफजई नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाली 16वीं महिला हैं। 17 वर्षीय मलाला यूसुफजई नोबेल पुरस्कार प्राप्त करने वाली अभी तक की सबसे कम उम्र की विद्वान हैं। इसके पहले सबसे कम उम्र में नोबेल पुरस्कार पाने वाले ऑस्ट्रेलिया मूल के ब्रिटिश वैज्ञानिक लॉरेंस बेग थे जिन्हें 25 साल की उम्र में अपने पिता के साथ सन् 1915 में भौतिकी का नोबेल पुरस्कार प्राप्त हुआ था। मलाला पाकिस्तान में जन्मीं तीसरी नोबेल पुरस्कार प्राप्त कर्ता हैं।

5. **अर्थशास्त्र के क्षेत्र में**



जीन टिरोल
(जन्म–1953, ट्रोएस, फ्रांस)

वर्ष 2014 में, अल्फ्रेड नोबेल की स्मृति में अर्थशास्त्र विज्ञान के लिए प्रदान किया जाने वाला सवेरिजेस रिक्सबैंक पुरस्कार 61 वर्षीय फ्रांसीसी अर्थशास्त्री एवं प्रोफेसर **डॉ0 जीन टिरोल**, टूलाउस 1 कैपिटल यूनिवर्सिटी, फ्रांस, को उनके उत्कृष्ट कार्य **"फॉर हिज एनालिसिस ऑफ मार्केट पॉवर एण्ड रेग्यूलेशन"** पर प्रदान किया गया। जीन टिरोल ने औद्योगिक संगठनों, गेम थ्योरी, बैंकिंग एवं फायनेंस, अर्थशास्त्र तथा मनोविज्ञान में शोध कार्य कर अपना महती योगदान प्रदान किया।

नोबेल पुरस्कार विज्ञान – वर्ष 2013



ऐलिस मुनरो



मार्टिन कार्पलस



माइकल लेविट



एरियेह वार्शेल



पीटर हिग्ज

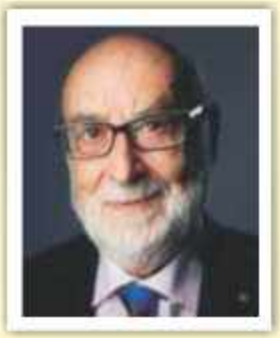

फ्रैंकोइज एंगलर्ट



इयूगीन एफ0 फामा



लार्स पीटर हैन्सेन

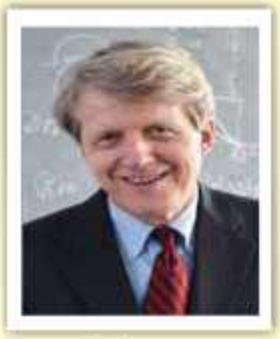

रॉबर्ट जे0 शिल्टर



जेम्स ई0 रॉथमैन



रैन्डी डब्ल्यू शैक्मान



थॉमस सी0 सुड्हॉफ

नोबेल पुरस्कार विज्ञान – वर्ष 2014



जॉन ओ कीफ



एडवर्ड मोजर



मे–ब्रिट मोजर



प्रो0 इसामू आकासाकी



प्रो0 हिरोशी अमानो



प्रो0 शूजी नाकामूरा



एरिक बेत्जिक



स्टीफन डब्ल्यू0 हैल



विलियम, ई0 मोएर्नर

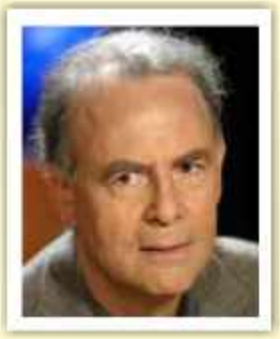

पैट्रिक मोदियानों



कैलाश सत्यार्थी



मलाला यूसुफजई



जीन टिरोल